करूणा कल्लोलमयी

काली



तेजस्वनी

करूणा कल्लोलमयी काली

सम्पादक :

बद्रीविशाल त्रिपाठी



हे "कल्पान्त नर्तकी"

"प्रलयाब्धिविहारिणी"

"प्रलयाब्धि सम्मग्ना ।

महाकल्पकालान्तकादम्बिनीत्विट्
परिस्पर्द्धि देहद्युतिं घोरनादाम् ।
स्फुरद्द्वादशादित्य कालाग्निरूद्र
ज्वलद्विद्युतोघ प्रमादुनिरीक्ष्याम् ।।

प्रलयकालीन मेघमाला पर दमकती दामिनी से स्पर्धा करती (माँ काली की) गात्राभा घोर प्रणाद (निनाद) करती हुई (मानो) प्रलय कालीन द्वादश चण्डांशू (आदित्य) या कालापग्निरूद्र (या) विद्युत प्रवाह जो दुर्निरीक्ष्य (देखना दुष्कर) है। ऐसा माँ काली का स्वरूप है।

लेखक : मनोजानन्द (कपालेश्वर)

तेजस्वनी पब्लिकेशन

21/39 मटियारा रोड़, अलोपीबाग इलाहाबाद,

दूरभाष : 9598694758

विषय सूची

प्रथम संस्करण	:	2011
मूल्य	:	रु० 160/-
प्रकाशक	:	मनोजानन्द (कपालेश्वर) 21/39, मटियारा रोड़ अलोपीबाग इलाहाबाद।
दूरभाष	:	9598694758
कम्प्यूटर सेटिंग	:	सनसाइन कम्प्यूटर्स दूरभाष : 9335144392

(प्रक्कथन)

इस ग्रन्थ के रचयिता अवधूत विगलित भेद विगलित द्वैतेन्द्रजाल निजात्म चन्द्र एक साथ शाक्त, शैव, गाणपत्य सौर्य वैष्णव सिद्धान्तों का सतत समवेत संगम (श्रीमनोजानन्द) कपालेश्वर हैं उनकी शेमुषी साधना धारा में श्री श्री माँ काली के कौलपरक अर्चा तथा चर्चा में संलग्न होकर ही प्रस्तुत ग्रन्थ ग्रन्थन व्यापृत हुई यद्यपि कर्तृत्त्व अभिमान विरहित में कृति की निन्दा स्तुति से कर्तृ अपरामृष्ट ही रहता है सभ्य लोग काव्य या साहित्य में रस का ही संचय करते है जैसे प्रभिन्न कमलोदर में चञ्चल मधु पान प्रमत्त होता है तदितर आदि उसके वृन्त (नाल) का ही कर्तन कर देता है

सभ्याः सदर्थं कलयन्ति काव्ये,
दिशन्ति दोषान् पिशुना प्रयत्नैः।
मधूनि पुष्पे मधुपाः पिबन्ति,
कुर्वन्ति कीटाः किल वृन्त भेदम्।।

निस्तन्द चन्द्र चमत्कार चञ्चूर्यमाण अमृत बिन्दु संदोह धवल–मौलि माले भूरिभूति वैंभव विभा विभासित शिव का शिवा लता बाहु परिष्वङ्ग उमा परिरम्भमण पुरस्सर संश्लिष्ट रूप श्वेत बिन्दु शिव शोणित बिन्दु शिवा के मिश्रित रूप से काम कला निष्पन्न होती है उद्दामकामकमनीय कला कलाप रूप है उसी से सृष्टि वृहण होता है श्री कालिका के भजन महिमोदगार सुरभि में धाणेन्द्रियवत् समस्त इन्द्रिया भगवती रस से आप्लावित हो सकती है।

येन रूपेण यः समुपास्यते, तस्मिन तद्रूप प्रार्प्ति भवतीति यह शास्त्रे सिद्धान्त है असमुद्रोत्पन्न रत्नवत् हृदय तल को भक्ति रस से अनुरञ्जित करती ये (इस पुस्तक की) पंक्तियां

"ऐ (कपालकामिनि) माँ काली मै तेरे पैरो का नूपुँर हूँ जो शंङ्कर से मिलने जाया करेगी तो मै जय
शिव जय शिव बोला करूगाँ ।"

हृद् कमल मञ्चे डोले
कराल वदनी श्यामाँ

प्रवक्ता
ब्रदी विशाल त्रिपाठी

माननीय श्री विनोद अग्रवाल निवासी (श्री सेठ जी) अलीगढ़ उ० प्र० का मै हृदय की प्रत्येक स्पन्दन से ऋणी हूँ जिन्होंने अपने आर्थिक सहयोग के द्वारा इस चिर अभिलषित ग्रंथ का प्रकाशन कराने मे सहृदयता दिखाया 'माँ काली' उन्हे एवं उनके परिवार को सुसम्पन्नता एवं दीर्घ आयुष्य प्रदान करे तथा अजस्र शांति दायिनी बने।

इस मुद्रण कार्य में सहयोग मेरे अनुज कार्तिकेय तिवारी 'एम० ए०' ने व्यवस्था एवं सम्पादन में सहयोग का सराहनीय कार्य किया है परमात्मा एवं माँ काली उन पर कृपा वर्षण करें।

"मनोजानन्द कपालेश्वर"



हमारी सहधार्मिणी श्रीमती "अर्चना त्रिपाठी" ने हमारे लेखन कार्य में अत्यंत उत्सुकता एवं धैर्य के साथ सराहनीय सहयोग किया है बिना उनके लेखन के शायद यह कार्य मेरे लिए अत्यन्त दुस्कर होता जीवन संगिनी होने के कारण उन्हे स्वतः मेरी 'माँ' का आर्शीवाद मूर्तिमान होता दिखाई देगा।

(मनोजानन्द लेखक)

श्री मनोजानन्द कपालेश्वर जो कि ब्रह्मलीन स्वामी करपात्री जी के मांसिक शिष्य है। और स्वामी जी के प्राप्त साहित्यों को हृदयगम कर रखा है लगभग उनमें बोलने की अद्भुद सामर्थ देखते हैं। काली साहित्य का शाक्त जगत में कोई विपुल साहित्य समग्र रूप से नही था लेखक ने भरपूर प्रयास किया है कि माँ काली पर पर्याप्त साहित्य मिले।

इसके लिए मैं उन्हे साधुवाद देता हूँ। काली उपासना में संलग्न लोगों के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपादेय होगी।

प्रवक्ता

ब्रदी विशाल त्रिपाठी

७७७•८८८

कालिकोल्लास–1

डिम्बं डिम्बं सुडिम्बं पच पच सहसा झम्य झम्य प्रझम्यं
'नृत्यान्ता' शब्दवाद्यैः स्त्रजमुरसि शिरः शेखर ताक्ष्यै पक्षैः।
पूर्ण रक्तासवानां यममहिष महाश्रृङ्गमादाय पाणौ।
पायाद्वो वन्धमानः प्रलयमुदितया भैरवः काल रात्र्या।।

अन्त में कहा गया है कि उसके वक्षस्थल पर माला शिर पर आभूषणों के रूप में गरूण के पंख है रक्त वर्ण की वारुणी के मद में विह्वल तथा हाथों मे यमराज के महिष की सींग है गान की लय ताल पर डिम्ब डिम्ब सुडिम्ब पच पच पच झम झम प्रझम आदि ध्वनियों पर नृत्य चल रहा है प्रार्थना है कि आपके स्वामी भैरव जो अपनी अर्धांगिनी कालरात्रि के साथ प्रलय के समय आनन्दित है वे आपकी रक्षा करें।

जमनिका

कालसंङ्कलनात् काली (कामधेनुतन्त्रम्)
काल का ग्रास करने से काली है।
क्षेपाज् ज्ञानाच्च काली कलनवशतया।।
कालसंङ्कलनात् काली (कामधेनुतन्त्रम)
काल का ग्रास करने से काली है।
क्षेपाज् ज्ञानाच्च काली कलनवशतया।।

अभिनव गुप्त ने तन्त्रसार में काली शब्द की व्युत्पत्ति का निर्देश करते हुए प्रकाश स्वरूप परमेश्वर के पराशक्ति रूप विमर्श को ही लक्ष्य किया है उसी को उर्मिह्रदय सार स्पन्द विमूति तृषिकाकाली कर्षिणी चण्डी वाणी आदि शब्दों से अभिहित किया है।

कल शब्द संख्यानयोः भ्वा०
कल विलक्षेपेकल गतौ संख्याने च
कल शब्दे इति चतुर्भ्यो धातुभ्यः
कलति कलते कलयति कलय ते
सर्वमात्मनि अथवा कलयत्यायुः
कालयति सर्वाणि भूतानि इति निरूक्तया

विचरतु मतिरेषा निर्विकल्पे समाधौ, कुच कलश युगे वा कृष्ण सारेक्षणानाम्, चरतु जड़मते वा सज्जनानां मते वा मतिकृत 'गुणदोषा मां' विभु न स्पृशन्ति।। (योगतारावली)

(चाहे ज्ञानी की मति बुद्धि निर्विकल्प समाधि में रमण करे चाहे मृगनयनियों के वक्ष स्थल पर चाहे मूर्खो का संग करे चाहे विद्वानों का उस विभु आकाश तुल्य आत्मज्ञानी को मति कृत गुण दोष नही छूते। (अथवा मुझ आत्मा को)) (शंकराचार्य)

क्व चिद्बालैः सार्ध करतलजतालैश्च हसितैः, क्व चिद्वै तारूण्याकिंत चतुरनार्या सह रमन, । क्व चितवृद्धैश्चिता क्व चिदपि तदन्यैश्च विलपन्, मुनिर्न व्यामोहं भजति गुरूदीक्षा क्षततमाः।।

अर्थ–कभी बालकों के संग करतल ध्वीन पर हसनें से कभी यौवनाऽकित अङ्कित प्रमदा के संग रमण से कभी वृद्धा से मन लगाने पर या अन्य से बात करने पर ज्ञानी मुनि जो दीक्षा से जिसका अज्ञान नष्ट है वह व्यामोह को नही प्राप्त होता।

कालसंङ्कलनात् काली (कामधेनुतन्त्रम)
काल का ग्रास करने से काली है।

क्षेपाज् ज्ञानाच्च काली कलनवशतया।।
क्व चिच्छैवैः सार्धं क्व चिदपि च शाक्तै सह रमन्,

कदा विष्णोर्भक्तैः क्व चिदपि च सौरैः सह वसन्,
कदाचिदगाणेशैर्गत सकल भेदोऽद्वयतया

मुनिर्न व्यामोहं भजति गुरूदीक्षा क्षततमाः।।

(ज्ञानी कभी शैवों के साथ कभी शाक्तों के संग कभी वैष्णवों के संग कभी सौर्यो के संग) कभी गाणपत्यों के संग अपगत भेद होकर रमा करता है। गुरूदीक्षा से अज्ञान नष्ट होने से ब्यामोह को प्राप्त नही होता है। जैसे एक ही स्वाति बूँद बांस में पड़कर वंशरोचन सीपी मे पड़कर मुक्ति का कदली मे पड़कर कर्पूर रूप से परिणित होता है ऐसे एक ही वेदान्त वेद्य भगवती चिति भक्तों के भावनानुसार नाना नाम रूपों में विलसित होती है।

मदान्ध सिन्धुर घटा (जमघट) (हाँथी झुण्ड) के घण्टा संङ्घट से त्रस्त वैरि वनिताओं से संस्तुत आसमुद्रक्षितीश पति या दिव्य स्त्री करो के चारू चमार संचार जनित वायु से संसेव्य चक्रवर्ती या विरल कङ्कण क्वणन सहकृत वरङ्गनाओ से सेव्य सम्राट भी कौलिकेन्द्र से अकिञ्चदकर है।

सर्वमात्मनि अथवा कलयत्यायुः
नैवात्र काव्यगुण एव तु चिन्तनीयो
ग्राह्य : परं गुणवत्ता खलु सार एव।
सिन्दुर चित्र रहिता भुवि रूपा शून्या
पारं न किं नयति नौ रिह गुन्तु कामान् ।।

अर्थ–किसी भी गुरू में काव्यादिक गुणों का चिन्तन नहीं करना चाहिए गुरू में काव्य कोशादि पढ़ा है कि नही किन्तु गुणों वाले गुरू में सार वस्तु हो उसी का ग्रहण कर लेना सब असार वस्तु का त्याग कर देना–दृष्टान्त स्वरूप लीजिए जैसे सिन्दूर चित्रों की नौका नदी से पार करा देता है तैसे सिन्दूर के चित्रों से रहित नौका भी पार करा देती है।

चण्डोदण्ड निशुम्भमानमथना त्युष्णोष्ण रक्तप्रिया
उत्तालोद्धततण्डावाहतनभोविध्वस्तताराग‌णा
पिण्डेषोऽश नाडिकार्चितपादा षट्चक्रवक्रासना
मुण्डस्रगपरिवेष्टिताम्बर पटा सिद्ध वै करालाऽस्तु वः

चण्ड उद्दण्ड निशुम्भ के मान मथन (कर) उष्ण रक्त प्रिया है जिसके उत्ताल उद्धत ताण्डव से नभगत तारामण्डल विध्वस्तवत प्रतीत होता है षोडस नाड़ी में (देहगत) जो संम्पूज्य, और षट चक्रो पर वक्रासना है मुण्ड माला से लिपटी हुई दिगम्बरी कराल काली हम सबको को सिद्धी दे।

लीलया दानवं हत्त्वा किञ्चिद् किञ्चिद्हसन मुखी
विक्रीडन पुरस्सर दानवों का संहनन कर माँ मन्द मन्द किञ्चिद हास्य उपेत मुखाम्बुज

यद् ब्रह्ममाण्ड कटाह सम्पुटतटोल्लासि प्रचण्ड महः
यत्तद्गर्भविभाण्ड मण्डन महज्ज्येयोतिः परं ज्योतिषाम्
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा यद् योगिभिर्ध्यायते
तत्ते धाम निरस्तविश्व कुहकं भर्गः परं धीमहि।।

ब्रह्माण्ड कटाह के सम्पुट तटों पर उल्लसित महा तेज जो उसके (ब्रह्माण्ड) गर्भ गत मण्डन शोभा रूप और जो सूर्य आदि ज्योतियों की भी ज्योति, जिसको योगी लोग ध्यान में परिचिन्तन करते है जो नित्य निरस्त कुहक माया रूप महा भर्ग रूप है उसका ध्यान करते हैं

हेलया लीलया भक्त्या कालीं स्तौति नरस्तु य।
ब्रह्मादीं स्तम्भयेद देवि माहेशीं मोहयेत्क्षणात् ।।

कालिकापाद सरोरूह कृष्णभृङ्ग भक्त हेला या लीला या भक्ति से जो नर माँ काली को भजता है वह ब्रह्मा का स्तम्भन और महेश्वरी का भी विमोहन कर सकता है
कृशानु वत ताप त्रय विदग्ध चित्त के लिए माँ शीतल छाया है उनका पाद पद्म तत्त्वबोध शान्ति सौख्य दायक है।

निः स्तुति निर्नमस्कार निः स्वधाकार एव च।
चलाचल निकेतश्च मुनिः या दृच्छिको भवेत्।।

कौलेन्द अवधूत स्तुति (गुणकथन) नमस्कार और पितरो के तर्पण रूप स्वधाकार (क्रियायों से) निरपेक्ष स्थावर जङ्गम उसका घर और स्वच्छन्द स्थिति होती है किं हेयं किं उपादेयं किं अन्यत् किं विलक्षणं,किं वचनीयं किं अवचनीयम्, किं रचनीयं किं अरचनीयं किं बोधव्यं किं अबोधव्यम् किं भोक्तव्यं किं अभोक्तव्यम् अर्थात् क्या हेय है क्य उपादेय है क्या अन्य क्या विलक्षण क्या कहने योग्य है, क्या नही कहने योग्य है, क्या निर्माण करने योग्य है क्या नहीं निर्माण करने योग्य है क्या जानने योग्य है क्या नहीं जानने योग्य है क्या भोग्य है क्या अभोग्य इन विकल्प संजाल मुक्त होता है।

सर्वं कालीमयं सर्वं कालीमयरे

भगवती चिन्तन केन्द्रत भोग भी कौलिक का ब्रह्मचर्य योग है ब्रह्मचर्यमेव यद्यद्रात्री रत्या संयुज्यन्ते
(प्रश्नोपनिषद)

सर्वं ब्रह्ममेतियों वेद स ब्रह्मचारी सब कुछ ब्रह्म ऐसा जो जानता है या ब्रह्म में रमण करने से ब्रह्मचर्य है वही ब्रह्मकाली गृही बनी है शरीर गृह में स गृही यो गृहातीतः शरीरं गृहमुच्यते।

कालि कपालिनी शूलिनी भैरवि
मातङ्गि पक्षिमि त्रिपुरे ।
वाग्देवि विन्ध्यवासिनि वाले
भुवनेशि चिरं पालय माम् ।।

इन नाम वाली देवियां दीर्घकालीन पालन करें हमारा । निजसुत के अवन रक्षण में विह्लमाँ काली।

यदवत मुकुरे प्रतिबिम्बत्वम्
स्थाणौ यदवत नररूपत्त्वम्

भानु करे यदवत् तोयत्वम्
शुक्तौ यदवत् रजतमयत्वम्
तदवत् जीवत्वं ब्रह्मणि
तदवत् जीवत्वं (श्री परमशिवेन्द सरस्वती)

महाचिति भगवती माँ काली में सम्पूर्ण विश्व भासित होता है अपरिगणित कोटि कोटि ब्राह्माण्डात्मक प्रकृष्ट पञ्चप्रपञ्च अधिष्ठान भूता अस्तीति सत् चेतयति इति चिदआनन्दयति आनन्द सच्चिदानन्द माँ में सम्पूर्ण विश्व सत्ता स्फूर्ति सरसता को समधिगत होता है जैसे दर्पण में आकाशमण्डल मेघमण्डल सूर्य, चन्द्र मण्डल, नक्षत्र मण्डल द्रुतगामिनी शैलापगाओं उत्ताल दुर्दान्त तरङ्गो ताण्डव परायण अनवगाह्य अगाध नीलसागर परिलक्षित होता है दर्पण स्पर्श करने पर कुछ भी अधिगत नही होता है महाचिति स्वच्छ ब्रह्म है भवं जगत् आनयति उत्पद्यते यस्या सा भवानी जगत्उत्पादयित्री भवानी है। दृष्टिपात से भक्तो की कामनाओं को पूर्ण करती है कामेश्वरी कामाक्षी

सर्वज्ञा साक्षिपातेन सर्वान् कामानपूरयत ।
कामाक्षीति तदाभिख्यां ददौ कामेश्वरीति च ।।

निः शेषंश्रेयः –अशेष श्रेय किंवा निःश्रेयसदात्री ऐहिक आमुष्मिक अपवर्गपद्रा भोगदा माँ श्यामा है निजसुतअवने विह्वला माँ

तव च का किल न स्तुतिरम्बिके
सकलशब्दमयी किल ते तनु।
निखिलमूर्तिषु में भवंदन्वयो।।
मनसि जासु बहिः प्रसरासु च।
इति विचिन्त्य शिवे शमिता शिवे।
जगति जातमययत्नवशादिदम्।

स्तुति जपार्चनचिन्तनवर्जिता न खलु काचन कालकलास्ति में।।
(महामाहेश्वर आचार्यअभिन व गुप्त)

हे जगदम्बिके ! संसार में कौन सा वाङमय ऐसा है जो तुम्हारी स्तुति नही है, क्योंकि तुम्हारा शरीर तोसकल शब्दमय है हे देवी! अब मेरे मन में संकल्प विकल्पात्मक रूप से उदित होने वाली एवं संसार में दृश्य रूप से सामने आने वाली सम्पूर्ण आकृतियों में आपके स्वरूप का दर्शन होने लगा है। हे समस्त अमंगल ध्वंसकारिणी कल्याण स्वरूपे शिवे! इस बात को सोचकर अब बिना किसी प्रयत्न के ही सम्पूर्ण चराचर जगत में मेरी यह स्थिति हो गई है कि मेरे समय का क्षुद्रतम् अंश भी तुम्हारी स्तुति जप पूजा अथवा ध्यान से रहित नही है अर्थात मेरे समपूर्ण जागतिक आचार व्यवहार तुम्हारे ही भिन्न भिन्न रूपों के प्रति यथोचित रूप से व्यवहृत होने के कारण तुम्हारी पूजा के रूप में परिणत हो गये हैं।

कल प्रेरणे

कालः शिवस्तस्य पत्नी काली
पुंयोगादाख्यामाधाम इति ङीषिवा

काल की भोगदा भट्टारिका पत्नी काली अप्रतिबद्ध शक्ति है

तत्राद्योहि महाकालो भुक्तिमुक्ति प्रदः सताम्।
शक्तिस्तत्र महाकाली
भक्तेप्सित फलप्रदा।।

महाकाल आद्य (रुप से) सत पुरूषो को भक्ति मुक्ति प्रद है उनकी शक्ति महाकाली अशेष भोगापवर्ग भक्तो को वितरण करती है।

महाकाल मुख्याशक्ति अपरा (दूसरी विस्फूर्लिङ्ग) अङ्ग भूता है।
प्रलयसमय में स्वविजयोल्लास उत्कर्ष से–हसन् मन्द मन्दम्।

नव महाविद्या क्रियात्मक है श्री काली एक क्रियाधार भूता है क्रिया धारिणी निर्निरोध महाशक्ति कालिका है महाभारत के विराट पर्व मे श्री काली दुर्गा रूप से वर्णित है

केनोपनिषद मे हैमवती उमा रूप से परिलक्षित है।
श्वेताश्वतर उपनिषद में शक्ति रूप से चर्चा अर्चा है ।।

नरायणोपनिषद में दुर्गारूप से संस्तुत्य है योगवशिष्ठ ग्रन्थ में श्री श्री महाकाली का वर्णन है। माता कल्याणमयी करूणामयी होती है आशुतुष्ट होती है कभी रूष्ठ नही होती अपराध को भी क्षमा करती है इसी हेतु से लोगों को स्वाभाविकी प्रवृत्ति होती है।

"कलौ जागर्ति कालिका"
कलयुग में अविलुप्त दृक् रूपा कालिका है।

"नैव स्त्री न पुमानेषा नैव चापि नपुंसकम् यद्यच्छरीरमा धत्ते पूज्यते तेन तेन सा" काली जिस जिस शरीर में जाती (कुमार कुमारी वृद्धा रूप में) तदरूप हो जाती है।

यह काम कला समस्त चराचर में जागृत है वह त्रयीमयी है साम उसका मुख है ऋक् तथा यजुः उनका स्तनद्वय है तथा अथर्व हार्द्धकला है रूप है उनका तूरीय रूप साक्षात ब्रह्म है पुनश्च वही कवली निः शेषतत्त्व ग्रास स्वरूपपिणी है।

ध्यान

देवी का ध्यान सत्ताइस श्लोको में वर्णित हे प्रपदालम्बी धन केशदाम से उनका मस्तक विभूषित है तथा केश बिखरे है देवी के शरीर का वर्ण मत्त कोकिल की तरह आभा से युक्त हे पके जम्बूफल की तरह प्रभा से परिपूर्ण है उनके तीन नेत्र लाल रंग से युक्त है कन्धे पर नरमुण्ड लम्बित है काली माँ उस धारा का पान करती है सृक्कद्वय से रक्त धारा प्रवाहित होकर स्तन के उपर से जाती है सफेद अस्थि गुटिका द्वारा उनकी माला निर्मित है शवों की लम्बी अगुँलियों से उनका वक्षोदेश आवृत है उनका कटि देश क्षीण है जघन प्रदेश अत्यन्त विशाल है उनकी सोलह भुजाएँ विशाल एवं मांसल है शवों की धमनी से उनका कंङ्कण बना है शवों के हाथों की उनकी मेखला है उनके सोलह हाथों मे दक्षिण क्रम से असि त्रिशूल चक्र शर अकुंश लालन कत्री तथा अक्षमाला है वाम क्रम में पास परशु चाप मुद्गर नाग शिवा पोत खर्पर जो वशा रक्त से तथा मेदा से संयुक्त है लम्बायमान केश रासि से युक्त नरमुण्ड है । शव पञ्जर ही उनका नुपुर है शमशान की प्रज्वलित महाअग्नि की मध्य में वह विराजमान है अधोन्मुख महादीर्घ प्रसुप्त शव के पृष्ठ पर उन्होने प्रत्यालीढ़ पद की स्थापना की है घोर रुपा शिवा दक्षिण एवं वाम पार्श्व में अग्नि का उद्वमन करती है वह विवसना अर्थात् दिगम्बरा वस्त्रहीना है विर्कीण केश पास है महाभयानका है तथा योग पद विभूषिता है वह महा भैरव के संघ विप्रतीप रिरंसा (महाकाल को भोग्य बनाकर स्वयं भोक्ता बनकर) रमणेच्छा करती है उसके अंगा अवययों की आकृति खर्वा है कोटि कोटि काला नलसंज्वाला भी उसकी गात्राभा से पराभूत है।

वह भगवती काली काल को स्व अधिकार से अपसारित करती है उसी का नाम कालसंकर्षिणी है।

काल संकर्षिणी तार तम्य या क्रम का अतिक्रमण करते हुए अक्रम रूप में जीव को प्रतिष्ठित करती है महाकाल तथा महाकाली रूपिणी आद्यशक्ति का साक्षात्कार होता है। हम कौलिक साधना की दृष्टि का अनुसरण करके जिस महाकाल भैरव की चर्चा की उसी के साथ अभिन्न रूप में वर्तमान है काली –

केरल में मिथिला बङ्गदेश में गुहयकाली हंसकाली श्मशान काली दक्षिणा काली कामकला काली श्मशान गुहयकाली आदि के उपासना क्रम प्रचलित है उसी प्रकार सृष्टिकाली स्थितिकाली रक्त काली मृत्युकाली चण्डोग्रकाली तथा कालसङ्कर्षिणी काली तन्त्रलोक में अभिनवगुप्त ने किया है। विभाववीर साधक के लिए पंञ्चतत्व का व्यवहार केवल मानस पूजा के अन्तर्गत है।

दक्षिणाचार का अर्थ है–शिवो भूत्वा यजेत पराम् साधक स्वयं शिव भाव ग्रहण कर शक्ति की उपासना करे। तत्पश्चात् भाव का किञ्चित बदलाव होता है तब **वामा भूत्वा यजेत पराम्**–इस प्रकार अनुसरण किया जाता है। इस प्रकार उपासना की पद्धति से वामाचार नाम का उद्भव हुआ शिवरूप से शक्ति की उपासना तथा शक्ति रूप से शक्ति की उपासना इन दोनो ही स्थलों में अनुकल्पहीन पंचतत्व द्वारा अर्थात मुख्य पञ्चद्वारा प्रकृत शक्ति की उपासना की जाती है

शिव चित्स्वरूप है शक्ति उसका काल स्वरूप है दोनो जहाँ बराबर हैं वहीं काम रूप बिन्दु है इस बिन्दु का एक बहि : नि सरण है जो हार्द्धकला रूप में आत्मा प्रकाश करता है हार्द्धकला की सृष्टि शिवशक्ति समरस्य मूलक है वही आनन्दप्रद है यही कामकला का स्वरूप है इसी से पूर्ण स्वरूप के अर्न्तगत भगवद्धाम रचित होता है।

शिव शक्ति का सामरस्य घटित होता है यह सामरस्य निर्विकार है इसमें न हास है न वृद्धि न आदि अनन्त स्वप्रैकाश चिदानन्दमय है जो इन दोनों का सामरस्य है वही परम बिन्दु है इसी का परिभाषिक नाम सूर्य है उसी का नामान्तर है "कामाख्यारवि"

जो दो बिन्दु शिव और शक्ति के रूप में आत्मप्रकाश करते है उसमें एक को अग्नि दूसरे को चन्द्र शब्द कहते है।

मुखं बिन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तद
हरार्द्ध ध्यायेद यो हरमहिषि ते मन्मथकलाम।
(भगवान शंकराचार्य।) **(सौदर्यलहरी)**

बिन्दु के क्षोभ से वह जैसे एक ओर शुद्ध देह, इन्द्रिय योग के विषय तथा भुवन रूप में परिणत होता सिद्धान्ती शैवों के मतानुसार शिवशक्ति तथा बिन्दु रत्नत्रय नाम से परिचित है शिव चित्स्वरूप है शक्ति चिद्स्वरूप है शक्ति चिद्स्वरूपिणी है किन्तु बिन्दु चित्स्वरूप नही है वह शुद्ध माया रूपी है शिव की परिग्रह शक्ति रूप अचित तत्त्व है दोनो ही चित्तस्वरूप है लेकिन शिव निष्क्रिय है शक्ति क्रियात्मिका है शिव में जब शक्ति की अभिव्यक्ति होती है तब वह इच्छा रूप में होती है शिव की जो इच्छा है वही शक्ति का स्वरूप है यह शक्ति समवायिनी शक्ति नाम से प्रचलित है जो शिव के साथ अभिन्न रूप से विद्यमान है इसका नामान्तर है उपादान शक्ति बिन्दु का उपादान जड़ है इसलिए शिव में इच्छा उदय होने पर इस इच्छा स्वरूप के आघात बिन्दु में विक्षोभ होता है वह इच्छा अनुरूप आकार धारण करता है यही महामाया की कृपा है

अर्द्धमात्रा बिन्दु के वेग की ही मात्रा है बिन्दु की स्वाभाविक मात्रा अर्द्ध है इसकी प्राप्ति एकाग्रता का परिणाम है लेकिन आज्ञाचक्र तक पहुचॅने पर निखिल विश्व बिन्दु के आकार समाप्त हो जाता है।

शक्ति के क्रोड़ में आरूढ़ होकर शक्ति की धार में प्रवाहित होते हुए महा समुद्र में संगमायित होता है साधक शक्ति जब शिव धाम में साधक को पहुँचा देती है जब जीव शिवभावापन्न हो जाता है।

माया के राज्य में एक मात्र अनुभूति है जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति । इसी की अनुवृत्ति होती रहती है जो माया के राज्य में रहकर माया के उर्ध्व में भी सञ्चरित होती है माया का राज्य काल के अधीन है पहला जो काल है वह आर्वत्त गति सम्पन्न है माया के उर्ध्वगति का काल सरलगति सम्पन्न है यह सरल गति साधक को निर्दिष्ट लक्ष्य तक पहुँचा देती है

ध्यान में देवी प्रभाव से उत्पन्न रक्त समुद्र के मध्य रक्त बालुकामय द्वीप की संकल्पना की जाती है रक्त मांसादि से प्रपूरित है द्वीप में अयुतमण्डल (अयुत (10 हजार योजन) परिक्षेत्र है उस मण्डलान्तर्गत शत योजन सुविस्तृत भयंङ्कर श्मशान है जहाँ नरमुण्डों का तोरण (स्वागत द्वार) है उसके आभ्यन्तर रत्नमयसिंहासन है इस सिंहासन के चार कोणों को चारो वेद चारो युग धारण किये हुए है उसके ऊपर भी एक सिंहासन है जिसका धारण आठ टिकपालो ने किया है इसके ऊपर भी एक सिंहासन है इसका धारण ब्रह्मा विष्णु रूद्र ईश्वर तथा सदाशिव रूप पञ्चप्रेत द्वारा हुआ है इसके ऊपर भी चौथा सिंहासन है जिसे आठ भैरवों ने धारण किया है इसके उपर षोडष दल कमल है इसके दल षोडष प्रकार के यज्ञों से बने है इसके ऊपर शिव का आसन बना है इसके ऊपर अष्ट दल कमल है जिसके दल धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य यश विवेक काम तथा मोक्ष है इस पर स्निग्ध श्यामला भगवती दशमुखी गुहयकाली विराजमान है इसकी सत्ताइस आँखे है वाम दक्षिण तथा सम्मुख मे दो दो आँखे है अन्य सात मुखों में तीन तीन आँखे है हाथी के समान उर्ध्व मुख है इसके नीचे श्वेत सिंह का मुख है उसके नीचे कृष्ण श्रृंगाल का मुख है इसके 'वाम' भाग मे लाल वर्ण वानर का मुख है दक्षिण भाग में काला भालू का मुख है इसके नीचे मानव का मुख है इसके वाम भाग में पिङ्गवर्ण गरूण का मुख है दक्षिण मे मगर का हरित वर्ण मुख है वाम मे हाथी दक्षिण भाग मे काले घोड़े का मुख है घोर अट्टहास करती हुई हमेशा मुखों को कपाती हुई भ्रू भङ्ग द्वारा आकृति को टेढ़ी करती हुई जटा जूट अर्थ चन्द्र धारण करने वाली रूधिर टपकते हुए नग्मुण्डों की माला विशाल सघन लम्बे बालो को पैर तक लटकती हुई भगवती योगिनीयों के सङ्गविहार (श्मशान में) करती है इसकी चौवन भुजाओं में अस्त्र शस्त्र विराजमान है

माँ गुहयकाली का परिचय निम्न श्लोंको में वर्णित है।
इयंहि वर्णतः काली जन्मना च गिरीन्द्रजा।
मया–हि गोपिता यस्मात्तस्माद गुह्या वभूवह ।।

जन्म से पर्वतराज हिमालय की कन्या वर्ण से श्याम तथा शिव द्वारा संरक्षिता होने से गुह्या अर्थात गुहयकाली कहलाती है

दुर्गासप्तशती में भी इसी प्रकार श्लोक मिलता है

तस्या विनिर्गतयां तू कृष्णाऽभूतसापि पार्वती, कालिकेति समाख्याता हिमाचल कृताश्रया।। गुहयकाली को उत्तराम्नाय की आद्या देवी कहा गया है।

औपनिषदिक ब्रह्म एवं गुह्यकाली के अनाख्या स्वरूप का ध्यान तुल्य रूप में पाया जाता है ।

निर्गुणा निराकार प्रबोधातीत गोचरा साक्षिणी परानन्दा तथा प्रत्यग्ज्योतिस्वरूपा आदि विशेषणों से विभूषित कर अद्वैत कहा गया है महाकाली तो निर्गुण ब्रह्म से बढ़कर है

इच्छा ही इस सकल चराचर की है नियामिका है उसी के वश में सकल संसार है वह किसी के वंश में नही। इस संसार का पालन सृष्टि संहार सब वही करती है

"स्त्रीणां त्रैलोक्य जातानां कामोन्मादैकहे तवे, वंशीधरं कृष्ण देहं चकार द्वापरे युगे ।। यह श्लोक काली व कृष्ण के ऐक्य का प्रमाण है।

माँ काली की शक्ति से संसार सामर्थ्यशाली है यह देवी दैत्य दानवों के वध के लिए सौम्य छोड़कर भयंकर रूप धारण करती है।

यह देवी कपिल आदि मुनियों के द्वारा सतयुग चण्डयोगेश्वरी नाम से त्रेतायुग में राजाओं द्वारा सिद्धिविकराली नाम से द्वापर में ब्राह्मणों द्वारा सिद्धि कराली नाम से प्रसिद्ध हुई या उपासिता हुई हैं अब इस कलयुग में अपामर जनता द्वारा गुह्यकाली रूप से उपास्तिता हो रही है।

वर्तर्तिसर्वोपरिचित्प्रकाशा।
सा गुह्यकाली परिपातु विश्वम्।।

उपासना

द्विव्याचार भावना प्रधान होता है वीराचार क्रिया प्रधान आचार्य उदयन ने कुसुमाञ्जलि में मनन को उपासना कहा है

उपासनैव क्रियते श्रवणान्तरागता मनन की प्रगाढ़ता ही निदिध्यासन का अन्तिम सीढ़ी है।

सौत्रामणि एवं वाजपेय यज्ञों में होता के लिए सुरापान की वैधता आश्वलायन भाष्य में पुंश्चली ब्रह्मचारी समागम का उल्लेख छान्दोग्य उपनिषद में वामदेव की उपासना कलत्र ग्रहण परक मन्त्रों का उल्लेख अश्वमेघ एवं गोमेध यज्ञ में पशुमारण आदि का विधान यहाँ उल्लखित है।

वस्तु का गुण या दोष उपयोगाधीन है स्वाधीन नहीं । इसीलिए सौत्रामणि यज्ञ के लिए सुरापान वैध होकर भी दूसरो के लिए निन्दनीय है इसी तरह मांस का भक्षण जीव हिंसा वैदिक यज्ञ तान्त्रिक पूजा में विहित पुण्य जनक होकर भी अन्यत्र पाप का जनक है। वही वस्तु शाक्त तन्त्र मे वीर साधक के लिए प्रशस्त हो "लोक व्यवहार में छूरा का प्रयोग डाक्टर द्वारा जीवन दान तथा डकैतो द्वारा वध के लिए के लिए होता है शुभ वासना से किया गया आचरण प्रशस्य तथा पुण्यप्रद है जन्म के समय नंगे शरीर से मातृयोनि से शिशु के शिश्न का स्पर्श पाप का विषय नही किन्तु वही शिशु युवावस्था में कामवासना से पूर्ण होकर मातृगमन न कर बैठे इसलिए शास्त्रों में कहा गया है एक ही आसन पर माँ और बेटे को नही बैठना चाहिए।

मात्रा स्वस्त्रा दुहित्रा च न विविक्त आसनो भवेत्।
बलवान इन्द्रियग्रामों विद्वासमपि कर्षति ।। (मनु०)

जहाँ अकारण तृण का छेदन भी निषिद्ध है उस स्थल में प्राणिवध की तो बात नही कौल दर्शन में भैरव ने प्रतिपादित किया है जिसके उपयोग से वैदिक रीति में पाप होता है इस मार्ग में सिद्धि के लिए पुण्यप्रद है

देवतार्थ द्विजार्थं वा हत्वा पापैर्न लिप्यते
"मामनादृत्य यत्पुण्यं पापं स्यात प्रतिभाषतः।
मन्निमित्तं चरेत पापं पुण्यं भवति
शाम्मवि"देवान पितृन समभ्यर्च्य देवि शास्त्रोक्त वर्त्मना।
गुरूं स्मरन पिबन मद्यं खादन,
मांस न दोषमाक्।

इन प्रमाणों के पश्चात् हम इतना ही कह सकते है कि माँ इन कार्यों से अधिक सन्तुष्ट होती है अतः राजाज्ञा की तरह इन विधानो में विचार किए बिना ही प्रवृत्त होना चाहिए।

परस्त्री सङ्गमों देवार्थं सुकृताय हि।
को हेतु नैंव जानामि देवी प्रीतिकरा इमे
राजाज्ञेवा प्रणोद्येयं सैव ब्रूते सनातनी
न पाप जनकं यादृक यज्ञार्थ पशुधा तनम्
न किल्विष कर स्तादृक परस्त्री सङ्गमादिकः।

ककड़ी कूष्माण्ड तथा आम आदि फल अथवा चावल का आटा खोया मक्खन देय बलि पशु का पिण्ड निर्माण कर हिंसा जन्म दोष से बचते हुए आगमीय रीति से परिपालन कर दोष से बचना चाहिए। सगे सम्बन्धी से अलग सुन्दरी के साथ देवी बुद्धि से पूजा का समय सम्भोग करने से उसकी पूजा करने से लोकाचार का उल्लंघन नही होता दिन में सम्पाद्य सात्विक पूजा में ही द्विज का अधिकार है रात्रि में नही ।

तारा भक्ति सुघार्णव में कहा गया वामाचारी ब्राह्मण साधक को भी मद्य मांस मैथुन से परहेज रखना चाहिए।

वावगमोऽपि विप्रस्तु मद्यं मासं नभक्षयेत्
स्वकीया परकीयां वा नाकृष्य ब्राह्मणो यजेत ।

देवी की स्पष्ट उक्ति है सात्विक पदार्थों के अर्पण से वह जितना अधिक तृप्त होती है उतना मद्य मांस के विविध प्रकारों से नही। अपनी तपस्या के प्रभाव के प्रभाव इन्द्र के भी सिंहासन का गिराने में समर्थ वशिष्ठ तथा विश्वामित्र ने कभी मदिरा का प्रयोग नही किया था।

तथापि द्विज (ब्राह्मण) को मदिरा का प्रयोग कभी नही करना चाहिए। माँ काली कहती हैं जो साधक मेरे इस वचन का अनादर करते हुए शास्त्र की व्यवस्था को न मानते हुए मोह लोभ वश मेरी पूजा में मद्य मांस का प्रयोग करेगा वह अवश्य दण्डित होगा।

गुड़ और अदरक का बराबर हिस्सा मिलाने से कांसा के बर्तन मे नारियल का पानी रखने से उपमद्य बन जाता है यद्यपि साधक को इसका भी अर्पण नही करना चाहिए मद्य हो या उपमद्य नाम तो मद्य का नही जाता।

भारतीय साधना मे भोंग संभोग तथा अपवर्ग सब कुछ उपासना के रूप में स्वीकृत है,

देवीपदाम्भोज युगार्चकानां भोगश्च
मोक्षश्च करस्थ एवं

भारतीय धर्मपरम्परा विविधता में एकता और एकता में विविधता देखती आ रही है।

सौन्दर्य के उपासक नव जलधर रूचि कृष्ण सौन्दर्याधिष्ठात्रियों की पराकाष्ठा त्रिपुर सुन्दरी श्रीविद्या की उपासना यदि मर्यादित है तो विकरालतमा काली की भयंकरता की परम अवधि कामकला काली की उपासना भी होती है

काली नवविधा प्रोक्ता सर्वतन्त्रेषु गोपिता दस महाविधाओं का तादात्मय भगवान विष्णु के दस अवतारों के साथ स्थापित किया गया है महाकाल संहिता में कहा गया है काली तीनों लोको की प्रमदाओं के कामांन्माद के प्रशमन हेतु द्वापर में वंशीधर श्री कृष्ण के रूप में अवतरित हुई ।

स्त्रीणां त्रेलोक्य जातानां कामोन्मादैक हेतवें।
वंशीधरं श्रीकृष्ण देहं द्वापरे संचकारह ।।

कामकला काली तो आद्या शक्ति के भी भयड.करतम् स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है कामकला काली हम लोगो के समक्ष आती है यहाँ कामकलाख्य योग वर्णित हुआ है उसकी अधिष्ठात्री कामकला काली मानी गई है।

या गुह्यकाली सैवेयं काली कामकला विधा।
मन्त्र भेदाद ध्यान भेदाद् भवेत काम कलात्मिका।।

बिन्दु की प्रक्रिया से विश्व को अन्तर में स्थापित करने के पश्चात् वास्तविक भोग सम्पन्न होता है बद्ध जीवों का जो भोग है कौलिक दृष्टि से उसे भोग नही कहते साधारण जीव भोग करना नही जानता जो लोग प्रकृत वीर है वही वास्तविक भोक्ता है। बद्ध जीव जागृत स्वप्न सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं में स्थिर रहता है यह भोग भी भगवान की अर्चना

"यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं ।
शम्भो तवाराघनम्
कान्तान्न पान सम्भोग संभारादि विलासिना।
सुखेन सर्वरूपेण स बुद्धयात्मानमर्चयेत। (योगवशिष्ठ)।

स्त्री अन्न पानादि के सम्भोग के सामूहादि विलास से युक्त सब प्रकार के सुख से यर्थाथ आत्मा को जानों उसकी पूजा करनी चाहिए।

भोग के बाद तृप्ति होती है तृप्ति के बाद अर्न्तमुख दशा का अर्विभाव होता है,

संसार चक्र आत्मारूपी अग्नि से दग्ध होकर अभेद ज्ञान में पर्यवसित होता है आत्मास्वरूप भूत प्रज्वलित अग्नि में भावमय विश्व का संहार हो जाता है उसी समय पर सविद रुपा देवी की महिमा से सब प्रकार से प्रमेयों का उच्छेद हो जाता है हेय तथा उपादेय बोध तिरोहित हो जाता है। इस संस्कार के नाश होने के बाद सब मै ही हूँ इस प्रकार होता है। इसका पारिभाषिक नाम है कालाग्नि रूप इसके बाद रूद्रावस्था के अतिक्रान्त होने पर भैरव अवस्था का उदय होता है भैरव का जो रूप सर्वप्रथम आत्मप्रकाश करता है उसका नाम है महाकाल भैरव । परासंविद यहाँ महाकाली रूप में प्रकाशित होती है। महाकाल भैरव। परासंविदा यहाँ महाकाली रूप में प्रकाशित होती है। महाकाल भैरव पञ्चकृत्य सम्पादन करते है लेकिन निरपेक्ष रूप से नही जिनकी इच्छा से वह सृष्टि आदि पञ्चकृत्य करते है वह स्वयं जगदम्बा है भैरव अवस्था में परम तेज के गर्भ में सब प्रकार की परिछिन्न अहन्ता विलीन हो जाती है उस महान अग्नि मे दग्ध होकर विश्व के साथ अभेदमय पूर्णाहन्ता विद्यमान रहती है। इसी स्थिति में आने पर परम योगी परम शिव के सदृश पंञ्चकृत्य कार्य करते है।

इसके बाद परम स्थिति का विकास होता है वह देवी पूर्ण रूपा कृशरूपा है यह अघटन पटीयसी है जब यह अपने आश्रित देवी गणों का उदय करती है प्रमाता आदि पदों तथा सृष्टि आदि चक्रों का विकास करती है तब वह पूर्ण रूप है जब वह सब कुछ अपने में लीन कर लेती है। केवल कालसंकर्षिणी नाम का एक चक्र शेष रहता है उसी समय वह कृशा कही जाती है

भगवान शङ्कराचार्य को कामकला तत्त्व का विशेष ज्ञान था। पुण्यानन्द रचित काम कलाविलास एवं नटना नन्द रचित उसकी व्याख्या कामकला के सम्बन्ध में प्रसिद्ध ग्रन्थ है।

श्री विद्या की उपासना के क्रम का अनुसन्धान करते हुए कामकला का जो परिचय विभिन्न तन्त्रों में तथा उनकी व्याख्यों में मिलता है वह दक्षिण भारत का क्रम है उत्तर भारत में तथा पूर्व भारत में कालीक्रम में अनुगत रूप से कामकला रहस्य के सम्बन्ध में विशेष परिचय का एक भी ग्रन्थ आज तक उपलब्ध नही है।

शाक्त उपासना का चरम लक्ष्य है अद्वैत की प्राप्ति तान्त्रिक आचार्य गण शिव है परमा शक्ति है शक्ति के बिना शिव इच्छाहीन ज्ञानहीन क्रिया हीन है स्पन्द में भी असमर्थ हैं

शिव और शक्ति की यह अभिन्नता परमासार्व है–यही सामरस्य है।

सृष्टि के मूल में बिन्दु है परम स्वरूप के स्वतन्त्र्य जब स्पन्दन इस बिन्दु का स्पर्श करता है तब बिन्दु रेखारूप में परिणत हो जाता है सबके ह्रस्व रेखा दो बिन्दुओं से गठित है इसकी परवर्ती सृष्टि बिन्दु से नही होती है तीन रेखाओं की आवश्यकता होती है इन तीनों रेखाओं की आवश्यकता होती है इन तीनों रेखाओं के संयोग से जो त्रिकोण उत्पन्न होता है वही सृष्टि का मूल (योनि) है योनि का आश्रय लिए बिना शरीर उत्पन्न नही होता है

महामातृका विश्व जननी है मातृ का मूल में एक तथा अभिन्न है वस्तुतः यह अक्षर ब्रह्म की क्षरात्मक स्वरूप भूता शक्ति है। प्राचीन आगमों में परावाग् रूप में इसी की प्रशंसा है

मातृ का महाशक्ति का नाम है शक्तिहीन महाप्रकाश स्वरूप होते हुए भी प्रकाश मान नही। महानुभावों का कहना है।

वाग्रूपता चेदुत्क्रामेदवबोधस्य शास्वती।
न प्रकाशः प्रकाशेत सा हि प्रत्यवमर्शिनी।।

ज्ञान अथवा बोध की एक एक शाश्वत नित्य सिद्ध वागरूपता है इस ज्ञान स्वयंप्रकाश है प्रकाश रूप में यदि वाग्रूपता नही होती तो स्वरूपतः प्रकाश होते हुए भी प्रकाशमान नही हो सकता। मातृका ही प्रत्यवमर्शिनी शक्ति है मातृका के अर्न्तलीन हो जाने पर प्रकाश ही प्रकाश ही रह जाता है

अग्नि में दाहिका के तुल्य जल में शीतलता के तुल्य अर्थात् अमृत महाकाल है माधुर्य सार सर्वस्व श्री महाकाली है। जो काल परिणाम का साधक है जो अतीत अनागत तथा वर्तमान रूप में हम लोगों के सम्मुख उपस्थित होता है अतएव उस भूमि में ऐसे काल का कोई अस्तित्व नही रह जाता तान्त्रिक लोग इसे ही महाकाल कहते है अहं से इदं होने रूप में भासमान होने पर वह सृष्टि के रूप में वर्णित होने के योग्य है।

सांख्य में प्रकृति और पुरूष भिन्न है पुरूष चिद्रूप या प्रकाशरूप है लेकिन प्रकृति त्रिगुणात्मिका है यह त्रिगुण मिथ्या नही सत्य है पुरुष 'अपरिणामी' है प्रकृति नित्य परिणाम है–प्रकृति नित्य परिणाम है–प्रकृति का परिणाम क्यों होता है इस विषय में प्राचीन आचार्यो के अनेक विचार है किसी का कहना है।

कालाद गुणव्यातिकर :

स्वभाव ही मात्र उसका परिणाम है इसलिए स्वतः परिणामिनी कहा गया है प्रकृति को । विसदृश परिणाम के फलस्वरूप सृष्टि का उदय होता है विसदृश परिणाम के धर्म लक्षण तथा अवस्था तीन विभाग होते है प्रकृति के प्रथम परिणाम को लक्षण परिणाम लक्षण परिणाम के बाद अवस्था परिणाम।

तान्त्रिक का ईश्वर स्वातन्त्रयमय है वह अपने स्वातन्त्रयबल से सदृश परिणाम को भी विसदृश्य परिणाम में परिवर्तित कर सकता है।

ग्राहक ग्रहण तथा ग्राह्य से त्रिपुटी है पूर्ण अहं में त्रिपुटी नही है इस अहं के सम्मुख तटस्थ रूप में दृश्य नही भासता अहं रूप में तादात्म्य युक्त दृश्य भी नही जो ग्राहक रूप अहं है जो देहात्मबोध सम्पन्न है उसमें प्राणों की क्रिया होती है अहं महानिर्वाण समुद्र में डूब जायेगा।

काला मेघ हमारे ह्रदयाकाश में उमड़ा है मन मयूर आनन्द से नाच रहा है माँ शब्द का गर्जन कर रहा है "लोग कहँ मम जननी काली तामस भेद तामसी पूजा तामस मूर्ति निराली जाते सकल प्रकाश प्रकाशित, कहत तामसी ताको ।।

माँ श्मशानचारिणी भैरवी योगिनीडाकिनी सहवासिनि है अपरिमित बल प्रभावे पापौधहारिणी

आपदुद्धारिणिअपमृत्यु वारिणि हे कट कटा रवे (रव)
हे अपवर्गरसदोहिनी रक्तार्णवलोहि नि मरण कोटि मन्त्र कलेवरे
प्रचलष्जटाभार भास्वरे

हे विकटदीर्घदंष्ट्र संज्चूर्णित
कोटिब्रह्मकपाले चन्द्र खण्डाङ्कित
भाले देह प्रभाजितमेघजाले
निखिलरिपुदलकर्त्तिन महाट्टासिनि
नरमुण्डमालिनि शववाहिनि
भगरुपिणि भगलिङ्गद्राविणी
संहार भैरव सुरतरसलोलुपे
मदनोन्मादिनि कुप्रयोगप्रमर्द्दिनि
कौलाचारवर्तिनि सर्वभूतदमनि
नरकंङ्कालमार्लिनि
हे–योगीन्द्र ह्रदयाम्बुजासनस्थित

नीलकण्ठे देहार्द्धहारिणि कालसङ्कर्षिणि
हे निरञ्जने निरीहे निस्तरङ्गे

"स्वास्मिन् कालीं तु सम्भाव्य
पूजयेज्जगदम्बिकाम्।
त्रैलोक्यविजयी भूयान्नात्र
कार्यो विचारणा ।। (रूद्रयामले)

जो–स्व में श्री काली
का परिभावन पुरस्सर जगदम्बा
की संराधना करेगा वह त्रैलोक्य
विजयी होगा।

महावेग प्रधाविते
हे गलद्रुधिरमुण्डमाला धारिणि
हे नृत्यप्रसारित पादाघात परिवर्तित भूवलये
आत्म विद्या च देवीत्वम्
हे देवी आत्म विद्या
तू ही है

शब्द जालमशेषन्तु
धत्ते शर्वस्य वल्लभा ।
अर्थस्य रूप मखिलं धत्ते
मुग्धेन्दु शेखर :।। (वायुसंहिता)

हे देवी सम्पूर्ण शब्दजाल रूप वागमृत
तू ही है अर्थामृत तुम्हारे प्रियतम महाकाल ही है
अमृत ही अमृत है (विदुषी मनन शीला अर्चना)

कालिकोल्लास–2

डिम्बं डिम्बं सुडिम्बं पच पच सहसा झम्य
झम्यं प्रझम्यं,नृत्यन्ताः शब्दवाद्यैः स्त्रजमुरसि
शिर शेखर ताक्ष्यै पक्षैः। पूर्ण रक्तासवानां
यममहिष महाश्रृङ्गमादाय पाणौ,पायाद्वो
वन्धमाना प्रलयमुदिदतया भैरवः कालरात्र्याः।।

(योगवाशिष्ठ)

अर्थ–उसके वक्ष पर माला तथा शिर पर आभूषणों के रूप में गरूण के पंख हैं रक्तवर्ण के वारूणी के मद में विह्वल तथा हाथों में यमराज के महिष का सींग है। गान की लय और ताल पर डिम्ब डिम्बा सुडिम्ब पच पच झम–झम प्रझम आदि ध्वनियों पर नृत्य चल रहा है प्रार्थना है आपके स्वामी भैरव जो अपनी अर्द्धांगिनी कालरात्री के साथ प्रलय के समय आनन्दित हैं वे आपकी रक्षा करें।

ऐ माँ काली (कपालकामिनी) मैं तेरे पैरों का नूपुर हूँ जो तू शङ्कर से मिलने जाया करेगी तो मै जय शिव जय शिव बोला करूँगा।

महाकालस्य कलनात् त्वमाद्या कालिका परा
काल संकलनात् काली सर्वेषामादिरूपिणी
कालत्वादादि भूतत्वादाद्या कालीती गीयते। (तन्त्रे)

बिना कालीपदद्वन्द्वं कः शाक्तः धरणी तलें
नहि कालीसमापूजा नहीकाली समं फलम्
नहि कालीसमं ज्ञानं नही काली समं तपः
तस्यैव धन्या जननी धन्यस्तस्य पितामहः
धन्यं कुलं यशश्चण्डि : येनकाली समार्चिता

अथाह वै श्म श्वः शानं श्यनं शवानां शयनं श्मशान तदधिष्ठानमहाकालस्तत्पर्यङ्क समासीनां विश्वव्यापकरूपिणीं कालीं कालदिसंत्रासात् काली चतुर्युगाधिष्ठात्रीं स्वस्मिन् भाव्य (षोडसोपनिषद)

कश्चिन्न तस्याः पतिरस्ति लोके
न चेशिता नैव तस्याश्चलिङ्गम ।
सा कारणं कारणधिपा
नास्याश्च कश्चिज्जनिता न चाधिपः।।

अर्थ–न कोई उसका पति है लोक में न कोई ईश या शासक और न उसका (स्त्री पुमान् नपुंसक) कोई लिङ्ग है वह कारणो की कारण और (निखिल) कारण अधिप (अधीश्वरी) है न कोई जनिता है न उसका अधिप (स्वामी) है।

हे श्रुति मौलिशेखरलता
मायां तु प्रकृति विद्यात्
प्रभुं तस्या महेश्वरीम्।
अस्या अवयवैः सूक्ष्मै–
र्व्याप्तं सर्वमिदं जगत।। (गुह्यकालिकोपनिषद)

माया को प्रकृति जानो (और) उसकी स्वामिनी महेश्वरी है इसके सूक्ष्म अवयवो से यह जगद व्याप्त है

सर्वेवैदेवाः देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवी,
सा ब्रवीदहं ब्रह्मरूपिणी मत्तः प्रकृति पुरुषात्मकं जगत (देव्यथर्वशीर्षम्)

अर्थात् देवताओं ने देवी का उपस्थान किया प्रश्न किया आप कौन है ।

देवी ने कहाँ मै ब्रह्म हूँ मुझसे ही प्रकृति पुरूषात्मक जगत समुत्पन्न होता है।

स्वात्मैव ललिता
आत्मा ही ललिता है (भावोपनिषद)
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते
स्वाभविकी ज्ञान बल क्रिया च
एष ह्येव सर्वे देवा (श्रुति) च

यह काली सर्व देवात्मक विघ्नोत्सारण समर्था गणाधिपा गणपति

भूयश्च सृष्ट्वा त्रिदशानवेशी
सर्वाधिपत्यं कुरूते भावानी।
सर्वा दिशश्चोर्ध्वमघश्च तिर्यक्
प्रकाशयन्ती भ्राजते गुह्य काली।।
असदेवेदमग्र आसीत् तम आसीत्

कालस्य कलनात् काली (काल का कलन, क्षेपण, संख्यान करने से काली है

कालं आकर्षयति काल को आकर्षित करने से या कालं विस्तारयति–काल का वितान करती है

कल–शब्द संख्यानयोः (भ्वा) कल विलक्षेपे, कलगतौ संख्याने च कल शब्दे, कलति,कलते कलयति कलयते सर्वमात्मनि

कल प्रेरणे

कालयति सर्वाणि भूतानि–सर्वभूत प्रेरण कर्त्री
कलयति आनन्दयति–एस ह्यवानन्दयति
यही सबको आनन्दित करती है, कलयति भक्षयति
प्रलयकाले सब का भक्षण करती है निः शेष तत्वकवलिनी काली
कलयति प्रकाशयति–यह तामसी भामती रूपा है
अशेष का प्रकाशन करती है

कलयति गणयति–सब गण्य का संगणन करती है कोकिल की तरह कल निनाद करती है कोमल अलाप करती है

कल गतौ
गतिर्गमनं, गतिर्ज्ञानम्
गतिर्प्राप्तिः गतिर्मोक्ष :

गति अर्थात् हंसीगति विडम्बिनी–हंसी के मधुर

गति को अपने गतिसौन्दर्य से तिस्कृित करने वाली माँ सांख्यो की जड़ प्रकृति नही है न वैशेषिकों का परमाणु न वेदान्तियों की माया अपितु ब्रह्म है

कुं कुत्सितम् (ईषद् कृष्णत्व) लाति गृह्याति इति निरूक्तया ला आदाने "आतोऽनुपसर्गे कः क प्रत्यये आकार लोपे कोः का देशे कालः। (इयत्तया काल निश्चयार्थोपदेशे)

कालयति सर्वमिति पचाद्यचि कालः
किंवा के स्वस्वरूपेसुखे आ समन्ताद् लाति अदत्ते
गृह्वाति प्राणि समूहमिति कौल अस्या काली

जो प्राणि समूह को स्वस्वरूप में चारो ओर से ला दें अथवा आबटंन करे वह काल उसकी काली कालः शिवस्तस्य पत्नी काली (डीप्) जो शक्ति काल को यज्ञरूप से परिणित करती है वही महामाया महाकाली,

कालविशिष्टत्वात् काली
काल से विशिष्ट होने से काली है

कालरूप होने से काल की शक्ति होने से काली है तमोगुणाविशिष्टा तामसी भामती कलावती काली ।

सर्वे प्रसुप्ताः असिताङ्गी जागर्ति
सब शयनस्थ सुप्तथे असिताङ्गी श्यामा

प्रजागर अवस्था में सूसाक्षिणी थी ऐ रक्तसम्पृक्त रसनें

हूँ हूँ हूँ कारनादेन त्रासयन्ती सुरासुरान्
ऋगयजु : सामाथर्वाख्यवेदस्योपरि संस्थिता
शवरूप महादेव हृदयोपरि संस्थिता
निशेशी सा महोग्रा च दक्षिणा चारवर्जिता
'अलातचक्र' वद यस्या भ्रमन्ती शिर मालिका
प्रपञ्चदक्षा ह्रस्वाङ्गी चास्थिचर्मावशोषिता
विष्णवेऽथ महालक्ष्मीं महाकालीं शिवाय च (देवीभगवत)
विष्णु प्रसङ्गः से

महालक्ष्मीं महाकाली शिव के लिए (वही) महाकाली हो जाती है शुम्भविनाशिनी काली हरि की योगनिद्रा है मधु कैटभ नाश के लिए ब्रह्मा के द्वारा संस्तुत हुई दश वदना दशभुजा दशपादा त्रिंषत् नेत्र कृष्ण वर्णा भीमरूपा स्फुरददंष्ट्रा रुप सौभाग्य कान्ति महासम्पद अभिमानशालिनी खड्ग, बाण, गदा शूल, चक्र, शङ्ख भुशुण्डिं परिघ चाप स्रंवदरक्त शिर धारण किये हुए है यह आद्या आपने भासन द्योतन के लिए जब उन्मुख होत है तो कालसंङ्कर्षिणी संज्ञा वाली हो जाती है।

कल्पान्ते वै सर्व संहारकर्त्री श्रुति) कल्पान्त में जिद्यांसा हन्तुं इच्छा संजिहिर्षा

शृणु चार्वङ्गी सुभगे कालिकायाश्च भैरवम्
महाकालं दक्षिणाया दक्षभागे प्रपूजयेत्
महाकालेन सार्धं दक्षिणा रमते सदा

दक्षिण कालिका का भैरव महाकाल जो काली के दक्षिण की ओर है निजकान्ता से रमणेच्छुक महाकाल इसके प्रभाव से महकाल जगद् संहार करते है संहार रूपा काली व्यक्त विग्रह धारण कर शिव से बर्हिगत होकर शिव को शव संज्ञा पर ला देती है स्वतः शव वाहना काली हो जाती है शिव लीला सामर्थ्य विहीन किन्तु निज शक्ति मयी प्रेयसी कपालकामिनि को अपने हृदय पर आरूढ़ करते है।

अतः संसारनाशाय साक्षिणीमात्मरूपिणीमाराधयेत्।
पराशक्तिं प्रपञ्चोल्लासवर्जिताम्।। (सूतसंहिता)

अर्थात् संसार निवृत्ति के लिए प्रपञ्चस्फुरणंशून्यं सर्वसाक्षिणी पराशक्ति की अराधना करनी चाहिए ।

परातु सच्चिदानन्दरूपिणी जगदम्बिका।
सर्वाधिष्ठान रूपा स्याज्जगद्भ्रान्तिश्चिदात्मनि।। (स्कन्ध)

सच्चिदानन्दरूपिणी पराजगदम्बिका ही विश्व की अधिष्ठान भूता है उन्ही चिदात्मस्वरुपा भगवती में ही जगत् की भ्रान्ति होती है।

चितिस्तत्पदलक्ष्यार्था चिदेकरसरूपिणी चिदेकरसरूपिण चिति तत्पद की लक्ष्यार्थ स्वरूपा है असाङ्कर्येण तत् तत् प्राणियों के कर्मो की साक्षी है अग्नि अगर महाकाल है तो काली उस अग्नि की दहिका शक्ति है अतः अग्नि की पूजाँ उसकी दाहिका शक्ति की ही पूजों है और दाहिका शक्ति की पूजाँ अग्नि रूप काली की ही पूजा है जैसे जल में हाँथ डालना या उसकी शीतलता में हाँथ डालना या एक ही हैं रूप बिना रूपवान, बल बिना बलवान, जल बिना तड़ाग, वैसे ही शक्ति बिना क्या शक्तिमान

अतः श्री की भी श्री, कीर्ति की कीर्ति, सूर्य की भी सूर्य प्रभा की भी प्रभा, सुन्दरता की भी सुन्दरता, बल की बल यह सर्वेश्वरी माहेश्वरी माँ जगदम्बा है कर्त्री धारयित्री प्रहर्त्री कालिका ही हैं

रक्त काली ही त्रिपुरसुन्दरी (तिसृभ्योः मूर्तिभ्यः पुरा असीत अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र इन मूर्तियाँ से पहले थी इसलिए त्रिपुरा) है

सा काली द्विविधा प्रोक्ता शयामारक्ता प्रमेदत :।
श्यामा तु दक्षिणा काली रक्ता श्री सुन्दरीमता।।
ब्रह्मा विष्णुः शिवः गौरी लक्ष्मी गणपति रविः ।
पूजिता सकलादेवा यः काली पूजयेत् सदा।।

(बृहन्नारदीय पुराण)

जिसने कमनीया महनीया कामदा काली की पूजा की उसने ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गौरी, गणपति रवि सबकी पूजा कर ली जात्युनुच्छेदेनसर्व सर्वात्मकम्–सब में सब अर्थात् काली में सर्व–प्रत्येक वस्तु का अन्यजातीय वस्तु से तादात्म्य होता है अंश में सर्वाशं और सर्वाशं में अंश

हे कोटिमार्त्तण्ड विग्रहे (निषेध व्यापार रूपाशक्ति)
क आ, ल, ई क्रमशः काली वर्णावयवो पर चिन्तन
ककारं धर्मदं देवि ईकार चार्थदायकम्।
रकारं कामदं कान्ते मकारं मोक्षदायकम् ।। (तोडल तन्त्रे)

ईकार (धूम्र भैरवी) माँ का वाम नेत्र, उदयार्क समानाक्षी उदय होते सूर्य (अरूण) की तरह अर्ध निमीलित नेत्र

ककार पयरूप, धर्मदाता, ब्रह्मारूप, ई–अर्थदायक मकार विष्णु रूप भी है

सर्व विघ्नहरंदेवी ककारं तोयरूपकम्।
सर्व पापहरं रेफं तस्माद वर्हिर्न चान्यथा।।

ककारं ब्रह्मरूपं मकारं विष्णु रूपकम्।
रेंफ संहाररूपत्वाच्छिवरूपो न चान्यथा।। (ऽामरतन्त्रे)

पुरूषो दक्षिणः प्रोक्तो वामा शक्तिर्निगद्यते पुरूष दक्षिण भाग है और स्त्री (स्, त्, र, ई) सत्व, रज तम और ई (तन्त्रों में काम कला) वामा है।

न चक्राङ्का न पद्माङ्का न वज्राङ्का यतः प्रजा।
लिङ्गाङ्का च भगाङ्का च तस्मात् माहेश्वरी प्रजा।।

विष्णु का चक्र, ब्रह्मा का पद्म और इन्द्र के बज्र से प्रजा अंकित नही है परन्तु लिङ्ग और भग से प्रजा अंकित होकर सृष्टि को माहेश्वरी घोषित कर रहे है

शाक्ता एव द्विजाः सर्वे न शैवा न च वैष्णवा
उपासन्ते यतो देवी गायत्री परमाक्षरीम् (निर्वाण तन्त्रे)

द्विज मात्र परमाक्षरी गायत्री का ही समाश्रयण कहते है द्विजमात्र

शाक्त है न शैव न वैष्णवन सौर्य इत्यादयः
काली पाद प्रसादेन स भवेल्लोक पालकः
काली के पाद प्रसाद से लोकपाल आदि होते रहते है।
अब काली शब्द के वर्ण अवयवों पर विचार
(क, आ, ल, ई) माँ काली का महसेतु प्रणव क्रीं है
क्रींमोङ्कार च एकत्वम् पठ्यते ब्रह्म वादिभि (कृष्णोपनिषद)

क्रीं और (ऊँ) ओङ्कार का एकार्थ तात्पर्य ब्रह्मवादी लोग भी मानते है
क्रीं-क र् ई बिन्दु नाद
ककार कालिका साक्षाद् क्रीं काम् बीज है सर्वार्थ प्रापकम्

क वर्ण कः प्रजापति रकार लकार दोनों क्रीं में है। क परा कामिनी मुखे सूर्येऽपि कः स्मृतः (ककारः साक्षात काली) क को प्रजापति भी कहते है 'क' मुख और सूर्य अर्थ में भी 'क' है जहाँ माँ का मस्तक गिरा है वहाँ श्री पीठ हुआ ककार की उत्पत्ति हुई, वर्गाद्य–'क' है ब्रह्मा 'क' है कोद्गीश 'क' कामेश 'क' सर्वविष हर कल्याणद् 'क' है अक्षमालिकोपनिषद् से कं ब्रह्म (छन्दोग्य) 'क' ब्रह्म है कं शिरम्–'क' शिर वाचक है कं जलम्–'क' जलवाचक है।

कन्यन्ते प्रकाशन्ते अनेन इतिकम्
जो अखिल का प्रकाशन करे (कराज्जायते सर्वकामकैवल्यमेव)

काम्यन्ते स्रकचन्दनवनितादि विषय भोगा इति 'क' भोग्य स्राग चन्दन वनिता आदि विषय भोग की कामना ही 'क' है (ककारः सर्ववर्णानां मूलप्रकृतिरेव च) काम्यते इतिकम्

कद्दीप्तौ–कन्यन्ते प्रकाश्यन्ते शब्दार्थ जालान अनेन इति 'क'
अशेष शब्द जाल का प्रकाशक 'क' है
'र' रेफोरूद्राणी रूपा, और अग्नि (कालाग्निरूद्र) बीज है
का नाम–सुखानां लौकिकानां पारलौकिकानां
आलिं पक्तिं लातीति कालः तस्य
नायिका (स्त्री–ङीप्) काली
लौकिक पारलौकिक सुखकतार को देने वाली कृष्णा
लकारः पृथ्वी स्वरूपः । इन्द्र लोचन को 'ल' कहते है।
लं वै माता इन्द्रे लोचने लः स्यात् (श्रुति) 'ल' माता है
लकारस्तु गन्ध बोधकः । इन्द्रलोचन होने से लकार ज्ञान रूप है
लकार गन्ध अवबोधक है
ससागर सभूधर भूमण्डल हील है 'ला आदाने" लाने वाला
इयं पृथ्वी सर्वेषां भूतानां मधु अस्यै पृथिव्यै–सर्वाणि भूतानि मधु
लकार गन्ध अवबोधक है

ससागर सभूधर भूमण्डल हील है 'ला आदाने" लाने वाला
"इयं पृथ्वी सर्वेषां भूतानां मधु अस्यै पृथिव्यै———

–सर्वाणि भूतानि मधु"
यह पृथ्वी समस्त भूतो की मधु है इस पृथ्वी से समस्त भूत मधुमय है।

चिड़िया कितनों उड़े आकाश दाना है धरती के पास वही क्षिति गति निवास की आधारभूत माँ 'ल' है भूमण्डलोंपलक्षित पञ्चभूतात्मा भगवती विवक्षित है मृद घट : इसी तरह परमात्मा समानाधिकरण

लहरी ल है

ई ईयते प्रकाश्यते कीर्ति जालं दिगन्तेषु – जिससे दिशाओं विदिशाओं में कीर्ति जाल विस्तीर्ण हो गुण सन्तति चले

इदन्ति सर्वेषां नियन्तृत्वे वर्तते इति 'ई'
सब पर जो शासन करे नियामिका शक्ति ई है
वज्रहस्ता होकर नियमन करती है।

ईयते योगिभिःसर्वान्तर्यामितया–अन्तर्यामी 'ई' योगियों से इड्य है

ई–जिसके द्वारा हृत्पुण्डरीक दहराकाश में दीपशिखा मध्यस्थ बोधात्मक संविद्रूपा चिति विवक्षित है

इत्यनेन हृत्पुण्डरीकदहराकाशस्यदीप शिखा मध्ये स्थितो बोधात्मक प्रकाशस्वरूप परमात्मैन विवक्षितः क सिसृक्षावान् कामेश्वर, र दीप्तप्रीति रति रूपा कामेश्वरी

ई–परस्पर उत्कट् समकर्षण और बिन्दु कामेश्वर कामेश्वरी आलिङ्गन जनित आनन्दोद्रेक यही कामेश्वरी काली बीज है

आनन्द हुंकार गम्भीर घोषा श्यामा माँ है

कनयति इति क कद् दीप्तौ जो प्रकाश पुञ्ज की तरह सर्वप्राणि परप्रेमास्पद सर्वसम्भञ्जनीय नीलज्ज्योति

काकर वरेण्यः और शरण्य है
कारकयज्ञः रूपः कः कृियाग्निश्च ररूपक
फलाय यदमीद्धत्वं स्यादीवर्णस्तदेव च
नादो होता हविन्दुि क्रीमिति ह्यखिलान्वयम्
अयजमानयाजको यागो यागाय चेज्यते
कामयत इति 'क': परं ब्रह्म

कः ककार यज्ञ रूप है क्रियाग्नि 'र' रूप है फल के लिए अभीद्धता 'ई' है

नाद होतृ होता है हवि बिन्दु है क्री ऐसा बीज अखिल का अन्वय है जिस याग का अयजमान याजक है याग के लिए यजन है यियक्षा (यजनेच्छा)

जो अमेय अमान है वह व्यवहार में नही आता व्यवहार मान और मेय को लेकर होता है

कर्त्ता एकेश्वरी है वही सेव्या है

क–यह वर्ण आदि व्यञ्जन है अग्निरूप क्रिया 'र' वर्ण है फलप्रसव के निमित्त अभीद्ध भाव 'ई' वर्ण है नाद स्वयं होता है। बिन्दु हवि क्रीं यह बीज विश्वव्यवहार भुवन यज्ञ के वितान रूप प्रस्तुत हुआ है याजक कहाँ हो रहा है यजमान कहाँ हो रहा है याग ही याग के लिए याजित हो रहा है होतृ हवि हवन स्व में ही उदभावित कर रहा है

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हवि ब्रह्मनौ ब्रह्मणाहुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना।।
(गीता)

क्रिया, कारक, कर्त्ता, कर्म सब ब्रह्मस्वरूपिणी क्रीङ्कार रूपाँ श्यामाँ माँ रासरूपा भासरूपा माँ यज्ञ निर्वाहयित्री श्यामाँ, मूल (नाद बिन्दु कला रुपा) क्रीं बीज

नहि याज्ञिक यज्ञ विभाग इति, न हुताशन वस्तु
विभाग इति, यदि चैक निरन्तर सर्व शिवं,

वद कर्म फलानि भवन्ति कथम् । न तो याज्ञिक और यज्ञ का भेद है और न अग्नि का भेद है यदि अखण्डित घनाकार शिवा व्याप्त है तो कर्म फल भी क्या यही अद्वैतामृत वर्षी यज्ञ है

कलौ काली कलौ काली कलौ काली वरप्रदा
कलौ काली कलौ काली कलौकाली तु केवला (शाक्त प्रमोद)

महाकाली महारूद्रश्चणकाकाररूपकः
सृष्टि के पहले महाकाली और महारूद्र चणक (निर्वाण तन्त्र)

(चनाँ) की तरह (चने में दोदाल) आलिङ्गन बद्ध थे शब्द और अर्थ दृग और दृश्य, वाच्य और वाचक एक ही थे।

अतः कालकान्ता की उपास्यरूपता आत्मरूपता और सर्वरूपता के अवगम से कृतार्थत सुनिश्चित है

फूल गुल शम्मो कमर सारे ही थे
पर तुम मुझे भाये बहुत।
कुछ और ही आलम है तुम्हारा
हर बार अजब रूप है हर बार अजबरङ्ग ।।

सर्वातिशायी मोहकता मोहनकारिणी क्रीङ्कार रूपा काली में है

शब्दार्थ प्रकाशक वेदादिशास्त्राध्ययन स्मरण प्रयोजक बुद्धिव्यापन लहरी युक्तयास्व प्रकाश संविदा अनिष्ट निवारण भोग भोग्यादि प्राप्त्याधिक्य कीर्ति जाल प्रयोजक गुण सन्तति

रचयित्री सर्वतत्व सर्व कलाधिष्ठात्री विश्वोत्पत्ति स्थिति संहृति जनक सर्वैश्वर्योपेत निरतिशयानन्दानुभव प्रकाशि का निरतिशयानन्दात्मक दहराकाशस्थ परमात्मा स्वरूपिणी अम्बरावीत सर्वाङ्गी स्वप्रकाश चिशक्तिः
(श्री कपात्र भाष्य)

रात्रौ चरति (रात्री में विहरणशीला) नक्तञ्चरी रवे आकाशे चरित इति रवेचरी व्योमचारिणी नक्तचरी रवेचरी सर्वदिक्चरी र्स्वशुभङ्करि सर्वभूतक्षयङ्करी विद्युतदशन पक्ति दैत्यदर्पनिषूदनी

ममान्त ह्रदयाम्भोजोपविष्ट कालिका
मेरे ह्रदयाम्बुज पर अधिरूढ़
सदाजनानां हृदि संनिविष्टा
भाति च तपति च कीर्त्या (छान्दोग्य)

तुम अपनी अप्रतिहत निर्निरोध दिग् दिगन्त विकीर्ण
कीर्ति से प्रकाशित और प्रताप रूपा हो
तस्यानाम महद्‌यशः–उसका नाम ही महद्‌यश है
अभि धानात्मक शक्त्यवछिन्न अनन्तप्रपञ्चोत्पादिनी
संविदानन्द का विवर्त नाम है भद्रकाली
अभिधेयात्मक शक्त्यवछिन्न अनन्तप्रपेचोऽत्पादनानु
कूल सदानन्द का विवर्त नामी है अर्थात् नाम नामी
का एक्य प्रतिपादन की इच्छा) है शब्द और अर्थ का
'तादात्म्य' व्याकरण सम्मत है
कार्य जनन सामर्थ्यमिति शक्ति (नागेश)
कार्य जनन के सामर्थ्य को शक्ति कहते है
मृत्तिका में घटोत्पादिनी शक्ति, तन्तु में पटोत्पादिनी

शक्ति, जल में तरङ्गोत्पादिनी शक्ति, दुग्ध में नवनीतोत्पादिनी शक्ति ऐसी ही अनन्तप्रपञ्चोत्पादिनी शक्ति माहेश्वर में विराजमान है

शयानः सहशक्तिभिः :–अन्तरङ्गा बहिरङ्गा शक्तियों के सङ्ग महेश्वर शयन करते है

शिवस्यात्म स्वरूपेतिशक्तिः (रामाश्रय)

शिव की आत्मस्वरूपा जिसके बिना शिव भी आत्महीन सत्ताविहीन स्फुरण शून्य हो जाते है।

आत्मा तु राधिका प्रोक्ता–वृन्दावन चन्द्राक्षी वृन्दावन चन्द्र की आत्मा है आत्मा में रमण ही आत्माराम की आत्माराम ता है राधारमण (राधारूपी आत्मा में रमण करने वाले कालीरमण) काली में काल का रमण जानकी रमण, जहाँ जहाँ जानकी की स्फुरण होगा वहा राम का रमण होगा (स्वात्मैव–ललिता) कामेश्वर उदिन्तेन्दु शेखर की आत्मा ललिता जी है

भुवनेशीं बिना ईशः किञ्चित कर्तु न शक्यते (निर्वाण तन्त्रे)

निखिल भुवन की भुवनेश्वरी के बिना 'ईश' कुछ भी करने में असमर्थ है

शक्तिज्ञानं बिनादेवी मुक्ति र्हास्याय कल्पते
एकांशेन भवेद ब्रह्मा एकांशेन जनार्दनः।
एकांशेन भवेद शम्भुः कालिकायः सुलोचने।।

शक्तिज्ञान बिना मुक्ति हास्यास्पद है कालिका माँ के एक अंश से ब्रह्मा, एक अंश से जनार्दन, एक अशं से शिव होते है।

इच्छा तु विष्णवे दत्ता क्रियाशक्तिवस्तु ब्रह्मणे ।
महयं दत्त्वा ज्ञान शक्ति सर्वशक्ति स्वरूपिणी।। (योगिनी तन्त्रे)

शिव जी कहते है इच्छा शक्ति विष्णु को दिया (भगवती ने)

क्रियाशक्ति ब्रह्मा को दिया और मुझे ज्ञान शक्ति दिया सर्वशक्तिस्वरूपिणी कोटि मार्त्तण्ड विग्रह (श्रुतिमौलिशेरवरलता) माँ श्यामाँ

अनुद्‌बुद्ध शक्ति सत्ता की प्रकाशक नही होती और अप्रकाशमान सत्ता कभी चिद्‌भावनापन्न नही होता।

"देवता मुनिभिः प्रोक्ता महाकाली पुरातनी देवता" और मुनियो के द्वारा महाकाली पुरातनी सनातनी रूप से गायी गई है पिनाक धनुराकार भ्रूलता जिसकी है अपरिछिन्न अनन्त तेजोराशिमयी श्यामल महोमय प्रकाश पुञ्जिका अनन्त कोटि योगिनी वृन्द समाराधिता नित्य निरवधिक निरतिशयानन्दात्मक सम्राज्य सम्पद् अभिमान शालिनी कालिका

हे संसारपङ्क निर्मग्न समुद्धरण पण्डिते
कालीदिम्बरी देवी जगन्मोहन कारिणी (योगिनी तन्त्रे)

अत्ता चराचरग्रहणात् (ब्रह्मसूत्र) आत्मा चर अचर समग्र विश्व का अत्ता भोवता यहाँ आत्मिका काली ही भक्षण अनुरोधी गलविलाघः संयोगानुकूल हलचल करती है

कलयति भक्षयति सा काली
निः शेषतत्वकवलिनी विकलेवर कैवल्यरूपा माँ

अत्ता (आत् सातच गमने) से आत्मा शब्द अत्तीति अत्ता (खात्ता है इसलिए अत्ता है)

आत्मदेव
हे ताम्रोष्ठी तपस्वी चित्त तल्पस्थ–तपस्वी के
चित्ताम्बुज रूप पलङ्ग पर विहरण करने वाली

दो चित्तवृत्ति या अधिक तत् तद् चित्तवृत्ति (दो विकल्पो) के अन्तर्गत अनुस्यूत

संविदानन्द

विवर्धनी चिति

प्रकाश (शिव) विमर्श (शिवा)–संहार में शिव का प्राधान्य सृष्टि में शक्ति का प्राधान्य प्रभा में इदमं श ग्राह्य होता है अहमंश ग्राहक शिव शक्ति संश्लिष्ट थे

आसीज्ज्ञानमयो ह्यर्थो एकमेवाविकल्पितः

ज्ञान और अर्थ दोनों ही अविकल्पित होकर साथ थे प्रकाश के साथ विचारात्मक शक्ति का अस्तित्व अनिवार्य्य है यहाँ तक कि महावाक्यजन्य परब्रह्माकार वृत्ति के उत्पन्न होने पर भी आवरक अज्ञान के मिट जाने पर वृत्ति रूप विमर्श बना ही रहता है वेदान्ती इस वृत्ति को स्व पर विनाशक मानते है परन्तु शाक्ताद्वैती कहते है अपने में नाश्य नाशक भाव सम्भव नही है।

अतः वृत्तिरूपा विद्या से संलिष्ट होकर अनन्त प्रकाश स्वरूप शिव सदा विराजमान रहते है। शिवा अर्न्तमुख होकर शिव हो जाती है।

(शक्ति दर्शन)

मुक्तावन्तर्मुरवे त्वं भुवनेश्वरी तिष्ठसि

अतः शक्ति नित्य है–नित्यैव सा जगद्धात्री

विमर्श प्रकाश शक्ति का शिव में प्रवेश होने से बिन्दु स्त्रीतत्व नाद की उत्पत्ति हुई जब दूध पानी की तरह दोनो एक हो गये तब संयुक्त बिन्दु हुए वही अर्द्धनारीश्वर हुए । इनकी परस्पर आसक्ति भी काम है श्वेत बिन्दु पुस्त्वं का रक्तबिन्दु स्त्रीत्व का परिचायक है तीनों जब मिलने है तो काम कला की उत्पत्ति होती है मूल बिन्दु नाद और श्वेत तथा रक्त बिन्दु इन चारो के मिलने से सृष्टि होती है काम कला देवी का संयुक्त बिन्दु बदन है अग्नि और चन्द्र वक्ष स्थल है अर्द्धकला जननेन्द्रिय है (अ) शिव का प्रतीक है 'इ' शक्ति का प्रतीक है यह त्रिपुर सुन्दरी 'अहं' से व्याप्त है सहस्त्रार के चन्द्रगर्भ से स्रवित आसव को पान कर ज्ञानकृपाण से काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि के असुर पशुओं को मारकर वञ्चना पिशुनता ईर्ष्या मछलियों को पकाकर आशा कामना निन्दा मुद्रा को धारण कर मेरूदण्डश्रिता रमणियों में रमण कर सामरस्य की प्रप्ति होती है कुछ लोग पंञ्चमकार का ही रहस्य बतलाते है।

"यदयमनुत्तर मूर्तिनिजेच्छया विश्वमिद सष्टुम।
पस्पन्दे सस्पन्दः प्रथमः शिव तत्वं मुच्यते तज्ज्ञैः"।।

शिवसंश्लिष्ट शक्ति विश्व का बीज है। अहं प्रकाश में शिव तत्व निश्चेष्ट शक्ति सक्रिय रहती है। यही काली की विपरीत रति है विमर्शात्मिका शक्ति जब शिव में लीन होती है तब उन्मना अवस्था होती है। उसके विकसित होने पर समना अवस्था होती है।

"सच्चिदानन्द विमवात्सङ्कल्पात्परमेश्वरात्।
आसीच्छक्तिस्ततो नादो नादो नादद्विन्दु समुद्भवः"।।

व्यवहार में शक्तिमान से शक्ति का आदर अधिक है बुद्धि बिना बुद्धिमान का, बल बिना बलवान का, शिल्पशक्ति बिना शिल्पी का कुछ भी मूल्य नहीं रहता। मिठास बिना मिश्री का सौगन्ध बिना पुष्प का, सौदर्य बिना सुन्दरी की लज्जा बिन कुलाङ्गना का कुछ भी महत्व नही रह जाता। शाक्ता द्वैतदृष्टि से शक्ति से शक्ति शिव स्वरूप ही है।

रूद्रहींन विष्णुहीनं न वदन्ति जनाः किल।
शक्तिहीनं यथा सर्वे प्रवदन्ति नराधमम्।।

कोई भी प्राणी रूद्रहीन, विष्णुहीन, होने से शोचनीय नही होता किन्तु शक्तिहीन होने से ही शोचनीय होता है।

नायमात्मा बलहीनेन लभ्य, बलहीन प्राणी को अपनी आत्मा का उपलम्भ नही होता शिवस्याभ्यन्तरेशक्ति

शक्तेरभ्यन्तरः शिवः।
अन्तरं नैव जानीयाच्चन्द्र चान्द्रिकयोरिव ।।

शिव में आभ्यन्तर शक्ति है और शक्ति के अन्दर शिव है

शिव है चन्द्र की चन्द्रिका की तरह भेद रहित है दुग्ध और धवलिमा की तरह अग्नि और दाहिका समुदवेल, वृक्षलता, शब्दअर्थ, पदार्थ–शक्ति, पुं–स्त्री, इज्ञ–इज्या, क्रिया और फलभुक् व्यक्तिव्यञ्जकता रूप नीतिजय, बोधिबुद्धि, धर्म सत्क्रिया, संतोष तुष्टि इच्छा काम, यज्ञ दक्षिणा, आज्याहुतिपुरोडाश, काष्ठा–नियमों मुहूर्त्त–कला, यज्ञ दक्षिणा, आज्याहुति पुरोडाश, काष्ठा–निमे, मुहूर्त्त–कला,ज्योत्सनप्रदीप, रात्रि दिन, ध्वज पताका तृष्ण लोभ, रतिराग उपर्युक्त विभेद से उसी तत्त्व का अनेकधा प्राकट्य है भगवान की स्वरूपभूता आह्लदिनी शक्ति विवक्षित अनन्तानन्त शक्तिसम्पन्न आनन्द प्रधान भूता काली माँ आनन्दाश्रित आह्लदिनी, चेतनांशाश्रित संवित, सदंशाश्रित सन्धिनी शक्ति बिना शक्ति के आनन्द उल्लास हीन प्रकाश प्रकाशहीन और सत्य सन्धान शून्य हों जायेगा।

तादात्म्यमनयोर्नित्यं वह्विदाह्वकयोरिव

जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति का नित्य तादात्म्य है वैसे ही महाकाल का स्वप्रेयसी मूर्धन्या काली से तादात्म्य है अभेद घटित तादात्म्य होता है

भेद जो आपाततः था वह विगलित हो गया दोऊ चकोर दोऊ चन्दा, दोऊ आशिक दोऊ महबूब गौरतेजो बिना यस्तु श्यामतेजः समर्चयेत्, । जपेद्व ध्यायते वापि स भवेत पातकी शिव ।।

गौरङ्गीरधिका की उपासना किये बिना जो केवल श्याम तेज कृष्ण की अराधना करता है वह पातकी होता है भागवती की ब्रह्मरूपता, उत्कृष्टता सर्वानपेक्षया सुतरां नितरां सिद्ध है हे रसनाग्र नर्त्तकी रसनाग्रसदना वाचा क्रीडन्ति विजिगीषन्ति द्योतन्ते स्तुवन्ती इत्यादिरीत्य वाग्देव्यः

सर्वस्व आत्मसात् करना काम कला है

बिन्दु (सूर्य) मुखाम्बुज
दो बिन्दु (अग्नि, सोम) स्तन
स्पराद्ध ही योनि महद्रूपा है।

बिन्दुना मुखम
बिन्दुद्वयेन कुचौ
सपरार्द्धेन योनि

सपरार्द्ध ही योनि महद् रूपा है

वाणी से जो विक्रीडन करे प्रकाशन, स्तवन, प्रौढ़ 'वाग्मिता' अनिरूद्धा सरस्वती है

अ + ई = एकार त्रिकोणाकृति होने से महद योनि है

ईयते स्मर्यते अधीयते वा स्र्वा वेदशास्त्रादि

कला अनेन इति ए

ऐं वाग्बीज से चित्स्वरूपा अनिरूद्धा सरस्वती काली विवक्षित है। सम्यक् कलयति इति सकला काली। कायदे से आनन्दित करती है

निर्धूत निखिल ध्वान्ते नित्यमुक्त परात्परे
अखण्ड ब्रह्मविद्यायै चित्सदानन्दरूपिणि
अनुसन्दहमहे नित्यं वयं त्वां हृदयाम्बुजे

हे निर्धूतनिखिलध्वान्ते
नित्यमुक्ते
हे परात्परे
चित्सदानन्दरूपिणि माँ

मै अखण्ड ब्रह्म विद्या के लिए आपका अपने हृदयाम्बुज में अनुसन्धान करता हूँ

ह्रीं–हरति विहरति वा या हरण या पूरण वृत्ति
मायामहा लक्ष्मी सिद्धलक्ष्मी धन कालिका

विवक्षित है 'सप्तम् धन' कालिका विवक्षित है सप्तम् धन कालिका (महाकालसंहिता)

हृदयागार निवासिनी हूल्लेखा (तां माति) उसको जो अव बोधित करा दे वही ह्रीं है अर्थात् परमात्मतत्त्वावमासिनी सिद्धलक्ष्मी

एक वीरा भद्रकाली सौ नन्दी उल्लसदगदा लक्ष्मी सहस्रनाम में भी लक्ष्मी का ये नाम लक्ष्मी की काली रूपता सिद्ध करता हैं।

क्लीं या क्रीं (कामेशवर कामेश्वरी का युगनद्ध यामल

इस बीज से सान्द्रानन्दरूपा महाकाली विवक्षित है सर्वानुभव संवेद्य आनन्द ही पर पुरुषार्थ है आत्मनस्तु कामाय सर्व प्रियं भवति (श्रुति)

सब कुछ आत्मा के लिए प्रिय है आत्मस्वरूप आनन्द ही शेषी है तदितर सब शेष मानुषानन्द से लेकर गन्धर्व देवगन्धर्व, अजानजदेव श्रौतदेव, इन्द्र वृहस्पति प्रजापति ब्रह्मान्त उत्तरोत्तरशतगुणित आनन्द जिसका बिन्दु मात्र है वही आनन्दघनरूपा महाकाली

क्रीं अर्थात् आत्मरिरंसा–आत्मरमणा
आत्म रति–आत्मभार्या आलिङ्गन
ये सब 'तात्पर्यगर्भ' परिलक्षित होता है
या काली परमा विद्या ब्रह्मरूपा सनातनी।
कामाख्या सैव देवेशी सर्वसिद्धि प्रदायिनी।।
अस्या उपासकाश्चैव ब्रह्माविष्णु, शिवादय :
इसके उपासक ब्रह्मा, विष्णु शिव आदि है
काशीशवरदायिनी लङ्केशरिपुरक्षिणि
कालिमन्त्रं जपेद् यो हि कालिपुत्रो न संशयः (योगिनी)

जो काली मन्त्र का जप करता है वह काली पुत्र ही है संशय नही करना चाहिए

सन्देहात् पामरो याति रौरवं पितृभिः सह
संशयात्मा दोलायमान चित्त नष्ट हो जाता है।
आशंसन्ति हि पितरो नराणां पुण्यकर्मणाम्।
कदास्माकं कुले पुत्रः कालीमन्त्रमुपाश्रयेत्।। (योगिनी तन्त्रे)

त्रिकोणरूपिणी शक्ति र्विन्दुरूप पर शिवः
अविनाभावसम्बन्धं तस्माद् विन्दुत्रिकोणयोः

बिन्दु क्षेत्रहीन वृत्त भी है और क्षेत्रहीन त्रिकोण भी बिन्दु में विक्षोभ द्वय बिन्दु रेखा और त्रिरेखा ब्रह्मा, विष्णु शिवात्मक वामा, ज्येष्ठा, रौद्री और उसमें दिव्य ज्योर्तिमयलिङ्ग रूप बिन्दु का अविनाभाव सम्बन्ध है

त्रिकोणं पञ्चकं चाष्टकमलम भूपुरान्वितम्
मुण्डपक्ति च ज्वालां काली यन्त्रं सुसिद्धिदम्

पाँच त्रिकोण (पञ्चकोश, पञ्चप्राण, पञ्च रूप, रस शब्द गन्ध स्पर्श) में पन्द्रह नित्याये रहती है

काली, कपालिनी, कुल्ला, कुरुकुल्ला, विरोधिनी विप्रचित्रा चोग्रा,उग्रप्रभा, दीप्ता नीला घना, बलाका मात्रा मुद्रा, अमिता ये काली की पन्द्रह नित्याये ब्रह्माणी, नारायणी, महेश्वरी, चामुण्डा कौमारी अपराजिता, वाराही, नारसिंही अष्ट कमल दालों पर विराजमान हैं ।

माधव, रूद्र, विनायक, शौरा ये चारो कोण इन्द्र, राम, वरूण, कुबेर ये चारो दिशा में काली यन्त्रभूत निवास अड्डे पर रहते है

अञ्जनमयपर्वताकारा या जम्बु फलो का पर्वताकार

संग्रह–काली प्रतीत होती है

ज्वलद् बदन प्रज्जवललोचन विद्युत दशनपंक्ति अलातिचक्रवद् आवर्तमान दोलायमान उदयमान मुण्डमाला चण्डयोगिनी डाकिनी, शकिनी, राकिनी गण के मध्य में विराजमान सकललोक संज्योति काली मौं गन्ध धूप तरङ्गित मन्दवायु समाकृान्त उसका परिक्षेत्र है

नव कोटि भैरवी चामुण्डा शतकोटि परिवृत एकवीरा
भरत और राम की आराध्याकाली का ध्यान

ध्यायेद देवीप्रभावोत्थ प्रोच्छलदरक्त वारिधिम्
'उतुङ्गोतुङ्ग' कल्लोल प्रपूरित दिगन्तरम्

तत्र द्वीपं रक्तमांस प्रपूरितं रक्तवालुकम्
नव कोटि चामुण्डाकोटि भैरववेष्टितम्

तन्मध्ये मण्डलं ध्यायेद योजनायुतविस्तृतम्
भौरवी कोटि घटितं प्राकारं तत्र चिन्तयेत्

नारान्त्रनद्ध मुण्डस्रगकृत तोरण मालिकम्
तदन्तः स्थायिनीं काली ध्यायेत् निश्चलकाल मानसः

उत्ताल दुर्दान्त ताण्डव रक्तसमुद्र के तरङ्गो का ऐसा
समुद्र रूधिर अर्णव उसमें रक्तमांस रक्त बालुका

मयद्वीप नव करोड़ चामुण्डा और करोड़ो भैरवों से वेष्टित दशहजार योजन विस्तृत मण्डल और प्राकार (दिवाल के घेरे) में करोड़ो भैरव सौयोजन विस्तृत मण्डल श्मशान, करोड़ो योगिनीयों की करतल ध्वनि आन्त्र मुण्ड आदि का तोरणद्वार चारो वेद, चारो युग, उपवेद भृङ्ग, कोकिल, शुकादि झाङ्कृतियों से कूजन ब्याज ध्वनि हो रही है

ब्रह्मा विष्णुश्च रूद्रश्च ईश्वरश्च सदा शिवः ।
ऐते पञ्चमहाप्रेताः स्थिताः सिंहासनादधः ।।

ब्रह्म–ब्रह्माण्ड गत अभिमान शून्य होकर प्रेत संज्ञा होता है
विष्णु–प्रकृत्यण्ड अभिमान शून्य होकर प्रेत होता है

शाक्ताण्ड

अर्थात् ये ब्रह्मा विष्णु रूद्र ईश्वरादि स्व देहाभिमान विगलित होकर शव संज्ञा में भगवती के सिंहासन के अधः स्तात् उपस्थित है

पञ्चप्रेतमयसिंहासनारूढ कल्लोल काली
गलद् रक्त मुण्डावली कण्ठ माला
महाघोर रावा सुंद्रंष्द्रा कराला
विवस्त्रा श्मशानालया मुक्त केशी
महा–काल कामाकुला कालिकेयम् ।।

ये भगवती कालिका गले में रक्त टपकाते हुए मुण्ड समूहों की माला पहने हुए है ये अत्यन्त घोर शब्द कर रही है इनकी सुन्दर दाढ़े भयानक है ये वस्त्र रहित है श्मशान में निवास करती हैं इनकी केश राशि छिटकी हुई है महाकाल के साथ ये कामातुरा है।

वक्त्र कन्दरा की तरह जब विस्तीर्ण करती है। बत्तीस शुभ्रदन्तपंक्ति गोचर होता है

भुजे वाम युग्मे शिरोऽसिं दधाना
वरं दक्ष युग्मेऽभयं वै तथैव

ये अपने दोनों बाएं हाथों में नर मुण्ड और खड्ग लिए हुए है तथा अपने दोनों दाहिने हाथों में वर और अभय मुद्रा धारण किये हुए है ये सुन्दर कटिवाली है। ये तुङ्ग स्तनों के भार से झुकी हुई सी है ये दो रक्त मालाओं से सुशोभित है इनका मुख मुधर मुस्कान से युक्त है।

शव–द्वन्द्व कर्णवतंसा–सुकेशी
लसत प्रेत पाणिं प्रयुक्तैक काञ्ची
शवाकार–मञ्चाधि रूढा शिवाभि :
चतुर्दिक्षु शब्दायमानाऽभि रेजे–शक्त्यर्चा

इनके दोनों कानों में दो शव रूपी आभूषण है ये सुन्दर केष वाली है, शवों के हाथों से सुशोभित करघनी ये पहने हुए हैं। शव रूपी 'मञ्च' पर ये आसीन है। चारों दिशाओं में शिवाओं का शब्द गूंज रहा है।

कश्यं मद्यं पिबति इति कश्यपः मद्यपायी कश्यपाराध्या
माँ, "सुरापान भत्ता–सु भक्तानुरक्ता
लसत पूत चित्ते सदाऽऽविर्भवते।
जप ध्यान पूजा सुधा धौत पङ्का
स्वरूपं त्वदीय न विन्दन्ति देवा।।

तुम सदा सुरापन से मस्त रहती हो अपने भक्तों पर सदा स्नेह रखती हो जप–ध्यान पूजा रूपी अमृत से निर्मल हुए पवित्र हृदय में तुम्हारा आविर्भाव होकर शोभायमान होता है। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नही जानते।

चिदानंद कन्दं हसन् मन्द मन्दम्
शरच्चन्द्र कोटि प्रभा पुञ्जविम्बं।
मुनीनां कवीनां हृदि द्योतयन्तम्
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवा।।
चैतन्य पूर्ण आनन्द की तुम मूल हो
मन्द मन्द तुम मुस्काती हो करोड़ो शरच्चन्द्रो
की प्रभा से युक्त मुखवाली हो मुनियों
और कवियों के हृदय को तुम प्रकाशित
करती हो तुम्हारे इस स्वरूप को
देवगण भी नही जानते।

वितस्तिमात्रनिष्क्रान्त (एक बीता जीभ निकाले है) ललज्जिह्वाभयङ्करा

महा मेघकाली सुरक्ताऽपि शुभ्रा
कदाचित विचित्राकृर्ति योग–माया।
न बाला न वृद्धा न कामातुराऽपि
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवा।।
प्रलय कालीन घटाओं के समान तुम कृष्ण वर्णा हो
रक्तवर्णा भी हो उज्जवल वर्णा भी हो कभी विचित्र
आकृति वाली योग माया हो न तुम बाला हो
न वृद्धा हो न कामातुरा हो।
तुम्हारे स्वरुप को देवता भी नही जानते।
खड्गाय नमः, मुण्डाय नम अभयाय नमः, वराय नमः
न मम् (मेरा नही है।) इति नमः
मेरा कुछ नही है यही नमन का तात्पर्य है

देह तद् धर्म, देहगत कर्म तथा देह की अवस्थाओं से निर्गत ममता बन्धन निर्ममत्व या (नमः न मम्) पदार्थ है काल्यैनमः कुल्लायै नम कपालिन्यै नमः विरोधिन्यै नमः विप्रचित्तायै नमः उग्रायै नमः उग्रप्रभायै नमः नीलायै नमः घनायै नमः बलाकायै नमः मात्रायै नमः मुद्रायै नमः मितायै नमः। असिताङ्ग रूरू भैरवाय नमः चण्ड भैरवाय नमः क्रोध भैरवाय नमः उन्मत्त भैरवाय नमः कपालि भैरवाय नमः भीषण भैरवाय नमः संहार भैरवाय नमः "उत्तमा मानसी पूजा वाह्य पूजा कनीयसी" मानसी पूजा सर्वोत्तम है। मानो आकाश ही महेन्द्र नीलमणि का कराहा है नक्षत्र मण्डल व्यष्टि

व्यष्टि–दीप पक्तियाँ चन्द्रमण्डल सूर्य मण्डल आदि दीपक उसे भक्त अपने हस्तारविन्द में लेकर आरार्तिवन्य सम्पादन करें या वृत्ति विषय के जड़त्व का निराकरण ही आरार्तिक्य है वृत्ति का भगवती विग्रह में लय ही अष्टधा प्रणाम है

वेद वाक्य से भी अगम्य की क्या स्तुति हो सकती है।

प्रोज्झिताशेषविकारा कारा माँ अजस्र नीलज्ज्योती रूपा है वाणियों का भगवती में उपसंहार ही स्तुति है नित्यतृप्ता को क्या नैवेद्य तथापि अमृतत्व भावना ही नैवेद्य समर्पण है उस अनन्ता की क्या प्रदक्षिणाहोगी पूर्णा का आह्वाह्न कैसे।

सर्वाधारा निराधारा को क्या आसन निर्मला निष्कलङ्का धवलाङ्गी का क्या स्नपन विश्वोदरा को कौन सा वस्त्र परिवेष्टित करेगा स्वप्रकाशस्वरूपा का क्या निराजन तथाऽपि नामरूपात्मक जगत में सच्चिदानन्द की भावना ही अम्बा को पाद्य समर्पण है सूक्ष्म जगत में चितिभावना अर्घ्य समर्पण है चितिका

परिभावन आचमन है चिद्रूपाकामेश्वरी में वृतविषयता का चिन्तन करना प्रोञ्छन है निर्मलत्व निश्कलङ्कत्व, निरज्जनत्व अशोकत्व आदि की भावना विविध आभूषणों का अर्पण है स्वशरीर घटक पार्थिव प्रपञ्च में चिन्मात्र भावना गन्ध समर्पण है आकाश में चिन्मात्र की भावना पुष्पस्तवक समर्पण है वायु में चिन्मात्र की भावना धूप समर्पण है तेज में चिन्मात्र की भावना दीप समर्पण है।

इसके वेदन में शोकोपलक्षित संसार का तरण हैं।

"स्वस्मिन् कालीं तु सम्भाव्य पूजयेज्जगदम्बिकाम त्रैलोक्य विजयी भूयान्नात्र कार्य्य विचारण" अपने ही (हृदयागार दहराकाश) में सम्यक् भावना जगदम्किा का काली का करे त्रैलोक्य व्यापी विजय अधिगत होगी यहाँ संशय नही करना चाहिए।

नानालङ्कार भूषाङ्गी नग्नां मत्तां सदासवै
आवरणशून्य अम्बरावीतसर्वाङ्गी दिगम्बरा ।

नानालङ्कारभूषाङ्गी प्रमत्त वारूणी
रसपान के द्वारा सदामदायै नमः

मदहर्षे सदैव नृत्योल्लासविह्वला
चमत्कृताङ्गी झंझाकार

कड़कड़ करे काली का देवी
भड़-भड़ करे मशान

भमाकं काली भमाक चण्डी
भमोंक श्मशान 'झिलमिलतारा के लागएल

दुकुलियों तोके देस्वय वाले हजार (श्री कीनाराम)

जयगङ्गाराम जयचण्डीवाम

पिवकाली रसं रसने
पिवकाली रसं रसने

सुश्रृङ्गार रसे नैव विहरेत् परमात्मनि।
आनन्दमय संभूय ऐक्यं ब्रहणि सम्भवेत।। (घेरण्डसंहिता)

श्रृङ्गार रस से परमात्मा में आनन्दमयता का अनुसन्धान "कामस्तु वासुदेवांशः"—काम वासुदेव का अंशया अपत्य प्रद्युम्न है

न मय्याबेशितधियां कामः कामाय कल्पते।
भर्जिता क्वथिता घाना प्रायो विजायनेष्यते।।

भगवत तत्त्व आवेशित चित्तका काम काम नही है जो बीज दग्ध है वे अङ्कुर निष्पत्ति नही करते

काम क्रोधं भयं स्नेहमैक्यं सौहृदमेव च।
नित्यं हरौ विदधतो यन्ती तनमयता हिते ।। (श्रीमद् 10-29-15)

"कामं क्रोध स्नेह सौहृद आदि किसी भी भावना से प्रेरित हो-भगवती परायण हो जाने पर भृंगीकीट न्यायत उसमें भगवती भाव का पूर्ण विकास हो जाता है।

काल काली की रतिमिथुन विहार रूप चिन्तन
विकारावर्ति च (ब्रह्म सूत्र 4-4-19)

अर्थात् भगवान विकार के भीतर भी है बाहर भी है जहाँ भगवत्सत्ता स्फूर्ति हुई की कमनीय काम रमणीय राम हो जाता है।

हरिरेव जगत् जगदेव हरिर्हरितो जगतो
नहि भिन्न तनु
इति यस्यमतिः परमार्थ गतिः
स नरोभव सागरमुत्तरति ।।

'हरिव्यतिरिक्तं' जगन्नास्ति
हरि से व्यतिरिक्त जगद् नही है

हरि ही जगद् है
जगदेव हरि जगद् ही हरि है

जगद्व्यति रिक्तौ हरिर्नास्ति
जगद् से अतिरिक्त हरि नही है

परस्पर रतिक्रियाभिलाष ही काम है या सम्पूर्ण इच्छा मात्र ही काम पदवाच्य है काम ही आकर्षण का मूल रस है रस व्यापक है रस के कारण ही अणु अणु में आकर्षण है दो अणुओं के मिलने से द्वयणुक और तीन से त्रसरेणु बनता है यथाक्रम सृष्टि रचना का प्रवाह चलता है अतः रस ही सृष्टि का मूल है रसघन कामेश्वरी क्रीं रूपा

तमेव परमात्मानं जारबुद्धयापि सड.गता।
जहुर्गणमयं देहं सद्यः प्रक्षीण बन्धना।। (श्रमदाभागवत 10-29-99)

उंस परमात्मा को जार बुद्धि (पर पुरुष जरयति अविद्यां इतिजारः यहाँ जो अविद्या को दग्ध करे वह जार) से भी भजता है वह गुणमय प्राकृत देह बन्ध से विनिर्मुक्त हो जाता है।

परदे पे परदा किये जा रहे हैं जिसे देखने को जिये जा रहे है।'

नित्याव्यक्तोपि भगवानीक्ष्यते निजभक्तितः

नित्य अव्यक्त भगवती तत्व भी भक्तो के द्वारा देखा जाता है। दिव्यं ददाभि ते चक्षुः 'पश्य' में योगमैश्वरम्

विक्रीडितं व्रजवधूभिरिदं च विष्णोंः

श्रद्धान्वितोऽनुश्रृणुयादथ वर्णयेत् यः

भक्तिं परां भगवति प्रतिलभ्य कामं

हृद्रोगभाश्वपहिनोत्यचिरेण धीरः

कृष्ण का व्रजवधूजनो से जो रसमय विक्रीडन है इसको जो धीर श्रृद्धापूर्वक श्रवण करते है वर्णन करते है वह भगवान मे परा भक्ति लाभ कर अतिशीघ्र ही हृद्रोग का उन्मूलन कर भगवद् भाव को प्राप्त हो जाता है

वैसे ते माया हेय है पर पर–मं शिवं अयति स्वभावतः प्राप्नोति

मायां वर्णयतोऽमुष्य ईश्वरस्यानुमोदतः। श्रृण्वतो श्रद्धया नित्यं माययाऽऽत्मा न मुह्यति

जो (म) शिव को सहज प्राप्त हो वह शक्तिमाया है। (भागवत 1–7–53)

जो पुरूष ईश्वर की अचिन्त्य माया का वर्णन करते है अनुमोदन करते है श्रृद्धा के साथ नित्य श्रवण करते है उनका चित्त माया से मोहित नही होता

भोक्ता भोग्यं प्रेरयिता चमत्वा सर्वप्रोक्त त्रिविधं ब्रह्ममेतत् (श्वेताश्वतरोपनिषद)

भोक्ता, भोग्य प्रेरशिता (प्रेरक) ये तीनो रस ब्रह्म तत्व ही है

त्रिपञ्चारे पीठे शवशिवहृदि स्मेरवदनां

महाकाले नोच्चैर्म्मदन रसलावाण्य निरताम्

समासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्दनिरतो

जनो यो ध्याये त्वामयि जननि स स्यात् स्मरहरः

अयि जननि हम सबकी उत्पादयित्री

यो जनः नक्तम् अर्द्धरात्री में आत्मरतानन्द निरत होकर तुझमें समासक्त चित्त–त्रिपञ्चारे पीठे अविद्यारूपवृत से वेष्टित, अष्टधा प्रकृति पञ्चज्ञानेन्द्रिय पञ्चकर्मेन्द्रिय पञ्चप्राण रूप त्रिकोण विशिष्ट शुद्धसत्त्वात्मिका माया प्रतिबिम्बित चैतन्य स्वदेह यन्त्र में ही। शववद् निष्क्रिय शिव हृदय पर शिवाकाली।

महाकालेन (महाकाल के संग उद्दाम काम विपरीत रीरंसा करती हुई । स्मेरवदनां –मन्द मन्द मुस्कान पूर्ण मुख से जो तुमको ब्रह्मस्रूपिणी ध्यान करेगा वह स्मरहर शिवोपम हो जायेगा।

निजदेहाख्य यन्त्रन्तु सर्वयन्त्रात् परं स्मृतम् (गन्धर्व तन्त्रम्)

निज देह रूपी यन्त्र में भगवती का ध्यान

सर्वोकृष्ट है विश्वोद्भ स्थल भगरूपा भगवती

भाति वा भासयते भं (ज्योति) गमयति–पहुँचाता है

जो ज्योति को पहुँचादे वही भग–भगवती है

ककारः कृष्णरूपः स्याल्ल कारश्चापि राधिका

ईकाराख्या कामकला तद्विलासस्तु चन्द्रकः

प्रेमसारभृताम्भोधिः ककारार्थस्तु केशवः

तन्माधुर्यैक साराब्धिर्लकारार्थस्तु राधिकाः

ईकारार्थः स्मरोऽपूर्व 'साक्षान्मन्मथमोहनः'

तदुल्लासवशावेशवशयो रूदभटं मुदा

संश्लेषादि विलासात्मा चन्द्रकार्थःप्रकीर्तितः

ककारः पुरूषः कृष्णः सच्चिदानन्द विग्रहः

ईकारः प्रकृति राधा नित्यं वृन्दावनेष्वरी

लश्चानन्दात्मकः प्रेमसुखं च परिकिर्तितम्

चुम्बनाश्लेशमाधुर्य बिन्दुनाद मुदीरितम्। (गौतम तन्त्रे)

माना जाता है कि क्लीं जो कि काम बीज है उसमें (क) का अर्थ है श्री कृष्ण परमानन्दकन्द मदन मोहन व्रजेन्द्रनन्दन 'ल' का अर्थ है राधारानी वृषभानुनन्दिनी रासेष्वरी 'ई' जो कि दीर्घ चतुर्थस्वर है उसका अर्थ है तन्त्रों में (कामकला)। जिसका तात्पर्य है उत्कृष्ट प्रीति और (ं) बिन्दु का अर्थ है रसोद्रेक इस तरह 'क' अचित्य परमानन्दसुधासिन्धु श्री कृष्ण 'ल' सुधा सिन्धु के माधुर्यसार सर्वस्व की अधिष्ठात्री राधारानी (ई) आनन्देसार सर्वस्व श्री कृष्ण और मार्धुयसार सर्वस्व श्री राधारानी दोनों का परस्पर प्रेम (ं) श्री राधाकृष्ण के परस्पर सम्मिलन से प्रादुर्भूत रसोद्रेक। अभिप्राय यह है काम बीज क्लीं का अर्थ श्री राधाकृष्ण के परस्पर प्रेम पूर्ण सम्मिलन से प्रादूर्भूत लोकोत्तर अर्थात ककार 'कृष्ण' है लकार राधा ईकार कामकला उसका विलास 'बिन्दु' अथवा ककार कृष्ण 'ईकार' राधा लकार आनन्द 'प्रेमसुख' उसका माधुर्य है बिन्दु।

क्लीं काम बीज (जो कृष्ण) का है उसमे काली शब्द के वर्णावयव (क, आ, ल, ई) क, ल ई से बना या गठित है

''स्वयं भगवान्कृष्णः काली रूपों अभवत् व्रजे'' कृष्ण ही काली हैं (महाकाल संहिता)

नभसोऽधिपति र्विष्णुरग्नेश्चैव माहेश्वरी
वायो सूर्यः क्षितेरीशां जीवनस्य गणाधिपः (कपिल तन्त्र)

अर्थ नभ आकाश के देवता विष्णु है
अग्नि तत्व के देवता भगवती महेश्वरी कालिका है
वायु तत्व के देवता भगवान सूर्य है।
पृथ्वी तत्व के देवता भगवान ईश शिव है।
जल तत्व के देवता भगवान गणपति है।
जिसमें जिस तत्व का प्राधान्य होगा
उसका वही देवता होगा अग्नि तत्व
के प्राधान्य से भगवती माहेश्वरी कालिका ईष्ट होगी।

अधिकारी भेदेन भेद है

इश्क करना अगर ए दिल तुझे मन्जूर है।
इश्क कर उस नूर से जो सभी नूरों का नूर है।

हम सब महाकाली समुद्र की तरङ्गे है।

हेलना या लीला पूर्वक भी जो माँ को भजता है तो भी मन का कुछ अंश अनिवार्य रूप से रहताहै क्योकि श्री कालकान्ता कपाल कामिनि इत्यादि शब्द उच्चारण के पूर्ण मन संकल्प पूर्वक ही मानस योग से उच्चरित होगा।

मनसा वा अग्रे सङ्कल्प यत्यथ वाचाव्यहरति । पहले मन से संकल्प करता है फिर वाणी से उच्चारण करता है।

'यद्धि मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति' (श्रुति)

जो मन से ध्यान करता है वही वाणी से उच्चारण करता है शब्द अनुशासन में उच्चारण प्रक्रिया निम्नांकित है

आत्मा बुद्धया समेत्यर्थान
मनोयुङ्क्ते विवक्षया
मनः कायाग्निम हन्ति
सप्रेरयति मारूतम्
सोदीर्णो मूर्द्धयभिहितः
वक्त्रमापद्यमारूतः
वर्णान् जनयते।

आत्मा–अन्तः करण संस्कार रूप से स्वगत अर्थ को बुद्धि द्वारा (स्ववृत्या समेत्य) एक बुद्धि का विषय कर उसके बोधन की इच्छा के लिए मन को नियुक्त करते हैं वह मन कायाग्नि को प्रेरित करता है और कायाग्नि (जठयग्नि) सं प्रेरित वायु शीर्ष (मूर्धा पर्यन्त जाता है वहाँ) से प्रत्यावर्तित होकर तल्वादि कण्ठ से वक्त्र द्वारा शब्द उच्चरित होता है अर्थात बिना (कुछ मन के) शब्द उच्चारण ही अशक्त है अतः कोई भी राम राम जप ढोंग होगा या पाप खण्ड रूप पाखण्ड नही है क्योकि उच्चारण कर्त्ता का मन वहाँ रहेगा तो मनयुक्त होने से यथार्थ पूजन है।

श्मशान काली श्मशानागारवासिनी महाश्मशान जहाँ स्थूल सूक्ष्म, कारण शरीर त्रय का दग्ध हो जाता है वह ज्ञानगञ्ज काशी, ज्ञान भूमि है कर्म बाधित है अखण्ड बोध से (वाराणसी परा क्षेत्रं काली रूपं परात्परम) (योगिनी तन्त्र) वाराणसी परात्परा काली ही है।

श्मशब्देन शवः प्रोक्तः शानं शयनमुच्यते

श्म (श) शान्त शव को कहते है और शानं (शयन को) अर्थात् शवशयनस्थल ही श्मशान दृश्य जड़वर्ग की होली देहाभिमान विगलित होत है देहाभिमान की अस्थि तक का चवर्ण करती कालिका शवमांसकवलनी ही महाश्मशान काशी पुरी है

सा काशिका नीजबोधरूपा
सा कालिका नीजबोधरूपा

वह कालिका अखिल प्रकाशिका स्पन्दनात्मिका विमर्शरूपा काशिका ही है काशीपुरी पराशक्ति रूप है।

विथ्यां विथ्यां अटति जटिलः कोऽपि काशी निवासी

गली गली में कोई कपाल धारी काशी
निवासी नटन अटन कर रहा है।

विहरणपरायण परम आनन्दमयमहा कामेश का प्रलयकाल मे भी निजकान्ता काली से वियोग नही होता अतः अविमुक्त संज्ञा वाली से काशिका

कस्मै देवाय हविषा विधेम
किस देवता के लिए हवि का विधान करे तो

एकस्मै देवाय हविषा विधेम यही एक आत्मिका आत्मदेवी कालिका को हवि का विधान करो।

"सनगरेजो ने कलमा पढ़ा अपनी जुबा से
खुद अपनी मिसाल आप है किरदारे मोहम्मद"

अनुपमेया अद्वितीया उसका प्रत्येक हलचल खुद अपना आदर्श है "कालिका सर्वतोऽधिका" विश्वात्मक और विश्वातीत द्वन्द्वातीता

विश्वात्मक और विश्वातीत,द्वन्द्वात्मक कलन और द्वन्द्वातीता–विश्वात्मक और विश्वातीत द्वन्द्वातीता विश्वात्मक "दृश्येऽप्यनुस्यूता चिति" अर्थात दृश्य घट पट, मठ आदि चैत्य संवर्ग में चिति अनुगत है उसी महा अधिष्ठान में सब लेला खेलाविविध वैचित्र्य कल्लोल क्षोभ द्वैत का पट्वत् अतान वितान करती चिति विश्वं कलयति जानति सा काली

सर्वज्ञा की दृष्टि से क्या ओझल है

स्थावर जङ्गम नाहं देखे देखे काली मूर्ति उसकी अशेष विशेष की जानकारी प्राप्त करती है ज्ञान जब विज्ञान में परिणत हो जाता है एक ओर शुद्ध भक्ति दूसरी ओर शुद्ध कृपा उदित होकर महाशक्ति के सुशीतल अंक में भक्त को आकर्षित करती है तब पतन की आशंका नही होती।

शिशु जब माँ का हाँथ पकड़कर चलता है तब गिर जाने की सम्भावना रहती है। कारण दुर्बल शिशु की क्लान्त मुट्ठी स्खलित होने में देर नही लगती लेकिन जननी जब स्वयं शिशु का हाँथ पकड़ कर चलाती है तब डर की कोई बात नही रहती । जब पिता कान पकड़ता है तो मोचन कराती है ज्ञान और विज्ञान के साथ 'सवितृतत्व' का घनिष्ट सम्बन्ध है सूर्य में संयम करने पर जो भुवन ज्ञान होता है सभी पदार्थो का ज्ञान लाभ होता है यह बात योग शास्त्र मे है इसका एक कारण यह है सूर्य सभी पदार्थों का प्रसवकर्ता मूलस्तम्भ है केन्द्र स्वरूप है

"हे ज्वरतापहारिका भगवती कालिका"

देवलोक ऋषिलोक पितृलोक सबकी प्रसवकारिणी है माँ। काल क्रममय है

प्रसवकारिणी है माँ। काल क्रममय है
पौर्वापर्य का निर्धारक है काल, कालसंकिर्षिणी

काली इस निर्धारण क्रममयता का व्याकोप कर देती है
परिणाम के साथ काल का नित्य सम्बन्ध है
परिणाम दो तरह के है (1) सदृश (1) विसदृश

प्रकृति महाप्रलय के समय सदृश परिणाम युक्त रहती है सृष्टि के समय विसदृश परिणाम युक्त रहती है लेकिन कालसंकिर्शिषी इन सबसे उर्ध्वस्था रहती है "सूयते सचराचरं इतिसूर्यः" सबका उत्पादक सूर्य है सूर्य के आलोक से ही परिदृश्यमान जगत की सभी वस्तुएं प्रकाशमान होती है चाहे जगत हो स्वप्न हो सर्वदा सर्वत्र सृष्टि के मध्य सूर्य ही एकमात्र प्रकाशक है सूर्य से जो तेजधारा चारो ओर विक्षिप्त होकर छिटक रही है ।

केन्द्रिकृत घनीभूत प्रभाराशि जब सूर्यमण्डल को छोड़कर उपर चढ़ती रहेगी तब प्रणव के प्रकाश में परमतत्व प्रकाशमान होता रहेगा।

'उद्बुद्धा प्रबुद्धा कुण्डलिनी शक्ति आहत सर्पिणी की भाति घोर नाद करती हुई ब्रह्मपथ की ओर महाब्योम राज्य को भेद करती हुई ब्योमातीत महाशक्ति की ओर अग्रसर होती है यही विज्ञान का आत्मप्रकाश है जो कुछ बृहद् ब्रहमाण्ड में होता है वही क्षुद्र शरीररूपी पिण्ड में होता रहता है।

देह मध्य इड़ामार्ग संचारी चन्द्र प्रकट होकर स्निग्ध अमृत धारा से समस्त देह को आप्यायित करता रहता है पिंगलावर्ती सूर्य जब क्रिया कौशल से प्रबल तेजोमय रूप धारण करता है तब उसके संस्पर्श से मध्यशक्ति कुछ परिणाम मे उत्तेजित होकर वाम पार्श्व स्थित इड़ामार्ग में संचरणशील चन्द्रमा को उग्रभाव मे परिणत कर देता है क्रमशः दक्षिण शक्ति मध्यशक्ति वामशक्ति तीनों समभाव में उत्तेजित हो उठती है। ये महालक्ष्मी महासरस्वती और श्यामलमहोमय माँ कालचक्र की प्रवर्तिकाकाल को आवर्त गति खण्ड–खण्ड उपाधियाँ निमेष काष्ठ कला मुहूर्त अहोरात्र पक्ष, मास अयन सवत्सर युग, मन्वन्तर (मनुनां अन्तरः) कल्पादि रूप से काल को उपहित करती कालकालिका–

येनेदं भ्राम्यते ब्रह्म (चक्रम) (श्रुति)
चडश्च मुण्डश्च असुरौ चण्डमुण्डौ असुरौ
यस्माचण्ड च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवी भविष्यति।।
चण्डमुण्डा तु चामुण्डा इति नैघण्टुका पृषोदरादित्वात्

चण्ड अर्थात एक पञ्चाशत् (इक्यावन) अलातिचक्र वत् सवदरक्त भीषण मुण्डो से मण्डित चण्डमुण्डा ही चामुण्डा कालिका है।

चण्ड भानु चण्डवातः इत्यादि स्थानो में इयतानवच्छिन्न असाधारण गुण शाली वस्तु में चण्ड शब्द का प्रयोग होता है देश काल वस्तु परिच्छेद शून्य भगवती ही चण्डिका है **चंडिकोपे** (धातु) से चण्ड शब्द निष्पन्न है **मुडिखण्डने** धातु से **मुण्डशब्द** बना है।

"कस्य विभ्यति देवाश्चकृतरोषस्य संयुगे" किसको रोष उत्पन्न होने से देवताओं को भी भय होता है।

प्रसादो निष्फलो यस्य कोपोऽपि च निरर्थकः।
न तं भर्तारमिच्छन्ति षण्ढं पतिमिव प्रजा।

जिसका क्रोध और प्रसाद। (प्रसन्नता) निष्फल होता है उसे प्रजा उसी तरह स्वामी नही मानती जिस तरह षण्ड पुरुषों को स्त्रियाँ पति नही मानती हैं।

भयानक कोपवती चण्डिका
घोरान्या शिवान्याः

घोर और शान्त या अघोर शशि बिम्ब की तरह शैत्य धायक विपदादि रूप चमू को जो नष्ट करके आत्मरूप कर लेती है चण्डिका चामुण्डा ब्रह्म विद्या है।

विच्चे में वित् 'च' 'इ' क्रमेण पद सद् चिद् आनन्द के अवबोधक है।

वित्त–ज्ञान स्वरूप है 'च' नपुंसकलिङ्ग सत् का बोधक है 'इ' आनन्द ब्रह्म महिषि भोगदा भट्टारिका

चण्ड मुण्ड असुरो को मारकर माँ काली ने दोनों का सिर कौशिकी को दिया, कौशिकी ने चण्ड मुण्ड का सिर लाने के कारण चामुण्डा नामकरण काली का किया है

वैप्रचित्त को मारकर दानवों का भक्षण तथा दन्त रक्त होने से रक्तदन्तिका का संज्ञा है

रक्त राग रञ्जित दशन वर रूचि रक्त दन्तिका ग्रक्तपूरित मखाम्बुज रक्तपा रूधिर रक्ताङ्गी भगवती रक्ता काली माँ रक्तखर्प्पर हस्तिनी।

शतवार्षिकी अनावृष्टि होने पर माँ मुनियो पर अनुग्रह कर शताक्षी रूप से, देहो दभूत शाक् (सब्जी) हरहराती लहलहाती सस्यश्यामला) शाकम्भरी देवी, दुर्गम दैत्य को मारने से दुर्जनहन्त्री दुर्गा रूप हो जाती है अरूणासुर नाम के राक्षस को भ्रमररूप से भगवती ने मारा और भ्रामरी देवी संज्ञा के लब्ध हुई, हिमाचल के राक्षसों का भीम रूप से भक्षण कर भीमा संज्ञा भगवती ने धारण किया

तारा सीताराम में पहला वर्ण "सी" और अन्तिम वर्ण 'म' निकालने पर 'तारा' सीताराम का हृदय तारा रूप हृदय हिरण्य गर्भावस्था में कुछ प्रकाश होता है प्रलय रूपी कालरात्रि में ताराओं के समान सूक्ष्म जगत के ज्ञान तत्साधनों का प्राकट्य होता है उसी हिरणयगर्भ की शक्ति तारा है। सूर्यकोटि भी हिरण्यगर्भ कहा जाता है सूर्य रूद्र भी कहे जाते है उनका शान्त और घोर दो रूप कहा जाता है हिरण्यगर्भ पहले क्षुधा से उग्र था जब उसे अन्न मिलने लगा तब शान्त हुआ। उसी उग्र हिरण्यगर्भ की शक्ति का नाम उग्रतारा है।

प्रत्यालीढपदार्पिताङिघ्रशवहृद घोराट्टहासापरा
खड्गेन्दीवर कर्त्रिखर्पर भुजा हुङ्कार बीजोद्भवा।
खर्वानीलविशालपिङ्गलजटाजूटैकना गैर्युता
जाड्य न्यस्य कपालकर्तृजगतां हन्त्युग्रतारास्वयम्।।

क्षुधातुर हिरण्यगर्भ भी संहारक होता है उसकी शक्ति तारा भी संहारिणी है उसके चारों ओर जहरीले सर्प लिए हुए है सर्प भी संहार का सूचक है वह भी शव पर प्रतिष्ठित है मुण्ड और खप्पर से सूचित होता है वह भयानक होकर खप्पर से सूचित होता है वह भयानक होकर खप्पर द्वारा विश्व का रसपान करती है उसकी जहरीली रश्मियों की भयानकता दिखलाने के लिए जटाजूट नाग का वर्णन है।

प्रकृतिः पुरूषं स्पृष्टवा प्रकृतित्वं समुज्झति,।
तदन्तस्त्वे कतां गत्वा नदीरूपमिर्वार्णवे ।।

पुरुष का स्पर्श करते हुए प्रकृतित्व को छोड़कर पुरुष के साथ इस तरह मिल जाती है जैसे नदी समुद्र में मिल जाती हैं ।

अतस्त्वामाराध्यां हरिहर विरिञ्चादिमिरपि,।
प्रणन्तु स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रमवति ।।

हरिहर विरञ्च प्रभृतियों से परमपूज्य अम्बा को प्रणाम या उनका स्तवन किसी अकृतपुण्य प्राणी द्वारा नही हो सकता तारा की पूजा रहस्य बुद्ध ही जानते थे तारा ही द्वितीया रूप मे प्रसिद्ध है सुतारारूप से वही जैनों में भी पूज्य अक्षोभ्य ही वहाँ अवलोकितेश्वर रूप में प्रसिद्ध है

'क्षोमादिरहितो यस्मात पीतं हालाहलं विषम्"
अत एव महेशानि अक्षोभ्यः परिकीर्तितः
तेन सार्ध महामायातारिणी रमते सदा
हलाहल विष पीने पर भी जो क्षोमरहित
रहे वही शिवअक्षोभ्य है उसके साथ
रमण करने वाली तारा है।

मदीयाराधनाचार बौद्ध रूपी जर्नादनः
एक एव विजानाति नान्याः कश्चन तत्वतः।।

तारा की ही उक्ति हैं बौद्धाचार से ही उनका पूजन श्रेष्ठ है। तारिणी शक्तियों से विशिष्ट महाशक्ति तारा है।

बुए गुल नालेदिल दूदेचिरागे महफिल
जब भी तेरे वज्म से निकले
बड़े परशा हो के निकले ।।

पुष्प की सुगन्ध दिल की आह और महफिल के चिराग का धुआँ भी जब तेरे दिव्य वाड्.मय से दूर होते ही विपदग्रस्त हो जाते है

जनकस्य राज्ञः सद्मनि सीतोत्पन्ना सा सर्वपरानन्द मूर्ति गायन्ति मुनयोऽपि देवा

(अनन्या राघवेणाऽहं भास्करेण यथा प्रभा)

ऐश्वर्यावचनः शक्ति सा पराक्रम एव च।

तत्स्वरूपा तर्योदात्री सा शक्तिः परिकीर्तिता ।।

प्रशान्त हिरण्यगर्भ या सूर्य शिव है उनकी शक्ति षोडशी है इनकी विग्रहमूर्ति पञ्चवक्त्र है। चारों दिशाओं एवं उर्ध्वदिशा के अभिमुख हाने से उन्हे पञ्चवक्त्र कहते है । तत्पुरुष, सद्योजात वामदेव अघोर व ईशान इनके प्रसिद्ध नाम है। पूर्वा पश्चिमा उत्तरा तारा दक्षिणा उर्ध्ववैदिक के हरित रक्त नील पीतरंग के मुख है। दश हाथों में अमय टङ्क शूल वज्र पाश खड्ग अकुश घंण्टा नाग और अग्नि लिए हुए है।

मुक्तापीतपयोदमुक्तिक जपावर्णैर्मुखैः पञ्चभिः

स्त्र्यक्षैरञ्चि तमीशमिन्दुमुकुटं पुर्णेन्दुकोटिप्रभम्

शूलं टङ्क कृपाणवज्रदहनान् नागेन्द्रपाशाङकुशान्

पाश भीतिहरं दधानममिता वागम्यो ज्वालङ्ग भजे

इसमें षोडश कलाओं का पूर्णरूप से विकास है अतएव यह भी कहा जाता है पञ्चवक्त्र की शक्ति षोडशी है।

बालार्कमण्डला भासां चतुर्बाहां त्रिलोचनाम्

पाशाङ्कुशशराश्चापं धारयन्तीं शिवा भजे।।

बालार्कमण्डल के समान आभावाली सूर्य, सोम अग्नि इन तीन नेत्रो वाली चतुर्भुज पाश अकुश चाप–चाप और शर को धारण किये हुए है।

भुवनेश्वरी

वृद्धिगत विश्व का अधिष्ठाता त्र्यम्बक है उसकी शक्ति भुवनेश्वरी है।

उसका स्वरूप इस प्रकार है।

उद्यछिद्युति मिन्दु किरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रय युक्ताम्

स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपशा भीति करां प्रभजे भुवनेशीम्

सोमात्मक अमृत से विश्व का आप्यायन होता है

इसलिए भगवती ने अपने किरीट से चन्द्रमा को स्थान दे रखा है त्रिभुवन का भरण पोषण भगवती ही करती है उसी का संकेत कर मुद्रा से है कृपादृष्टी की सूचना उसके स्मेर से है शासन शक्ति का सूचक अंकुश पास आदि से है।

छिन्नमस्ता

विपरिणमान जगत का अधिपति चेतन कबन्ध है

उसकी शक्ति छिन्नमस्ता है विश्व का उपचय अपचय।

तो हर समय ही होता रहता है जब ह्रास की मात्रा कम विकास की आगम की मात्रा अधिक होता है तब भुवनेश्वरी का प्राकट्य होता है

प्रत्यालीढ़ सदैव दधती छिन्नं शिरः कर्त्रिकाम्

दिग्वस्त्रां स्वकबन्ध शोणित सुधाधारां पिबन्ती मुदाम्

नागाबद्ध शिरोमणिं त्रिनयनां ह्रद्युत्पलालङ.कृतां

रत्यासक्तमनो भवोपरिदृढा ध्यायेन्जवासन्निभाम्

दक्षे चातिसिताविमुक्त चिकुरां कर्त्रीं तथा खर्परं

हस्ताम्यां दधती रजो गुणभुवा नाम्नाऽपि सार्वर्गिनीम्

देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिबन्ती मुदां

नागाबद्ध शिरोमणिर्मनुविदा ध्येया सदा सा सुरैः

प्रत्यालीढ पदां कबन्धविगलद्रक्त पिबन्ती मुदा

सैषा या प्रलये समस्त भुवनं भोक्तु क्षमा तामसी।

छिन्नमस्ता भ''वती छिन्नशीर्ष और कर्तरी एवं खप्पर को लिए हुए स्वयं दिगम्बर रहती है। कबन्ध शोणित की धारा को पीति रहती है कटे हुए सिर में नागाबद्ध मणि विराजमान है नील नयन है ह्रदय में उत्पल की माला है रत्यासक्ता मनोभाव के उपर विराज मान रहती है।

त्रिपुरभैरवी

क्षीयमान विश्व का अधिष्ठाता दक्षिणमूर्ति कालभैरव है उसकी शक्ति भैरवी है

उद्यद्भनुसहस्त्रकान्तिमरूणक्षौमा शिरोमालिकां

रक्तालिप्तपयोघरां जपवटीं विद्याममीतिं वरम्

हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रार विन्दश्रियं
देवीं बद्ध हिमाशुरत्न मुकुटां वन्दे समन्दस्मिताम्

उदित होते हुए सहस्त्रो सूर्य के समान अरूणकान्ति वाली क्षौमाम्बर को धारण किए हुए मुण्डमाला पहने हुए है। रक्त से उसके पयोधर लिप्त है तीन नेत्र एवं हिगांशु बद्ध मुकुट को धारण किये हाथ में जपवटी विद्यावर एवं अभय मुद्रा को धारण किए हुए रहती है।

धूमावती

विश्व की अमाङ्गल्यपूर्ण अवस्था की अधिष्ठात्री शक्ति धूमावती है यह विधवा समझी जाती है हाँ पुरुष का वर्णन नही है पुरुष अव्यक्त हैं

ध्यान–विवर्णा चञ्चला दुष्टा दीर्घा च मलिनाम्बरा
विमुक्तकुन्तला वै साविधवा विरल द्विजा
काक ध्वाजरथारूढ़ा विलम्बित पयोघरा
शूर्पहस्तातिरूक्षाक्षा धूतहस्ता वरानना
प्रवृद्धघोणा तु भृशं कुटिला कुटिलेक्षणा
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं भयदां कलहास्पद

विवर्णा चञ्चला दुष्टा एवं दीर्घ तथा मलिनअम्बर वाली खुले केशोंवाली विरलदन्तवाली विधवारूप में रहने वाली काक ध्वजवाले रथ पर आरूढ़ लम्बे पयोधर वाली हाँथ में शूर्प लिए हुए अत्यन्त रूक्ष नेत्रवली कम्पित हस्त लम्बी नासिका कुटिल स्वभाव कुटिल नेत्रयुक्त क्षुधा पिपास से पीड़ित सदा भयप्रद कलह का निवास रूपिणी है

बगला

व्यष्टि में शत्रुसजिर्हीर्षा समष्टि से परमेश्वर
की संहारेच्छा की अधिष्ठात्री शक्ति बगला है।

जिह्वाग्रमादाय करेण देवी वामेन शत्रुन्परिपीड़यन्तीम्।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढयां द्विभुजानमामि।।

अर्थात शत्रु के ह्रदय पर आरूढ़ वामहस्त से शत्रु

जिह्वा को खींचकर दक्षिण हस्त मे गदा प्रहार करने वाली पीतवस्त्र धारण की हुई बगला है।

मध्ये सुधाब्धि मणिमण्ड परत्नवेदी सिहासनो परिगतां परि पीतवर्णाम्
पीताम्बरा भरणमाल्यविभुषिताङ्गी देवीं नमामि धृतमुदगर वैरिजिह्वाम्

अर्थात् सुधासमुद्र के मध्यस्थित मणिमय मण्डम में रत्नमय वेदी है उसपर रत्नमय सिंहासन है उस पर विराजमान पीतिवर्णवाली पीतवर्ण के ही वस्त्राभूषण माल्य से सुशोभित अङ्गवाली भगवती वगला है जिसके एक हाथ में शत्रु की जिह्वा दूसरे में मुदगर है।

मातङ्गी

मातङ्ग शिव का नाम है उसकी शक्ति मातङ्गी है।

ध्यान– श्यामां शुभ्रांशुमालां त्रिनयनकमलां रत्नसिंहासनस्थां
भक्ताभीष्ट प्रदात्री सुरनिकर करासेव्यकञ्जाङ्घ्रि युग्माम्
नीलाम्भोजांशुकान्तिं निश्चिर निकरारण्य दावाग्नि रूपा
पाशं खडगं चतुर्भिवरकमल करै खेंटकञ्चाङ्कुशञ्च
मातङ्गिमाहवन्तीमभिमतफलदां मोदिनीचिन्तयामि

श्याम वर्णा चन्द्रमा को मस्तक पर धारण किए हुए तीन नेत्रों वाली रत्नमयसिंहासन पर विराजमान नीलकमल के समान कान्तिवाली, राक्षसरूप अरण्य को दहन करने में दावालरूपा चार भुजाओं में पास पाश खड्ग खेंटक और अंकुशवाली भक्तो को अभीष्टफल प्रदान करने वाली असुरों को मोहित करने वाली मातङ्गी है।

कमला

सदाशिव पुरूष की शक्ति कमला है
उसका ध्यान इस प्रकार है।

कान्त्या काञ्चन सन्निभां हिमगिर प्रख्यैश्चतुर्मिर्गजैः
हस्तोत्क्षिप्त हिरण्यामृत घटैरासिच्यमानां श्रियम्
विभ्रांणां 'वरमब्जयुग्ममभयम् हस्तैः किरीटोज्जवला
क्षौमाबद्ध नितम्ब बिम्ब वलिता वन्देऽरविन्दस्थिताम्

सुवर्णतुल्य कान्तिमत, हिमालय के सदृश

श्वेतवर्ण वाले चार गजों के द्वारा शुण्ड से गृहीत सुर्वण कलशो से स्नापित चार भुजाओं में वर अभय और कमलद्वय धारण किये हुए क्षौमवस्त्र से आवृत्त कमला है।

स्वात्मा ही विश्वात्मिका ललिता है
विमर्श रक्त वर्ण है।

शिवः शक्त्यायुक्तो यदि भवति शक्त प्रभावितुं ।
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।।

निगुर्ण पुरूषरूप शिव कामेश्वरी से युक्त होकर विश्वनिर्माणादि कार्यों में सफल हो सकता है उसके बिना कूटस्थ देव टस से मस नही हो सकता।

ब्रह्मा विष्णु रूद्र ईश्वर सदाशिव इन्ही की शक्ति राहित्य विवक्षा से महाप्रेत संज्ञा है। निर्विशेष ब्रह्मा के आश्रित श्री कामेश्वरी के श्री हस्त में पाश अंकुश इक्षु धनुष वण है मन ही इच्छाधनुष है शब्दादि विषम पुष्पबाण है

इच्छाशक्तिमयं पाशमङ्कुशं ज्ञान रूपिणम्
क्रियाशक्तिमये बाण धनुषी दीर्घ दृज्जवलम्।।
पाश इच्छामय और अंकुश ज्ञान रूप है
वाण क्रिया शक्तिरूप है।

राग ही पाश है द्वेष ही अंकुश है मन ही इक्षु घनुष है शब्दादि विषम पुष्पवाण है

'रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि'

माता से ही ये (संसारिक) इच्छाएं भी भक्त पूरित करवाता है मागता है रूप, जय, यश, शत्रु दहन जैसी अभीष्ट को

'कृष्णेनसंस्तुते देवि शश्वद्भक्तया तथाम्बिके' श्री अनन्तकोटि ब्रह्मणडनायक गोपीजन बल्लभ कृष्ण से भी माँ इड्य संस्तुत्य पूजित है ।

सुरासुर शिरो रत्ननिधृष्ट चरणेऽम्बिके–देव दानव सभी अपने मुकुट किरीट के रत्नों से माता के पादपीठ का स्तवन करते है।

राम शब्द शिव शिवामय है
रा शक्तिरिति विख्याता
मशिवः परिकीर्तितः।
शिवशक्त्यात्मकं ब्रह्म रामरामेतिगीयते।।

राशक्तिरूप से ख्यापित है 'म' शिव (शक्तिसङ्गम तन्त्रे) रूप से सुश्रुत है दोनो वर्णो का समाहार काली काल का यामल है।

एकैव कालिका देवि विहरन्ति जगत्त्रये (कालिका पुराण) विष्टपत्रितय में (अर्थात् त्रैलोक्य में) सघन रूप से कालिका का ही संचार स्फुरण हो रहा है।

गायत्री वा इदं सर्वम्
यह सब कुछ गायत्री माँ ही है
सर्वं देवीमयं रे सर्वं देवीमयं रे
सर्वं कालीमयं रे सर्वं कालीमयं रे

कबिरा काजर रेख हूँ
अब तो दई न जाय
नैननि पीतम रहि रहा
दूजा कहा समाय

सर्वत्र सर्वदा भरपूर श्याम तेजपुञ्जिका कालिका।
भू : भुर्वः स्वः सप्तद्वीपा वसुमति त्रयोलोका
अन्तरिक्ष सर्वे त्वयि निवसन्ति। (मैथिली महोपनिषद)

अर्थात भवतीति भू–जिससे सब हो वह भू भूवः–भूत्वा वसन्ति–होकर जिसमें सब रहे अर्थात् भू भवः स्व, सप्तद्वीप, वसुधा अन्तरिक्ष है माँ ये सब तुझमें वास करते है

"आमोदः प्रमोदो विमोदः सम्मोदः सर्वास्त्वं संधत्से" (मैथिली महोपनिषद्)
हे माँ तू प्रमोदार्णव की तरङ्गभूता प्रमोद, विमोद सम्मोद सब की विधारक हो

हे सहस्र प्रेतराट क्रोधा, सहस्रशेष पराक्रमा सहस्रधनदैश्वर्या, सहस्र भूमिसदना सहस्रा काशविग्रहा सहस्र रूद्रतेजस्का सहस्र ब्रह्म सृष्र्टिकृत, सहस्र वायु वेगा सहस्रबुद्धकरुणामूर्ति अव्याज करूणा मूर्ति हो तुम प्रपन्नानन्द दायिनी हो।

शतकोटिदिव्यवर्ष नृत्यतिस्म परात्मिका,।
नानावाद्य महोल्लासा नानालङ्कार गायिका।।

रश्मिवृन्द से समुदभूता कोटि कोटि येगिनीयो के मध्य शतकोटि (सौकरोड़) दिव्यवर्ष पर्यन्त परात्मिका नृत्य करती है महोल्लास नानावाद्य, नाना अलङ्कार उपेत गायिका कालिका शिवा राघ्या काशीश को भी वर देती है शिव ध्यान करते है मन मिर्जा तन साहिबा मिर्जारूपशिव का मन साहिबा शिवा मे रमण करता है।

राघा वामानुरोधी शक्ति है धार के
विपरीत राघा है घाटी का पानी चढ़े पहाड़
तो राधा, पहाड़ के शिखर का पानी
जब घाटी में आवे तो धारा है।

किश्ती को भँवर में घिरने दे
मौजो के थपेड़े सहने दे
जिन्दो में अगर जीना है तुझे
तूफान की हलचल रहने दो
धारा के मुवाफिक बहना क्या
तौहीने दस्त बाजू है
परवरदे तूफा किस्ती को
धारा के मुखालिफ बहने दें।

कपाल कामिनी विषयिणी हृदय की वृत्ति ही कौलो की भक्ति है अपने अपने प्रिय विषय में चित्तका द्रवीकरण होता ही है जैसे अपनी संतति को देखकर वात्सल्य से गाय आदि पशुओं के स्तनों में भी दूध चूने लगता है बछड़े की मृत्यु देखकर उनकी आखों से आसू बहते है प्रधावनशील मृग को दोखकर सिंह आदि की चित्तवृत्ति क्रोद्ध से भर जाती है मादा को देखकर पुरूष पशु की भी कामविषयिणी वृत्ति का उदय होता है।

केवल चित्त की द्रवावस्था होना भक्ति नही है अपितु चित्त का विषय अखण्डानन्ददायिनी भगवती हो तब भक्ति है।

मद्गुण श्रुति मात्रेण मयि सर्वागुहाशये।
मनोगति रविच्छिन्ना यथा गङ्गाम्भसोऽम्बुधो।।

जिस प्रकार गङ्गा का प्रवाह अखण्डरूप से समुद्र की ओर बहता है उसी प्रकार मेरे गुणों के श्रवण मात्र से मन की वृत्ति का अविच्छिेन्न रूप से मुझ सर्वान्तर्यामी के प्रति (अर्थात् कालिका की ओर जाना ही भक्ति है

आत्मा रामश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरूक्रमें
कुर्वन्त्य हैतुकीं भक्तिमित्थं भूतगुणों हरि ।।
निर्ग्रन्थ आत्माराम आप्तकाम मुनि भी निर्हेतुकी

अनिमित्ता भक्ति करते है परमेश्वर के गुण गण ही ऐसे है

सगुणशरणानां अनावृत्ति सिद्धिरिति (श्री शङ्कराचार्य)
सगुण शरणागत का भी कैवल्य होता है

तावत् कर्माणि कुर्वीत न निर्विद्यते यावता।
मत्कथाश्रवणादौ वा श्रद्धा यावन्न जायते ।। (भागवत्)

तब तक कर्मानुष्ठान करे जब तक निर्वेद वैराग्य और भगवद् कथा श्रवणादि में श्रद्धा (हर्ष) आदि न उत्पन्न हो

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।
विविक्त देश सेवित्वमरतिर्जन संसदि।। (गीता)

एकमात्र भगवती ही आवलम्बन अव्यभिचारिणी एकान्त भक्ति है निरतिशय पुरूषार्थ को रसज्ञ लोग भक्ति कहते है।

यह निरूपम सुख संविद और दुःख से असंस्पृष्ट भक्ति है अन्तःकरण का भगवती आकार से आकारित होना भक्ति है भगवती मे निर्बद्ध हृदया होकर भक्तिः पुनति मन्निष्ठा श्वपाकानपि संभवात् कुत्ते का मांस खाने वाले चाण्डाल को भक्ति महारानी क्षपित कल्मष कर देती है।

बाग्गदगदा द्रवते यस्यचित्त
रूदत्य भीक्ष्णं हसति क्वाचिच्च।
विलज्ज उदगायति नृत्यते च
मदभक्ति युक्तो भुवनं पुनाति।।

भक्ति के आवेश में जिसकी वाणी गदगद हो गई हो चित्त द्रवित हो गया हो जो कभी रोता है कभी हसता है कभी संकोच त्याग कर उच्च स्वर में हरिगुणों का गान करने लगता है और कभी नाच ने लगता है वह स्वयं पावन होकर त्रैलोक्य पावन करता है।

मच्चिता मद्गतप्राण बोधयन्त परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ।।
तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्णकम् ।
ददामि बुद्धि योगं तं येन मामुपयान्ति ते।।

जिनका चित्त प्राण मुझमें ही लगे रहते है जो निरन्तर मेरे ही गुणों की चर्चा किया करते है मेरी ही लीलाओं का वर्णन करते हुए सर्वदा प्रसन्न हुआ करते है वे मुझ वासुदेव में निरन्तर रमण करते है निरन्तर मेरे ध्यान करने वाले को और प्रेमपूर्वक मुझे भजने वाले को मै तत्व ज्ञान करा देता हूँ जिससे वे मेरे पास आ पहुचते है

सा परानुरक्तिरीश्वरे

परमेश्वर के प्रति निरतिशय प्रेम का होना परा भक्ति है।

पिबन्त इव चक्षुर्म्याम लिहन्त इव जिह्वया।
जिघ्रन्त इव नासाभ्यां श्विष्यन्त इव बाहुभि :।।

मानो नेत्रों से पी जायेगा ,जिह्वा से चाटता सा और नासिका से सूँघ रहे और बाहुओं से आश्लेष आलिङ्गन कर लेगे।

तैल धारावत् अविच्छिन्न प्रेमाम्बु भक्ति संधारा चित्तद्रुति,वृत्ति का धारावाहिकता और सर्वेश्वरी-विषयता ही भक्ति है द्रुतचित्त में अकित काली मूर्ति

प्रकर्षेण नयति–प्रणय ही भक्ति है भगवती में प्रणय अर्थात् द्रवावस्था वही रशना अर्थात रस्सी की तरह बाँधने का साधन क्योंकि चित्त की द्रवावस्था में प्रविष्ट हुई छवि फिर चित्त से निकलता नही

प्रणयरशनया धृताङ्.घ्रिपद्मः स
भवति भागवतप्रधान

बिम्ब (मुख आदि) ही उपाधि (दर्पण आदि) में रहकर प्रतीत हुआ प्रतिबिम्ब कहलाता है परमानन्दरूपा भगवती बिम्ब मन (रूप उपाधि) में प्रतिबिम्बित स्थायी भावता को पाकर रसता को प्राप्त होता है अतः निर्विवाद भक्ति रसरूप ही है।

अनवच्छिन्न चिदानन्दघन माँ का स्फुरण होने से भक्ति रसवन्ती रसरूपा है।

रोमाञ्चेन चमत्कृता तनुरियं भक्त्यामनोनन्दितम्
प्रेमाश्रूणि विभूषयन्ति वदनं कण्ठं गिरो गद्गदा
नास्माकं 'क्षणमात्रमत्यवसर : कृष्णार्चनं कुवर्तः

मुक्ति र्द्वारि चतुर्विधापि किमिदं दास्याय लोलायते।।(बोधसार भक्ति रसायन)

सारा शरीर रोम्माच से चमत्कृत और मन भक्ति से आन्दोलित प्रेमाश्रु से बदन मुख और गद्गद गिरा से कण्ठ विभूषित कृष्णार्चन परायण मुझको क्षण भर भी अवसर नहीं चारो प्रकार की मुक्ति द्वार पर दासी होने के लिए गिड़गिड़ा रही है जैसा भक्ति से भगवत तत्त्व (समास्वादन) होता है वैसा सांख्य, योग् धर्म स्वाध्याय तपादि से नही।

विसृज्य लज्जा होकर जैसे कृष्णदर्शन लालसा में गोपियाँ रोती है

न साधयति माम् योगो न सांख्य धर्मउद्धवः।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता।।
परा प्रकृति में शयन रूप आलिङ्गन चुम्बनादि। (भागवत)
श्मशानाष्टकमध्यस्थं मुण्डाष्टकविभूषितम्
कोटिकालानला भासं चतुर्भुजं त्रिलोचनम्

पञ्चप्रेतस्थितं देवं त्रिशूलं डमरूं तथा
खड्गं च खर्परं चैव बामदक्षिणयोगिनम्
बिभ्रतं सुन्दरं देहं श्मशान भस्म भूषितम्
नानाशवकीडकानं कालिका हृदयस्थितम्
लालयन्तं रतासक्तं घोर चुम्बनतत्परम
गृघ्र गोमायुसयुक्तम् फेरवीगंण संयुतम्
जटापटल शोभाढ्यं सर्वशून्यालय स्थितम्
सर्वशून्यं मुण्डभूषं प्रसन्नवदनं शिवम्
कौलिकेन्द्र महाकाल पुरूष रूप महाकाली

भोगदा रूप से पुरि प्रकृतौ शेते इतिपुरूष श्री काली नित्यर्चन

अष्टश्मशान के मध्य मुण्डाण्टकविभूषित चतुर्भुज त्रिलोचन कोटिकालानल प्रख्या (महाकाल)

पञ्चप्रेत (ब्रह्मा, विष्णु रूद्र, ईशान सदाशिव शक्ति राहित्य से प्रेत संज्ञक) स्थित (त्रिशुल, डमरू, खड्ग, खर्पर) नाम दक्षिण हस्तो में क्रमशः और महाकाल काली हृदय अधिरूढ, शवो से क्रीडन रत्यासक्त लालन पूर्वक 'भूयसः' चुम्बन परायण और गृघ्र गोमायु से सज्जित श्रृगालियों से परिवेष्टित जटापटल "गङ्गा शिव गङ्गा भई वट जटा बढाई के)" सर्वशून्यालय श्मशानागरस्थ शिव समासीन है

कपाल कामिनि वक्षोजैक निलय महाकाल अथवामहादेव हृदयो परिस्थिति भगवती वैसे ही है जैसे कभी दाँए हाथ से बायाँ हाथ पकड़े कभी बाँये से दायाँ। भोगोऽपि मोक्षाय भवेत", कभी काल काली बनते है, कभी कालो काल बनती है

काल एवासि काली।

हे माँ अनिष्ट की निवृत्ति और इष्ट सम्प्रयोग ये सब आपके युगल चरणारबिन्दं मे ही है।

मृगजल सिचिञ्त जगदाश्रय तो अंधकारोत्पादित छाया के समान ही है।

"वो रोशनी क्या लायेगी रहमत।
जो साथ में धूप ला रही है।
वो छाया क्या साथ देगी जिन्दगी का
जनम लिया जिसने तीरगी मे।।" (तीरगी–अंधकार)

अतः इतस्ततः परिभ्रमण निरर्थक है। या तो अंक में बिठा ले या चरण मे अवकाश दे दे ।

"इसी रफ्तारे आवारा से, यहाँ कब तक भटकोगे।
अमीरे कारवाँ बन जा, गुवारे कारवाँ कब तक ।।

"तू है मूहिते बेकरा मै हूँ जरा सी आवजू।
या मुझे हम किनार कर
या मुझे वे किनारा कर।
दोस्त ने दिल को लालाजार कर दिया।
ये खिजा जदा चमन पुर बहार कर दिया
देखते ही देखते बर्क शोलापाश को
एक निगाहे लुत्फ से आबशार कर दिया।"

हे माँ तू विशाल अन्तहीन महासमुद्र है और मै अत्यन्त क्षुद्र नदी की भाँति हूँ। या मुझे अपने अङ्क मे बिठा ले या चरणो में आश्रय प्रदान करो। अर्थात् नदी नदी नाथ से मिल जाये।

मित्र ने ह्रदय कमल को पूर्ण प्रफुल्लित कर दिया। पतझड़ युक्त बन को वसन्त ऋतु से युक्त कर दिया उसकी कृपा कटाक्ष के लेशोन्मेष संपन्न अङ्गार को बर्फ की भाँति सुशीतल बना दिया।

आनुकूल्यस्य संकल्प, प्रतिकूलस्य वर्जनम्
रक्षिष्यतीति विश्वासो गोप्तृत्वं वरणं तथा
आत्मनिक्षेप कार्पण्ये षड्विधा शरणागति।।

तेरे अनुकूल मन बुद्धि चित्तादि की हलचल का संकल्प प्रतिकूल अर्थात् तुम्हे जो न अच्छा लगे वो न करना अर्थात् कुल मार्ग के प्रतिकूल कदाचित् न होना "कुल मार्गे तु या निन्दा सा निन्दा तव कालिके" (कुल मार्ग की निन्दा काली माँ की ही निन्दा है रक्षा करेगी ही निर्विवाद रूप से सिद्ध है विकल्प नही है काली की काया की छाया हो जाना तदधीन स्थिति गति प्रवृत्ति, अत्यन्त लघुतर रूप से अपने को (तृणादपि) समझना ही कार्पण्य है।

श्रृणाति हिनस्तीति शरणम्

दोषो का संहारक 'षड्विधा' शरणागति भगवति पराम्बा त्रिपुरेशी त्रिपुराम्बा रक्त कालिका में।

(ये आना कोई आना है कि, बस रस्मन चले आये।
ये मिलना खाक मिलना है। कि
दिल से दिल नही मिलता।।

"मिलाऊँ किससे दिल अपना
कोई काबिल नही मिलता ।
किसी से दिल नही मिलता
कोई दिल से नही मिलता।।"

जगत और जगतवासी सब औपचारिक है त्वद् विषरिणी रति अनौपचारिक है

हे महदयोनि–नाद निर्गत होकर त्रिकोणा कार रूप धारण करता है यह अहम नामक बिन्दु नादात्मक प्रकाश विमर्श का शरीर है इसमें प्रकाश शुक्ल बिन्दु है और विमर्श रक्त बिन्दु है दोनों का परस्परिक अनु प्रवेशात्मक साम्य मिश्र बन्दु है

'अ' काररूप प्रकाश के साथ (ह) काररूप विमर्श का अर्थात अग्नि के साथ सोम का साम्यभाव यही अहं अथवा पूर्णहंता है काम अथवा रवि नाम से प्रसिद्ध है।

अग्नीषोमात्मक बिन्दु का उल्लेख पाया जाता है। शिव ही (अ) शक्ति ही 'ह' है बिन्दु रूप में आर्विभूत होता है। साम्य अंश होने पर यह बिन्दु प्रस्पन्दित होकर शुक्ल और बिन्दु रुप में आर्विभूत होता है।

अग्नि के सम्पर्क से धृत जिस प्रकार गलकर धारारूप में बहने लगता है उसी प्रकार प्रकाशात्मक शिव के सम्पर्क से, विमर्शरूपा पराशक्ति द्रुत होती है एक परामानन्दमय अमृतधारा का 'स्राव' होता है।

प्रकाशांश और विर्मशाश के घनीभूत संश्लेषण से उद्भूत होता है शुद्ध प्रकाश किंवा शुद्ध विमर्श शक्ति में निखिल प्रंपच विलीन रहता है उसके संसर्ग से अनुत्तर अक्षर स्वरूप प्रकाश बिन्दुरूप धारण करता है।

शिव शक्ति के मिलने से उत्पन्न अमृत की धारा प्रवाहित होने पर जिस लीलारूप तरङ्ग की उत्पत्ति होती है वही तान्त्रिक परिभाषा में ह्रर्घ कला नाम से विख्यात है।

लिङ्ग योनि का समन्वयरूप त्रिकोणमध्यास्थ बिन्दु अथवा बिन्दु गर्भित रूप त्रिकोण दिखलाई देगा शास्त्र में जिस किसी भी देवता के चक्र का वर्णन आया है उसमें सर्वत्र ही यह बिन्दु और त्रिकोण मूलस्थान में साधारण भाव से वर्तमान है।

स्थूल जगत जिसे हम सर्वदा अनुभव करते है दीपकालिका के विकीर्ण प्रभामण्डल की भाँति एक बिन्दु का वाहय प्रसारण एवं विकीरण होता है।

इन बिन्दु त्रिकोण के तीन प्रान्तो के तीन बिन्दु है इन्हे 'अकार और उकार 'मकार' नाम से सांकेतित
भाषा में निर्देश किया जाता सकता है अर्न्तमुख प्रेरणा से जब ये तीनो बिन्दु रेखारूप में प्रवाहित होकर
एक महाबिन्दु रूप मे पर्यवसान को प्राप्त होता है। वही तुरीय बिन्दु अथवा महाकारण रूप में अभिहित
होने के योग्य है वही त्रिकोण का अन्तः स्थित मध्य बिन्दु है।

बिन्दु या कुण्डलिनी विक्षुब्ध होकर नाद का विकास करती है पूर्ण परमेश्वर की स्वातन्त्रय शक्ति
से बिन्दु का विक्षोभ कार्य सम्पन्न होता है। इसी का दूसरा नाम गुरूकृपा या परमेश्वर का अनुग्रह है।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत विशुद्ध लम्बिकाग्र और आज्ञा ये सब अज्ञानराज के अर्न्तगत है।

ज्ञान के संञ्चार के साथ साथ ही आज्ञा चक का भेदन करने से ज्ञान का उदय होता है-आज्ञाचक
के बाद ही बिन्दु स्थान है। यही बिन्दु स्थान योगियों का तृतीय नेत्र या ज्ञान चक्षु कहलाता है चित्त
को एकाग्र करके उपसंहृत किये बिना अर्थात् विक्षिप्त अवस्था में अनेकों व्यवधान रह जाते है यद्यपि
बिन्दुभूमि में साधक अहंभाव में प्रतिष्ठित होकर आपेक्षिक द्रष्टा बनकर निम्नर्वती समस्त प्रपञ्च को
निरपेक्ष भाव से देखने में समर्थ होता है।

बिन्दु को चन्द्र बिन्दु कहा जाता है इसलिए यह अवस्था अर्धचन्द्र नाम से वर्णित होती है नाद चैतन्य का अभिव्यञ्जक है इस अवस्था में चित्तशक्ति क्रमशः अधिकतर स्पष्ट हो जाती है जो रिक्त दिशा है लौकिक दृष्टि से वही अमावस्य है जो पूर्णदिशा है वही पूर्णिमा है। महाशक्ति के प्राधान्य को अङ्गीकार कर अमावस्या की ओर जो उसकी स्फूर्ति होती है काली है। श्री विद्या के रूप में साधक समाज मे परिचित होती है काली कुल एवं श्री कुल का यही रहस्य है।

अमाउल्लास रूपा माँ काली और पूर्णिमा विकास रूपा माँ त्रिपुरा है।

स्वयं शंकर भी भगवती की अपरा पूजा किया करते है ये महाजनों का सिद्धान्त है इसलिए ज्ञानी कि लिए भी चक्रपूजा उपेक्षणीय नही है।

एकमात्र परमशिव की स्फूर्ति व ब्रह्मज्ञान ही परापूजा का नामान्तर है।

अधोमुख श्वेत वर्ण सहस्त्रदल कमल वा अकूलकमल की अर्न्तकलिका में वाग्भव नामक एक प्रसिद्ध त्रिकोण है इस त्रिकोण से परादिक्रम चार प्रकार के वाक् या शब्द उत्पन्न होने के कारण इसका नाम वाग्भव है। इस त्रिकोण के मध्य में विश्वगुरू परम शिव की पादुका है वह प्रकाश विर्मश तथा इन दोनों के सामरस्य भेद से तीन प्रकार की है इस पादुका से निरन्तर परमामृत निकलता रहता है इस स्निग्ध अमृतमय चन्द्ररश्मि द्वारा समस्त विश्व का सञ्जीहन माधुर्य सम्पादन और तृप्ति होती है।

विषयानुभवजन्य आनन्द महान्द के साथ मिलने पर जिस वैषम्यहीन अवस्था का उदय होता है वही भगवती की उत्तम उपासना का प्रकृत तत्व है।

इससे अश्रु पुलक स्वेद कम्प प्रभृति सात्विक विकारो का उन्मेष होता है।

[illegible] के रूप में (प्रमा) ज्ञान को विमर्श शब्द से अभिहित किया गया है प्रभा के दो अशं है

अहमंश और इदमंश जिनमे पहले आत्मा का ग्राहक अशं है दूसरा ग्राह्य। क्योंकि यह बात ध्यान में रहे कि एक आत्मा ही माया रूप में उपाधि के कारण द्रष्टारूप अपनी दृष्टि में अपने से भिन्न अनात्म अथवा दृष्ट रूप मे भासता है।

अनन्योन्मुखोऽहंप्रत्ययः) इस प्रकार दूसरों की देखना वाला विर्मश (इदं प्रत्ययः) परन्तु यह दूसरा भी आत्मा है। क्योकि वास्तव में एक आत्मा के अतिरिक्त दूसरी कोई वस्तु है ही नही परमावस्था में आत्मा इदंरूप उसके अहमश के साथ घुलामिला संम्पृक्त होकर रहता है।

परम ज्ञान जिसे परासंक्ति कहते हैं वह तो अहं तथा इदं अर्थात शिवा एवं परा अव्यक्त शक्ति का अखण्ड एकात्म है।

अहम प्रकाश अथवा ग्राहक रूप है दूसरा विमर्श अथवा ग्राह्यरूप।

परम शिव एवं शक्ति परस्पर अश्लिष्ट होकर प्रणयबद्ध होकर रहते हैं।

शक्ति तत्वा क्या है ?

पुंस्त्वदृष्टि से चित एवं स्त्रीत्व दृष्टि से चिति कहते है शुद्ध चेतना एवं शुद्ध चिति एक ही तत्व के दो नाम है माया में प्रतिबिम्बत उसी तत्व की जब पुरूष रूप से उपासना की जाती है तो उसे शिव अथवा भगवान आदि नाम से जानी जाती है

जब स्त्रीरूप से उसकी उपासना करते है तो उसी को ईश्वरी दुर्गा अथवा भगवती कहते हैं "हंसी गति विडम्बिनी गजगा अग्रगा उग्रगा की गति देख त्रैलोक्य व्यापी मरार्ली (हंसीनियाँ) मानसरोवर निमज्जित हो गईं।

जैसे सिता द्राक्षा मधु आदि में मधुरिम उनका परमान्तङ्ग स्वरूप ही है वैसी ही परमानन्दरसामृत समुद्र भगवान की परमान्तरङ्ग स्वरूप भूता शक्ति ही भगवती है जैसे पुष्पस्तबक का सौगन्ध्य सम्यक तथा तभी अनुभूत हो सकता है जब पुष्प को घ्राणशक्ति हो अन्य को व्यवधान पूर्वक किञ्चितन्मात्र गन्ध का अनुभव होगा उसी तरह कालसुन्दरी काली का सम्यक् अनुभव महाकाल को ही होगा।

"तथा ते सौन्दर्यं परमशिवदृङ्. मात्रविषयः" अनन्त शक्तियाँ हैं।

निवृत्ति, प्रतिष्ठा,विद्या,शान्ति, इंधिका, दीपिका रोचिका, मोचिका, परा, सूक्ष्मा, सूक्ष्मामृत्रा, ज्ञानामृता 'आव्यायिनी', व्यापिनी, 'व्योमरूपा' तीक्ष्णा,अनन्ता सृष्टि, ऋद्धि, स्मृति, मेघा, कान्ति लक्ष्मी, द्युति, स्थिति सिद्धि, पालिनी, शान्ति ऐश्वर्या, रति, जड़ा, कामिका वरदा, आह्लदिनी, प्रीति, दीर्घा, रौद्री, निद्रा, तन्द्रा क्षुधा, क्रोधिनी, पुष्टि, तुष्टि,घृति, चन्द्रिका आदि सृष्टि आनन्दघन महासमुद्र की अनन्तशक्ति स्वामिनी मा कपाल कामिनि की चिनगारियां है।

अगस्त्यसंहिता के अनुसार भगवान शिव ने श्रीराम का प्रत्यक्ष साक्षात्कार करने के लिए तपस्या आराधना की भगवान राम ने प्रसन्न होकर कहा कि यदि मेरा तत्व जानना चाहते हो तो मेरी आह्लादिनी पराशक्ति की आराधना करो उनके बिना मेरी स्थिति नही होती।

आह्लादिनीं परां शक्ति स्तूया सात्वत संमताम

सदाराध्यस्तदा रामस्तदधीनस्तया बिना।

तिष्ठामि न क्षणं शंभो जीवनं परमं माम ।। अगस्त संहिता।।

यह सुनकर श्री शिवजी ने भगवान की अराधना किया भगवती ने कृपा पूर्वक दर्शन दिया, उनके अदभुत रूप को देखकर उन्होने अति भक्ति से दिव्य स्तुति की।

वन्दे विदेहतनयापदपुण्डरी कं

कैशोर सौरभ समाहृत योगिचित्तम।

हन्तुं त्रितापमनिशं मुनिहंससेव्यं

सन्मानसालि परिपीत पराग पुंज्जम्।।

करूणा की 'निर्व्याजमूर्ति' सहस्र बुद्ध करूणामूर्ति

"कुपुत्रों जायेत् क्वाचिदपि कुमाता न भवति"

माँ ने अपने तप से हनुमान के लिए अग्नि को शीतल कर दिया "शीतो भव हनूमतः"

जो अग्नि को शीतल कर सकती है वह रावण को क्या भ्रस्मसात् नही कर सकती है? अवश्य कर सकती है स्वयं माँ सीता बोली।

"असन्देशान्तु रामस्य तपसश्चानु पालनात् । न त्वां कुर्मि दशग्रीव भस्म ममस्मार्हतेजसा"। माता कहती है–श्री राम का सन्देश न होने से, तपस्याक्षीण के भय से हे दशग्रीव, मै अपने महोग्रतेज से तुझे भस्म नही करती हूँ परमदयामयी माँ

ब्रह्माजाया भोगदा भट्टारिका भगवती माँ काली

त्वय्येवाश्रयते दया रघुपते देवस्य सत्यं यतो,

वैदेहि त्वदसन्निधौ भगवता वाली निरामाहतेः,।

नित्ये कापि बधूर्वधं तब तु सान्निध्ये त्वदङ्गव्यथा,

कुर्वाणोड्प्यमितः पतन्नशरणः काको विवेकोज्झितः,।।

हे वैदेहि ! आपके सानिध्य में ही रघुनाथ जी दया व्यक्त होती है आपका सीन्नधान न रहने से निरपराध वाली मारा गया ताड़ का मारी मई। परन्तु आपका सान्निध्य रहने पर तो आपके अङ्ग में व्यथा पहुँचाने वाला जयन्त भी अशरण होकर गिरते हुए बचा लिया गया। भक्त माँ लक्ष्मी से कहता है।

गौरश्वकास्ति हृदयेषु शरीर भाजां

तस्यापि देवि ह्रदयं त्वमनु प्रविष्टा

पद्ये तवापि ह्रदये प्रथते दयेयं

त्वामेव जाग्रदरिवलातिशयां श्रयामः

सम्पूर्ण प्राणियों के ह्रदय में भगवान कृष्ण विराजमान है।

हे माँ! उनके ह्रदय मे भी आप प्रविष्ट है आपके ह्रदय में भी दया विराजमान हैं आप ही अखिलातिशया है हम आपका आश्रयण करते है।

भावुको की भावना है कि आनन्दरस सर्वत्र अप्रतिहत भूत पंङ्कज के केसर ब्राजङ्गनाएं हैं मकरन्द श्री कृष्ण हैं मकरन्द का माधर्यु मिठास और सौगन्ध आदि राधिका हैं इस दृष्टि से सीता गौरी आदि में भी समझनी चाहिए दृष्टि से भगवती का स्वरूप ही सर्वान्तरङ्ग और सर्वोत्कृष्ट रहता है।

शुम्भ निशुम्भ ने दूत भेजकर कहलाया कि हमारी आज्ञा सर्वअप्रतिहत है संसार के सब रत्न एरावत उच्चैः श्रवा सब हमारे पास हैं तुम भी स्त्रीरत्न हो हम भी रत्नमुक है अतः तुम हमारे पास चली आओ हमारे पास आने से तुम्हे परम ऐश्वर्य प्राप्त होगा–भगवती ने गम्भीर स्मित के साथ कहा ठीक है परन्तु मेरी प्रतिज्ञा है जो मुझे संग्राम में जीत लेगा, मेरा दर्प दूर करेगा, मेरे समान बलवान होगा वही मेरा भर्ता होगा। अतः शुम्भ निशुम्भ कोई भी आकार मुझे जीत कर मेरा पाणिग्रहण कर लें।

ये मां जयति संग्रामे यो में दर्प व्यपोहति।

यो मे प्रतिबलो लोके स में भर्ता भविष्यति।।

रसात्मक रसरूपा काव्यमय कलेवरा काली का ध्यान सपर्या

हंसा उड़े आकाश पेहन्यो छूटयब द्वन्द्व

मन अरूझायो हि रहयो मानसरोवर फन्द

हम विराग आकाश में बहुत उड़े दिन रैन

पै मन पिय पग राग में लिपट रहयो बेचैन

हम सीद्री बनिबे चले निपट निरन्द्री पर रूप

इत मन बोल्यो बावरे पिय को रूप अनूप

व्यर्थ भये असफल भये योग साधना यत्न

कोन समय के धूरि जब मन में पिय सौ रत्न

कहा बापुरी विरति यह कहा स्नेह रस राग

पिय हन्ते या देश हो सधौ गान बैराग फिके फिके से लगत है

सबै जोग जप योग सदा रावरी अर्चना सन्तत

राउर ध्यान राऊर ठिग रहिबो ललक यही हमारी बान

थकित गात संश्लत चरण हियमन प्राण उदास
अब ना नेह नेको नीको लगै यह आयास प्रयास
रिमझिम बरसे नेह घन नाचै मत्त मयूर
हे मन ऐसी रहनि रहौ रहौ न पिया से दूर
छाड़ो देश विदेश को यह पर्यटन असार
बैठि पिया के चरण गह करौ सुलोचन चार

विचरौ पिया की डगरिया वसौ पिया के गाँव, अवतो ऐसा लगत है बैठि बैठि पिया के डयौठि जपौ पिया के नाम

जह लरिविप्रिय के नेह घन नाच उठै मनमोर
कितौ पिया की डगरिया कितौ पिया को छाँव
अरूणा भई विभावरी दूढ़त पिया को गाँव

यह नमाजे सहने हरम नही
यह सलाते कूचे इश्क है।
न दुवा का होश सजूद में
न अदब की शर्त नमाज में।
जो खड़े है आलमे गोर में
वह खडे है आलमे गोर में।
जो झुके है नमाज में
वह झुके है नमाज में।। (सजूद–सिजदा)

तल्लीनता ही भक्ति है मुदिता मुग्धा शक्ति गर्भित भक्ति होती है जो साधक को दृश्य सुख दुःख रूप जगत् से उन्नीत करती है।

दुःखमत्यधिकं चित्ते
सुखत्वेनैव व्यज्येते।
यतस्तु प्रणयोत्कर्षात्
स राग इति कथ्यते।।

दुःख भी सुखरूप प्रतीत होने लगे इष्ट विषयिणी राग प्रणयोत्कर्ष का स्वरूप है
अतः प्रणयवशात् दुःख दुःख न लगे यही रागावस्था कालकामिनी काली में प्रकर्षेण नयति इति
प्रणय–सम्यक् (भगवती) तक नयन (नीयते अनेन) ही प्रणय है

काली तद्‌विषयिणी प्रीति प्रीति कर्त्ता भक्त अर्थात् प्रेमास्पदा काली मध्यग प्रेम और प्रेमी त्रिदल लगता है जैसे रूप और उसका दर्शन और आलोक लेकिन तेज का ही परिणाम रूप तेज काही परिणाम चक्षु और तेजी ही आलोक अर्थात प्रेमी प्रेमास्पद (जिसमें प्रेम किया जाये और प्रेम ये तीनों प्रेमतत्व के विकास मात्र है।)

(हृषीकेण हृषीकेश सेवन भक्तिरूतमा) भगवत्प्रीत्यर्थ
अपनी इन्द्रियो का विनियोजन ही उत्तमोत्तम भक्ति है
(गोभिः इन्द्रियै भगवदरसं पिबति इति गोपी)
(सत्यमपि ज्ञानम् ज्ञानमपि सत्यम्)

चिति देश पर आरूढ़ होकर व्यापक होती है काल पर जब आरूढ़ होती है तो नित्य होती है और द्रव्य मे आरूढ होकर सर्व हो जाती है वस्तुतः देश, काल आदि परिच्छेदय शून्य अखण्ड निरवधिका चिति भगवति श्यामा जी हैं।

इदं और अनिदं ग्रन्थि का उद्‌भेदक विबोध ही है।
अविचारकृत ही बन्धन ग्रन्थि है विचाराकृत मोक्ष ही है।

स्व वैभव में किसी को सन्देह नही
"नहि कश्चिद् प्रतीयात् नाहमस्मीति" (पञ्चदशी)
अहमेवाधस्तात् अहमुपरिष्टात्
अहंपश्चात् अहं पुरस्तात्
अहं दक्षिणतः अहमुत्तरतः
अहमेव इदं सर्वम्

अहं शब्द की व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ है जिसका कभी बाध न हो और न त्याग हो वह अहम है।

न जहाति इति अहम्
न हिनस्तीति अहम्
न हन्यते इति अहम्

प्रभुरस्म्यहं–अंहगृहोपासना की शैली निम्न है।

अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं दृश्य पापं विनाशयेत्
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं देह दोषं विनाशयेत्
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं मृत्युपाशं विनाशयेत्
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं द्वैतदुःख विनाशयेत्
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं चिन्तादुःखं विनाशयेत्
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं बुद्धिव्याधिं विनाशयेत्
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं वज्रोऽयमनात्माख्यगिरीन्हरेत्

देहत्रयातिरिक्तोऽहं–मै स्थूल, सूक्ष्म, कारण इन देह त्रय विनिर्मुक्त निजबोधरूपा कालिका हूँ यही तीव्र विविदिषा और आवृत्ति स्वरूपसन्धान कराती है "अहं ज्ञाता हि लोकस्य मम ज्ञाता न विद्यते" (शिवगीता)

पुनः पुनः आवृत्या
पुनः पुनः आलोडनेन
कालीतत्त्वज्ञान भविष्यति
आवृत्ति असकृदुपदेशाच्

असकृद अर्थात अनेक बार तत्त्वोपदेश करे ब्रीहीन् अवहन्यात–यावत् तण्डुलनिष्पर्त्तिन स्यात्धान को कूटो कब तक जब तक तुषविमोचन पूर्वक तण्डुल निष्पत्ति न हो जाय

जब तक निजबोध रूपाश्यामा का अवबोध न हो जाय।

स्वबोधे नान्यबोधेच्छा
बोधरूपतया आत्मनः।
नहिदीपस्यान्य दीपेच्छा यथा स्वात्मा प्रकाश ते

स्वबोध (काली निजरूप में) में अन्य बोध की इच्छा नही होती क्योंकि बोधरूपता निज वैभव है जैसे एक संदीप्त दीप प्रकाश के लिए अन्य दीप की अपेक्षा नही करता वैसे ही स्वात्मा प्रकाशित होकर सर्व निरपेक्ष है आत्मसंविदा विलासरूपा माँ श्यामा उपासना का स्वरूप है इष्ट देवी वृत्ति की आवृत्ति फल है।

साकालिकाऽहं निजबोध रूपा

धर्म कहता है करो, उपासना कहती है भावना करो योग कहता है शान्त बैठो वेदान्त कहता है पहचान लो

वेदान्त दृष्टि से
पावा कहे सो बावराँ
खोया कहे सो क्रूर।
पाया खोया कुछ नही
ज्यों का त्यो भरपूर।।

शरीर। क्षेत्र क्षतस्त्रायात् इति क्षेत्रम्) क्षत् विछत से त्राणकारक क्षेत्र) शरीर ही काशी है त्रिभुवन जननी गङ्गा ज्ञान रूप से संव्याप्त है भक्तिश्रद्धा ही गया है निजगुरू चरणाम्बुज ध्यान ही प्रकृष्ट याग रूप प्रयाग है सकल जनसाक्षी विश्वेश ही आत्मा है वही सर्व भूताडन्तरात्मा यदि देहगत सभी तीर्थ (तरति पापादिकं यस्मात, पापादि से संतरण करादे वही तीर्थ) है अन्य तीर्थो से क्या प्रयोजनन है

काशी क्षेत्रं शरीरं त्रिभुवन जननी
व्यापिनी ज्ञान गंङ्गा भक्ति श्रृद्धा गयेयं,
निजगुरूचरण ध्यान योग प्रयागः,
विश्वेशोऽयं तुरीयः सकलजन मन साक्षि,
भूतान्तरात्मा देहे सर्व मदीये यदि
वसति पुनस्तीर्थ मन्यत् किमस्ति,।।

गंङ्गा दर्शन जगद् (आकर्षण रूप) दर्शन कोविभङ्ग करता है– तदगत पङ्क (गंगा में कीचड़)

अन्तः करणगत कल्मष का अपनोदक है पय जल पान पुनः जन्म न लेने देने के कारण स्तनगत पय पान का निवारक है "दर्शनं दर्शनः हन्ति :

पङ्कः पंङ्कव्यपोहति।
पयः पानं पयः पानं
अघो गतिः अघो गतिम् हन्ति ।।

झुक कर स्नान नीचे के लोको का अपहारक है
विवेकी को शास्त्र भी भार है

"नातिम्यसेत् बहून गन्थान्"
बहुत ग्रन्थों का अभ्यास मत करों

प्रशान्त शास्त्रार्थ विचार चापलः
निवृत्त नानारस काव्य कौतुका।।
निरस्त निःशेष विकल्प विप्लवः
शान्त सुखं तिष्ठति शाश्वतात्मक :।। (योगनाशिष्ठ)

शास्त्रतार्थ कण्डु (रणरबजुलाहट) प्रशान्त हो जाती है ज्ञान की, नाना रस काव्य कौतुक, विकल्पजाल नष्ट प्राय होकर शाश्वतात्मक (ज्ञानी) सुखी बैठा रहता है

आकाशमेकं सम्पूर्णम्
कुत्रचित नैव गच्छति।
तदवत आत्म परिज्ञानी
कुत्रचित् नैव गच्छिति।। (उपनिषद्)

व्योमवद व्यापक आत्मविद् सर्वत्र होने से गमनागमन शून्य हो जाता है "न तस्य प्राणः उतक्रामन्ति अत्रैव समवलीयन्ते"

ज्ञानी का प्राण परलोक गमन नही करता यही सत्त विद्यमान रहती है। पुर मे पुरवासी (नाना) नाम, आकृति, और सुवेश (सज्जित) नरयुवती को देखता हुआ (जो कि) स्वर्ण आभूषण मण्डित चित्रसदृश (ज्ञानी) स्वयं

पुरे पौरान पश्यन् नरयुवति
नामाकृतिमयान सुवेशान्।
सुवर्णालङ्करण कलितान् चित्रसदृशान्
स्वयं साक्षाद द्रष्टेत्यापि च कलयन तै सहश्मन
मुनिर्निर्व्यामोहं भजति गुरू दीक्षा क्षततमा ::।।

द्रष्टा अवस्थापन्न तद् तद् विषय (जीवन्मुक्तानन्द) लहरी रमण करता हुआ भी गुरू (ज्ञान) रूप दीक्षा से क्षतनष्टा अन्धकार मुनि मोहित नही होता।

कदावाहृषीकाणि साम्य भजेयुः
कादा वा न शत्रु न मित्रं भवामि।
कदा वा दुराशा विषूची विलोपः
कदा वा मनो मे समूलं विनश्यति।।

कादा–कब इन्द्रियों को वश में कर (वशे यस्येन्द्रियाणि) इन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता)

कब शत्रु मित्र विघुर हो जाऊँगा
पक्ष विपक्ष विघुर सन्त होता है।

दुराशा हैजा का कब विलोप होगा और कब मनो निलय होगा।

दृश्यं नास्तीति बोधेन
मनसोदृश्य मार्जनम्
सम्पन्नं चेत तदुत्पन्ना परानिर्वाण निर्वृत्तिः ।। (योग वाशिष्ठ)

दृश्य नही है (कल्पित निरन्तर निरस्त सत्ताक है)

ऐसे बोध से अशेष दृश्य (जो कि वेदान्त में एक मात्र मालिन्य रूप से सुश्रुत है)का परिमार्जन करो अगर यह (अनुष्ठान) सम्पन्न हो गया तब परा निर्वाण मोक्ष अविर्भूत होता है।

एक अधिष्ठान भूता भगवती ही अवशेष अशेष विशेषातीत रहती है और सब लेला खेला कर चले जाते है संसार विटपाङ्कुर का अत्यान्ताभाव हो जाता है।

हे शब्द ब्रह्म भूत निवास वदने
हे अशेषशब्दजाल भासिका

जिहवायां बैखरी वाग दति किमपिवसेनध्यमा स्फोटमध्य पश्चन्ती
च त्रयी कि व्यवसित मनुदृग ज्योतिषा स्वेन पश्येः
सौषुम्ण मध्यगा त्वं प्रविशसि कुहरं न्यस्तवर्णान्
मात्रावाऽप्यर्धमात्राऽप्यमित परखा नीरवा त्वं परा वाक्

अन्वय–जिहवायां बैखरी वाक् (जिह्वा में बैखरी वाक) स्फोट मध्या किमपि दति वसेत (और स्फोट मध्यमा क्या तुम्हारी दन्त पंक्ति में रहती है) पश्यन्ती च त्रयी कि स्वेन ब्यसित मनु दृग ज्योतिषां पश्येः (त्रयी या वेदरूपा पश्यन्ती को क्या तुम निश्चित मन्त्र और) मन्त्रार्थ के रूप में अपनी नयन ज्योति से देखती हो मध्यमा त्वं सौषुम्णं कुहर प्रविशसि मध्यवर्तिनी से प्रवेश करती हो ब्यस्तवर्षीन न्यस्यसि (यथास्थान वर्णो का न्यास करती हो) मात्रा वाऽपि अर्धमात्राऽपि अमित परखा त्वं नीरवा परां वाक मात्रा अर्धमात्रा पूर्ण मात्रा इन चारो चरणों द्वारा चलने वाली हे परा वाक्! तुम अमित पर रवा अर्थात् परात्परा और नीरवा हो।

भाष्य–मै सोचता हूँ तुमने अपने व्यक्त रसना में वैरवरी वाक् को प्रकाशित कर रखा है (बैखरी वाक् है स्थूल स्फुटवाणी या व्यक्त शब्द) वाचिक उपांसु और मानस रूप त्रिविध व्यवहार भी बैखरी के अन्तर्गत है।

बैखरी रूप का त्याग करते हुए मातृकारूपिणी प्रथम निगूढ़ा मध्यमा तनु धारण कर सुषम्णा कुहर में प्रविष्ट हुई । उस के फलस्वरूप चक्र चक्र में कमल कमल में प्रत्येक का वर्णमय मन्त्र विन्यास करती चली गई ।अन्त में महाकुण्डलिनी स्वरूपा तुम पर तत्व सामरस्य के पथ पर अग्रसर हो कर क्या अपने मुदित यन्त्र तन्त्र को प्रस्फुटित पश्यत् या प्रकट रूप में प्रकाशित कर देती हो तुम कौन से अभिसार से चली हो क्या स्वरूपतः परात्परा या परा के भी पार नही हो ? क्या तुम नाद बिन्दु ज्योति और आनन्द की विछिन्न धारा को, मुक्त वेणी को परम संगम से युक्त करती है। तुम अर्धमा.त्रा पूर्णमात्रा, अमात्रा के चतुष्पाद मे नियत ही चल रही हो।

वाग्दोहं घोक्षि तारं कलयसि च मनून हुंफडादीन समर्थ
न, वौषट स्वाहा स्व धैवं कतिविधमन वस्ते च विद्याः
'कियत्यः' लक्ष्मीवाणीच काली निजनिजमनुगाः स्वस्ववर्णे प्रकाश्याः,
स्वैः स्वैतन्त्रैः प्रकार्यास्त्वमसि निजकृतौ कालिकाद्या स्वतन्त्रा।।

अन्वय–वाग्दोहं तारं (वाग्दोह रूप ओङ्कार का तुम दोहन करती हो) हुफडादीन समर्थान च कलयसि (हूँ फट् इत्यादि समर्थ मन्त्रों का कलन करती हो।) वौषट् स्वाहा स्वधा एवते कति विधमनवः विद्याः च कियत्यः (वौषट स्वाहा स्वधा इत्यादि कितने ही प्रकार के तुम्हारे मन्त्र हैं और कितनी ही विद्याएं है) लक्ष्मी वाणी काली च निजनिजमनुगाः स्व स्ववर्णे प्रकाश्याः काली अपने अपने मन्त्रों द्वारा गम्य है अपने अपने वर्णों द्वारा प्रकाश्य हैं स्वैः स्वैः प्रकार्याः (वे तीन देवियाँ अपने अपने तन्त्र द्वारा आकारित है) त्वं तीनो देवियाँ अपने अपने तन्त्र द्वारा आकारित है) त्वं निजकृतौ आद्या स्वतन्त्रा कालिका असि (तुम अपनी कृति में स्वतन्त्र. हो अथवा कालिका हो।

हे दुष्पधर्षणीया

भाष्य–अपने को तुष्णी नाद के युग्म रूप में व्यक्त कर बिन्दु का मन्थन किया है उसी मन्थन से ही आकारदि समस्त कलावर्णो का उदभव हुआ है तूष्णी है शिव शिवा है नाद! इन दोनों के मेलन से ही बिन्दु का मन्थन होता है जैसे उत्तर और अधर अरणि के घर्षण से अग्नि का मन्थन होता है। उसी के पश्चात् तुम 'हुँ' फट इत्यादि कितने ही उत्सवों के रूप में शक्ति का स्रोत खोल देती हो तुम्हारी मन्त्रमयी महाविद्या कितनी असंख्या है। महाकाली महालक्ष्मी, महासरस्वती को तुम ने अपना अपना मन्त्र तन्त्र यन्त्र दिया है। उसके मध्य से ही प्रकाशित और आकारित हुई है। सर्वेश्वरी स्वच्छन्दता स्वतन्त्रता नही रही हो। अर्थात् तुम स्वतन्त्र होकर भी हमारी पकड़ में आओगी। इसलिए अपना स्वातन्त्र्य विसर्जित करके मन्त्र के द्वारा परतन्त्र होकर मन्त्रधीना रूप में प्रकाशित हुई हो तुम अकिंचन प्रपन्न की भी माँ हो करूणा वरूणा लया हो।

कालिकोल्लास–3

शक्तिः पराक्रमः प्राण :

शक्ति शब्द की व्याख्या–"शक्लृशक्तौ" धातु से क्तिन' प्रत्यय होकर शक्ति शब्द सिद्ध होता है वस्तुओं में जो कार्योत्पादिनी उपयोगी अपृथक सिद्ध धर्म विशेष है उसी को शक्ति कहते है।

पातीति पात्री पिबतीति पात्री
व्युत्पत्तिरेवं द्विविधा भवन्ती
पीयूषपात्री शरणैक पात्री
द्वेधापि पात्रीभवती भवन्ती
धात्री पात्री हर्त्री वेत्री चाम्ब त्वमस्यलोकस्य
दात्री सकलार्थानां पात्रीकुरू माँ त्वदीयकरूणायाः
ओ जगन्माता–न केवल साधारणेषु सर्वेषु सुप्तेषु
जागर्ति अपि तु सुप्तेऽपि जगन्नाथे जागर्ति

केवल साधारण सब जीवों के ही नही बल्कि जगत्पिता के सोते रहने पर भी जो अपने बच्चों की रक्षा कल्याण के लिए दिन रात सदा सर्वदा जागती रहती है।

श्रीशंङ्कराचार्य जी ने भी अत्यन्त श्रद्धा प्रेम से भरे हुए भाव के साथ 'देशिकरूपेण दर्शिताम्युदयाम्' इत्यादि वर्णनो से सिर्फ जगन्माता ही नही बल्कि यथार्थ जगदगुरू बताया है।

भगवान के योगनिद्रा के समय तुमने ही मधु कैटभ से ब्रहमा जी की रक्षा की तुम तो जगत के प्रलय के बाद उसकी पुनः सृष्टि तक सोने वाली हो जगत की सृष्टि और प्रलय के बीच में तुम कभी सोती ही नही हो भगवान जागते रहें या सोते रहें उनकी शक्ति की हैसियत से तुम पर ही जगत के पालन का भार रहता है।

गृहणी गृहमुच्यते

भगवच्छक्ति के चार अर्थ

"भगवतः शक्तिः भगवच्छक्तिः" इस षष्ठी तत्पुरुष समास वाली व्युत्पत्ति से हमे जानना है कि भगवती भगवान की शक्ति है वही ललिता त्रिशती आदि में बताए हुए ईश्वर प्रेरणकरी नाम को यर्थाथ करती हैं।

भगवति शक्तिः भगवच्छक्तिः इस सप्तमी तत्पुरुष समास वाली व्युत्पत्ति से हमे जानना है भगवान में जो शक्ति है उसी का नाम देवी है।

भगवती चासौ शक्तिश्च भगवच्छक्तिः इस कर्म धारय समास वाली व्युत्पत्ति से हमें जानना है शक्तिरुपिणी देवी भगवती है।

खण्डन अथवा मण्डन मै ही करुँगी यद्यपि मै शिव से भिन्न नही हूँ क्योकि शिव को छोड़कर मेरी सत्ता ही नही, शिव को अपने को जगत को मै ही सिद्ध करती हूँ। वह देवी एक हो कर भी द्वैतरुपिणी द्वैताद्वैतरुपिणी अद्वैतरुपिणी यों तीन रुप वाली हो जाती है।

शिवस्वरुप से असंङ्ग अनङ्ग निर्विकार अयुच्च भूमा निष्कल निरञ्जन अद्वितीय है ऐसे शिव में किसी प्रकार की क्रिया सम्भव नही इसलिए जो स्वयं करने वाली स्वयं भोगने वाली स्वयं जानने वाली है स्वयं ही परमेश्वरी बनी बैठी है शिव तो केवल साक्षी मात्र हैं शिव की परम अद्भुत भगवती शक्ति मै भजन करता हूँ। अपरिछिन्न स्वरूप वाले महादेव में जो शक्ति अपरिछिन्न रूप से विद्यमान रहती है साधक भी जिसको अपरिछिन्न आदि लक्षणों से पहचानते है उस महादेव की अद्भुत शक्ति का भजन करता हूँ।

जो चैत्य पदार्थो से रहित है अचेतन के समान पड़े हुए उस चेतन में जो चेतना उत्पन्न कर देती है उस अद्भुत शक्ति का मै भजन करता हूँ।

जिस शिव के पास शक्ति है ही नही ऐसा बिना शक्ति का असक्त शिव कर ही क्या सकता है।

पाँचों विषयों से जो आनन्द होता है उसी आनन्द का नाम विषयानन्द है मूर्ख पामर लोग इस विषयानन्द को चाहा करते हैं ये विषयानन्द पूर्णानन्द के अति तुच्छ कण हैं।

भोला ! विश्व न देख ब्रह्म में लय कर वृत्ति।
रहे न रंचक भेद एक होवे शिव शक्ति।।
वन्दे विदेह तनया पद पुण्डरीकं
कैसोर सौरभ समाहृतयोगिचित्तम्।
हन्तु त्रितापमनिशं मुनि हंससेव्यं
सन्मानसालि परिपीत परागपुञ्जम् ।।

"तस्या एव ब्रह्मा अजीजनत्।
विष्णुरजीजनत् रूद्रोरजीजनत् ।
सर्वे मरूद्गणा अजीजनन्।
गन्धर्व वीप्सरसः किन्नरा वादित्रवादिनः समन्ताद जीजनन् ।
भोग्यमजीजनन् सर्वमजीजनत्।
सर्वसाक्तमजीजन्।

अण्डज स्वेदजमुद्भिज्जं जरायुज यत्किञ्चैतत्प्राणी स्थावरजङ्गम मनुष्य मजीजनत् सैषा पराशक्तिः

उस पराशक्ति से ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र उत्पन्न हुए उसी से सब मरूद्गण, गन्धर्व अप्सराए और बाजा बजाने वाले किन्नर सब ओर से उत्पन्न हुए समस्त भोग्य पदार्थ अण्डज, स्वदेज उद्भिज्ज जरायुज जो कुछ भी स्थावर जङ्गम मनुष्यादि प्राणिमात्र उसी पराशक्ति से उत्पन्न हुए।

सर्वेपेता तद्दर्शनात् (दि० अ० प्रथम पाद ब्रह्मसूत्र) सर्व सार्मथ्य से युक्त वह पराशक्ति है।

विद्या समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु
त्वयैकेया पूरिमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरापरोक्तिः।

"शक्तिजातं हि संसारं तस्मिन सति जगत्त्रयम्, तस्मिन क्षीणे जगत क्षीणं तच्चिकित्स्यं प्रयन्ततः।। शक्ति का कार्य यह संसार है शक्ति के आर्विर्भाव से तीनों ही जगत उत्पन्न होते हैं शक्ति का तिरोमाव होने पर जगत का अत्यन्त अभाव हो जाता है। इस कारण उसी पर विचार करना चाहिए।

या काली सैव कृष्णः स्याद् यः कृष्णः सैव कालिका
तुमि यन्त्री आमि यन्त्र तुमि गृही आमि घर तोमार कर्म
तुमि करो मा लोके बोले करि 'आमि'

मै बाजा हूँ आप बजाने वाली है मै घर हूँ आप घर में रहने वाली मालकिन हो आप ही सब कुछ कर रही है अज्ञानता से लोग अपने को कर्ता मानते है।

भोग वारूणी के साथ मोक्ष की शान्ति सुधा मिला दी जाती है इस कारण कौलाचार को भोग मोक्ष पद के नाम से पुकारते है लक्ष्य तो केवल मोक्ष है भोग इसका उपाय है जो बालक दवा नही लेता लड्डू का लालच दिखा कर औषधि लेने के लिए प्रलुब्ध करते हैं मोक्ष की इच्छा में भोग के उपकरण द्वारा भोग को संयत करना इसका उद्देश्य है।

"येनैव विषखण्डेन भ्रियते सर्वजन्तवः
तेनैव विषखण्डेन भिषग नाशयतेरुजम्"

जिस विष के खाने से जीव की मृत्यु होती है उसी विष के द्वारा वैद्य रोगी के रोग का नाश करते है।

"न कुलं कुलमित्याहुः कुलं ब्रह्म सनातनम्" वंश परम्परा को कुल नही कहते सनातन ब्रह्म ही कुल शब्द वाच्य है इस ब्रह्मतत्व को वस्तुतः जानकर जो पुरुष मोह शून्य या निर्विकार हो सकते है वे कुल तत्वज्ञ है

बिन्दु का अर्थ शून्य नही अपितु पूर्ण है।

सा हि श्रीरमृता सताम् इत्यादि श्रुति भी इसी ब्रह्म स्वरुपिणि विद्या की स्तुति करती है।

शोकोत्तीर्णतारुप कहा है श्रीविद्योपासक को भी वही फल "पाशाङ्कुश धनुर्बाणा य एनां वेद स शोकं तरति स शोकं तरति।।"

यत्रास्ति भोगो न च तत्र मोक्षो
यत्रास्ति मोक्षो न च तत्र भोगः
श्री सुन्दरी सेवन तत्पराणां
भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव

भोग और मोक्ष एक अधिकरण सुन्दरी उपासना में है
आत्म शक्त्युपासना ही श्री विद्योपासना है।
सर्वसाम्याश्रयात्मक स्वात्मभाव को प्राप्त करो
दृष्यमान सब कुछ आभास मात्र सारशक्ति विलास ही है।
स्वदेह को वेद्य समझते हुए वेत्ता पर सर्वदा दृष्टि रखने
वाले को इस संसार मार्ग मे कुछ भी कर्तब्य अवशिष्ट नही रहता

"लौहत्यमेतस्य सर्वस्य विमर्शः" महाकामेश्वर ललिता और स्वयम् इन तीनो का विमर्श अर्थात् स्वात्मा में अनुसंन्धान करना ही ललिता के रक्तवर्ण की भावना है

प्रकृति में कामेश्वर कामेश्वरी के विग्रहात्मक स्थूल दो रुपो का सम्बन्ध कामेश्वर के अंङ्क मे कामेश्वरी के विरजमान होने मे पर्यवसित है

कामेश्वर शिव की शिवता महाशक्ति के उल्लास रुप सानिध्य से ही स्फुरित होती है

निर्विशेष ब्रह्म ही स्वशक्तिविलास के द्वारा ब्रह्मा विष्णु इत्यादि पञ्च आख्याओ को प्राप्त होकर वामादि तत्तच्छक्ति के सान्निध्य से सृष्टि स्थित लय निग्रह अनुग्रह रुप पञ्चकृत्यो को सम्पादित करता है जब ब्रह्मादि अपनी अपनी वामादि शक्तियों से रहित हो कर कार्याक्षम हो जाते तब वे प्रेत कहे जाते हैं

... फलक है उस पर महाकामेश्वराङ्क मे महाकामेश्वरी विरजमान है।

निर्विषयतत्व निरंजनत्व अजरत्व अशोकत्व अमृत्वादि अनेक धर्मरूप आभरणों में धर्म्यभेद भावना करना ही आभरणार्पण है हृदयस्थानी तो स्वयं इच्छाशक्ति है। शिरः स्थानी ज्ञान शक्ति है हस्तपादास्थानी क्रियाशक्ति है

राध्नोति सकलान् कामास्तस्माद्राधेति कीर्तिता

मीयते अनया इति माया–इस व्युत्पत्ति के अनुसार–जिससे हम उसे जान सके उस ज्ञान का नाम माया है निघण्टुकोष मे भी ज्ञान को माया कहा गया है। (मायावयुनंज्ञानम्)

"न जायत इत्यजा"
जो उत्पन्न न हो
व्यालावलीवलयिता कलितानलकीलया कापि
शूल प्रविदितशीला नीरदनीला लता जयति

जगत के निमित्त और विवर्तोपादानकारण सच्चिदानन्द परब्रह्म की स्वाभाविक जो पराशक्ति है वही शक्ति तत्व भगवती है।

"तस्य भट्टारिकासि त्वं भुवनेश्वरि भोगदा"
परमा प्रकृतिकस्त्वमाद्या (मा० पु०) तुम प्रकृष्ट आदि प्रकृति हो।
"चितिः स्वतन्त्रा विश्व सिद्धिहेतु'
"परमशिवदृ.ड.मात्रविषयः"
मुक्तावन्तर्मुखैव त्वं भुवनेश्वरी तिष्ठसि
हे भुवनेश्वरी तुम मुक्ति में अर्न्तमुखी रहती हो

नित्यैव सा जगन्मूर्तिः बहिरङ्ग शक्ति जीवों के सब प्रकार के क्लेशो का निदान है।

स्वयं अनाद्यनन्त आनन्दस्वरूप परब्रह्म जिस शक्ति के द्वारा अपने आनन्दस्वरूप को जीवों की अनुभूति का विषय बनाकर स्वयं भी आत्मभूत परमानन्द का साक्षात्कार करते हैं उस स्वरूप शक्ति का नाम हलादिनी शक्ति है। यह शक्ति ही स्नेह, प्रणय, रति प्रेम भाव और महाभाव रूप में भगवदनुगृहीत जीवों को शुद्ध सत्त्वमयी निर्मल मनोवृत्तियों में प्रतिफलित होकर भक्ति शब्द वाच्य हो जाती है। सुख ही सब जीवों के जीवन का परम या चरम लक्ष्य है।

दिव्यभावयुतानां तत्त्वज्ञानं सदा भवेत्
दिव्य भाववालों को तत्त्वज्ञान की प्राप्ति होती है।
निमेषोन्मेष सृष्टि स्थिति संहार तिरोधाना नुग्रहादि सर्व
शक्ति सामर्थ्या त्साक्षाच्छम्तिरिति गीयते।

जिसके नेत्र के निमेष उन्मेषमात्र से ही संसार की सृष्टि स्थिति तथा संहारादि क्रियाएं होती है वह श्री सीता जी है। तिरोधान, अनुग्रहादि सर्व सामर्थ्य सम्पन्न होने से श्री जानकी जी साक्षाद् आद्या परात्परा शक्ति कहलाती है पुनः

भूर्भुवः स्वः सप्तद्वीपा वसुमति त्रयो लोका अन्तरिक्ष सर्वेत्वयि निवसन्ति ।
आमोदः प्रमोदो विमोदः सम्मोदः सर्वास्त्व सन्धत्से।
आञ्जनेयाय ब्रह्मविद्या प्रदात्रि धात्रि त्वाँ सर्वे वयं प्रणमामहे।
(श्री मैथिली महोषनिषद)

हे श्री जनकराजतनये। पृथ्वी, पाताल तथा स्वर्गादि तीनों भुवन सप्तद्वीपवती, वसुन्धरा तीनों लोक तथा आकाश ये सब आप में प्रतिष्ठित है। आमोद प्रमोद विमोद संमोदादि सबको आप धारण करती अञ्जनीनन्दन पवनपुत्र को आपने ही ब्रह्म विद्या का सदुपदेश दिया था।

ऐश्वर्यवचनः शश्चक्ति पराक्रम एव च
तत्स्वरूपा तयोर्दात्री सा शक्तिः परिकीर्तिता।।

श नाम ऐश्वर्य का और क्ति नाम पराक्रम का है एवं ऐश्वर्य पराक्रम स्वरूप और दोनो के प्रदान करने वाली की शक्ति कहते है,

न हि क्षमस्तथात्मा च सृष्टि स्त्रष्टं तया बिना
तरत्यनया सा तारा

जिसके द्वारा संतरण हो सम्पादन ही अस्ति समस्त जग दुत्पत्ति पालन संहार कर्त्तृभिः ब्रहम विष्णु महेशैरूप सेव्यमाना जगदाधाररूपा संसार भयनाशिनी अपुनरावृत्ति कारणी संसार तारिणी तारा नामनी शक्तिः परममहती

शून्ये ब्रह्माण्डगोले तु पञ्चाशच्छून्यमध्यगे
पञ्चशून्ये स्थिता तारा सर्वान्ते कालिका स्मृता

शून्य ब्रह्माण्ड गोल में पचास शून्य है जिनमें पाँच शून्य पर श्री तारा शेष पर श्री कालिका स्थित है पचास शून्य कुल है पाँच शून्य पर सीता जी स्थित है और बाकी शून्य पर कालिका जी है विराट चक स्वराट के भेद से मध्य में जो शून्य आता है उनमें ब्रह्माण्ड नायिका श्री राज राजेश्वरी श्री महासुन्दरी श्री विद्या जी का स्थान है

Weaklings hare no place in the world
कमजोरों के लिए संसार में कोई स्थान नही है

नायमात्मा बलहीनेन लभ्य : –शक्तिहीन को न आत्मा की न परमात्मा की प्राप्ति होती है इसलिए शक्ति की उपासना करो। चितिशक्ति पूर्ण प्रेम स्वरूप है चित्ति शक्ति सत्यस्वरूप है चितिशक्ति सर्व व्यापक है चेतनमय है अपने अहङ्कार रूपी मस्तक को प्रेमरूपी तलवार से पृथक करके उनके चरण कमलों में समर्पण करो जननी जगदम्बा है।

जिसका नाम अस्पष्ट अर्थात अधूरा है किसी भी निमित्त अर्थात् देवतानाम बुद्धिरहित (अस्पष्टम् यथावद्वर्ण रहित मित्यर्थः प्रसङ्गेनापि देवता नाम बुद्धि रहिते नापि तिलकव्याख्या लेने पर भी दुर्लभ वाञ्छितार्थ देता है वन में व्याघ्र इत्यादि देखकर भयभीत होने के कारण 'ऐ ऐ' बिन्दुहीन नाम का उच्चारण करने पर भी वह इच्छित फल प्रदान करती है।

शक्ति सामर्थ्य बल पर्यायवाची शब्द है कार्य सम्पन्न करने का सामर्थ्य ही शक्ति है यह सामर्थ्य व्यक्त और अव्यक्त दो प्रकार का होता है देवदत्त में चार मन बोझ उठा लेने का सामर्थ्य है जब तक वह उठाकर प्रकट नही करता तब तक उसका सामर्थ्य अव्यक्त है

परात्पर ब्रह्म का आदि सकंल्प 'एकोऽहं बहुस्याम की जो सृष्टि की उत्पति का मूल कारण है वही आद्या शक्ति है एवं सर्वगता शक्तिः सा ब्रह्मेति विविच्येते

हालाशाला का ताला
तां भद्रकाली तपसा ज्वलन्तीम्
महेश्वरी शुद्धमहत्प्रतिष्ठाम्
शुद्धात्म कल्याण गुणस्वाभावां
वन्दे सदा चतेसा भद्रकालीम्
भद्रासनस्थां परमां पवित्राम्।
भद्रार्चितां शङ्खचक्रादियुक्ताम्
रूद्राक्षमाला गगने नटन्तीं
वन्दे सदा चेतसा भद्रकालीम्।।

'शक्ति' शब्द के स्त्रीलिङ्ग और ब्रह्म शब्द के पुल्लिग होने से स्त्रीत्व तथा पुरूषत्व का निरूपण ब्रह्मशक्ति में नही होता एक ही सूत्र कुर्ता, मुरैठा, अंगोछा आदि नामों में पुरूषवाचक और टोपी, साड़ी धोती, पगड़ी आदि नामों स्त्रीवाचक कहा जाता है किन्तु सूत्र वास्तव में स्त्रीत्व और पुरुषत्व से रहित है।

चैतन्य विभिन्न नाम रूपों से स्त्रीवाचक और पुरूषवाचक शब्दों में व्यवहृत होते हुए भी वस्तुतः स्त्रीत्व और पुरूषत्व से रहित है।

अवधूत राज श्री सदाशिव ब्रहमेन्द्र सरस्वती महाराज कृत वर्णन के अनुसार

जनिविपरीत क्रमतः

विपरीत क्रम से अर्थात् लय के क्रम से गणना होती है सृष्टि के क्रम से नही इसी कारण महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती' ये तीन नाम उपासनाकाण्ड के ग्रन्थों में नियत क्रम से आते हैं।

जब गुरु शिष्य के अन्यथाभानरूपी अज्ञान का निवारण करता है तब वह संहार या रूद्र का काम करता है शिष्य के मन में जो यथार्थ ज्ञान है उसकी रक्षा करता है वह पालन या विष्णु का काम करता है नयी बातों को सिखाता है सृष्टि या ब्रह्मा का काम करता है।

असङ्ग कूटस्थ चिन्मात्रस्वरूप परमात्मा कभी जगदुत्पत्ति का कारण नही हो सकता उसमे रहने वाली कोई शक्ति ही जगत्सर्जनादि सब क्रियाओं में समर्थ सृष्टि का उपादान है यह उसके सामर्थ्य से अनुपलब्ध होत हुए प्रपञ्चरूप कार्य से अनुमान की जाती है।

सौक्ष्म्यात्तदनुपलब्धिर्नाभावात्कार्यतस्तदुपलब्धे

अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण जगत के उपादान स्वरूप उस शक्ति की प्रत्यक्ष उपलब्धि नही होती उसके असत होने के कारण क्योंकि जगद्रूप कार्य के द्वारा उस कारणात्मिका का ज्ञान नियम पूर्वक सबको होता है।

ते ध्यानयोगानुगता अपश्यन

देवात्मशक्तिं स्वगुणैनिगूढाम जगत के कारण के जानने का अभिलाषा से ध्यान योग में स्थित होकर द्युतिमान स्वप्रकाश चिदात्मा परमात्मा की शक्ति को स्वगुणों से आवृत्त में प्रत्यक्ष किया था जगत का उपादन कारण केवल परमात्मा शक्ति है कोई दूसरा नही

परास्य शक्तिविविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रिया च

विचित्र कार्य करने के कारण महामाया सब जगत का प्रकृष्ट निधान होने के कारण 'प्रधान' और सब जगत का उपादान कारण होने से प्रकृति नाम प्रसिद्ध है।

प्रकृष्टवाचक प्रश्च कृतिश्च सृष्टिवाचकः
सृष्टौ प्रकृष्टा या देवी प्रकृतिः सा प्रकीर्तिता
सृष्टि कत्री है वही प्रकृति है।

जिस प्रकार घट पट स्वरूप के अतिरिक्त स्वतन्त्र रूप से स्थित हो सकता है उस प्रकार शक्ति शक्तिमान के स्वरूप से अलग स्वतन्त्र सत्ता में स्थित नही हो सकती शक्ति शक्त के आधार पर ठहरी है विद्यारण्य स्वामी ने कहा है।

सर्वथा शक्तिमात्रस्य न पृथग्गणना क्वचित्।

माँ की सोम शक्ति ही विश्व जगत का अन्न स्वरूप है सोम अन्न है सूर्य अन्नाद औषध भी सोम शक्ति से ही उत्पन्न है। रोग क्षय कर देता है माँ ही रात्रि है दिन में सौर द्वारा नाना प्रकार के कर्म करके जब लोग श्रान्त हो जाते है तब आराम के लिए इनके चरणों में शरण प्राप्त करने की प्रार्थना करते हैं।

प्ररमयति भूतानि इति रात्रिः
विन्दु का अर्थ शून्य नही है अपितु पूर्ण है

प्रकाश शक्ति जैसे सूर्य से अभिन्न है तथैव चिदात्मा की शक्ति चिदात्मा से अभिन्न है वह एक ही तत्व शिव शक्ति रुप में परिणत हो रहा है अर्द्धनारीश्वर की उपासना यही मौलिक रहस्य है शक्ति शक्तिमान मे स्त्री पुंभाव भेद मानना अनुचित है।

आसीदिदं "तमोभूतमप्रज्ञातमलक्षणम्"
अप्रतर्क्य मनिर्देश्यं प्रसुप्तभिव सर्वतः

रात्री प्रलयकाल का स्वरूप है उसमें भी रात्रि के 12 बजे का समय घोरतम है यही महाकाली है सूर्योदय के पहले रात्रि के 12 बजे बीच का समय महाकाली है। उत्तरोत्तर तम का ह्रास है इतने समय को तम के तारतम्य के कारण ऋषियों ने 84 विभागों मे विमक्त किया है महाकाली के 84 अवान्तर विभाग है शोक का निदान कालावस्त्र है खतरे का निदान लाल वस्त्र है निरूपद्रवता का निदान हरित वस्त्र है कीर्ति का निदान श्वेत वस्त्र है पृथिवी का निदान कमल हैं मोहशक्ति का निदान सुरा है लक्ष्मी का निदान हस्ती है विजय का निदान ध्वज है संहार का निदान हरा मस्तक है फॉसी का हुक्म सुनाने वाला लाल वस्त्र पहनता है कृष्ण वस्त्र सारे प्रकाश पी जाता है। स्टेशनों पर झंडी निरूपद्रवता का निदान है विश्व का संहार करने वाली कालरात्रि वही है सृष्टि काल उसकी प्रतिष्ठा है दूसरे शब्दों में शक्तिमान उसकी प्रतिष्ठा नही है अपितु शक्ति शून्य शव का विश्व उसका अवलम्बन है प्रलय काल में विश्व शव रूप से पड़ा है।

जो विश्व एवं विश्व की प्रजा अपने आपको सर्वेसर्वा समझते थे आज वे उससे परास्त है प्रत्येक गोलवृत्त में 360 अंश माने जाते है 90–90 चार विभाग माने जाते है उस वृत्त की चार भुजाएँ है ।

इन्ही को ख स्वास्तिक कहा जाता है वही महाकाली है पूर्णरूपा है।

अनन्ताकाश रूप महावकाश में चर्तुभुज रूप में परिणत होकर विश्व का संहार करती है नाश शक्ति का निदान खड्ग है नष्ट होने वाले प्राणियों का निदान कटामस्तक है। स्थिति विच्युति का नाम कम्प है कम्प ही भय है यही क्षोभ है विश्व ससीम है अतएव वह समय है परन्तु व्यापकत्व में कम्परूप मय का अभाव है।

अभय गतो भवति–इत्यादि रूप से उसी परात्पर उपनिषद अभय बतलाता है सुतरां उसकी शक्ति भी अभयरूपता सिद्ध हो जाती है संहार करती है डरावनी है। घोररूपा है अभयमुद्रा है अभय पद की प्राप्ति उसी की आराधना पर निर्भर है। विश्व सुख क्षणिक है अतएव दुख रूप है। परम सुख उसी की आराधना से मिल सकता है जीवित काल में जो सबका आधार थी वही प्रलय काल में भी आधार है उस व्यापक तत्त्व से बाहर कोई कैसे बच सकता है उसी परायण भाव का निदान मुण्डमाल है विश्व से उस शक्ति का आवरण हो जाता है। "तत् सृष्टा तदेवानुप्राविशत्" के अनुसार वह शक्ति विश्व के अनन्तर वह स्वरूप से उल्बण है उस स्थिति में आवरण का अभाव है वहाँ कवेल दिशाएं ही वस्त्र है इसी अवस्था का निदान नग्न भाव है सारा विश्व जब श्मशान बन जाता है उस तमोमयी का विकास होता है।

रात्रि के 12 बजे प्रातः 6 बजे जब चतुरशीति (84) मेदभिन्ना महाकाली की सत्ता बतालाई गई है इसके बाद तारा का साम्राज्य है हिरण्य गर्भ विद्या के अनुसार निगम शास्त्र ने सम्पूर्ण विश्व की रचना का आधार सूर्य को माना है सौरमण्डल आग्नेय होने से हिरण्यमय मण्डल कहलाता है अग्नि हिरण्येता है उस हिरण्यमय मण्डल के (आग्नेय सोलर सिस्टम के) केन्द्र वह सौर ब्रह्म तत्व प्रतिष्ठित है।

जैसे विश्वातीत काल पुरूष की शक्ति महाकाली है वैसे विश्वाधिष्ठाता इस हिरण्यगर्भ पुरुष की शक्ति तारा है अतएव श्रुति में सूर्य नक्षत्र नाम से प्रसिद्ध है। इनकी शक्ति तारा है। घोर तम में दीपक बिम्ब तारा सदृश प्रकाशित रहता है।

यह पुरूष तन्त्रशास्त्र में **अक्षोभ्य** नाम से प्रसिद्ध है। वैदिक सिद्धान्त के अनुसार सूर्य सर्वथा स्थित है सूर्य को हमने रूद्र कहा है एवं शिव घोर भेद से इसके दो शरीर बतलाये गए है।

आपोमय पारमेष्व्य समुद्र में घर्षणद्वारा आग्नेय परमाणु उत्पन्न हुए। श्वेतवाराह नाम से प्रसिद्ध प्राजापत्य वायु द्वारा उनका केन्द्र में संघात हुआ संघात होते हुए वह अग्नि परमाणु संघ पिण्ड रूप में परिणत हुआ।

अन्नाद अग्नि बिना अन्नाहुति के क्षणमात्र भी प्रतिष्ठित नही रह सकता इस अन्नाहुति से पहले क्षणमात्र भी प्रतिष्ठित नही रह सकता वह सूर्य महा उग्र था संसार को जला डालने वाला था इस समय के उग्र सूर्य की जो शक्ति थी वही उग्र तारा नाम से प्रसिद्ध हुई।

जब तक अन्नाहुति होती है तब तक तारा शान्त रहती है।

यह शक्ति प्रलयकाल में जहरीली गैस से ही विश्व का संहार करती है प्रलयकाल में हवा जहरीली हो जाती है दम घुटने लगता है जिसका यत्किञ्चित निर्दशन बिहार के परिहार से स्पष्ट हो रहा है।

उस शक्ति की सत्ता विश्व केन्द्र में बतलाई गई है शवरूप विश्व केन्द्र में प्रतिष्ठित है इसी रहस्य को बतलाने के लिए शव के हृदय पर उसे प्रतिष्ठित किया है सौर अग्नि अन्नाहुति बन्द होने से प्रबल वेग धारण कर लेता है।

सॉय सॉय शब्द करने लगता है इसी का निदान अट्टहास है प्रलयकाल में पृथिवी, चन्द्रमा, मनुष्य पशु पक्षी आदि सबका रस उग्र सौर ताप से सूख जाता है सब का रसभाग उग्र तारा पी जाती है रस प्राणियों का श्री भाग है यह प्रधान रूप से शिर कपाल में रहता है श्री (रस) भाग के रहने के कारण मस्तक सिर कहलाता है।

नीलग्रीवों विलोहितः उग्रसूर्य नीलग्रीवा है

प्रति सौररश्मि में भीषणकाल में जहरीला वायु भरा रहता है इसी स्वरूप बतलाने के लिए "नीलविशाल पिङ्गल जटाजूट नागैर्युता" यह कहा गया है।

तन्त्रशास्त्र काली को ही"आद्याशक्ति महामाया" के नाम से कीर्तन करते है काली ही विश्व की प्रसूति तथा जीव जगत की भुक्ति मुक्ति प्रदायिनी है।

काली संहार की मूर्ति है इसी कारण इसके साथ सर्वोच्छेदनकारी काल का सम्बन्ध है। काली की करालमूर्ति तथा काल की रूद्र मूर्ति दोनों ही महाप्रलय की सूचक है।

विश्व ब्रह्माण्ड काल के कवल में निपतित है जो काल के उपर प्रतिष्ठित है जो नित्य सिद्धा महाशक्ति है वही काली है (कालो हि जगदाधारः) उसका भी आश्रय काली है (काल का भी)

(आधारभूता जगतस्त्वमेकता)

काली अनन्त शक्ति का आश्रय है। अग्नि के जिस प्रकार विस्फुलिंङ चारो ओर छूट पड़ते है सूर्य से जिस प्रकार रश्मि जाल विर्कीण होता है उसी प्रकार महाशक्ति काली से अनन्त शक्ति कण उद्भूत होते है।

सारे व्यापार काल विशेष में ही अनुष्ठित होते है कालशक्ति का आलम्बन करके ही महाशक्ति का अव्याहत कला समूह जन्मादि छः विकारावस्था को प्राप्त हो काल कला समूह जन्मादि छः विकारावस्था को प्राप्त हो काल के विशाल उदर में सभी वस्तुओं का परिपाक होता हैं।

कालोऽस्मि लोकक्षय कृत्प्रवृद्धः

काली की मूर्ति में जो संहार की कराल विभीषिका वर्तमान है उसे तो सभी स्वीकार करेगें। श्मशान शव शिवा जलती हुई चिता नरमुण्ड रूधिर आदि सारे भयप्रद पदार्थ कालिका के ध्यान में देखे जाते हैं यह है प्रलय की भैरवी मूर्ति ध्वसं का भीषण चित्र देवी की मूर्ति प्रलय मेघमाला के समान कालीन भयङ्कर है कृष्णवर्णा (महामेघप्रभा घोर) उसका विश्वग्रास के लिए उद्यत वदनमण्डल अत्यन्त भयङ्कर है उसके मुक्त केशपास लोलरसना तथा विकट रव सभी आतङ्ककारी है नृमुण्ड गलि त रूधिर धारा से उसका सर्वाङ्ग परिप्लुत (शवकर निर्मित मेखला द्वारा उसका कटिबद्ध आबद्ध है।

एक तो रमणी मूर्ति उसपर फिर दिगम्बरी ऐसी मूर्ति को देखकर किसी के चित्त में भय न होगा। जिसके चरण के नीचे सर्वान्तकारी महाकाल है उसके हाँथ में खडग् नृमुण्ड है उसका निवासयोग्य स्थान श्मशान के शिवा दूसरा कौन हो सकता है इसका नाम (श्मशानलय वासिनी)

महाकाल शवरूप धारण करके महाशक्ति के चरण तल में निपतित रहता है।

शवरूपमहादेवहृदयो परिसंस्थिता

शिव शव का आकार क्यों लेकर जगदम्बा के चरण में पड़े है इसका गूढ़ रहस्य है साधक भक्त कहता है

निपतित पति शव रूपे पाय। निगमे इहार निगूढ़ ना पाय।

इसकी व्याख्या करते हुए सांख्योक्त प्रकृति पुरुष आश्रय ग्रहण करना होगा शिव निष्क्रिय पुरुष है काली है नित क्रियाशीला है त्रिगुणात्मिका प्रकृति की प्रवृत्ति का अन्त नही है।

शाश्वती विश्वयोनिः

भगवती अपने ही भाव में विभोर होकर क्रीड़ाशक्त बालक की भाँति अनन्त जगत की सृष्टि कर उसका विनाश करती है आनन्दमयी की क्रिया वा लीला का विराम नहीं है

पुरुषरूप सदाशिव चरण के नीचे आकर देवी की इस अपूर्व सृष्टि संहार की लीला देखकर विमुग्ध हो रहे है।

'यस्य भासा सर्वमिदं विभाति'

उसका रूप प्रलयकालीन महामेघ के समान मसीवर्ण क्यों है। जहाँ सब वर्ण अस्तमित हो जाते है वही काला हे सब रूपों का अवसान होने के कारण वह कृष्ण वर्णा है जहाँ रूप अरूप में हो जाते है वही काल है रूप और वर्णहीन आकाश हमें काला ही दिखता है।

सृष्टि के पूर्व अखिल चराचर विश्व अनन्त अन्धकार से आच्छन्न था–

तम आसीत्तमसा गूढहमग्रे।
यह अन्धकार Eternal Darkness ही काली का यथार्थ रूप है।
जब आसीदिदं तमोभूतम्प्रज्ञातमलक्षणम इदानीं कृष्णतां गतः
कालिका पुराण तदधीन स्तु शंङ्कर :

इस काले के भीतर ही विश्व का समस्त सौन्दर्य निरखा है जो काले के उपासक है उन्हे दूसरा कोई रूप अच्छा ही नही लगता।

दिक् शक्ति से भी अतीत वस्तु है ध्यान में महाशक्ति को दिगम्बरी या दिंगशुका कहा गया है।

शक्त्या व्याप्तमिदं जगत'

चिन्मयी सर्वत्र विराजमाना है महाशक्ति सब प्रकार के आवरण से मुक्त है। अद्वयतत्व असीम तथा पूर्वापरादि दिग्विभाग से विवर्जित है।

हम कालिका के गले देश में नरमुण्डमाला बिलम्बित देखते है प्रमथनाथ जिसके पति है उसके गले में नरमुण्ड माला के स्थान में हीरे या मणिमुक्ता की माला क्यों शोभा पा सकती है श्मशानवासिनी का यही उपयुक्त अलंकार है।

संसार छिल ना यखन मुण्डमाला कोथाय पेलि ?

यह केवल पचास वर्ण ही नही मातृकावर्ण है इनमें मातृका शक्ति निहित है। यह क्षयरहित अक्षरत्त्व है।

आगमशास्त्र निष्णातबुद्धि 'पतञ्जलि' ने वर्णमाला में ब्रह्म ज्योति के ज्वलन्त रूप का प्रत्यक्ष किया है सर्वविद्याधिष्ठात्री महाशक्ति के गले में शक्त्यात्मक वर्णसमूह उज्जवल मुक्ताहार के समान सुशोभित हो रहे है।

इस भय में भी आनन्द की अभयवाणी क्या सुनाई पड़ती यहाँ भीति और प्रीति एक ही मूर्ति में प्रकाशमान है।

क्या मसीवर्ण मेघमाला के भीषण गर्जन विद्युतपुञ्ज की सचकित क्रीड़ा ग्रह नक्षत्र की कक्षच्युति तथा चतुर्दिक संहार के ताण्डव नृत्य की कल्पना कर सकते हो यदि कर सकते हो तो इनके अन्दर चिदानन्मयी मूर्ति को देखकर धन्य हो सकोगे। संहार की विभीषिका से आनन्द की अभिव्यक्ति बड़ी ही मनोरम होती है एक रूप से एक साथ प्रीति और भीति उत्पन्न होती है कालीमूर्ति के सिवा संसार में और कही भी भय और आनन्द का अपूर्व समावेश देखा नही जाता सर्वसंहारिणी किस प्रकार आनन्दमयी है यह निश्चय ही चिन्तन का विषय है काली में विनाश कारूण्य एकत्र मिल हुआ है

द्रारिद्रय दुःख भयहारिणी का त्वदन्या
सर्वोपकराण सदार्द्रचित्ता
मल्लानामशनिर्नृणां नरवरः स्त्रीणां स्मरो मूर्तिमान गोपानां ।
स्वजनोंऽसतां क्षितिभुजां शास्ता स्वपित्रोंः शिशुः।।
मृत्युभोजपतोर्विराऽविदुषां तत्वं परं योगिनां वृष्णीनां
पर देवेतेति विदितो रङ्गं गतः साग्रजः।। श्री० मा० 10–43–17

साधना के लिए साध्य के साथ सम्बन्ध स्थापना की जरूरत होती है (आदौसम्बन्धस्थापनम्)

काली कराली च मनोजवा च
सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा

चित्तवृत्ति का लय वासना का क्षय हुए बिना दिक् कालातीत चिन्मय भूमि में गमन नही किया जा सकता इसे बतलाने के लिए मानो कालिका संहार की भैरवी मूर्ति धारण करती है। गाय के समस्त शरीर में दुग्ध के वर्तमान होते हुए भी एक मात्र स्तनद्वारा ही निकलता है उसी प्रकार पर देवता सर्वव्यापक होते हुए भी उसका विकास या स्फुरण प्रतिमा में ही होता है।

''गवां सर्वाङ्गजं क्षीरं स्त्रवेत स्तन मुखाद्य था। तथा सर्वत्रगो देवः प्रतिमादिषु राजते (कुलार्णतन्त्र)

शब्द ब्रहममयी चराचरमयी ज्योर्तिमयी वाङ्मयी नित्यानन्दमयी निरञ्जनमयी तत्त्वंमयी चिन्मयी तत्त्वातीतमयी परात्परमयी मायामयी श्रीमयी सर्वेश्वर्यमयी सदाशिवमयी मां पाहि मीनाम्बिके

त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी न हि तया बिना परमेश्वरस्य स्त्रष्टत्वं सिध्याति। शक्ति रहितस्य तस्य प्रवृत्यनुपपततेः।

उसके बिना परमेश्वर स्त्रष्टा नही हो सकते क्योंकि वे शक्ति के बिना क्रियाशील नही हो सकते।

एकस्यापि ब्रह्मणों विचित्रशक्तियोगात् क्षीरादिवद्विचित्र परिणाम उपपद्यते।

इस पराशक्ति के कारण ब्रह्म को शरीर अथवा इन्द्रियों को धारण करने की आवश्यकता नही होती उनके बिना वह सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ है।

जैसे एक ही स्त्रीलिङ्ग (भार्या) वाचक शब्द दारपुलिङ्ग कलत्र (नपुसकलिङ्ग) तथा गृहणी (स्त्रीलिङ्ग) प्रमृति तीनों लिङ्गों में व्यहृत होता है इसी प्रकार विश्वजननी वाचक आत्मा शब्द पुल्लिङ्ग ब्रह्म शब्द नपुसंकलिङ्ग (शक्ति स्त्रीलिंङ्ग) है।

शक्ति ने विमर्श वा स्फूर्ति का रूप धारण किया और शिव ने प्रकाश रूप से उसमें प्रवेश किया परिणाम बिन्दु का आविर्भाव हुआ इस रीति से शक्ति ने शिव में प्रवेश किया जिससे वह बिन्दु समुन्नत हुआ इस संयोग से स्त्री तत्व नाद की उत्पत्ति हुई।

ये दोनों नाद बिन्दु दूध और पानी की तरह ऐसे मिले कि एकरूप हो गए संयुक्त बिन्दु (अर्द्धनारीश्वर) नाम से प्रसिद्ध हुए यह तत्व पुरूषत्व एवं स्त्रीत्व उभय के बीच आत्यन्तिक आसक्ति को प्रकट करता है इसी अभिप्राय को काम कहते है।

पुनः बिन्दु जो है उनमें से एक श्वेत है एक रक्त वर्ण जो पुंसत्त्व स्त्रीत्व का बोध है।

पुनः बिन्दु (काम) श्वेत तथा रक्त न्दिु (कला) मिलकर काम कला।

संस्कृत वर्णमाला का प्रथम अक्षर अ शिव का प्रतीक है एवं अन्तिम अक्षर ह शक्ति का प्रतीक है इसी ह को अर्धकला अथवा अर्धभाग कहते है।

इसी से यह स्त्रीतत्व गर्भाश्य है यह अ तथा ह का मिलन कामकला त्रिपुर सुन्दरी का स्वतः विकास है त्रिपुर सुन्दरी का स्वतः विकास है

त्रिपुर सुन्दरी **अहम्** से ओतप्रोत है यही कारण है कि सम्पूर्ण सृष्टि व्यक्तित्व अहत्व से परिपूर्ण है।

सिद्धान्त में सुप्तशेषनाग सदृश विद्युत वर्ण अधोमुख कुण्डलिनी शक्ति को उठाकर पञ्चचक्र कमलमार्ग से चित्रिणी नाड़ी द्वारा सहस्त्रदल कमल में परम शिव के साथ संयोग कराने पर जो शक्ति और शिव में सामरस्य होता है उसी को मैथुन कहते है।

अस्य वामस्य सूक्तं तु जपेच्चान्यत्र वा जले
ब्रह्महत्यादिकं दग्ध्वा विष्णुलोकं स गच्छति
वामो मार्गः परम गहनो योगिनीमप्यगम्य
लोलुपो नरकं व्रजेत
परस्त्रीषु नपुंसकः।

असंख्य ब्रहमाण्ड और उसके कोटि–कोटि जीव और वस्तु उसी महाशक्ति के विकास है।

महाशक्ति कोटि कोटि ब्रह्माण्डो की जननी है समस्त जीव और प्राणी उसके रूप आकार है।

इन्द्रियों के पशु स्वभाव की बलि त्याग है बलि में पशु का मस्तक शरीर से पृथक कर देवता के चरणों में अर्पित किया जाता है जो इस भाव का द्योतक मन बुद्धि अहंकार रूप मस्तक शरीर रूप इन्द्रियों आसक्ति सम्बन्ध से ज्ञान रूप खड्गद्वारा पृथक कर परा शक्ति महाविद्या के हस्त मे अर्पण करना चाहिए। ''माया परिग्रहवशाद् बोधो मलिनः पुमान पशुर्भवति इन्द्रियाणि पशून हत्वा''–इन्द्रियरूप पशु का वध करे

ताप तडित, चुम्बक मध्याकर्षण आलोक और रासायनिक भेदों से छ प्रकार की है। अंग्रेज भी गतिशील (Enegy of Motion) कियमाण शक्ति (Kinetic Energy) मध्याकर्षण Enegy of-Gravitiation तापशक्ति Heat Power स्थिति स्थापाकय (Enegy of Flasticity) और तड़ित शक्ति (Electrical Energy) छः प्रकार की मानी जाती है।

अणिमादि अष्टसिद्धि के रूप में से या इन्द्राणी वैष्णवी ब्रह्माणी कौमारी नारसिंही वाराही माहेश्वरी भैरवी रूप से आठ प्रकार की है गौर्यादि मातृका रूप से सोलह प्रकार की है पीठ रूप सें इक्यावन प्रकार की है। नटी और कापाल की रूप से योगिनी से चौंसठ प्रकार कीर्ति कान्त्यादि वैष्णवी और गुणोदरी आदि रौद्री रूप से सौ प्रकार की।

तडित प्रभाव से इन दिनों सब परिचित है बिजलीघर की एक धारा से हजारों प्रकार के उद्योग धन्धें सुख साधन सहारक शक्तियाँ प्रकट करती है।

कौलिनी कुल योगिनी
सव्यापसव्यमार्गस्था
सगम्य संगम्य रस प्रसूते

जब वह शरीर में स्थित मूलाधार चक्र की अधिष्ठात्री देवी बनती है तब वह डाकिनी का रूप धारण करती है स्वाधिष्ठान चक में वह राकिनी बन जाती है। मणिपुर में वह **लाकिनी**, अनाहत में काकिनी विशुद्ध चक्र में **शाकिनी** बन जाती है।

साधना का क्रम तब तक चलना चाहिए जब तक साधन सिद्ध न हो जाय। साधना शब्दसाधु (षिध + णिच) धातु से बना है अर्थ इसका अभ्यास, या प्रयत्न करना

ॐ क्रीं कालिकायै नमः

क्रीं माता काली की बीजाक्षर है यदि चित्त एकाग्र करके पवित्रता के साथ इसका पाँच लाख जप किया जाय तो काली के दर्शन अवश्य होते है।

ब्राह्मण ज्ञानी होने से पूज्य है इससे अधिक प्रश्न करना ठीक नही (अयं ज्ञानी वर्तते पूज्यो नातिशय प्रश्नार्होऽयम)

तं विलोक्य महेशनि सृष्ट्युत्पादन कारणात्।
आदिनाथं मानसिकं स्वभर्त्तारं प्रकल्पयेत्।।

हे 'महेशनि' ! यह अपना रूप देखकर उस शक्ति ने अपने पति आदिनाथ को जगत की सृष्टि के लिए अपने मन से उत्पन्न किया।

श्री वेदव्यास जीने वेदान्त सूत्रों में मृदब्रवीत, **आपोऽब्रुवन**, (१) इत्यादि वेदवाक्यों की उत्पत्ति के लिए 'अभिमानिव्यपदे शस्तुविशेषानुगतिभ्याम इस सूत्र के अनुसार जड़ पदार्थों में तद्भिमानी देवता का ही ग्रहण करने को कहा गया है।

कालो हि बलवत्तर

इस वाक्य से भी काली की बलवत्ता का उत्कर्ष सिद्ध होता है साक्षाद् बल स्वरूप कहने का तात्पर्य बलवत्ता के कहने का उत्कर्ष का कथन है।

'अस्य शक्ति' ऐसा प्रयोग पुरुषस्य चैतन्यम् राहो शिरः इत्यादि के समान औपचारिक है पुरुष चैतन्य राहु और उसके शिर में भेद नही रहने पर जैसे भेद रूप में उसका प्रयोग होता है उसी प्रकार ब्रह्म शक्ति में कोई भेद न रहने पर भी अस्य शक्ति : ऐसा प्रयोग होता है

अखण्ड स्वाभिवकी शक्ति का विचार उत्तर मीमांसा मे है परिछिन्न आधार में परिछिन्नवत प्रकाशमान को ही शक्ति कहा है।

ये अग्नि की सप्त जिहवाएं है इनमें काली प्रथमा है प्रथमा योज्ञयानाम् अर्थात सर्वव्यापिनी आद्याकाली ही अग्निरूप आश्रय से परिछिन्ना आग्नेय शक्ति है उसका प्रथम विकास रूप होने के कारण प्रथम जिह्वा नाम की काली है।

अवयवी में अवययो का जो परस्पर भेद होता है। वह स्वगत भेद है।

आदौ सम्बन्ध स्थापनम् माँ के साथ पहले सम्बन्ध पक्का कर लेना चाहिए माँ को अपने प्राण प्राण श्वास श्वास में अणु परमाणु मिला देना चाहिए।

दिव घातु से देवी शब्द बनता है दिव् धातु प्रकाश अर्थ का वाचक है प्रकाशस्वरूपा होने के कारण अनादि अज्ञान से आवृत्त आत्मतत्व को प्रकाशित करने वाले है इसलिए ब्रह्मविद्या को देवी कहा जाता है।

"या देवी सर्वभूतेषु विद्यारूपेण संस्थिता"
निर्धनोऽपि सदा तुष्टाऽप्यसहायो महाबलः।
नित्यतृप्तोऽप्यमुञ्जानः सर्वत्र समदर्शनः।।

निर्धन होने पर भी सदा सन्तुष्ट रहता है असहाय होने पर भी महाबलिष्ठ होता है उपवासी होने पर भी नित्य तृप्त रहता है इसलिए वह जीवन मुक्त कहलाता है।

न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ति अत्रैव संविलीयन्ते ब्रहमेव सन् ब्रह्माप्योति।

चिद्ग्निकुण्डसम्भूता देवकार्य समुद्यता

महाशक्ति देवताओं की उद्देश्यसिद्धि के लिए अर्थात् भण्डासुर महिषासुर असुरों के संहार के लिए ज्ञानरूप महावहिन से प्रगट होती है। यह शरीर बद्ध आत्मा परमात्मा के साथ अपनी एकता को भूल जाता है प्रत्युत यह अंनात्म के साथ अपनी एकता का अनुभव करने लगता है परिणाम स्वरूप अज्ञान अनित्यता दुख आदि से क्षुब्ध और पीड़िता होता है महिषासुर मनुष्य का पाशविक ज्ञान का अपर ज्ञान है।

"सहस्त्राराम्बुजारूढ़ा सुधासारभिवर्षिणी"
'आरोपयन्ति रामेऽस्मिन्नर्विकारेऽखिलात्मनि

लोग अपर निर्विकार अखिलात्मा श्रीराम पर सारा कर्तृत्व आरोपित करते है श्रीराम द्वैत तो है ही नही पर एकत्व भी नही कहा जा सकता।

रामवल्लभां सीतामहं नतः
सदसद् विवेक बुद्धिः पण्डा सा संजाता यस्य स पण्डितः

ये अधिष्ठात्री देवियां कामाकर्षिणी, बुद्धयाकर्षिणी अहङ्कारकर्षिणी, शब्दाकार्षिणी,स्पर्शाकर्षिणी,' रूपाकर्षिणी, रसाकर्षिणी, गन्धाकर्षिणा चिन्ताकर्षिणी धैर्याकर्षिणी स्मृत्याकर्षिणी, नामाकर्षिणी बीजाकर्षिणी, आत्माकर्षिणी, अमृताकर्षिणी शरीराकर्षिणी हैं।

विष्णु ही जगत की संधारण शक्ति है

त्रिवलीवलयोपेतां नाभिनालमृणालिनीम्–तीन रेखा इडा, पिङ्गला और सुषुम्ना ये तीन नाड़िया वलय शब्द का अर्थ है वेष्टन।

रत्नदीप में मानो महाद्वीप है उनमें एक प्रफुल्ल वा प्रस्फुटित कमल है ऐसी भावना करनी चाहिए यहाँ प्रफुल्ल वा प्रस्फुटित कमल है ऐसी भावना करनी चाहिए यहाँ प्रफुल्ल कमल के द्वारा सहस्त्रार पद्म विवक्षित है

विशुद्धा त्वं काचित्परमसुख चैतन्य कलिका
शिवः शक्तिः शक्ति शिवः इति न निर्णेतुमुचिता

समस्त त्रैलोक्यप्रसरणलसद्भूरिविभवे
रूप्यते निरूप्यते ज्ञायते निर्दिश्यते अनने इति रूपम

अगम्यधाम धम स्थे इत्यादि

महायोगीशहृत्पुरे–माँ उनके हृदय में निवास करती है जो महायोगिजन में श्रेष्ठ है उनके हृदय में माँ का वासस्थान है।

लोहार के घर पर तुम एक दृढ़ लोह पुञ्जात्मक निश्चल पदार्थ देखते हो उसकी सहायता से दूसरे लोहे के टुकडे चोट खा खा कर नाना प्रकार के आकार धारण करते है । परन्तु वह अयोधन पदार्थ सदा एक रूप रहता है।

गोमयाद वृश्चिको जायते, अचेतन गोबर से चेतन बिच्छू उत्पन्न होते है ।

भावेन चुम्बिता कान्ता भावेन दुहितानननम्।
भावेन लमते सर्व भावेन देवदर्शनम्।

भावेन परमं ज्ञानं तस्माद् भावालम्बनम्।।
चित्सत्तैव जगत्सत्ता जगत्सत्तैव चिद्वपुः यो० वा 3,14,75

सर्वशक्तिपरं ब्रह्म नित्यमापूर्णमव्ययम्।
न तदस्ति न तस्मिन्यद्विद्यते विततात्मनि ।।

ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिः कर्तताऽकतृताऽपि च ।
इत्यादिकानां शक्तीनामन्तो नास्ति शिवात्मनः ।।

चिच्छक्तिर्ब्रह्मणों राम शरीरेष्वभिदृश्यते।
स्पन्दशक्तिश्च वातेषु जडशक्तिस्त थोपले।।

द्रवशक्तिस्तथाम्भः सु तेजशक्ति थानले।
शून्यशक्तिस्तथा काशे भावशक्तिर्भवस्थितौ।।

ब्रह्मणः सर्वशक्तर्हि दृश्यते दशदिग्गता।
नाशशक्तिर्विनाशेषु शोकशक्तिश्च शोकिषु।।

आनन्दशक्तिर्मुदिते वीर्यशक्तिस्थता भटे।।
सर्गेषु सर्गशक्तिश्च कल्पान्ते सर्वशक्तिता।।

नित्य सर्वथापूर्ण अव्यय परम ब्रह्म सर्वशक्तिमय है ऐसा कोई पदार्थ नही है जो विस्तृत स्वरूप में न हो ज्ञान शक्ति क्रियाशक्ति कर्तृत्व अकर्तृत्व आदि शक्तियों का उस शिवात्मा में कोई अन्त नहीं है चेतन शरीरों में उस ब्रह्म की चितशक्ति वायु में स्पन्द शक्ति पत्थर में जड़ शक्ति जल में द्रव्य शक्ति अग्नि में तेज शक्ति आकाश में शून्य शक्ति जगत की स्थिति में भाव शक्ति दश दिशाओं में सर्व साधारण शक्ति नाशों में नाश शक्ति शोक करने वालों में शोक शक्ति प्रसन्न रहने वालों में आनन्द शक्ति योद्धाओं में वीरशक्ति सृष्टि में सर्जन शक्ति कल्प के अन्त में सब शक्तियाँ उसी में दिखाई देती है। सभी शक्तियों में स्पन्द शक्ति विशेष शक्ति है इसके द्वारा संसार की रचना होती है।

काली कमलिनी काली क्रिया ब्रह्माण्ड कालिका।
धत्ते स्वावयवीभूतां दृश्यलक्ष्मीमिमां ह्यदि ।।

यही कल्पित अवयव वाली क्रिया देवी ग्राम नगर द्वीप मण्डल आदि स्पन्दनों की माला को रचती है अपने भीतर धारण करती है वह ब्रह्माण्ड रूप से स्पन्दित होने वाली काली क्रिया अपने भीतर इस प्रकार धारण करती है जैसे कि कमलिनी अपने भीतर पुष्पलक्ष्मी को।

अवतीति 'ओम' इस व्युत्पित्ति को सर्वरक्षक परमात्मा का नाम 'ओम' है।

तस्य वाचकः प्रणवः । तज्जपस्तदर्थमावनम्

जैसे कल्पना स्वयं ही कल्पित नगर है वैसे ही शक्ति स्वयं ही जगत है वह शक्ति शिव की इच्छा है वायु के स्पन्दन की नई शिव का स्पन्दन है स्पन्दन के भीतर भी केन्द्र में शन्तिं रहती है उसी प्रकार महाशक्तिरूप स्पन्दन के भीतर भी केन्द्र में शान्त इच्छा वाला शिव वर्तमान है।

जैसे पवन व उसका स्पन्दन उसकी उष्णता एक ही वस्तु है वैसे ही चि–मात्र शिव उसकी स्पन्द शक्ति एकात्मा है क्रिया देवी चितशक्ति के भीतर उसका एक रूप रहने वाला प्रतिस्थान शिव कहलाता है। **मिर्च बिना तिक्तता के नही रह सकती शिव भी बिना शक्ति के नही रह सकता।**

भ्रमणशालिनी, स्पन्दात्मिका परमेश्वर की चिच्छक्ति प्रकृति इच्छापूर्वक तब तक संसार में भ्रमण करती है।

गायन्तं त्रायते इति गायत्री'
गयः प्राण इति प्रोक्तस्य

गीयते तत्वमनया–ऐसा भी गायत्री पद का विग्रह है

भूरिति सन्मात्रमुच्यते। भुव इति सर्व भावयति प्रकाश यतीति व्युत्पत्या चिद्रूपमुच्यते। सुव्रियते इति व्युत्पत्तय स्वरिति सुष्ठु सर्वेर्व्रियमाण सुखस्वरूप मुच्यते । **(इतिशाङ्करभाष्य)**

महः सर्वातिशय महत्तर का नाम है जनः सर्व के कारण का नाम है तपः सर्वतेजोरूप परतेज का नाम है।

ऊँ तसदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ब्राह्मणास्तेन वेदश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा सवितुरिति सृष्टि स्थितिलयलक्षणकस्य सर्वप्रपञ्चस्य समस्तद्वैत विभ्रमस्याधिष्ठानं लक्ष्यत् इति शाङ्करभाष्यम्

सवितुः सर्वान्तर्यामितया प्रेरकस्य जगत्स्त्रष्टुः
परमेश्वरस्येति सायणभाष्यम्

सवितुवरेण्यम् यहाँ पर षष्ठी विभक्ति का अर्थ राहोः शिरः की तरह अभेद है।

अविद्यातत्कार्ययोर्भर्जनाद्भर्ग :

धीमहि–पद से आत्मत्येवोपासीत–श्रुत्यर्थ के अनुष्ठान सूचक है

सवितु–यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते'जन्माद्यस्य

धीमहि– हम ध्यान करते हैं। धीमहि ध्यायेन

तत् (तनु विस्तारे) बहुस्याम प्रजायेय (सवितुः) षुञ प्राणिगर्भपिमोचने, परमेश्वर की इच्छा करने के पश्चात जगत को पैदा करता है।

"वरेण्यम (वृञ वरणे) प्रार्थनीय

भर्गो देवस्य–अज्ञान का भर्जन होता है इसके बाद धीमहि जीवन्मुक्ति काल में अप्रयत्न साध्य ध्यानादि होते है तत्पचात् धियः–आत्मतत्व विषयक चरम साक्षात्कार रूप बुद्धि होती है इसके बाद अभेद भाव से परमेश्वर प्राप्ति रूप मोक्ष होता है।

यो नः प्रचोदयात्–जो हमारा सबका अर्न्तयामी प्रेरक यो नः (यू मिश्रणे) अर्थात परमाणु द्वय का मिश्रण

जब भगवती भगवान से पृथक रूप धारण करती है तब वह असीता (अ.तेता) काली रूप धारण करती है माँ जब पिता के पास रहती है तब माया होती है (जिसे उत्तमा अविद्या कहते है नही तो वह अविद्या (अधमा अविद्या) रूप में अवस्थान रहती है। सीता ने ही काली रूप धारण करके सहस्त्र स्कन्ध रावण का वध किया था।

माँ ही सोम शक्ति विश्व जगत का अन्न स्वरूप है सोम अन्न है सूर्य अन्नाद औषध भी सोम शक्ति से उत्पन्न रोग माँ ही रात्रि है दिन में सौर शक्ति द्वारा नाना प्रकार के कर्म करके लोग श्रान्त हो जाते है आराम के लिए इनके चरणों में शरण प्राप्त करने की प्रार्थना करते हैं जिस तरफ देखोगे उन्ही का रूप देखोगे उन्ही का रूप देखोगे प्राण रूप से देखोगे सीता का ही रूप देखोगे।

सा देवी (त्रिविधा भवति शक्त्यात्मना, इच्छा शक्तिः क्रिया शक्तिः साक्षात्छक्तिरिति–सीतोपनिषद्

देशकाल समयाद्यवच्छिन्न सार्वभौममहाव्रत–ऐसा विशेष व्यक्ति सर्वत्र हर दशा में हर अवस्था में हर समय हर व्यक्ति के साथ पूर्ण अहिंसा का पालन करेगा।

इस जगत में पञ्चीकृत महाभूत काम कर रहे हैं उनके एक एक अणु में कम्पन है उस कम्पन से यह जगत शब्दायमान हो रहा है जहाँ कम्पन है वहाँ शब्द है सूक्ष्मभूत अपञ्चीकृत है उनके परमाणुओं में भी कम्पन है उस कम्पन से सूक्ष्म शब्द राशि उत्पन्न होती जैसा कि कबीर ने कहा है

तत्व झंकार ब्रहमंडमाही–उसी शब्द राशि का नाम अनाहद नाद है

"जोग जगा अनहद धुनि सुनिके" (कबीर)
माँ ! माँ ! माँ !।।

सृष्टि और प्रलय जीवन और मृत्यु के सूत्र के अपने हाँथो में लेकर जब तुम एक बार अट्टहास करती हो उसमें कोटि कोटि ब्रह्माण्ड बनते और बिगड़ते है। माँ सृष्टि तुम्हारा लास्य प्रलय तुम्हारा ताण्डव है तुम कराल काल हो महामृत्यु हो सृष्टि के पूर्व केवल तुम्ही थी प्रलय के अनन्तर तुम्ही रह जाती हो।

रक्तबीजों से जब संसार का पुण्य त्राहि–त्राहि करने लगता है जब धर्म को कही शरण नही मिलती तब देवि तुम खप्पर और करवाल लेकर अवतार लेती हो ओ माँ! तुम्हारा वह रूप कितना भीषण कितना रौद्र है। माँ तुम्हारा यह विकट रण ताण्डव! चण्डिके! दुर्गे माँ कालिके यह रूप देखकर हृदय थर–थर काँप रहा है यह भीषण रौद्र रूप घने घने काले केश खुले हुए है काला डरावना भैरव वेष मस्तक पर के नेत्र से क्रोधग्नि धधक रही है लाल आँखो से चिन्गारियाँ बरस रही है।

उसमें परख दाहक ज्वाला धाय धाय कर रही है कराल किरणें फूटी निकलती है। गले की मुण्डमाल ! उफ! इतना भैरव, इतना प्रकुप्त! माँ तुम्हारा चन्द्रहार नरमुण्ड माला क्यों यह दुहरी तिहरी मुण्डमाला तुम्हारी लाल लाल छाती तक लटक रही है उससे खून टप टप कर रहा है दाहिने हाथ मे करवाल बाए हाथ में खप्पर । करवाल भी खून से लतपथ है जब तुम अट्टहास करके शत्रु पर झपटती हो उसे समय माँ खप्पर के रक्त में एक आन्दोलन उठ खड़ा हो जाता है तुम्हारे तलवार की प्यास कभी न बुझेगी यह खप्पर कभी न भर पायेगा। तुम्हारे मुक्त कुन्तल फहरा रहे हैं।

असुरों के रक्त पीने के अभ्यस्त जीभ! अनादि काल से तुम असुरों के महानाश में संलग्न हो नही तुम्हारा खप्पर भरा नही तुम्हारे करवाल की प्यास बुझी नही

हे असुरसंहारिण कालिके। पियो पियो रक्तबीजों का लहू माँ चामुण्डे। पियो पिंयो

दोनो नेत्रो में रक्त आभा होती है तीसरे से प्रलयाग्नि के क्रोध स्फीत स्फुलिंङ्ग बरसने लगते है।

जब अट्टहास करके नाचती हो तुम्हारे पाँव के पाजेब घुघुँरू झमाझम बोल उठते हे तुम उन्मत्त रण चण्डिके ! अपने अलसउन्मद ताण्डव में सुध बुध खोकर नाचने लगती हो। समस्त कोटि कोटि ब्रह्माण्ड ब्रह्मा विष्णु महेश शेष तुम्हारी नुपुर ध्वनि में अपनी अपनी ध्वनि मिलाकर नाचते हैं

''विद्यते देशकालानवछित्रत्वेन वर्त्तते या सा विद्या 'विद् सत्तायाम'' इस धातु से अथवा विद् ज्ञाने विद्यते ज्ञायते अथवा विद्लृ लाभे इस धातु से परमानन्द रूपत्वेन लभनीया, इस व्युत्पत्ति द्वारा सच्चिदानन्द का परामा शक्तिर्विद्या यह अर्थ विद्या से निकलता है।

साधारण जीवों के हित के लिए विद्या के गुणत्रयानु रूप रूपत्रय कहे गए है बृहज्जाबालोपनिषद में कहा गया

विद्याशक्तिः समस्तानां शक्तिारेत्यमिधीयते
गुणत्रयाश्रया विद्या सा विद्या च तदाश्रया

सप्तशती की शक्रादिस्तुति में यही भिन्न शब्दों में कही गई है।

हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणाऽपि दोषै
र्न ज्ञायेसे हरिहरादिभिरप्यपारा
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदेशभूत
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या
आचार्य शान्तनु द्वारा इसकी टीका।

हे देवि! त्वं त्रिगुणाऽपि—त्रयो गुणा यस्यां सा। सत्वं रजस्तम इति त्रयो गुणाः सत्वगुणा त्वं वैष्णवी शक्तिः सती जगन्ति रक्षसि । रजोगुणा त्वां ब्राह्मी शक्तिः जगन्ति सृजसि । तमोगुणा त्वं माहेश्वरी शक्तिः सत जगन्ति संहरसि। अतएव त्रिगुणा ऽप्यसि। हे देवि त्वमव्या कृताऽसि केनाऽपि न व्याकृता पदेन वाक्येन वा । यतो वाचो निर्वन्तन्ते अप्राप्य मनसा सहः इति श्रुते। त्वं च विद्या त्वेन परब्रह्म तत्वमेव यद्वा हे देवि त्वमव्या कृताऽसि न केनाऽपि प्रकाशिता ऽसि । पर प्रकाशित्वानम्युपगमात ब्रह्म तत्व मेव स्वयं प्रकाशमानमनतिशयानन्दचिद्रूपभसीव्यर्थः

इसका तात्पर्य यही है कि आद्या प्रकृति मूलभूत । शक्ति विद्या तीनों गुणों के अनुरूप वैष्णवी माहेश्वरी तथा ब्राह्मी शक्ति के रूपों को धारण करती है।

किन्तु तत्वतः वह परम ब्रह्म ही है अब हम इसी विधा के मोक्ष क्रम के अनुसार श्रुतिप्रतिपादित आगमानुमोदित रूपों का वर्णन करते है।

द्वैत संसार अद्वैत संसार प्रवृत्ति संसार निवृत्त संसार भेद संसार अभेद संसार इन नामों से किया जा सकता है। जडाजडात्मक संसार के मूल में चेतन और अचेतन दोनों की सत्ता अनिवार्य है अचेतन कारण को साख्यशास्त्र में प्रधान कहा गया है।

विचित्रविश्वो मनानुचवर्ण कियात दुन्मेष निमेष सम्भ्रमविमर्शशक्तिः। (मातृका चकविवेक टीका)

यह नित्यातीत आनन्द रूप नित्य प्रकाशमान परम शम्भु की सच्चिदानन्द विग्रहमयी तत्त्वातीत अनन्त शक्तिसंघाट्टात्मक परावाग्रूप महाशक्ति है जिसका तन्त्र शास्त्र में **त्रिपुर सुन्दरी** अनेक नामों से वर्णन है।

परा प्रकृति स्वातन्त्र्यमायाऽविधादिशब्दैरागमि कैर्व्यवहिनयमाणं जगद बीजभूतं विमर्शम्

यह सांख्य शास्त्र के प्रधान की तरह स्वतन्त्र नहीं है यह शाङ्कर वेदान्ती माया की तरह अध्यस्त अतएव मिथ्या भी नही किन्तु परब्रह्मस्थानीय परमशिव का स्वरूप भूत स्वभाव है कवलित अप्रधान हो जाना ही जड़ता है

विमर्श प्रकाशयोश्चैत्यन्यता च जड़ता तुल्या। उभयोरपि चैतन्य त्वं जडत्वश्च भर्वतीति चमत्कारः । अयं चमत्कारः। अयं चमत्कारोंऽन्यो न्य व्याप्ति निबन्धन। व्यापकमेव चैतन्य व्याप्यमेव जडमिति द्वयोरपि व्यापकत्वे व्यापत्वे च सति चिद चिद्भाव चमत्कारः।

इसी (आत्मगर्भित देहरूप) प्रमाता संसारी देहधारी जीव को तन्त्रशास्त्र में पशु की संज्ञा दी जाती है शुद्ध चेतन प्रकाशस्वरूप शिव का ही अमेद संसार में बिन्दु भी नाम हो जाता है।

(विसृज्यतेऽनेनेति विसर्गः)

यह विमर्शरूप महाशक्ति अपनी दो कलाओं या अंशों से भेद और अभेदरूप विपरीत संसारो का कारण होती है भेद संसार का कारण भूत अंश का नाम माया है। अभेद को दिखलाने वाले अंश का नाम विद्या है।

विमर्श का प्रकाश के साथ उपर्युक्त एकरसत्व अथवा ऐकात्म्य का एकमात्र कारण यही है प्रकाश और विमर्श का अभेद ही वास्तविक है भेद का भान दूर से देखी गई है मरू मरीचिका अथवा वेग से घुमाए गए अलात चक्र की भाँति चमत्कार मात्र है शब्द और अर्थ अभिधान अभिधेय प्रकाश और विमर्श ये सभी युग्मक वस्तुतः अभिन्न ही है प्रसिद्ध संसार में आकार विमर्श की बर्हिमुखी धारा में पड़कर क्रमशः स्थूलभाव को प्राप्त करते हुए अनके शाखाओं फैल जाने वाली पहाड़ से निकली हुईएक धारा की भाँति परिछिन्न और विविध नाम रूपों में विभक्त प्रतीत होने लगते है प्रकाश की अर्न्तमुख धारा के लौट पड़ने पर इन विविध क्रमशः सिमटने वालो शाङ्करवेदान्तिगण ब्रह्म और जगत में तादात्मय मानते है परन्तु आध्यासिक अनन्यत्वाधिकरण के शाङ्करभाष्य में अनन्यत्वरूप तादात्म्य की स्थापना की गई है इसमें भेद काल्पनिक है अभेद वास्तविक है। अभेद का पारिभाषिक अर्थ उपादानसत्तातिरिक्त सत्ता शून्यत्व किया गया है।

तादात्म्यञ्च तयोर्विरोधः

इदन्तोल्वणरूप से, अहन्तोल्वणरूप से

ये प्रकाश और विमर्श विम्ब को आच्छादित कर देती है अग्नि की चिनगारियों मूल अग्निपुंज्ज को ढक लेती है समुद्र की लहरें उसके स्थाई और अर्न्तवाही जल को छिपा लेती हैं उसी प्रकार विमर्श प्रकाश का स्वभाव होता है उसे अपने चमत्कारों से ढक लेता है सन्धया के गिरते हुए सूर्य की भाँति जो अपनी आवरणभूत किरणों को समेट कर बिम्ब रूप में दिखलाई देने लग जाता है।

विमर्श ही प्रकाश का स्वभाव होता हुआ भी उसे अपने चम्त्कारों से ढक लेता है। पुनः सन्ध्या के गिरते हुए सूर्य की भाँति जो कि अपनी किरणों को समेट कर विम्ब के रूप में दिखलाई देने लग जाता है प्रकाश रूप शिव अपने आवरणभूत विमर्श विलासों को स्वधर्म विमर्श को अर्न्तमुख तथा अर्न्तलीन करके अपने रूप से प्रकाशित हो जाता है विमर्श तथा चित प्रकाश का धर्म है। यह मानी हुई बात है कि किसी भी वस्तु की सत्ता उसके रूप का विमर्श प्रकाश के बिना असम्भव है।

प्रकाश भी यदि ऐसा है इस प्रकाश विमर्श द्वारा स्वरूप निर्दिष्ट न हो जड़ और असत्प्राय हो जाय विमर्श ही प्रकाश का स्वभावभूत है जिस स्वभाव के बिना प्रकाश में अर्थोपराग होने पर भी स्फटिकादि की तरह जड़ता ही बनी रह जायेगी। जब चैत्य (विमर्शकाय दहादि) से चित (प्रकाश) आदि आवृत्त हो जाता है पशुपद का प्रार्दुभाव होता है जिसका नाम जागरण या प्रसिद्ध भौतिक संसार है।

भेद संसार में प्रसरणोन्मुख और अभेद संसार में संकोचोन्मुख चमत्कारमात्र विमर्शवृत्तिरूप वैषम्य से असम्भिन्न होने के कारण और निष्पन्दता या समता रूप प्रकृतिक दशा से युक्त होने पर भी मूलावस्था कहा जा सकता है।

अस्फुट स्तिमित या अव्याक्रतदशा ही कारण दशा है यही इच्छारूप (ज्ञानक्रिया) का सामरस्य है। जिस प्रकार उमड़ती हुई लहरों के भीतर अस्थाई जल अवश्य रहता है हवा के झोकों से कम्पित अतएव घटती बढ़ती दीपशिखा के नीचे निरन्तर प्रकाशमान स्थिर दीपवर्तिका अवश्य रहती है उसी प्रकार वैषम्य के प्रवृत्त्युन्मुख या निवृत्त्युन्मुख चमत्कारों के गर्भ में स्थायी साम्य या आधारभूत सामरस्य अवश्य ही मानना पड़ेगा शाङ्कर वेदान्ती त्रान्त्रिक शैवागमानुयायी सभी स्थाई अधिष्ठान या आधार अवश्य मानते है।

यह साम्यरूप मूलशाखा है जिसके उपर चमत्कार या वैषम्य की पत्तियाँ चारो तरफ बढ़ती घटती हुई संसार कान्तार में दिखाई देती है।

शाङ्करवेदान्ती क्रमवादी हो या पारमार्थिक दशा में आजाद वादावलम्बी परन्तु उनके लिए सामरस्य के स्थान पर तूलाविद्या रूप से भिन्न भिन्न अवस्थाओं के भीतर भूल के कारण अज्ञान की सत्ता का मानना अनिवार्य हो जाता है।

इन्ही जागरगाणादि दशाओं के रङ्गमञ्च पर प्रवृत्युन्मुख और निवृत्त्युन्मुख दोनों संसारों का दृष्य पर्याय से दृष्टिगोचर होता है अन्तः करण वृत्तियों के साथ लीन हो जाना ही प्रलय या सुषुप्ति है। इसमें जागरण के सभी अन्तकरण वृत्त्युपजीवी व्यापारों का विराम या उपसंहार हो जाता है।

यही वैयक्तिक रूप से (प्रत्येक पिण्डाण्ड का भिन्न भिन्न रूप से) प्रलय भी कहा जाता है। इसी का समष्टि रूप (ब्रह्ममाण्ड रूप) प्रसिद्ध प्रलय भी है। जिसे ब्रह्माण्ड की सुषुप्ति भी कहते है इस ब्रह्माण सुषुप्ति अथवा प्रलय में दृष्य मान जगत अपने विलेय और स्थूल रूप माया के भीतर विलीन हो जाता है समस्त चेतनाचेतन स्थावर जगम रूप प्रपञ्च को अपने आश्रय परम प्रकाश शिव रूप के साथ एक रस अभिन्न रूप होकर विश्राम करती है "सैव माति, तरति काशयतीति व्युत्पत्त्या मातृके त्युच्यते।

मन ही विमर्श का प्रथम तथा प्रधान विलास है इसी से जगत के अन्य सभी पदार्थो का विलास प्रतिभाषित होता है क्योंकि विचारपूर्वक देखने पर मन के रहने या नही रहने पर समस्त संसार की सत्ता का अवभास या अनवभास अवलम्बित है।

ज्ञानसाधन रूप अजड़त्व की भूमिका का अवलम्बन करने पर विमर्श का नाम मन पड़ता है जड़त्व की भूमिका ग्रहण करने से विर्मश अहंकार कहा जाता है। (देहेऽहमिति योऽयं विमर्शः)

जागरण में मनादि का वाह्यरूप विखरता हुआ समस्त संसार के रूप में परिणत हो जाता है इस कारण प्रमाता प्रमाण प्रमेय ये सभी एक ही के परिणाम है कल्पित भेद से परिछिन्न प्रतिभाषित होते हुए संसार के कल्पक हो जाते है।

तस्याभिव्यक्तस्य चैतन्यस्यैकत्वेऽपि अभिव्यञ्जकान्तः करण भागभेदात त्रिधा व्यपदेशो भवति। कर्तृ भागावच्छिन्न बिदंशः प्रमाता, क्रियाभागावच्छिन्नश्चिदेशः प्रमितिरिति प्रमातृ प्रमाण प्रमितिनाम साङ्कर्यम्

ब्रहमाण्ड का अधिष्ठाता नही समझने से जीव भाव है उसी प्रकार ब्रह्माण्ड का भी वस्तुतः मनोबुद्धि रूप विमर्श से ही समुदाय होता है।

विमर्श अपने समस्त कार्यो को अर्थात प्रपञ्च मात्र को अपने में विलीन करके घनीभूत होकर प्रकाश से अभिन्न हो जाता है। एक ही चेतन भेदसंसार में आकर प्रवृत्ति परायण जीव हो जाता है (वेदितृस्वभाव) के दब जाने से वेद्यता का उत्कर्ष हो जाना ही स्त्यानीभवन है।

प्रकाशविमर्श पर्यायशिव और शक्ति के अभेद ही के कारण देवी का नाम ललितासहस्त्र नाम में शिवमूर्ति भी बतलाया गया है।

विमर्श नित्य अनपायी और स्वभावभूत है विमर्श परम प्रकाश की भित्ति पर अवलम्बित वाग्रूप महाशक्ति है।

विमर्श ही 'इदन्ता' या इदम्भाव की प्रधानता (उल्वणता) के साथ भासित होने पर जब यह घड़ा यह कपड़ा है इत्यादि भेदपूर्ण व्यवहार चारों तरफ दृष्टिगोचर होते है तब माया कहा जाता है ।

"विमर्श एव इदन्तौल्वण्येन भासमानों माया इत्युच्येत 'इदमंश' के समुच्छय से प्राणियों को संसार दशा में बद्ध करता है।

पुनः विमर्श ही 'अहन्ता' या अहभाव की प्रधानता (उल्वणता) के साथ विद्योतित होने पर विद्या कहा जाता है परता ही पूर्णता है अन्यनिरपेक्ष (अहं) रूप है अपरता ही अपूर्णता है अन्य सापेक्ष (इदं) है।

परत्वम्पूर्णत्वमनन्यापेक्षया अहमिति अपरत्वमपूर्णत्व मन्यापेक्षया 'इदम' इति।

प्रकाश का केवल अपने में ही विश्राम रहने पर जो अनन्योमुख विमर्श है वहीं 'अहं' रूप कहलाता है अनन्योमुख होकर संसार दशा में जो विल्सन है वह इदम रूप है।

त्रिपुरेश्वरी महाशक्ति के अङ्ग वर्णन चार भुजाएं मानी जाती है उनमें से जागरण आदि अवस्थारूप तीन हाथों से वे जीव को संसार बद्ध करती है तुर्य नामक चौथे हाँथ से मोक्ष प्रदान करती है।

इच्छाशक्तिमयं पाशमङ्कुशं ज्ञानरूपिणीम्।
कियाशक्तिमये वाणधनुषां दघदुज्जवलम् ।। **(षोडशिकार्णव)**

शक्ति विमर्श

(विशेषेण मृष्यते)

समस्त सिद्धियाँ शक्ति सापेक्ष है

वस्तुतः एक से वाह्य जगत इन्द्रियों का बर्हिविलास मात्र है चक्षु से ही रूप का विकास होता है चक्षु ही पुनः उस रूप का दर्शन होता है समष्टि चक्षु रूप का द्रष्टा है व्यष्टि चक्षु उसका भोक्ता है समष्टि भावापन्न पञ्चेन्द्रिय से भौतिक जगत का विकास होता है व्यष्टिगत पञ्चेन्द्रिय से भौतिक जगत का विकास होता है व्यष्टिगत पञ्चेन्द्रिय उस जगत का सम्भोग करती है।

चित्त क्षेत्र में ज्ञान का संचार हो तो इस अवस्था में विशुद्ध अन्तःकरण का आर्विभाव होता है

अर्न्तजगत या अतिवाहिक जगत के नाम से वर्णन करते है वह वस्तुतः विशुद्ध अन्तःकरण वाहय विकास मात्र है वाह्य इन्द्रियों की भाँति अन्तः करण भी निरुद्धवृत्तिक अवस्था को प्राप्त होने पर अन्तर्जगत का लोप हो जाता है।

महाशक्ति के उद्बोधन के बिना इस अद्वैत तत्त्व में स्थिति लाभ करना तो दूर रहा प्रवेशाधिकार पाने की सम्भावना नही है क्योंकि अनुदबद्ध शक्ति सत्ता की प्रकाशन नही होती और अप्रकाशमान सत्ता कभी चिद्भावापन्न नही हो सकती।

बिना काली पदद्वन्द्वं कः शाक्तः धरणी तले

यह अनन्त वैचित्रमय विश्व जिसे हम निरन्तर नाना प्रकार से अनुभव करते है वस्तुतः शक्ति के आत्म प्रकाश के अतिरिक्त और कुछ भी नही सुक्ष्म कारण जगत शक्ति के ही विभिन्न विकासमात्र है।

ये दोनो अंश अविनाभूत वर्तमान है प्रकाश के बिना जिस प्रकार विमर्श को त्याग कर प्रकाश की स्थिति भी सम्भव नही है यह शिवशक्ति स्वरुप प्रकाश और विमर्श का नित्य सम्बन्ध ही चैतन्य रुप ते महापुरुषो की अ नुभूति मे आता है

इस साम्यावस्था में महाशक्ति स्वरुपा अनादिशक्ति परम् शिव के साथ सामरस्य भावापन्न होकर अदृश्य रुप मे विराजमान रहती है।

परन्तु महाशक्ति सर्वातीत होने के कारण विश्वात्मक होते हुए भी वस्तुतः विश्वोत्तीर्ण है

जब वह शक्ति आत्म गर्भस्थ एवं अपने साथ एकीभूत विश्व को अर्थात प्रकाश को देखने के लिए उन्मुख होती है तब मात्रावछिन्न शक्ति शिव साम्यभावपन्न हो एक बिन्दु रुप में परिणत होते है जिससे पारमार्थिक चैतन्य प्रतिफलित होकर ज्योर्तिलिङ्ग रुप मे प्रकटित होता है यही विन्दु तांत्रिक परिभाषा में "कामरुपपीठ" नाम से प्रसिद्ध है।

इस पीठ में अभिव्यक्त चैतन्य स्वम्भूलिङ्ग नाम से परिचित है।

शान्ता शक्ति 'इच्छा' रुप मे परिणत होती है तथा शिवांश अम्बिका शक्ति भी वामा रुप मे अर्विभूत होती है।

अतीत और अनागत रुप खण्डकाल की सत्ता नही है दूर और निकट का व्यवधान भी नही है कार्य और कारण का कठोर नियम यहाँ अपरिज्ञात है।

इस भूमि से ही काल का प्रभाव प्रारम्भ होने के कारण यह सृष्टि क्रिया एक साथ होकर क्रमानुसार होती है। क्षय धर्मक जगत जगत का अनुभव करते है वह इस वैखरी शब्द की विभूति है।

पश्यन्ती मध्यमा वैखरी शब्द की जिन तीन आवस्थाओ के विषय में कहा गया है वही प्रणव के 'अकार' 'उकार' 'मकार' अथवा ऋक् यजु साम इस वेदत्रय रुप मे ज्ञानी की दृष्टि में प्रतिभात होती है।

त्रिलोक त्रिदेवता त्रिकाल प्रभृति अखण्ड परावाक तुरियावाक का ही त्रिविध परिणाम मात्र है

त्रिकोण की तीन रेखाए पश्यन्ती मध्यमा वैखरी रुप तीन प्रकार के शिवांश के अथवा इच्छा ज्ञान और क्रिया रुप तीन शक्त्यशं के प्रतिनिधि मात्र हैं त्रिकोण की मध्यविन्दु परावाक अथवा अम्बिका और शान्ता इन दो शिव शक्त्यंश का साम्यभावापन्न स्वरुप है यद्यपि बिन्दु मे शिवशक्ति दोनो का अंश है एवं त्रिकोण मे भी वही है यद्यपि विन्दु प्रधानता शिव रुप मे इसी प्रकार त्रिकोण में भी शक्ति वा योनि रुप मे परिणत हो जाता है इस बिन्दु समन्वित त्रिकोण मण्डल से समस्त वाह्रय जगत का अविर्भाव होता है आद्याशक्ति तत्त्वातीत होते हुए भी सर्वतत्त्व गयी और प्रपञ्चरुपा है वह प्रकाशत्मक शिव के स्वरुप ज्ञान उद्बोधक दर्पण स्वरूप है अहं ज्ञान ही शिव का स्वरूप ज्ञान है आद्याशक्ति का आश्रय लिए बिना इस आत्मज्ञान का प्रकाश नही हो सकता कहते है जिस प्रकर कोई व्यक्ति अपने सामने स्थित स्वच्छ दर्पण मे अपने प्रतिबिम्ब को देख कर उस प्रतिबिम्ब को अहंरुप मे पहचान लेता है उसी प्रकार परमेश्वर अपने अधीन स्वकीया शक्ति को देखकर अपने स्वरुप की उपलब्धि करते है। आत्मशक्ति का दर्शन एवं आत्म स्वरुप की उपलब्धि और आस्वादन एक ही वस्तु है

दर्पण प्रतिबिम्ब को ग्रहण नही कर सकता अथवा वस्तु को सानिध्य होने पर भी प्रकाश के अभाव से दर्पण में स्थित प्रतिबिम्ब जैसे प्रतिबिम्ब रूप से नही भासता उसी प्रकार पराशक्ति भी प्रकाशस्वरुप परम शिव के सान्निध्य के बिना अपने अन्तः स्थित विश्व प्रञ्पंच को प्रकटित करने मे समर्थ नही होती

" शिव शक्तिरिति ह्येकं तत्व माहुर्मनीषिणः"

संहार कार्य में शिव सृष्टि कार्य में शक्ति का प्राधान्य स्वीकार करना होगा। विश्व के केन्द्र स्थान में अवस्थित हो कर उसका नियमन करता है यही स्वातत्र्य उपर्युक्त रीति से क्रिया का आकार प्राप्त कर वैचित्र्य का आर्विभाव करता विश्वरुप धारण करता है शिव तटस्थ और उदासीन रहकर निरपेक्ष साक्षिरुप मे आत्मशक्ति की यह लीला देखा करते हैं यह नाना तत्वमय विश्व सृष्टि ही पराशक्ति का स्फुरण है

शक्ति की एक अव्यक्त वा प्रलीन अवस्था है जहाँ शक्ति शिव के साथ एकाकर होकर शिव रुप में विराजमान है। क्योकि इस आदिमभूमि में दृष्टि और सृष्टि समानार्थक है वह तत्त्वातीत प्रञ्पंचातीत तथा व्यवहार पथ के भी अतीत है वही शाक्तो की महाशक्ति है और शैवो के परम शिव है वाणी और मन के अगोचर होने के कारण इसे अनुत्तर कहा जाता है। प्रकाश हीन विमर्श असतकल्प है इस तत्त्वातीत और अनुत्तर अवस्था के लिए शास्त्र मे वाचक रुप में आदि वर्ण अ कार का प्रयोग होता है 'अ कार रूप प्रकाश के साथ 'ह' कार रुप विमर्श का अर्थात अग्नि के साथ सोम का साम्य भाव ही काम अथवा रति नाम से प्रसिद्ध है शिव ही अ और शक्ति ही 'ह' है बिन्दु रुप में यही अहं अथवा पूर्णहन्ता है साम्य भङ्ग होने पर बिन्दु प्रस्पन्दित हो कर शुक्ल और रक्त बिन्दु रुप मे अर्विभूत है। इसी का दूसरा नाम चित्कला है अग्नि के सम्पर्क से घी जिस प्रकार गलकर धारा रुप मे बहने लगता है उसी प्रकार प्रकाशात्मक शिव के सम्पर्क से विमर्श रुपा परा शक्तिद्रुत होती है उससे एक परमान्द मय अमृत की धारा का स्त्राव होता है। अर्थात पुष्टि लाभ करता है तब उससे तेजो मय बीज स्वरुप नाद निर्गत होता इस नाद मे समस्त तत्व सूक्ष्म रुप से निहित होते है नाद निर्गत हो कर त्रिकोणाकाररुप धारण करता है यही अहम् नामक बिन्दु नादात्मक प्रकाश विमर्श का शरीर है इससे प्रकाश शुक्ल बिन्दु है विर्मशरक्त बिन्दु है दोनो का परास्परिक अनुप्रवेशात्मक साम्य मिश्र बिन्दु है इसी साम्य का दूसरा नाम परमात्मा है इसके मध्य रवि बिन्दुदेवी के मुखरुप मे अग्नि व सोम बिन्दु स्तन द्वय रुप मे 'ह' कार की अर्धकला एवं हार्धकला योनि रुप मे कल्पित होती है यह हार्धकला अति रहस्यमय गुह्रय तत्व है शिव शक्ति के मिलने से उत्पन्न अमृत की धारा प्रवाहित होने उससे जिस लीला रुप तरङ्ग की उत्पत्ति होती है वही तान्त्रिक परिभाषा से हार्धकला के नाम से विख्यात है

शिव तत्व सदाशिव का नाम मात्र है

शिव भाव प्राप्त होने पर शव रुप मे परिणत हो शवासन परिग्रह न कर सकने पर अपने भीतर महाशक्ति का उन्मेष नही प्राप्त हो सकता

स्थूल जगत जिसे हम सर्वदा अनुभव करते है दीपकलिका के विकीर्ण प्रभामण्डल की भाँति एक बिन्दु का बाह्रय प्रसारण अथवा विकिरण मात्र है इन्द्रियो के प्रत्याहार से इस रश्मिमाला को उपसंहत कर सकने पर वाह्रय जगत स्वभावतः वाह्रय विन्दु में विलीन हो जाता है इसी प्रकार लिङ्गात्मक 'आम्यन्तरिक' जगत भी विक्षुब्ध अन्तः करण का वाह्रय विलास मात्र है अतएव स्थूल सूक्ष्म कारण ये तीनो

विन्दु ही त्रिकोण के तीन प्रान्तों के तीन बिन्दु है इन्हे अकार उकार मकार कहते है जब ये तीनो विन्दु रेख रुप भीतर की ओर प्रवाहित होकर एक महा विन्दु रुप मे पर्यावसन को प्राप्त होते है। इस विन्दु में अनादि काल से दिब्य मिथुन शिव शक्ति का अथवा परम पुरुष पराप्रकृति के श्रृगडरादि अनन्त भावो का विलास चलता रहता है राधाकृष्ण का युगल मिलन बुद्धि एवं प्रज्ञा पारमिता युगनद्धस्वरुप God of father यह त्रिकोण ही प्रणव का स्वरुप सार्ध त्रिवलया कार भुजङ्ग विग्रहा सुषुप्ता कुण्डलनी शक्ति भी इसी प्रकार नामान्तर है कुण्डलनी प्रबुद्ध भाव सम्यक रुप से सिद्ध होने पर शिव शक्ति का भेद विगलित हो जाता है विन्दु एवं त्रिकोण का भेद दूर होने के कारण विन्दु का विन्दुत्व तथा त्रिकोण का त्रिकोणत्व भी अवशिष्ट नही रहता वह सब तत्वों का मूल कारण होने पर भी किसी विशिष्ट तत्व के रुप मे अमिहित होने के योग्य नही रहता बिन्दु या कुण्डलनी विक्षुब्ध हो कर नाद का विकास करती है पूर्ण परमेश्वर की स्वातन्त्रय शक्ति से बिन्दु का विक्षोभ का कार्य समपन्न होता है इसी का दूसरा नाम गुरुकृपा या परमेश्वर का अनुग्रह है कुण्डलनी जब मूलाधार के नीचे उर्ध्वमुख सहस्त्रार अथवा अकूल कमल मे विराजमान रहती है तब वह अब्यक्त नाम से विश्रोतीर्ण अवस्था के अर्न्तगत रहती है परन्तु स्वातन्त्रय वश उसकी अभिब्यक्ति होने पर मूलाधार मे ही उसकी अनुभूति होती है निराधार निरालम्ब सत्ता यही से आघार भाव की सूचना होती है। उर्ध्वस्थ अधोमुख सहस्त्र दल कमल मे पुनः अकूल सागर में निग्मन हो जाता है अकूल से ही शक्ति का उद्बोधन और अकूल में ही उसका लय होता है मध्यस्थ व्यापार केवल पूर्ण चैतन्य सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए है जो अनन्त गर्म मे अचेतन भाव से अनादि काल से सुषुप्तावस्था में था वह पूर्णतया रुप मे प्रबुद्ध होकर चैतन्य उस अनन्त गर्म मे प्रविष्ट हो जाता है मूलाधार स्वाधिष्ठान मणिपुर अनाहत विशुद्ध लम्बिकाग्र और आज्ञा ये सब अज्ञान राज्य के अर्न्तगत है ज्ञान के संचार के साथ साथ आज्ञाचक्र का भेदन हो जाता है आज्ञाचक्र का भेदन करने से ज्ञान का उदय होता है आज्ञाचक्र के बाद ही बिन्दु स्थान है यही विन्दु योगियो का तृतीय नेत्र अथवा ज्ञानचक्षु कहलाता है। यद्यपि विन्दु भूमि मे साधक अहंभाव मे प्रतिष्ठित होकर आपेक्षिक दृष्टा बनकर निम्नवर्ती समास्त प्रञ्पंच को निरपेक्ष भाव से देखने मे समर्थ होता है जब तक बिन्दु पूर्णतः तिरोहित नही होता तब तक महाबिन्दु शिवाभाव की अभिव्यक्ति नही होती व्रिन्दु को चन्द्रविन्दु कहा जाता है इसलिए यह अवस्था अर्धचन्द्र नाम से वर्णित है

एक अवरोधमय घोर आवरण स्वरुप विलक्षण अवस्था का उदय होता है बड़े बड़े देवताओ के लिए भी इस स्तर का भेदन करके इसके उपर उठाना कठिन है परन्तु अनुग्रह शक्ति के विशिष्ट प्रभाव से भाग्यवान साधक इस चक्र का भेदन करके उपर उठने मे समर्थ होता है शास्त्र मे यह अवस्था रोधिनी नाम प्रसिद्ध है नाद चैतन्य का अभिब्यञ्जक है इस अवस्था के आगे त्रिकोणस्वरुपा व्यापिका है

सर्वकारण भूता समना शक्ति का अर्विभाव होता है यह शिवाधिष्ठित है समस्त ब्रह्ममाण्डो की भरण शीला है शिव ही परम कारण और पंञ्चकृत्य कारी यह चिदानन्द स्वरुपा शक्ति है आज्ञाचक्र पर्यन्त जहा तक अक्षमाला वर्णमाला का आवर्तन होता है वहा तक उच्चारण अथवा उर्ध्वचालन का काल मात्र से न्यून नही हो सकता विन्दु मे वह अर्ध्यमात्रा पर्यवसित होता है इस तरह क्षीण होते होते समना भूमि मे एक क्षण मे परिणत होता है इसके आगे मन के स्पन्दन शून्य हो जाने के कारण देश काल नही रह जाते कल्पना जाल के उपशान्त होने पर निर्विकल्प निवृत्ति भाव का उदय होता है

सांख्य भूमि से अग्रसर हाने पर वेदान्त की साधना होती है जो रिक्त दिशा है लैकिक दृष्टि से वही अमवस्या है महाशक्ति के प्रधान्य को अङ्गीकार कर अमवस्या की ओर जो स्फूर्ति होती है वही काली रुप मे जो पूर्णिमा की ओर जो स्फूर्ति होती है वही षोडशी त्रिपुर सुन्दरी के रुप मे श्री विद्या के रुप में साधक समाज में परिचित होती है उपासना के क्रम से सकल भाव की उपासना निकृष्ट है मिश्रभाव की उपासना मध्यम है निष्कल उपासना श्रेष्ठ है मूलाधार से आज्ञाचक्र पर्यन्त चक्रेश्वरी रुप मे शक्ति की आराधना ही निकृष्ट है मनुष्य जब तक द्वन्द्वमय भेद राज्य मे वर्तमान रहता है उसके लिए निम्न भूमि की उंपासना स्वाभाविक है कर्म ही इसका रुप है चतुरष्त्र से वैन्दवचक्र पर्यन्त अथवा मूलाधार से सहस्त्रदल कमल पर्यन्त सदल आवरण देवतादिसहित समग्र देवी चक्र की उपासना ही कर्मात्मा अपरा पूजा है स्वयं शङ्कर भी भगवती की अपरा पूजा किया करते है

आन्तर अद्वैत धाम में क्रमशः वाह्यय चक्रादि का लय हो जाता इसके बाद जब ज्ञान मे कर्म की परिसमाप्ति हो जाती तब अभेद या अद्वैत भूमि की स्फूर्ति होती है एक मात्र परम शिव की स्फूर्ति होती है एक मात्र शिव की स्फूर्ति या ब्रह्म ज्ञान ही परा पूजा का नामान्तर है।

अधोमुख श्वेत वर्ण सहस्त्रदल कमल वा अकूल कमल की अर्न्तकलिका में वागभव नामक एक प्रसिद्ध त्रिकोण है इस त्रिकोण से परादि क्रम चार प्रकार के वाक् तथा शब्द उत्पन्न हाने के कारण इसका नाम वाग्भव है इस त्रिकोण के मध्य मे विश्व गुरु परम शिव की पादुका है वह प्रकाश विमर्श इन दोनो सामरस्य का भेद से तीन प्रकार के है इस पादुका से निरन्तर परमामृत निकलता रहता है इस स्निग्ध अमृतमय चन्द्र रश्मि द्वारा समस्त विश्व का संञ्जीवन माधुर्य सम्पादन की तृप्ति होती है तत्वशुद्धि आनन्द संञ्चार के पश्चात हृदयाकाश मे जिस परम नाद का उदय होता है उसका चिन्तन करने पर आनन्दरुप की उपलब्धि होती है चित्त के वाह्यय प्रदेश से लौट कर अर्न्तमुख में एकाग्र होने पर इसका अनुभव होता है इससे अश्रु पुलक स्वेद कम्प प्रभृति सात्विक विकारो का उन्मेष होता है इन्द्रियो को तृप्त करने वाला शब्द स्पर्श प्रभृति के द्वारा आत्म देवता की पूजा होती है उसे स्वाभाविक पूजा सहज उपासना कहकर महायज्ञ रुप से शास्त्र मे उसकी उपासना की गई है विषयानुभवजन्य आनन्द महानन्द के साथ

मलने पर जिस परम नाद का उदय होता वही भगवती की परम उपासना प्रकृत तत्व है जिसने सत्य सत्य ही स्वदेह देवताओ का न्यास करना सीख लिया उनके सामर्थ्य की तुलना नही हो सकती मनुष्य यदि न्यास रहित साधारण मनुष्य को प्रणाम कर ले तो उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है।

प्रभा ज्ञान को विमर्श शब्द से अभिहित कया गया है प्रभा के दो अंश है अहमंश और इदमंश जिनमे पहले आत्मा का ग्राहक अंश है दूसरा ग्राह्वय। आत्मा ही माया रुप उपाधि द्रष्टारुप अपनी ही दृष्टि मे अपने ही दृष्टि मे अपने से भिन्न अनात्म अथवा दृष्टारुप मे भासता है मूल मे प्रमेय वस्तु प्रभाता और प्रमेय की भेद प्रतीति का कारण भूत माया रुप बन्धन शिथिल नही हो जाता प्रभा अथवा प्रतीति अहमंश वह है जिसमे आत्मा दूसरे की तरफ न देखता हुआ अपने ही प्रकाश मे स्थित रहता है।

"नन्योन्मुखों ऽहप्रत्यय" इसी प्रकार दुसरे की ओर देखने वाला इदं प्रत्यय कहलाता है।

यस्त्वन्ध्‌ मखः स इदमित प्रत्ययः

यह दूसरा ९ आत्मा ही है क्योकि वास्तव मे एक आत्मा ही के अतिरिक्त कोई दूसरी वस्तु है ही नही हरमीज (**Herm**‌) नामक पाश्चात विद्वान एक आभरण प्रसिद्ध है

As abov so below

अर्थात जो उपर है वही नीचे भी है विश्वासार तन्त्र मे लिखा है जो वहाँ जो वहाँ जो यहाँ नही वह कही नही

यदि हास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् कवचित

वाहर जो दिखता है इसलिए दिखता है कि भीतर भी वही है। अहम् और इदम् शिव और पराशक्ति अब्यक्त शक्ति का अखण्ड एकात्मक है अहम् प्रकाश अथवा ग्राहक रुप है दूसरा विमर्श अथवा ग्राह्रय रुप इस पराशक्ति मे संवेदन (Feeling) अपरोक्षता (Immediacy) रहती है यही आनन्द है जिसे स्वरुप विश्रान्ति कहा गया है शक्ति व शिव आश्लिष्ट एवं प्रणयवद्ध हो कर रहते है निरतिशय प्रेम का नाम आनन्द है

निरतिशय प्रेमास्पादत्वमानन्दत्वम्

वह आनन्द ऐसा विभोर था स्त्री और पुरुष परस्पर आश्लिष्ट होकर रहते है (यथा स्त्री स्त्रीपुमासौ संपरिष्वक्तौ) प्रेमी प्रेमास्पद प्रेम की त्रिपुटी एकता के आनन्द में लीन हो जाती है पूर्णावस्था आकृति शून्य होती है प्रपञ्चावस्था साकार होती है देशकाल से शून्य सर्वव्यापिनी होती है

विश्वातीत (Trancendental)

विश्वोत्पादक (Creadit)

विश्वात्मक (Immantnt)

निष्कल परम् शिव के सफल रुप को शिव कहते है जो उन्मनी शक्ति का अधिष्ठान है अपने सकल रुप क्रियाशील होकर शिव व्यक्त जगत के रुप मे अपना ही प्रमेय या ज्ञेय बन जाता है शक्तितत्व शिवतत्व का एक मात्र निषेधक रूप है। शिव तत्व को शून्यातिशून्य कहते है यह वह ज्ञान जिसमे आत्मा अपने से अन्य किसी ओर नही देखता परासंविद कत मे अहम इदम् एक रुप होकर विद्यमान थे वैष्णव विष्णु के नाम से बौद्ध अवलोकितेश्वर कहते है शाक्ततंन्त्रो मे चौरानवे कलाओ का उल्लेख मिलता है उन्नीस कलाए सदाशिव की छः ईश्वर की ग्यारह रूद्र की दश विष्णु की दस ब्रह्मा बारह सूर्य की उतना ही अग्नि की। शव की गर्दन पर उसका बाया पैर टागों पर दाहिना पैर सुस्थित है विपदविदारिणी कहा गया है उसका नाम खर्वा है एक पल में देखने मात्र से सबको नष्ट कर देती है इसका अत्यन्त विकराल रुप सिर पर जटाए है जिस पर काले भयानक सर्प ल[illegible] है। महाभारत के विराट एवं भीष्म पर्व मे जहाँ युधिष्ठिर एवं अर्जुन ने भगवती उपासना की है उसके लिए तरिणी नाम का प्रयोग किया गया है

"चण्डि चण्डे नमस्तुभ्यम् तारिणी वरवर्णिनी"।

जैन सुतारा शायद हिन्दू तारा का नाम है तारा की उपासना बौद्ध मतो के अनुसार करनी चाहिए वशिष्ठ मुनि ने चीनाचार पद्धति से तारा की उपासना तब उन्हे सिद्धि मिली ।

तस्य वाचकः प्रणवः

तज्जपस्त दर्थ भावनम्

एकाग्रं सम्पद्यते चित्तम्। एकस्मिन भगवति आरमिति चित्तम् तत् ईश्वरः समाधि तत्फललाभेन तनुगृह्वति स्वरुप प्रतिष्ठा चितिशक्तिरिति

दानव पछाड़ती समर में उछल कैं रण चण्डिका की रक्त रंग भरी अलकैं

(पलकै अलकै झलकै सब रक्तरङ्ग भरी)

(तामादिशक्ति शिरसा नमामि)

तारा पूजा भाट देश तिब्बत में प्रचलित थी तभी तो नागार्जुन ने इसका उद्धार किया एक जटा तारा देवी नाम वा रुपान्तर है। तारा भगवति मानस नामक महाशिला स्थित एक अमृत वापिका के द्वार की रक्षा करती है वही तारा की अनेक परिचारिकाए रहती है जो वापी के आर पार जाती रहती है नाचती गाती रहती है यशगान करती है ताराम्बा ही जलौध जन्य दुख दूर करती है इसके आगे कुरकुल्ला का वर्णन आता है इसको नौकश्चरी कहा गया है। अरित्र या डाड (चप्पे) दिये गये है बौद्ध साधनो मे तारा को कुरकुल्ला रुपान्तर कहा गया है तारा का जलयात्रा या Navigatio से स्पष्ट सम्बन्ध दीख पड़ता है जल सागर से रक्षा करती है भव सागर से भी पार उतारती है तारणी भव तारणी है।

कालिकोल्लास–4 (I)

श्री माँ का दार्शनिक विवेचन

आसीच्छक्तिस्ततो नादो–नादात् बिन्दु समुद्भवः

मायां तु प्रकृतिं विद्यात्
प्रभुं तस्या महेश्वरीम्।
अस्या अवयवैः सूक्ष्मै
र्व्याप्तं सर्वमिदं ज[illegible]।।

भूयश्च सृष्ट्वां [illegible] नवेशी
सर्वाधिपत्यं कुरूते [illegible]वानि।
सर्वा दिशश्चोर्ध्वमधश्च तिर्यक्
प्रकाशयन्ती भ्राजते गुह्मकाली।।

शिवच शिवा च शिवौ
पुमान्स्त्रियाइत्येकशेषः

ह्रट कमलमञ्चे डोले,
कराल बदनी श्यामा।''

कालीं कालहरां देवीं क्रीङ्कारबीजरूपिणीम्
कमरूपां कलातीतां कालिका दक्षिणां भजे

कलौ काली कलौ काली कलौ काली तु केवला
साधिता कालनाथेन प्रत्यक्षा कालिकाकलौ

ऐ माँ काली (कपाल कामिनि) मै तेरे पैरो का
नूपुर–हूँ जो तू शंङ्कर से मिलने जाया करेगी तो मै जय शिव जय शिव बोला करूगा।(योगिराज)
नूपुर–नुहति पुरं(कर्णरन्ध्र) गच्छति,

मायाहर्स्तेऽर्पयित्वा भरण कृत कृते मोहमूलोद् भवं माम
मातः कृष्णाऽभिधाने चिरसमयमुदासीन भावं गताऽसि।
कारूण्यैकाधिवासे सकृदऽपिवदनं नेक्छसे त्वंमदीयम
तत् सर्वज्ञेन कर्तु प्रमवसि किं नु मूलस्य शान्तिम् ।।

हे माँ मुझे माया के हाँथ में दे दिया भरण पोषण के लिए मोहमूल में मैं पैदा हुआ कृष्णा नाम वाली–बहुत समय (मुझ पर) उदासीन हो एक मात्र करूणा की निधान (एक बार भी नही देखोगी) तुम्हारे सामर्थ्य से मोहमूल (व्याधि) शान्त हो जाये

चित् प्रकाशक कर्पूर कुन्देन्दु धवल है शिव वे निष्क्रिय है शव सदृश है काली शक्तिरूपा इसलिए चिरचञ्चलानृत्योल्लास विह्वला है।

यस्यास्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया जिसके स्वरुप को ब्रह्मा आदि भी नही जानते अतः अज्ञेया हो माँ काली

यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता तेरा अन्त भी प्राप्त नही होता हे अनन्ता काली यस्या लक्ष्य नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या तुम्हारा कोई लक्ष्य लक्षण नियत नही है अतः ऐ लक्षणहीना अलक्ष्या यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा जन्म आदि रहित अजा–न जायत इति अज = टाप प्रत्यय = अजा

एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका : त्वयैकयापूरितमम्बमैतद्–एकेले सब पूरित करती है एति प्राप्तनोति इति एकः तुम्ही एक सब में उपस्थित हो एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यते नैका तुम एका और अनेका हो त्वयैकया पूरितमम्बमैतत्

''एकैव लोकान्ग्रसति एकैव स्थापयत्यपि, एकैव सृजते विश्वं तस्मादेकाकिनीमता'' (देवीभागवत) स्वयं ग्रसन करती हो, अकेले स्थापन अकेले ही सृजन सचमुच तुम एकाएक वीरा हो–अद्वितीया विद्योतिका विविधं ईरयति इति वीरः विविधं ईरण प्रेरण ही वीरता है अहमखिल जगत

एकैबाहं जगत्यत्र द्वितीया का मामपरा–मै एकले ही हू जगत में यतो वा इमानि भूतानिजायन्ते येन जातानि जीवन्ति, यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति

सर्वदेवमयीदेवी––––––––सर्वं देवीमयं जगत्

तद् ब्रह्म
जम्माद्यस्य यतः

एका अनेका एक वीरा से ही जगत् की उदयस्थिति लय आदि का सम्पादन होता है।

देवताओं ने देवी का उपस्थान करके प्रश्न किया आप कौन है ''सर्वेदेवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवी साब्रवीदहं ब्रह्मरूपिणी मत्तः प्रकृति पुरूषात्मक जगत् (देव्यथर्वशीर्षम) देवी ने कहाँ–मै ब्रह्म हूँ मुझसे ही प्रकृति पुरूषात्मक जगत उत्पन्न होता है

शिवपुराणस्थ वायुसंहिता के पूर्व भाग मे

त्वंहि वागमृत साक्षादहमर्थामृतं परम

द्वयमप्यमृत कस्माद्वियुक्तमुपपद्यते ।। (वायुसंहिता)

हे पार्वती तू वाग्रूपी अमृत है और मै अर्थ रूप अमृत है दोनो अमृत का मरण या वियोग कैसे हो सकता है

"शब्द जालमशेषन्तु धत्ते शर्वस्य वल्लभा, अर्थस्य रूपमखिल धत्ते मुग्धेन्दु शेखरः" बल्लभापार्वती अशेष शब्दजाल को धारण करती है और अर्थामृत को मुग्धेन्दु शेखर शिव धारण करते है।

योगमाया–योगाय इतरेषां अज्ञानी जनानां कृपा यस्या सा = योगमाया

माया–कृपायां दम्भे च

अज्ञानी पामर को भी तत्व से मिला दे

माया वा एषा नारसिंही सर्वमिदं सृजाति

सर्वमिदं रक्षति सर्वमिदं संहरति

तस्मान्मायामेतां शक्तिं विद्याद्य एतां

मायां शक्ति वेद स मृत्युं जयति स

पाप्मानं तरति सोऽमृतत्त्वं गच्छति

महती श्रियमश्नुते ।।

(तापनीयोप निषद)

मायां मयृगतौ–मयते गच्छति प्रकटयति जगति

विश्व में गुणरूप से अपने को प्रगट करती है गुणलयरूपा सांख्य सम्मत भूता हो इदङ्कारास्पद दृश्य सवर्ग की अधिष्ठान भूता सच्चिदानन्दस्वरूपा भगवती से ही उदय स्थिति और लय होता है निरानन्द जगत् उसके स्थिति के सपेक्ष सानन्द होता है नि स्फूर्ति जगत् भगवती सापेक्ष स्फूर्तिवान होता है निरस जगत रसेश्वरीसापेक्ष सरस होता है। चिति के महा संज्ञान में सब कुछ अवभासित हो रहा है स्रष्टव्य जगत् पर्यवलोचन रूप ईक्षण चिति करती है चिद्विलासचिद्विवर्त, चिन्मय चिन्मात्र चिदाश्रित यह जगत प्रमाणाधीन ही किसी प्रमेय की सिद्धि होती है अतः प्रमेय में प्रमाण कवलित ही उपलब्ध होता है प्रमाता, प्रमाण और प्रमेय इतरेतर सापेक्ष है प्रमाण का विषय होने से ही कोई वस्तु प्रमेय हो सकती है प्रमेय को विषय करने वाली अन्तः करण की वृत्ति ही प्रमाण कहलाती है प्रमेयविषयक प्रमाण का आश्रय अन्तः करण की वृत्ति ही प्रमाण कहलाती है प्रमेयविषयक प्रमाण का आश्रय अन्तःकरण वच्छिन्न चैतन्य है प्रमाता है प्रमात्राश्रित प्रमेयाकारवृत्ति को प्रमाण कहते है।

स्थूल सूक्ष्म कारण त्रिशरीर रूप त्रिपुर के भीतर रहने वाली त्रिपुरारी के अन्तपुर की रानी त्रैलोक्य लावण्यपुञ्जिका

"सुन्दरता कह सुन्दर करई,

छवि गृह दीप शिखा जनु बरई (इ) (तुलसी)

काली

तम आसीत् (ना० सू०)

तससा गृव्हमग्रे

तम आसीत्तमसा गृव्हमग्रेऽप्रकेतं सलिल सर्वमा इदम्

"अग्रे सृष्टे प्राक् प्रलयदशायां भूत भौतिक सर्व जगत्तमसा प्रच्छन्नम्" कारणात्मक अज्ञात अलक्षण गाढान्ध कार में सब निमग्न था

असीदिदं तमो भूतम प्रज्ञातमलक्षम्

अप्रतर्क्यमनिर्देश्यं प्रसुप्तमिव सर्वतः (मनु)

प्रकृतिरपपि ब्रह्मात्मनाऽव्याकृताऽऽसीत

अप्रतर्क्य–तर्कादि का अविषय अननुमेया अमानगा अनवगाह्या

आपो वा इदमासीत्सलिलमेव कारण सलिल ही सृष्टि के पहले था

सर्वाः सुप्ता भूता

असिताङ्गी जागर्ति (श्यामोपनिषद)

सब प्रसुप्त थे एक मात्र असिताङ्गी श्यामाङ्गी सर्वाङ्ग सुन्दरी सूसाक्षीणि प्रजागर परायण थी

"पञ्चयोजन"विस्तीर्णं मृत्योश्च मुखमण्डलम्

तस्माद्रक्ष महाविद्ये भद्रकाली नमोऽस्तुते।। (वनदुर्गोपनिद)

मृत्यु का मुखमण्डल पञ्चयोजन विस्तृत है भद्रदा भद्रकाली महाविद्या हमारी रक्षॉ करे

लक्ष्यतेऽनेनेति लक्षणं लिङ्गम्

लक्षण से लक्ष्य का अनुमान होता है लक्षणैक्य से लक्ष्यैक्य होता हैं

आसाधारण दवन लक्षणम् परन्तु सास्नादिमत्व गोत्व गाय का आसाधारण लक्षण इयत्ता अनविच्छन्ना है काली

सास्नादिमत्व गोत्व गाय का आसाधरण लक्षण इयत्ता अनविच्छन्ना है काली

सास्नालाङ्गुलककुदरवुर विषाणी पर जो अचिन्त्या अनिर्देश्या, अप्रर्तक्य निर्गुण निराकार उसमें लक्षण की गति अपास्त हो जाती है

कश्चिन्न तस्याः पतिरस्ति लोके
न चेशिता नैव तस्याश्चलिङ्गम्
सा कारणं कारणकारणाधिपा
नास्याश्च कश्चिज्जनिता न चाधिपः (गुह्य काल्युपनिषद)
न तत्समा चाप्यधिकाच दृश्यते (गुह्य काल्युपनिषद)
असाम्यातिशया
न साम्यं अतिशयश्च,

न उसके तुल्य ही कोई है और न अतिशय भूयसत्ताक कोई हैं

न तुल्य न अधिक ऐसी ब्रह्मस्वरूपिणी निरूपाख्या दुरभिलाप्या भगवती है

"कश्चिन्न तस्या पतिरस्ति लोके'

'उसका कोई पिपर्ति पति नही स्वामी स्वयं है

आद्या "जगत आदि कारणभूतां
आद्यां जगतः आदि कारण भूतां
आद्या आदिकारण भूता सृष्टि उत्पादनार्थ

महाकाल को भर्त्तृ रूप में प्रकल्पित करती है सृष्टेरूत्पादनार्थतु भर्त्तृरूप अकल्पयत्। उसने इच्छा किया–ईक्षांचक्रे (प्रश्नोपनिशष)

उसने कामना किया–सोऽकामयत् (छा०)
त्रिकोणरूपिणी शक्ति विन्दुरूप पर शिवः
अविना भावसम्बन्धं तस्मादबिन्दु त्रिकोणयोः

त्रिकोण काली और बिन्दु काल दोनों का अविनाभाव सम्बन्ध है किसमें साहस है जो उसके सीमान्त में सिन्दूर का सम्भरण कर सके अतः सप्तमी घूमावती अधवा किंवा विधवा समझी जाती है काशीश विश्वनाथ को भी वर प्रदान करती है

सर्वसम्भोग भावना, सर्वसौख्यनिरूपिणी

त्रिशदर्बुद षडवृन्दपञ्चात्पद्यकोय्यः।
युगानि परमेशानि विपरीतरताऽभवत् ।।

तीस अरब, षऽवृन्द पदंञ्चाशत् (50) पद्यकोटि युग पर्यन्त माहेश्वरी काली महाकाल के सङ्ग आसङ्ग परिपरिष्वङ्ग विपरीत विप्रतीप रिरंसा (रमनेच्छा) करती है

कोटि कोटि ब्रह्माणी नारायणी इन्द्राणी उसके दीव्य सामरस्य दर्शनार्थ समुद्युक्त होकर उदग्रीव होकर रसलाभ करते है

विपरीतरता काली निर्गुणा सगुणायदा शिवा स्वयं अर्ध भाग से शिव बनकर उनके वक्षारूढ़ होकर विपरीत रमण करती है

यदा सा परमा शक्ति स्वेच्छया
विश्वरूपिणी
अधः कृत्वा तु पुरूषं सऽगमेच्छाऽभवत्तदा
तदाक्रम्य स्वयं देवी भौरवोपरिसंस्थिता
सहजानन्द संदोहै निजानन्द प्रवर्द्धिनी

सर्व योनिपु कौन्तेय मूर्तयः सं भवन्तियाः तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता (गीता)

समस्त प्राणियों में जितनी वस्तुए उत्पन्न होती है उन सबकी योनि अर्थात् उत्पन्न करने वाल जननी श्यामा है और बीज देने वाला पिता मै हूँ जैसे लोक में प्रजोत्पादन की कामना से प्राणी नारी में गर्भाधन करता है

एकोऽहं बहुःस्यां प्रजायेय
"सविता गोभिः रसं भुक्ते भुऽक्ते
"एकाकी न रेमे।"

सूर्य अपनी रश्मियो से जल को आत्मसात करता है भोक्ता भोग्य को स्वात्मतादात्यापन्न करता है

कामस्तग्रे समवर्तत्

"ममयोनिर्महदब्रह्म
तस्मिन गर्भं दधाम्यहम्
सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत (गीता)

महद् ब्रह्म प्रकृति मेरी योनि है उसी में मै गर्भाधान करता हूँ तभी उससे महदादिक्रमेण समस्त प्रजा उत्पन्न होता है उत्पत्ति का आधार क्षेत्र भग है बीजलिङ्ग है वृक्ष अंकुरादि सभी प्रपञ्च की उत्पत्ति का क्षेत्र भाग है बीज पुरूषलिङ्ग है प्रकर्ष व्यक्त रूप में जायमान प्रजा है

कहीं भी सृष्टि क्यो नही वस्तुतः वहाँ सृष्टि के उत्पादनानुकूल शिवशक्ति सम्बन्ध अवश्य मानना पडता है अनन्तब्रह्माण्डोत्पादिनी महाशक्ति ही आर्घा जलहरी या योनि है ।

योनि – Cash of affect

त्रिकोण व बिन्दु का यही रहस्य है

एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति (श्रुति)

इसके आनन्द के एक कण से अन्य सभी भूत आनन्दित होते है

"उपतिष्ठति पुरूषः स्त्रियं स्त्री वा पुरूषं येन" जिससे पुरूष स्त्री को स्त्री पुरूष को तुष्ट करती है

उपस्थ इन्द्रिय है

"सर्वेषां आनन्दानामुपस्थं एकं अयनम्"

वाक् च वक्तव्य च, हस्तौ च दातव्य च उपस्थश्चानन्दयितव्यं च, पायुश्च विसर्जयितव्यम पादौ च गन्तव्यम् (प्रश्नोपनिषद्)

ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय के कार्यो का उल्लेख है प्रवण (ऊँ अकार, उकार, मकार) में अकार शिवलिङ्ग है उकार जलहरी है मकार शिवशक्ति का सम्मिलित रूप समझ लिया जाता है शिव ब्रह्म का स्थूल आकार विराट ब्रह्माण्ड है ब्रह्माण्ड आकार का ही शिवलिङ्ग है निर्गुण ब्रह्म का अवबोधक होने का ब्रह्माण्ड लिङ्ग है। आत्मा से आकाश की उत्पत्ति है यही निराकार का ज्ञापक लिङ्ग या चिन्ह है

लीनं अर्थं गमयति इतिलिङ्गम्

सबके आश्रय होने से और सबके लय का अधिष्ठान होने से महाकाल ही लिङ्ग कहलाते हैं।

श्री पार्वती अपर्णा **"पर्णानामव्यनश नादपर्णा"** पार्वती पर्ण का भी अशन नही करती तपस्विनी श्री कलाकदम्बमञ्जरी पार्वती शक्ति अपर्णा लता के संसर्ग से यह पुराण स्थाणु कैवल्य पदवी देता है जो कल्पवृक्षो के लिए देना अशक्य है

प्रलयेऽपितिष्ठतीति–स्थाणु (प्रलय में भी रहता है) प्रलय में भी जो संस्थित रहता है, अपर्णा जलहरी से ग्रस्त है यही योनिग्रस्त लिङ्ग है प्रकृति संस्पृष्ट महाकाल (पीठमम्बामयं सर्व शिवलिङ्गं) च चिन्मयम्।

पेठन्ति उपविशन्ति इति पीठ चिन्मयम्!
जिस पर बैठा जाय वह पीठ है

सत्व के नियमन की अपेक्षा तम का नियमन कठिनतर है

अ, उ 'म' प्रणावात्मक, ब्रह्मा, विष्णु शिवात्मक त्रिकोण में अर्द्धमात्रा रूप बिन्दु दिव्य ज्योर्तिलिङ्ग है आसीज्जानमायो ह्यर्थ एकमेविकल्पितम् सृष्टि के पूर्व ज्ञान और अर्थ काल और काली चणकाकार एक विभाग शून्य थे निरधिष्ठान शक्ति नही और अशक्त अधिष्ठान नही है।

मूलाधारे त्रिकोणाख्ये इच्छाज्ञानक्रियात्मके।
मध्ये स्वयम्भुलिङ्गन्तु कोटिसूर्यसमप्रभः।।

इच्छा ज्ञान क्रिया वामा, ज्येष्ठा रौद्री यही त्रिकोण रुपयोनि कोटि सूर्यसमप्रभ स्वयम्भू लिङ्ग माना गया है योनि से अतीत होकर बिन्दु अव्यक्त और लिङ्ग अलिङ्ग हो जाता है

भगलिङ्गऽमृतप्रीता
भगलिङ्गसुखवहा

ब्रह्मा विष्णु शिवात्मिका आद्याशक्ति सार्द्धत्रिवलया(साढ़े तीन फेरे की) कुण्डलिनी रुपा है यही कुण्डलिनी योनि है अपर्णा लता परिवेष्टित स्थाणु वैज्ञानिको की दृष्टि से आकाश वक्र है लिङ्ग भी वक्र है देश काल वस्तु सभी वक्र है ब्रह्म भी वक्र और स्तब्ध कहा गया जैसे विद्युतपुञ्ज पञ्चतत्व में व्याप्त होते हुए जल और पर्वत श्रेणी पर अधिकता से रहते है।

वाणरुपा श्रुता लोके पार्वती शिव वल्लभा योनिरुपा वाणरुपा–वाण शब्द पाँच संख्या का बोधक है पञ्चशर के अभिप्राय से काम में पञ्चमुख के अभिप्रान से शिव में पञ्चतत्वात्मिका की दृष्टि से पार्वती में अर्थात् पर्वतश्रेणीरूपा पार्वती में तोजोमय लिङ्ग समा गया। विद्युत्पुञ्ज यदि अपनी योनि पृथ्वी या जल में पड़े तो स्थिर होता है अन्यथा वृक्ष मनुष्यादि को नष्ट कर देता है

"पार्वतीञ्च बिना नान्या लिङ्ग धारयितुं क्षमा,।
तया धृतञ्च मल्लिड.गं द्रुतं शान्तिं गमिष्यति ।।

पार्वती से अन्या कोई ज्योतिर्मयलिङ्ग को नही विधारण कर सकता

तडित् पुञ्जभाभास्वराङ्गी विलसत्सौदामिनीसन्निभाम् भं वृद्धिं गच्छतीत्यर्थाद्भगः प्रकृतिरुच्यते वृद्धि को प्राप्त होने वाली प्रकृति भग है।

भग, भगवती गेया

"लीयमानमिदं सर्वं ब्रह्मण्येव हि लीयते" लीयामान जगत् लयाधिकरण शिवलिङ्ग में ही निलीन हो जाता है सा चैव दक्षिणा काली मदनातुर विह्वला (निरूत्तर तन्त्रे) उद्दाम काम संवेगवती सर्वसम्भोग भवना सर्व सौख्य निरूपिणी काली है।

"कालीदिम्बरी देवी जगदमोहन कारणी"
कामशास्त्रविशारदा, कर्पदीशप्रेमलता (योगिनी तन्त्रे)

श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी राजराजेश्वरी अपरिगणित सौन्दर्य भी कामदा कुलकान्ता कालकान्ता काली के सौन्दर्य के समान अकिञ्चत्कर है

एषा विश्वमोहिनी एषा आत्मशक्ति (देव्यथर्वशीर्ष)

'रति प्रियाम्महारौद्री (निखिलकर्म दोग्ध्री) कर्मफल का दोहन करने वाली कालिका को हम प्रणाम करते है त्रिभुवन की समस्त सुन्दरता भैरवी काली का कण है

"समन्तादापीन स्तन जघन दृग–यौवनवती,
रता सक्तः नंक्त यदि जपति भक्तस्तव मनुम,
विवासास्त्वां ध्यायन् गलितचिकुरस्तस्य वशगा
समस्ता सिद्धौघा भुविचिरतरं जीवति कवि।।

'हे क्षीराब्धि मथनोत्मूते।"
'हे भूतेश गृहिणी।"

माँ कालीतत्त्व मे आवरण की परमता और प्रकाश की परमता दोनो मिश्रित है गहनता का अतल तल भी वह अगम्य दुरवगाह नही और प्रकाश की समुज्जव लता अप्रतिहत निर्निरोध है। रात्रि रसरहस्य गहनता की अगार अयन है रहसि एकान्त वह गुह्मा उपनिषद्रूपा गुह्यकाली सीधे रात्रि तमस् ही अपितु सान्द्र निर्मल शशिकला से उज्जवलता भी यही माधुर्य है ये रात्रि निरोधिका केवल रोधिका है ऐसा नही राधिका भी है एकान्त अपरिहरणीयें साधिका है। जो सूक्ष्म गाढ़ गहन, निबिड दुर्ज्ञेय दुः साध्य है आवि अपावरणी निरावरण प्रकाशन रात्रि आवरणी गहन गोपन वृत्तिता है।

भू देवी ऊँ पृथिवी में प्रसीदतु।।

सत्ताशक्ति की धनता गाढ़ता स्थौल्य गोचरता इस मौलिक पार्थिवत्व से है स्थैर्यविधान एवं रक्षा पृथ्वी की मुख्य वृत्ति है क्षिति गति और निवास की मूलाधार है पृथ्वी त्वया धृता लोकाः श्रीचण्डी महीस्वरूपा महादेवी है **"वसूनि धारयति इति वसुन्धरा"**

ये रूपहली छाँव
ये आकाश पे तारो का जाल
जैसे सूफी का तस्वुर
जैसे आशिक का ख्याल
आह लेकिन कौन जाने कौन समझे जी का हाल

ऐ गमे दिल क्या करू
ऐ वहशते दिल क्या करू
कैफियत अपने चश्मे सियह मस्त की
न पूछ सूफी तमाम देख के मयख्वार हो गये

कैफियत–मादकता अपने नेत्रो की मत पूँछ तमाम सूफी पियक्कड़ हो गये

हरसनमसाज ने मरमर से तराशा तुझको
पर पिघली हुई रफ्तार कहाँ से लाते,
पैरे में पाजेब तो पहना दी पर
झङ्कार कहाँ से लाते
हर मुसव्विर ने तराशा तेरे नक्श को
कोई भी नक्श तेरा अक्सेवदन बन न सका
कहो अल्फाज के साँचे में कैसे ढलेगा ये जमाल।
मै सोचता हूँ कही हुस्न की तौहीन न हो

हर कलाकार तुम्हे ढालना चाहता है पर तुम ढली नही शब्द के साँचे में तेरा सौन्दर्य जमाल कैसे समा पायेगा

तेरे लोकोत्तर सौन्दर्य के आगे
जमाले जोहरा जबीना की आबरू

क्या है घृताचाी, रम्भा, उर्वशी,ऐ भुवनेश्वरी ये तेरे सौन्दर्य के कण भी नही

मूलालवाल कुहरादुदिता भवानी
निर्भिद्य षट् सरसिजानि तडिल्लतेव

मूलाधार से उठकर षट् चक्रो का उद्भेदन सरसिजानि तडितिलता(गात्रे कोटि तडित छवि) तुम्हारे गात्र का निर्माण विद्युत समुद्र के मन्थनसे विद्युतगौरी ।

यथा न जायते पुत्रः पितरं मातरं बिना।
तथा भवं भवानीं च बिना नैतच्चराचरम्।। (वायवीयसंहिता)

जैसे माता पिता के युगपत काम प्रयास से पुत्र सम्भव होता है ऐसे ही एतद् चर और अचर जगत् भवशिव भवानी शिवा के योग से सम्भव हुआ

"चन्द्रो न खलु भात्येष यथा चन्द्रिकया बिना,
न भाति विद्यमानोऽपि तथा शक्त्या बिना शिवः।।

चन्द्रिका के बिना चन्द्र प्रकाशन असमर्थ है वैसे ही विद्यमान प्रकाशरूप शिव बिना विमर्शरूपा शक्ति के अपना सत्ता स्फूर्ति नही विकीर्ण कर सकता।

यथा शिवस्तथा देवी यथा देवी तथा शिवः।
नानयोरन्तरं विद्याच्चन्द्र चन्द्रिकयोरिव।।

कपाल कामिनी
कं शिरःपाल्यतेऽनेनेति–कपालः
केन जलेन पाल्यत इति कपालम्

कपाल–मुण्डम्

जल या रस से पुष्ट होता है कपाल "त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत् वा कुमारी त्वं जीर्णो दण्डेनवञ्चसि त्वं जातो भवसि विश्वतो मुखम्" तुम्ही स्त्री (स् त् र् ई) सत्व राजतम् प्रकृति ई–कामकला रुप हो तुम्ही पुरुष–पुरि प्रकृतौ शायित्वाक्त, पुरुषः

तुम्ही कुमार, कुमारी, और प्रवयसा होकर मानों धूमावतीविवृद्धा होकर दण्डा लेकर चल रही हो

यच्च किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वखिलात्मके।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सात्वं कि स्तूयसे सदा।। (दुर्गासप्तसती)

सद् असद् जो कुछ है सबकी शक्ति तुम्हो हो
अतएव तुम्हारी स्तुति कैसे की जा सकती है

सदसच्चाहमर्जुन (गीता)

हे संसार पङ्क निर्मग्ना समुद्धरण पण्डिते

त्रिपरं निपुरं हित्वा नादनूपुर निक्वण।
निः श्रयणीं समारुह्य निः श्रेयसपदं व्रज।।

त्रिपुर और निपुर लिङ्ग शरीर को छोड़कर नादरूपी नूपुर से जो मुखरित है उस सीढ़ी पर चढ़कर निःश्रेयस पद पर पहुचो

जागृदादि अवस्थात्रय रूप जो त्रिपुर है उसका परिहार करे, निपुर अवयव विशिष्ट लिङ्ग शरीर उसका भी परिहार करे नादनूपुर निक्वणमुखरित जो साधन की सोपान श्रेणी है उस पर समारोहण पूर्वक माँ के श्री अङ्क तक निः'श्रेयस पद लाभ प्रशान्तमहासागर शिव के हृदय में बड़वाग्नि रुपा काली है।

कला वा काली बिन्दु रूप में परमधनी भाव पाकर मानो अशेष को आत्मसात किये है और नाद में अशेष का वितान तरली भाव विकास और प्रकाश करती है

रेणु बजा रहा है उन्माद वेणु "करे उन्माद मुरली, (गुह्यकाली महाकाल संहिता) लिए है

महामाया सर्वत्र पूर्णरूप से उद्व्याप्त है

निधिं गुह्यन्तीति = गुह्यकाली

'प्रेयः पुत्रात् प्रियोवित्तात्, पियोऽन्यास्मात्

सर्वस्मात्–आत्मिकालिका पुत्र,वित और सभी से ज्यादा प्रेमास्पद है प्रिय प्रेयान प्रेष्ठतम है

"ब्रह्मैवेति महामाया न माया महती मृषा" माँ, उमा, अमा, रमा, समा, ये सब माँ

माऽहं ब्रह्म निराकुर्याम मा मा ब्रह्मा निराकरोत हम ब्रह्म का खण्डन करें ब्रह्म हमारा निराकरण न करें माँ निषेधात्मक अव्यय है

अस्मत् शब्द की द्वितीया एक वचन का पद मां

मानं सम्मानं ददातीति माता प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सतत् नमः एष ह्येवानन्दयति–यही आत्मिका कालिका सबको आनन्दित करती है "भक्तिः सदा में भवतु गुह्यकाली पदद्वये (महाकाल संहिता) तत्त्वात्मिका काली में अचल प्रतिष्ठा विद्यमान है

"एषा सा वैष्णवी शक्ति महाकाली दुरत्यया।
आराधिता वशीकुर्याद् पूजाकर्तुश्चराचरम् ।।"
रूप सौभाग्य कान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः

यह दुरत्यय महाकाली वैष्णवी की शक्ति है। पूज्य होकर आराधक के वशीभूत चराचर जगत् कर देती है

ये रूप, सौभाग्य, कान्ति और प्रतिष्ठा की और महान एश्वर्यवती है "त्वां वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्य्या विश्वस्य बीजं परमासि माया"

आप वैष्णवी शक्ति अनन्तवीर्या एवं विश्व की बीजभूता माया है। उमा संविद्रूपा पराशक्तिः तयासहसर्वदा वर्तत इतिसोमः "सह उमया वर्त्त ते इति सोमः"
उमापरिवेष्टितउमानाथ वर्त्तते

यह शक्ति ही अवस्था भेद से इच्छा, ज्ञान और क्रिया रूप में आत्मा प्रकाशन करती है इच्छा की बहिर्मुखता सृष्टि का आदि हेतु है

यो यत्राभिलषेद भोगान्

सं तत्रैव नियोजितः

सिद्धि भाक् मन्त्रसामर्थ्यात् (स्वयम्भू आगम)

मननत्राणरूपी मन्त्र संसार को ही मोक्षायते,

सर्व जगद विद्धि विशुद्धं देहम्

वामा से ज्येष्ठा का भुवन अधिक उत्कर्ष है ज्येष्ठा से रौद्री का भुवन अधिक उत्कर्ष है शिव अग्नि या संवर्त्तानल है शक्ति सोम या विवर्त्तचन्द्र दोनों का समस्त बिन्दु जिसमें समस्त सिन्धु का प्रति सन्धान अधिगत है

प्रकाशांशो के नाम–अम्बिका, वामा, ज्येष्ठ, रौद्री

विमर्शांशो–शान्ता, इच्छा ज्ञान, क्रिया मध्य का महाबिन्दु ही अभिन्न विग्रह शिव शक्ति का आसन हैं

यह त्रिकोणमण्डल चिद्‌कला की आभा से उद्‌व्याप्त है

महा बिन्दु ही शवरूप शिव है जिस पर आनन्द कला आनन्दशक्ति काली विक्रीडन करती है कुण्डलिनी ही कौलिनी है

भीति युक्तं रवं शब्द यस्या सा भैरवी विकट ध्वनी करने वाली भैरवी **अक्षराणि ह्यक्ष इवानुप्रविश्य व्यञ्जननि धारयति इति** अक्ष ही अक्षर व्यञ्जनों को धारण करता है अक्षरः अशूङ्व्याप्तौ

अश्नुते अर्थ व्यापनोति इति अक्षर :

परावाक् प्रसृत होकर सर्वाग्र में इच्छा तदन्तर ज्ञान और क्रिया रूप हो जाती है तदनन्तर ज्ञान और क्रिया रूप हो जाती है तदन्तर एक पञ्चाशत (51) मातृ का रूप परिणाम होता है स्वर वर्णो में बीज शिवांश और व्यजनवर्णो में शक्त्यंश योनि रूप में प्रबल रहता है

संसार नेचायेखन् मुण्डमाला कोथायपेली (कमलाकान्त)

संसार तो पहले था नही तुमने किसके ये इक्यावेंन मुण्डों की माला पहन लिया

शब्दब्रह्ममणि निष्णातः परब्रह्मणाधि गच्छति न सोऽस्ति प्रत्ययेलोकेयः शब्दानुगमादृते (उपनिषद) जब परा परात्परा शक्ति स्वातंम्योन्मेष के कारण अन्तर्लीनावस्था को त्यागकर अभिव्यक्त होती है तो विश्वरूप चक्र का आवर्त्तन होता है

पुनः पुनः करोति इति चक्रम् अपरिगणित योगिनीयाँ वृत्तियाँ है साक्षिणी साक्षी काली साक्षी कृष्णा माँ शान्ता से इच्छा का समुदय अव्यक्त विश्व विश्वोदरा के गर्भ से बहिर्गत हो जाता है

इच्छाशक्ति वामाशक्ति तादात्मयापन्न होकर पश्यन्ति वाकरूप सम्पत्ति हो जाती है

ज्ञान शक्ति ज्येष्ठा से अभिन्न होकर मध्यमावाक् क्रियाशक्ति रौद्री से अभेद कर बैखरी विश्व विग्रह रूप हो जाती है

आज्ञाचक्र **भ्रूवोर्मध्ये शिवस्थानं मनस्तत्र प्रविलीयते** के उर्ध्व बिन्दु से उन्मना पर्यन्त की भूमि कृमशः बिन्दु, अर्धचन्द्र, निरोधिका, नाद, नादान्त शक्ति, व्यपिनी, समना तथा उन्मना तारतम्योपेत है

उन्मना में काल की कला तत्व देवता, मन भी निरूद्ध हो जाता है शाक्तो मे इस अवस्था को रूद्रवक्त्र कहते है।

"चिच्छक्तिः परशिवादभिन्नैव तर्यो भेर्देस्तु भ्रान्ति" शिव की चैतन्यशक्ति यदा उत्थापित होकर जब वक्ष पर लोललीलारूपक्रिड़ा करती है तदा शिव–शवाकार रूप हो जाते है शिवत्व अधिगत होने पर ही शिवकाली को हृदयाम्बुज में धारण किया जा सकता है

पञ्चमम् स्कन्द मातेति नव दुर्गाओं में **"स्कन्दति अमृतरूपेण गच्छति स्रवति इति स्कन्दः**

जो अमृतरूपेण गच्छति स्रवति इति स्कन्दः

जो अमृत संधारा प्रवाहरूप गमनशीला है स्कन्दमाता है

स्कन्दयति शोषयति अरीन् शूरप्रभृतीन् जो शत्रु समूह की विशोषण कर लेती हैं

ऐ–नटनप्रीता नाट्यकर्म विवर्धनी तेरा ही नटन नटराज मे है

तेरा ही अटन भक्तों में रटन तेरा ही

नाहं नाहं तू ही तू तू ही तू

"तां प्रोवच महालक्ष्मी तामसी प्रमदोत्तमाम् । ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि त",

महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरार्तिदुरत्यया ।।

प्रमैदाओं में उत्तमोत्तम तामसी काली से लक्ष्मी बोली नाम और कर्म का निरूपण किया ब्रह्मादि को मोहित करती है इसलिए महाकाली सर्वविध भक्षण की इच्छावाली होने से क्षुधा, सर्व विद्या विषयिणि प्यास होने संतृषा योग की अधिष्ठात्री होने से योगनिद्रा भक्तकृत भक्ति की इच्छावाली तृष्णा और महापराक्रमवती होने से एकवीरा रूप से माँ का निरूपण लक्ष्मी के द्वारा–

कलनात्सर्व भूतानां ब्रह्मादीनां निमेषतः ।

काल शब्देननिर्दिष्टो ह्यरवण्डानन्द अद्वयः ।। (शङ्कराचार्य) संलयन :

सभी भूतो का (कलन गणन प्रकाशन संलयन) निमेष मात्र समय में ब्रह्मा आदि का अपलाप काल का कार्य अखण्डानन्द अद्वय ब्रह्म ही उपाधिवशात काल कहलाता है

काल एवासि काली–माँ तुम काल ही हो काली तुम उज्जैन की काल महाकालेश्वर तुम हो तुम्हारे भय से वायु सञ्चरित हो रही है तुम्हारे भय से सूर्य नित्योदित होता है अग्नि दहन और मृत्यु प्राणपहार तम्हारे भय से

भीषास्माद्वातः पवते भीषोदेती सूर्यः।
भीषास्मादग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः।।

(नमस्ते रूद्र मन्यवे) रूद्र की शक्ति रूद्राणी हे दुष्ट रोदनकारी रूद्राणी हम तुम्हे

प्रणाम–स्वनिष्ठ अपकृष्टत्व त्वद् निष्ठ उत्कृष्टत्व बोधनानुकूल अञ्जलि शिरःसंयोग व्यापार नमस्कार पद वाच्य है) करते है

दीनता भक्ति महारानी का सिंहासन है ह्रदय से वाग् से वपु से नमन

"उरसा शिरसा दृष्टया मनसाऽपि धिपाऽपि च,।
पद्भयां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टाङ्ग ईरितः"।।

ह्रदय, शिर, दृष्टि, मन बुद्धि, पैर, हाथ, जानु यें अष्टधा प्रणाम तुमको ऐ माँ काली विद्वदरसीकेन्द्र जगन्नाथ यवनी संसर्गदूषित

गङ्गा तट पर चद्दर आवृत लेटे थे अप्पयदीक्षि उनसे कहते–

किं निः शंङ्क शेषे
शेषे वयसि त्वमगते मृत्यौ
अथवा सुखं शयीथा
निकटे जागर्ति जाह्नवी जननी

क्यो निः शंक शयन कर रहे हो आयु व्यतीत हो चुकी है मृत्यु सन्निकट है

इस पर पलटकर देखा जगन्नाथ ने
फिर तदवत शयन करने लगा
पुनः अव्ययजी दीक्षित ने कहा

आराम से शयन करो निकट में सुरसरि जाह्नवी गङ्गा जाग रही है–निश्चिन्त रहों भागरथी हम दोष से भरे है पै भरोस यही की परोस तुम्हारे

यस्या : अङ्कमवाप्य बाल इव सर्वेऽपि
निः 'शंङ्क' शेते सा श्री
जिसका अङ्क प्राप्त कर सभी बालक की तरह
निशङ्क शयन कर वे है 'श्री' माँ

या दीव्यति विजिगीषत अविद्यातत्कार्यात्मक)

स्व कान्त के सग विविध केलि क्रीडा करती है
प्रपञ्चं ब्रह्मविद्यारूपेणेति देवी
अविद्याऽन्धकार पर विजयोरोहण करती है
वह देवी तेरे छविमाध्वीक मे निमज्जित चित्त
सर्व बाह्य आभ्यान्तर दृश्य का विस्मरण
"अहो निमग्नः तवरूप सिन्धौ ।
पश्यामि नान्तं न च मध्यमादि।।
अवाड.च निस्पन्द तामो विमूढः।
कुत्रास्मि कोऽस्मिति न वेधिदेवः।।

माधुर्य सौन्दर्य छवि सुधा पयोनिधि रूप में निलीन होने पर आदि अन्त मध्य कुछ नही भासता मुकास्वादनवत् जड़ता और मै कौन हूँ हमारी भौगोलिक अवस्था कहाँ है यह सब रसोद्रेक में संज्ञाहीन हो गया

प्रेमाश्रूणि विभूष्यन्ति वदनम्
मुखपरशीतल प्रेमाश्रु की धार

रोमाञ्च से वपु चमत्कृत और मन भक्ति से नन्दित होता हुआ लग रहा है मानो नेत्र में कर्पूर वर्त्तिका की शीतलता मृगमदकर्दम का अनुलेपन तुम्हारे दर्शन से

नास्ति नादात्परो मन्त्रो
न देवः स्वात्मनः पर
नानुसन्धेः परा पूजा
नहि तृप्तेः परं सुखम् (योगशिखोपनिषद)

नाद से बढ़कर मन्त्र नही, आत्मा से बढ़ कर देव नही अनुसन्धान से बढ़कर परापूजा नही तृप्ति से अनुसन्धान से बढ़कर परापूजा नहीं तृप्ति से बढ़कर सुख नही।

एहि अश्मानमातिष्ठ अश्मा
भवतु ते तनु (यजुर्वेद)

पाषाणमयी धातुमयीय काष्ठमयी मूर्ति मे आजा
उसमे तेरी चेतना सनिविष्ट हो जाय

तेरी अश्माभूत (पाषाणमय) तनु–शरीर हो जाय

भव्य भावोदय में ये मूर्तियाँ एजन (कम्पन) हास्य, रूदन, नर्त्तन, द्रवीकरण, उमज्जन निमज्जन करती है।

देवतायतनानि कम्पन्ते
दैवत प्रतिमा हसन्ति, रूदन्ति
नृत्यन्ति, स्फुटन्ति, स्विद्यन्ति उन्मीलन्ति निमीलन्ति (यजुर्वेद)

श्री तैलङ्गस्वामी माँ भद्रकाली की मूर्ति से कुमारी रूप भद्रदा का सजीव दर्शन करते थें सर्वज्ञा सर्वतो भद्रा सर्वमङ्गलमङ्गला

भद्रं ददातीति भद्दा

भातीति = भ
रातीति = र
ददातीति = द
= भद्रकाली

एष एव भद्र

यह ब्रह्म भद्रस्वरूप है (श्रुति)

विज्ञानरत्न ही तेरे नयनारविन्द और वेद उच्चार रूप कल्पित नुपूर

सा शिव करूणामूर्ति जगन्माता त्रयीमयी, शिवाभिन्ना परानन्दः शङ्करस्यापि शङ्करी (ब्रह्मगीता)
जवाकुसुमसङ्काशौ मदधूर्णितलोचनौ जगतः पितरौ वन्दे भैरवी भैरवात्मको
जवाकुसुम की तरह मिहिरारूण विग्रह रक्ताभा और वारूणी रसमद से आधूर्णित नयन जगत पितरौ

जगत के माता पिता भैरवी और भैरव को हम वन्दन करते हैं स्त्रीकर्तृकं नृत्यं लास्यमित्युच्येत भगवती के नृत्य क नाम लास्य है।

पुं कर्तृकं नृत्यं ताण्डवमित्युच्येत ताण्डव शङ्कर कर्तृक है

आधार शक्ति में प्राण का निरोध करने पर शरीर में कम्प और योगी नृत्य करने लगता है सारा विश्व वही नयन गोचर होता है सृष्टि का आधार वहाँ सब देवता सब वेद रहते है अतः आधार चक्र का आश्रय लेना चाहिए यह नृत्य आनन्द ब्रह्म का उन्मेष है प्रलयकाब्रीन विराम भी नृत्य के परिश्रम के अनन्तर विश्राम रूपी आनन्द का आभोग रूपी निमेष है

आनन्दोन्मेष रूप ताण्डव को वेदो ने संवर्तन और शङ्कर भगवत्पाद ने विवर्तन कहा है

स्वात्म तत्त्व सुखवृत्ति प्रमोद के कारण आनन्दोद्रेक रूप ताण्डव

"स्वात्मतत्त्वसुखस्फूर्ति प्रमोदात् ताण्डवप्रियः" (स्कन्दपुराण)

निज विनोदारण्य प्रमोदार्णव निमग्न शिव ताण्डव परायण होकर विश्वविमोहन करते है विमलेन्दुशेखर

न शिवेन बिना शक्तिर्न शक्तिरहितः शिव ।
उमाशङ्करयौरैक्यं यः 'पश्यति' सः पश्यति।।

शक्ति के बिना शिव, शिव के बिना शक्ति नही रहती ऐसा

जो देखता है वही यर्थात देखता है (शिव पुराण)

सृष्टि कुहुक कुशलिनी माँ काली और महाकाल में अविनाभाव सम्बन्ध,
युगल, यामल युगनद्ध, आदि शब्दो से व्यवहृत होता है
अगर महाकाल कालाग्निरुद्र है

कालाग्निरुद्रं दूरस्थंज्वलद्दावाग्नि सन्निभम्

जैसा कि पद्य पुराण में दूरस्थ काल को ज्वलद् दावाग्नि यह कालाग्नि रूद्र

तादात्म्यमनयोर्नित्य
वह्निदाहकयोरिव

जैसे वह्नि और दाहिका शाक्ति का नित्य तादात्य सम्बन्ध है वैसे ही महाकाल का महाकाली से

गौरतेजो बिना यस्तु श्यामतेजः समर्चयेत् ।
जपेद्वा ध्यायते वापि स भवेत् पातकी शिवे।। (संम्मोहन तन्त्र)

गौर तेज साधिका राधिक राधा को छोड़कर श्याम तेज कृष्ण की सपर्या करता है वह जप ध्यान जो करता है वह पातकी कोटि चिन्हित है

अतः स्वातन्त्रय शक्ति की अभिव्यक्ति के बिना परमेश्वरत्व असम्भव है

प्रसरणस्वभाव वाली शक्ति, का प्राधान्य प्रकाश और विकास में है

उभय शिव शिवाऽकार होकर शिवा शिवरूप से शिवशक्तिरिति ह्येकं तत्त्वमाहुर्मनीसिणः विश्वं एकात्मकं पश्यन् प्रकृत्या पुरूषेण च (भागवत्) मनीषी लोग शिव शक्ति को एकार्थ रूप ही बुद्धायारूढ करते है "चितिस्वतन्त्रा विश्वसिद्धिहेतु"

यहाँ शक्ति चिति का स्वातन्त्रय अन्य निरपेक्षता ही है उसे किसी की अपेक्षा स्वकार्य सम्पादन में नही है स्वातन्त्रय के कारण ही अद्वितीया होकर नाना द्वैत की प्रसवयित्री होती है

अचल किञ्चिद् ईषद् चलनयुक्ता होकर स्पन्दनात्मिका सामर्थ्य का निदर्शन करती है तदेजते तन्नैजति

स्पन्दन युक्तता ही भुवन कल्लोल विचित्रता का उपबृंहण कारक है कम्पन्न रहित प्रशान्त महासागर

भूता शान्ति देवी शान्ति की अगार अयन भूता अणोरणीयान्

अणु से अणुतर सूक्ष्मतम् अणिष्ठा बिन्दुरूपता वामन अवतार जैसा है

तुम्ही हो, तुम्ही बिन्दु में निखिल का सन्धान कराती हो, महतोमहीयान

गरिष्ठा वरिष्ठा, ज्येष्ठा, भूयिष्ठा, गरीयसा महीयसी सर्वतोडधिका अद्वया कालिका हो सकलविरुद्ध

धर्माश्रया हो

तद्दूरे (उपनिषद)
तद् अन्तिके

तुम्हीं दविष्ठा–अत्यन्त दूरवर्ती

तुम्ही नेदिष्ठा–अत्यन्त निकटवर्ती हो अतिशायने तमविष्ठनौ (अष्टाध्यायी दूर होकर निर्जनवनविहारी या अभक्तो के लिए व्यवधान रखती हो और भक्तों से अव्यवहित निकटतर हो

यविष्ठा–युवती षोडशवर्ष वयस्का हो अनन्त यौवन का

वर्षिष्ठा–अति प्रवयसा वृद्धा धूमावती माँ त्वं जीर्णो दण्डेनाञ्चसि बुढ़िया होकर दण्डा लेकर तुम चलती हो। अरूप अनाम, अशब्द रूपा होकर सर्वरूप सर्वशब्द सर्व स्पर्शरूपा भी तुम्ही हो स्वातन्त्र्य ही शाक्तमत का प्राण है भगवती जगदम्बा का

अम्बयति जीवयति लोकान् पालयति वा

इति अम्बा (अम्बप्राणे–धातु) जङ्गमस्थावरात्मक प्रपञ्च को प्राणवन्त करती है 'अम्बा'

सम्बोधन अर्थे अम्बा

माता–मानं सम्मानं निर्माणं तनोति

इति माता–मान सम्मान निर्माण, विवृद्धिशी ला

सिसृक्षा रिरंसादि। सृष्टि के लिए रमणेच्छ) या आदिम शक्ति कला, कामकला सृष्टि का वितानात्मक बीजं क्रीं है ककारवर्ण सर्वाङ्गी काम केलि क्रीं बीज ककार का आश्रय लेकर हो जाये

केलि काला कृष्णा या काली
तत् है आप्तकामपूर्ण कामरूपा
त्वं पदार्थ है कलाकाम
असि एकता का अवद्योतक है

क्रीं में 'क' है कामदा कान्ता कामेश्वरी काली 'र' है कालाग्नि रूद्र रूप कामेश्वर और कामेश्वरी काली का और कमनीय कम्बु ग्रीवा कामेश्वर की परस्पर पर उत्कट प्रीति है 'ई और बिन्दु है कामेश्वरी काली का कामेश्र से उद्रेक में विभाग शून्यता

यही क्रीं का तात्पर्य गर्भ उपलक्षित होता है। पराव्यक्त बिन्दु उससे नादाभिव्यक्ति नाद से कलाभिव्यक्ति इस प्रकार से वागर्थप्रत्यय जगत में जो प्रवृत्ति आवर्तित होती है समग्र सम्यक रूप से बिन्दु में संगृहीत गर्भित है

बिन्दु अर्द्धमात्रा है स्वर व्यजंन वर्ण है मातृका की माता अर्द्धमात्रा उमाँ है आदिमा कलनी शक्ति बिन्दु है यह सिन्धु का अवगाहन कराती है।

सर्वाभिव्यंजिका शक्ति ही मातृका है बिन्दुवासिनी ही विन्ध्यवासिनी है जगत बीजाङ्कुराकृति रूप से संकोच और प्रसरणशी लता स्वारसिक होता है

मूर्द्धन्य धामाभिमुखी का चरम अवस्था चणकाकार (द्वय दलवत्) अलिङ्गन बद्ध कामेश्वर और कामेश्वरी माता देती है अवारित मुक्त अञ्चल अयाचित अकृपण स्तन्यसुधा यही नही दोषेऽपि प्रवृत्तित्त्वम् वात्सल्यत्वम् बछड़ा पङ्क गोमय (गोबर) आदि से संलिप्त है पर माँ गाय रसना से उसका चौषण करती रहती है

'माँ' नाम के महाक्षर किंवा अमृताक्षर युगल करूणा से विगलित होकर क्षरितमनिषं सोमामृत एवं सान्द्रमुदिता स्नेहवृट् मेघमाला ही है

शुष्कदहन का **अन्यन्ताभाव** है स्निग्धसिंचन की संधारा वहा अजस्र प्रसरणशील है

तुम ब्रह्ममयी का स्वाभाविक नाम माँ है इस अमृताक्षर महामन्त्र की ऋषि स्वयं महामाय है। वे ही देवता है पराम्बिका तेरे माधुर्य के अभाव से सब विधुर हो जाता है। गिरामाहुदेवीं द्रुहिणगृहिणीभागमविदो, हरे पत्नीं पद्मां हरसहचरी मद्रितनयाम् तुरीया काऽपि त्वां दुरधिगमनिः सीममहिमा महामाया विश्वं भ्रमयसि परब्रह्म महिषि।। (सौन्दर्य लहरी)

हे परब्रह्म की महाराज्ञि! शास्त्रों के जानने वाले ब्रह्मा की पत्नी को सरस्वती वाग्देवी कहते है

विष्णु की पत्नी को कमला कहते है हर की सहचरी को पार्वती कहते हैं परन्तु तू महामाया कोई चौथी है तेरी महिमा असीम है तूने सारे विश्व को भ्रम में डाला हुआ है तुमको जानना कठिन है।

महामाया ('माया कृपायां दम्भे च) अति कृपा, महाकृपा

हरति एक अघ असुर जालिका, तुलसी दास प्रभु कृपा कालिका (तुलसी)

योगमाया दुर्घटघटना पटीयसी है विषमपि अमृतायते–विष भी अमृत हो जाता है यही वामरसरहस्य है रूष्टा हो जाय तो

अमृतमापि विषायते–

अमृत भी विष हो जाता है

पराञ्चि भाव का ह्रास और प्रत्यग् भाव का समुल्लास यही अभीष्ट है

यह महामाया कुंडलिनी शक्ति सहज कुल रसिका है, ब्रह्म रस (रसो वै सः) की रसिका तभी उसे कुल कुण्डलिनी कहते है परम शान्त सुनिर्मला भास्वस्ता पूर्णिमा की हिमांशु कनक कौमुदी की भांति आप्लावन आप्यायन करती हुई विचित्र नाद का रणन उसकी समग्र चेतना के मधुच्छद को स्पन्दित नन्दित करता हुआ

अलसित रसजातम्
स्वलसित रससिन्धु
माध्वीमग्नं हृदि विलसनम्

यह सनातनी पीयूष धारा इसके लिए पिपासा अग्नि को प्रज्वलित करो पिपासा तृषा काली ही है

अकारादि वर्णमाला ही मुण्डमाल है इसकी शक्ति अमानगम्या अमेया है इस शक्ति के जठर से सर्वविधिविचित्रशक्ति संजात होती है व्यवहारगत वर्णमाला उसी महा मातृका का विप्रूशांश (छुद्र) है

शेषशक्ति प्रसुप्तभुजगाकार कुण्डलिनी ही है

विषपरिहार पूर्वक अमृत का आहरण करती सुधा देवी

विष का परिहार या वर्जन विकर्षिणी शक्ति करती है आकर्षिणी शक्ति अमृत का आहरण करती हुई सक्रिय है

प्रत्येक स्थल पर द्वौ द्वौ द्वन्दः साधक बाधक, दैवी, आसुरी, अमृत विष यही प्रसक्त है द्वन्द्वो के विभत्सर कर निर्द्वन्द्व अवस्था सद्यः पातक संहत्री सद्योदुःख विनाशिनी

माँ कालिका

वाराही शक्ति–वृणोति अहरोति च वरण करती है अङ्गीकृत करती है फिर समुत्तोलन कर प्रकर्षोपेत करती है

सलिलमग्ना वसुन्धरा का उर्ध्वोत्तोलन भगवती वाराही शक्ति अपने दंष्ट्रा से करती है

मूल धारस्थ (पृथ्वी तत्त्व) निद्रिता मातृ का शक्ति में विपुलस्पन्दन निमज्जिता पृथ्वी का वाराही शक्ति द्वारा समुद्धार

मानो पादप बीज में विश्रान्त है यही उन्निद्रित होकर पुनः नाल, स्कन्ध, शाखा रूप से प्रतान करती है पूरणी भी हरणी भी परिपूरण सम्पूरण का मूल भगवती ही है

समग्रता परमता और सकल निष्कलता रूपी भावत्रय द्वारा ही महामाया का ब्रह्मत्व भावित होता है इस त्रिवेणी से मिलन में उसकी पूर्णता का एक चिन्तन एक त्रिकोण के रूप में करो साकल्य इसकी एक भुजा है नैष्कल्य इसकी अन्य भुजा है इन दोनों भुजा के शीर्ष में जो मिलन बिन्दु है वह है पारम्य

सामम्य रूपी बिन्दु को अनन्तवत् भाव से प्रसारित करो। प्राप्त होगा परमनाद जिस अचिन्त्य कलनशक्ति ब्रह्मत्व की वे मूल त्रिकोणा कृति आ विर्भूत हुई है परमबिन्दु तथा परमनाद इस पराकाष्ठा में जो संकुचन प्रसरन हुआ। परमाकला "नवैरेमे" सोकामयत्'। पर माकला कीयही मूल कामरूपा आकृति है।

समग्रता का बीज है ह्रीं यहाँ महाप्राणवर 'ह' है भूमि **(Base)** र के द्वारा इस महाशक्ति सामान्य में एक शंखावृत आवर्तन (स्पाइरल रोटेसन) संभव हो जाता है 'ई' कार इस आवर्तन का अक्ष है यदि इस अवच्छेद में एक त्रिभुज का संधान पा सको तब उसकी भूमि होगी 'ह' 'र' तथा ई दो भुज होगी।

परमता अथवा **Supreme Absolute** भूमि में परम श्रेष्ठता तथा पर निः श्रेयस अथवा कैवल्य रूप से आरुरूक्षु के लिए यह बीज अत्यन्त कामद है परम रसवस्तु को नित्यरासरूपेण विलसित करने और उसे अपनी अस्तित भातिता स्वलसित करने में क्लीं बीज शक्य है।

फलस्वरूप तलस्थित रेखा में उच्छून भाव का संचार होता है यही लक्षित होता है शिष्य में प्रणव में ई के स्थान पर 'उ' ई में विशेषतः वेध वृत्ति का सूचक है किसी भी बीज को प्रणव से युक्त करने पर इस वेध वृत्ति की सधिष्ठता अर्जित होती है।

श्री बीज समस्तकला तथा समस्त सुषमा को प्रस्फुटित करने के लिए साधिष्ठ है

महामाया ह्रीं है महाबीज रूपा नाम तथा नामी मूलत : एक है किसी शक्ति (क्रिया ज्ञान भाव) का संग्रह समूह तथा समिद्ध करने मे ह्रीं बीज का विषेश उपयोग किया जाता है आकृति छन्दः प्रभृति में विषमता (श्रीहानि) का निवारण करने के लिए श्री बीज उपयोगी है। अर्वाक पराक तल वृत्तिता उच्छिन्न करने के लिए ऐं बीज का योग–ज्ञान भक्ति में इष्ट की परमाविष्टता के लिए क्लीं बीज का उपयोग करना चाहिए।

विष्णुमाया समग्रस्य साकल्ये योगपूर्विका नैष्कल्ये निजमाया च 'मा ये' तिद्वय्यर्ण वाराणात् सर्वासा मर्य्यदामातृ महामायेति तुर्यगम्।।

साकल्य (निखिल कला के विकास और आवास्वाद की (परिपूरयित्री योगमाया नैष्कल्य निजमाया है।)

महामाया पुष्टिरसि
ऐ माँ तुम पोषण हों
वित्तिरसि
ऐ माँ तुम धन हो
धनमर्हतीति धन्य
धन की अर्हता धन्यना है (अतः तुम धन्याति धन्य हो)

हे श्मशानशयनागारा
श्मशानभस्मलेपिता

भस्मरेखाङ्कित लसन्मस्तकायै नमः भस्मोद्धूलित सर्वाङ्गी वैराग्य को प्रदीप्त करते हुए महाकाल संहित में—पितृ भूमौ महेशानि विधिरेखां प्रमार्जयेत

पितृभूमि (श्मशान भूमि में माँ साधक के उत्कर्ष के लिए अपकर्षगत विधिरेखा का प्रमोष (पोछ) देती है ह्रदय रागादि द्वेषादि रहित हो संसार विषय के अनित्यता का बोध श्मशान स्थल

चूमकर मौत को जिलाती जिन्दगी।
मरघट में फूल खिलाती जिन्दगी।।

जो सांसारिक ऐश्वर्य को अपने पास न रखने का अभ्यस्त है वही संसारिक वैभव दे सकता है वही चरमदाता या दानी जैसे शिव या शिवकाली।

भव भव विभव पराभवकारिणी
विश्वविमोहिनी स्ववशविहारिणी (श्री तुलसी)

धरणि तनया यद्भीमनृत्य धरण्यां कृतमिह मनसा तच्चिन्तयन्तो द्विजेन्द्र

जयति जयति सीते त्याहुरिन्द्रादि देवाः
सपदि भुवनभङ्ग मन्यमाना विषेदु (अद्भदसमायाण)

पृथ्वी सुता सीता ने पृथ्वी पर जो विकराल नृत्यकिया, मन में उसका चिन्तन करते हुए विप्रगण और इन्द्रादि समस्त देवगण यह समझ कर की भुवन नष्ट होने को है सीता का जय जय करने लगे थे।

जानक्या : पादविन्यासे शवरूप धरोहरः।
आत्मानं स्तम्भयामास धरणीधृतिहेंतवो ।। (अद्भुत रामायण)

सैषा सर्वेश्वरी देवी सर्वभूत प्रवर्तिका

यह सीतारूपकाली सर्वेश्वरी देवी सर्वभूत प्रवर्त्तिका अर्थात् सभी भूतों मे एक ही भूतेश्वरी उद्व्याप्त है। एक एक हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः (ब्रह्म बिन्दूपनिषद)

एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्
धृतमिव पयसिनिगूढ भूते भते वसति विज्ञानम्
जैसे दुग्ध में धृत अनुस्यूत है वेसे ही
विज्ञान धनरूपिणी संविदनी शक्ति सर्वानुस्यूत है
जानकी काली है यह रसरहस्य
अदभुत रामायण में वर्णित है

"शक्तयो जानकी देवी शक्तिमन्तो हि राघवः" (अद्भुत)

"मन्ता रामो मतिः सीता"
ऐ रण पण्डिते
ऐ रण विशारदे
ऐ शत्रुपक्षक्षतिप्रीता
शत्रुपद्धति खण्डिनि

पिबन्ती रूधिरं भीमां कोटराक्षीं क्षुधातुराम्
जगद्ग्रासे कृतोत्साहा मुण्डमाला विभूषणाम्

भयङ्करी कोटराक्षी क्षुधातुरा मुण्डमाला से विभूशित हुई रक्तपीती हुई जगद ग्रसने के लिए समुत्सुक है।

भीमा काराभिरन्याभिः क्रीडन्तीं रणमूर्द्धनि
मुण्डै राक्षसराजस्य खेलन्तींकन्दुकं मुदा

भीषण आकृति वाली डाकिनी आदि के सङ्ग रण मध्य क्रीडन करती हुए दानवेन्द्र के मुण्डो से कालीं च वीक्ष्य नृत्यन्ती मातृभिः संहिता द्विज, पपात हस्ताद्रामस्य वेपतः सरशं धनु।। (अद्भुत रामायण)

हे द्विज मातृकाओं के सहित काली का नृत्य देखकर श्री भद्रराम हस्त कम्पित हो गये शर के सहित घनुष उनके हाथ से स्खलित हो गया

दन्तैर्दन्तान् ताडयित्वा कुर्याद् कटकटारवम् (महाकालसंहिता)

रण में—दाँत से दातों को पिसती हुई कट कट के रण—ध्वनि को पूरित करती है। कोटि—कोटि कण्ठो से रणाङ्गण में प्रणाद या निनाद करती है।

कोलासुर के पास कालिका बालिका वन के गयी और कहाँ कालिका ने छल पूर्वक

मातृतातविहीनाहं सहायपरिवर्जिता।
क्षुधिताहं महाराज भोज्यं मह्यं प्रदीयताम् ।। (योगिनीतन्त्रे)

मात तात विहीन हू कोई सहारा नहीं, क्षुधाऽर्त
हूँ मुझे कुछ भोज्य खाद्य दों

कोलासुर पिघल गया बालिका रूपा कालिका के मधुर दैन्य वचनविन्यास में दिया भोज्य भुक्त्वा सा सकलं देवि पुनर्देहीतिवादिनी

सब खा गयी और पुनः दी पुनः दी ऐसा बोलने लगी और छण भर में कोला सुर के कोष, हाथी, घोड़ा, आयुध रथ बन्धु बान्धव सबको निगल गयी विश्व ग्रासिनी कालिका

कोषं हयं हस्तिनञ्च रथं सैन्यं सबान्धवम्,
क्षणेन बुभुजे काली कोलासुरमहाबलम्।। (योगिनी तन्त्रे)

विष्णु की परेशानी कोलासुर बन गया था ऐसे ही दारुक नाम का राक्षस शिव को परेशान करने लगा तब कालिका ने उसका संहार किया।

भगवती का एक नाम क्षेत्रपाल समर्चिता है

शिव ने काली का सृजन 'दारुक' दैत्य का संहार करने के लिए किया था दारुक का वध करने के बाद भी काली को क्रोधाग्नि शान्त न हुई तो शिव जी ने क्रोध शान्त करने के लिए छोटे शिशु का रूप धारण किया जो बड़े जोरों से क्रन्दन कर रहा था काली ने शिशु को स्तनपान कराया। इस प्रकार शिशु दुग्ध के साथ ही उनका क्रोध भी पी लिया। शिशु जो शिव का प्रतिरूप था क्षेत्रपाल कहलाता है क्षेत्र का शाब्दिक अर्थ इस प्रकार है क्षेत्र उस स्थान को कहते है जहाँ बलि दी जाती है पाल का अर्थ रक्षा करने वाला। अतः क्षेत्रपाल शिव के द्वारा पूज्या क्षेत्रपाल समर्चिता कहलायी

महकाली प्रलयकाल से सम्बद्ध रहती है शक्तिविहीन मृत विश्व के उपरिष्यत् अधिरूढ है यही शवरूप महादेव हृदयोपरि संस्थित है शत्रु संहारक विभिषिका रूप होती है अतः काली भयावह प्रतीत होती है भीषणता का दिग्दर्शन विकट अट्टहास के द्वारा अभिव्यक्त करती है बलहीन विश्व को निरस्त कर मन्द मुस्कान करती है। उसकी बलहीनता पर हास्य करती है चतुरस्र पूर्णता का द्योतक है अतएव चार भुजा पूर्णत्व का अवबोधक है वह निर्भय है उसका आक्रमण और आश्रयण करने वाला निर्भय होता है अभयमुद्रा अलङ्कृता भगवती, वरमुद्रा समलङ्कृता भगवती

सव्ये (वामभाग में) खड्गमुण्डकरा
दक्षिण भाग में वरा भयकरा
खड्गमुण्डकरा सव्ये कराली प्रलयङ्करी।
वराभय कराऽसव्ये काली कैवल्यदायिनी।।

एक ओर वाम भाग में अनृत और मृत्युरुप और दक्षिण भाग में सत्य ऋतु और अजयअमृत रूपा है।

संसार जन्य सुख स्वल्पावधिक है भगवती निरवबधिक महासुख है जीन्ति और मृत दोनों का आधार वही है मृतप्राणियों का एकमात्र सहारा है यही द्योतन करने के लिए भगवती ने मुण्डमाला पहनी है विश्व ही ब्रह्म रूपा भगवती का आवरण है प्रलय में सबके लीन होने पर भगवती नग्न ही रहती है।

काली दिगम्बरी देवी जगदमोहन कारिणी (योगिनी तन्त्र)

सारे विश्व के श्माशान के तरने पर उस तामसी भामती काली का विकास होता है।

शवांरूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रा हसन्मुखीम्
चतुर्भुजा खड्गमुण्ड वरा भयकरा शिवाम्
मुण्डमाला धरां देवीं ललज्जिह्वा दिगम्बराम्,
एवं सञ्चिन्तयेत् काली श्मशानालय वासिनीम्। (शाक्त प्रमोद काली तन्त्रे)

कोकिल निक्वाण कोमलालाप अर्थात कोकिल की तरह भक्त हृदयोद्यान में कूजती काली

कोयल की कूक उठी
दिल में हूक उठी

मधुर कलरव करके मानो कालिका भक्त जनो के चित्तकर्षण का कार्य भी करती है

आलिङ्ग्य् भद्रकाली मसीनस्त त्रहरिशिलाश्यामम्
मनसि महाकालो में विहस्तु मधुपान विभ्रमन्नेत्र।। (ललितास्तव रत्नम)

महाकाल कामदामहाकाली को अलिङ्गन किये हुए मधुपान से घूर्णित नयन ऐसा रूप मेरे मन में प्रस्फुरित हो

यह ध्यान निखिलागमाचार्य साक्षात् चक्रवर्ती अनसूयागर्भ सम्भूत भगवान दुर्वासा क्रोध भट्टारक का है

शान्ता धवलवर्णाभा मोक्ष धर्म प्रकल्पने
स्त्री वश्ये राजवश्ये च जन वश्ये च पाटला
पीता धनस्य सम्पत्तौ कृष्णा मरणिकर्माणि
बभुविद्वेशणे प्रोक्ता श्रृंङ्गारे पाटलाकृति
सर्व वर्णा सर्व लाभे ज्योर्तिमयी परमिति।। (स्मृति)

मुक्ति प्रदान करते समय श्वेत रङ्ग शान्त रूप जब स्त्री, राजाओं, मानवों में नियन्त्रण करती है तो रक्त वर्ण होकर धन सम्पत्ति विषय में पीत था केसरिया संहार या मरण काल न काला वर्ण शत्रुरूप में धूम्र और श्रृंङ्गार के समय गुलाबी रंङ्ग ज्योतिरुप से सर्वकामप्रद है माँ काली काली नही है कार्य वशाते् रङ्ग धारण करती है

लोग कहे वो काली काली मन न
कहै वो काली रे (कमलकान्ता)

श्रुति स्मृति पुराणों का जहाँ विरोध दिखता है वहाँ श्रौत प्रमाण प्रबल होता है।

श्रुति स्मृति पुराणानां विरोधो यत्र दृश्यते
तत्र श्रौतं प्रमाणं स्यात् तयोर्द्वैधे स्मृतिर्वरा
राग द्वेषेपि को ज्ञानाग्नि में भस्म करना ही मत्स्य भर्जन है

प्रकृति का पुरुष के सङ्ग शयन ही पञ्चम् मकार है स्त्री पुरुष के संयोग से ही हम सब जायमान है।

स्त्रिया सह शेते सः उद्गीथः
प्रति स्त्रीं सह शेते स प्रतिहारः
तद्वाम देव्यं मिथुने प्रोतम् (छान्दोग्योपनिषद्)

स्त्री के साथ पुरुष का शयन उद्गीथ (ॐ) है–स्त्री के संग पुरुष का शयन उद्गीथ है
अपनी अनेक पत्नियों में से प्रत्येक के साथ शयन है वह प्रतिहार है
सहशयनमेकपर्थङ्क गमनं स उद्गीथ :

यह वामदेव्यसाम मिथुन में ओत प्रोत है स्मृतियों का निषेध वचन इस बामदे यों उपासना से अन्यत्र ही लागू होते है।

कालं गच्छति तन्निधनम् (छान्दोग्य)
मिथुन के द्वारा जो समय व्यतीत करता है वह निधन है (श्रीशंङ्कराचार्य)
कालं गच्छित मैथुनेन पारं समाहित गच्छित तन्निधनम्
यस्तन्निधनं रात्रौ गृहे निधानात् (श्रीशंङ्कराचार्य)

वह रात्री में सम्पूर्ण प्राणि वर्ग को अपने गृह में निहित करता है इसलिए निधन है
योषा वावं गौतमाग्निस्तस्या उपस्थ एव समिद्यदुपमन्त्रयते स धूमो योनिरर्चिर्यदन्त :
करोति तेडङ्कारा अभिनन्दा विस्फुलिङ्गा (छान्दोग्य)

हे गौतम! स्त्री ही अग्नि है उसका उपस्थ ही समिध् है पुरूष जो उपमन्त्रण करता है वह धूम है योनि ज्वाला तथा जो भीतर की ओर करता है वह अङ्गारे है उससे जो सुख होता है वह विस्फुलिङ्ग है योषा वाव गौतमाग्निः। तस्या उपस्थ एवं समित तेन हि सा पुत्राधुत्पादनाय समिध्यते यदुपमन्त्र यते स धूमः स्त्रीसम्भवादुपमन्त्रवस्य। योनिरर्चिर्लोहितत्वात्। यदन्तः करोति तेडङ्गारा अग्निसबन्धात्। अभिनन्दाः सुखतलवा विस्फुलिङ्ग क्षुद्रत्वात्। (श्री शंङ्कराचार्य भाष्य)

हे गौतम! स्त्री ही अग्नि है उसका उपस्थ ही समिध है क्योंकि उससे पुत्रादि उत्पमन्त्रण करता है वह धूम है क्योंकि उपमन्त्रण की प्रवृत्ति स्त्री से ही होती है लोहितवर्ण होने के कारण योनि ज्वाला है

तथा जो भीतर की ओर करता है। वह अग्नि के सम्बन्ध के कारण अङ्गारे है और अभिनन्द सुख के कणमात्र क्षुद्र होने के कारण विस्फुलिङ्ग हैं।

श्रुति सभी प्रकरणादि से बलवती है जैमिनी ने अन्य की अपेक्षाश्रुति को बलवान माना श्रुतिलिङ वाक्य प्रकारण स्थान समाख्यानं समवाय पारदौर्बल्यमर्थ विप्रकर्षात् श्रुति र्स्वानपेक्षया स्वतन्त्र प्रमाण है

धर्माऽविरूद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्ष (गीता)
प्रियया भार्यया संपरिष्वक्ते नान्तरं किञ्चन वेद न बाह्यम् (श्रुति)

स्त्री पुरूष मिलन जीवात्मा परमात्मा मिलन रूप में प्रस्तुत करती हुई श्रुति

हे अनमिते
तू दुर्गा, दुर्जन हन्त्री है
दुर्गमिव रक्षयति स्वभक्तान्
दुर्ग की तरह अपने भक्तो का रक्षण करती है

ब्रह्म सच्चिदानन्दरूपं तच्चरयितुं प्रापयितुं शीलमस्याः सा ब्रह्मचारिणी ब्रह्मस्वरूप पदेत्यर्थः

ब्रह्म प्राप्ति के लिए यत्नशीला किंवा ब्रह्म विद्या रूपा किंवा ब्रह्मस्वरूपा ही ब्रह्मचारिणी है

कूष्माण्डेति कुत्सित उष्मासन्तापस्ताप तयरूपो यस्मिन्संसारे अण्डे मासपेश्या मुदररूपायां यस्याः

कुत्सित उपमा–त्रिविधतापयुक्त संसार भक्षण करने वाली शक्ति कुष्माण्डा देवी कात्यायनीति देवकार्यार्थं कात्यायनाश्र में आविर्भूता तेन कन्यात्वेन स्वीकृतेति कात्यानीति नाम भगवत्याः देवकार्य सम्पादनार्थ कन्यारूप से कात्यायन के आश्रम में कात्यायनी रूप से अवतीर्ण हुई

अष्टाङ्ग कर्मोपासना आदि के गम्य अर्थात् अति क्लेशतर तप से अधिगमन उस तत्व को दुर्गा कहते है।

दुःखेनाष्टाङ्ग योगसर्वकर्मोपासनारूपेण
क्लेशेन गम्यते प्राप्यते या सा दुर्गा

जननी होने से सातिशय करूणावती भक्तों के अपराध को क्षमा करती हुई क्षमा देवी क्षमा भक्तानामन्येषां वा सर्वानपराधान्क्षमते सहते जननी त्वात्सतिशयकारूण्यवती क्षमैत्युच्यते

एषा शैवी वैष्णवी च
यह शैवी और वैष्णवी दोनो है

मङ्गला–मङ्ग जननमरणादिरूपं सर्पण भक्तानां लाति गृहाति् नाश्यति सा मोक्ष प्रदामङ्गलेच्युच्यते कलयति भक्षयति सर्वमेतत्प्रलयकाले इति काली

प्रलयकाल मे सर्व चैत्य जड़ वर्ग का संलयन कर चिति संज्ञान रूप से अनस्थित रहती है यह भी तारण रूप मारण चिकित्सा है

ऐ पतितोद्धारिणि नरक निवारिणि शङ्करवक्ष विहारिणी कालिके

हे प्रेमपरिप्लुताक्षी

युगल कामेश्वरकाल और कामेश्वरी काली परस्पर घुलमिल गये यो तादात्म्यापन्न एकमेक हो गये युगल रस की लीनता युगल में है एक ही अखण्ड अद्वय निर्द्वय तत्व दो रूपो में प्रतीत होता है।

परमात्मा हि स्वातत्मानमेव स्त्रीपुंमयं कृत्वा मिथुन रूपेण विहरेत

एष देवोऽनया देव्या नित्यं क्रीडारसोत्सुकः

यह महाकाल माहकाली के सङ्ग क्रीड़ा के लिए समुत्सुक है।

आत्मैवैषा शक्तिः

आत्मा ही महाशक्ति काली है।

वामा विश्वस्य वमनात

ज्येष्ठा शिवमयी यतः

द्रावयित्री रूजं रौद्री

दोग्ध्री चाखिलकर्मणाम् (नटनानन्द भाष्य काम कल पर)

वामा विश्व को वमन अर्थात् उद्‌गीर्ण करती है ज्येष्ठा शिवमयी ज्ञानमयी रहती है रौद्री (रूजं) दुःख को भगाती है और निखिल कर्मफल का दोहन करती है यह रौद्री सर्व रोग विद्राविणी शक्ति है। ज्येष्ठा सर्व मङ्गलकारिणी है।

सा स्फुरत्ता महासत्ता

स्फुरत्ता या विमर्श ही सत्ता है जिसके बिना सत्य का भी अनुसन्धान अशक्य है

स्फुरत्तामात्मनः पश्येत्

आत्मिका काली रूप आत्म स्फुरण को ध्यान करों।

महामौन निष्कम्प के अनन्तर गुञ्जित विश्व कलरवरूपा या किंवा साम्यावस्था के पश्चात् नाना विचित्रतर वैषम्य का उन्मेष

जैसे कौकिल की काकली और काक की कर्ण भेदी कलरव भी स्पन्दन नन्दन विशेष है वायु शब्द का वाहन है सृष्टि शब्दपूर्विका है

कल्लोल कैसा विचित्र है ओङ्कार सा क्रिङ्कार का मधुर आदि स्पन्दन, विविध विचित्र रागों का अलापन सुरों का अनुरणन प्रतिध्वनित चाञ्चल्य विक्षोभ स्पन्द शब्द ही है व्यवहार बैखरी विग्रह रूप है

वेदशब्देभ्य एवादौ संस्थाश्च निर्ममे

आदि में वेदशब्दो से ही सृष्टि हुई ।

बीजस्थ प्रसुप्त मीन शक्ति है स्तब्धता का नशा मानों क्रय और शक्ति चञ्चल हो उठती है चिचलिषति–चलना चाहती है यही बीज की उच्छून (Swelling) दशा है अभी अङ्कुरोद्‌गम नही हुआ है सुषुप्ति भंङ्ग है पर जागरण नही हुआ सुषुप्ति और जागरण की सन्धि उच्छूनता है।

मीनशक्ति चञ्चल हो तो बीज के मध्य उकारतनुधृक (उकाराकृति बाराह की सूअर रूपा) तेजस्वती वाराही शक्ति का उद्रेक होता है।

प्रतिबन्ध बाधा लीलापूर्वक विदूरित हो जाता है फिर अङ्कुर की निष्पत्ति हो जाती है

बिन्दु वामनावतार है और नाद नरसिंहा अवतार एक में सर्व संग्रहीत और एक में सर्व वितान प्रसरण प्रधावन है

स्वाहा–स्वस्य असमन्तात् हान इति स्वाहा, सुष्ठुहुतमस्तु

पूर्ण अपना समर्पण "ऐ माँ तुम अग्निबल्लभा स्वाहा हों"

(1) वर्णानां विश्वचित्रे निलयविलययो

स्थानमेवेति कृष्णा

वर्णैर्वाऽवर्णनीया कतियतितितिभिवऽप्यि निर्देश्य वर्णा

वर्णानांवापटेऽस्मिन कलनफलनयोः स्थान मे वेति शुक्लो

योऽभास्यत्वेऽपि वर्णैः पटपटुफलने भासकः स्वप्रकाशः।। (जपसूत्रम्)

अन्वयः–विश्वचित्रे (निखिल विश्व के चित्रपट में)

वर्णानां (समस्त वर्णों के) निलय विलययोः (निलय और विलय का) स्थान (स्थानाभूत) एव (ही) वह श्री काली है इति (इसलिए) कृष्णवर्ण काली है। वा (अथवा) वर्णैः (वर्णो द्वारा वह अवणर्पनीया वणनीय नहीं है) कति + यति + ततिभिः वाऽपि अनिर्देश्य वर्णो (कति–कितने, यति जितने, तति उतने इत्यादि के द्वारा उनका निर्देश नही हो सकता। क्या इसलिए वे श्यामा है ?) अस्मिन पटे वा वर्णानां

कलनफलनयोः स्थानम् एव इति (अथवा इस पट पर वर्णो के कलन और फलन का स्थान होने के कारण क्या काली हैं ?) शुक्लः स्वप्रकाशः यः अभास्यत्वे अपि वर्णै पटपटुफलने भासकः (काली मे शुक्ल स्व प्रकाश है, जो अभास्य होते हुए भी विश्वपट पर वर्णो द्वारा पटुरूप से फलन या चित्र विस्तार का भासक है)

वर्ण्यन्ते निरुप्यन्ते ते वर्णाः वर्णन या निरुपण वर्ण के कार्य हैं वर्णीया वरीतुमर्ह स्वीकर्तुं योग्या गणा कर्माणि तान् तानि च दृष्ट्वा व्रीयन्ते ते वर्णा

गुण कर्म देखकर जो वरण करे वह वर्ण है आवृणोति आश्रयम–शुक्लादि वर्ण द्रव्य का आश्रय लेते विश्व के चित्र पट पर अगणित वर्णो का निलय विलय मुण्डमालिनि में है वर्ण के द्वारा **अवर्णनीया**–डित्थः डवित्थः–निर्देष्टुं शक्य है निर्देश्य है अयं डित्थः, अयं डित्थः, डिव्थः कांष्ठमयो हस्ती (काष्ठ की हाथी डित्थ है ऽवित्थ (काष्ठमृग–तन्मयोमृगः) शक्ति ग्रह शब्द की जाती ग्रह शब्द की जाती बाह्मणादि के द्वारा शब्द प्रवृत्ति होती है पर जाती हीन, गुणों के आधार पर शब्द प्रवृत्ति होती है नीलमुत्पलम्

नील आदिशब्द के आधार गुण पर क्रियावाचक लावकः पावकः इत्यादि रूप से शब्द प्रवृत्ति परन्तु रूप, जाति, गुण, क्रिया रहित ब्रह्मस्व रूपिणी श्यामाँ दुरभिलाप्य है अवर्णनीया है।

विश्व भुवन कल्लोल एक अगाध दुरवगाह महाअज्ञात में उठती है और पुनः स्खलित हो जाती है इतनी, कितनी जितनी परिच्छेद शून्य इयत्ता अनवछिन्न माँ है एतदर्थ क्या रम्यनील वर्णा श्याया माँ है पद तल में दुग्धेन्दु धवल शिव, काला और धवल विश्वचित्रपट के कलन फलन में सभी वर्णो का आधार है अन्य निरपेक्ष ज्योतिषामपि ज्योति, ज्योति की ज्योति (इन्द्रनीलमणि प्रभा) नीलज्योतिरूपा सववर्ण की ग्रासिका समापिका निः शेष तत्व कवलिनी भगवती ही है।

लाख छुपाते हो लेकिन छुपकर भी मस्तूर नही
तुम अजब चीज हो नजदीक नही दूर नही

कितना भी गोपन करो सत्ता अस्तित्व छुपता नही, वह क्या नजदीक और क्या दूर

(2) **ये ग्राह्यश्चित्रवर्णा ग्रहणपरिचया मानसे बिम्बितास्ते**
छायाचित्राणि साक्षाद् दधति जहति काः शक्तयः के च कायाः ।
गम्भीरागोचरोम्भस्तिमिर निबिडता याऽऽदिमा सा क्षपा चेत,
स्पन्दैस्तस्याः प्रवृत्तैः किरणविकिरणैर्भाति भासा स्वयाऽहः ।।

अन्वय–ये ग्रहण परिचयाः चित्रवर्णाः ग्राह्या ते मानसे बिम्बताः (जो शब्द स्पर्श आदि प्रत्यक्ष ग्रहण मात्र से हमारे परिचय मे आते हैं, वे ग्राह्यचित्रवर्ण हमारे मन में बिम्बित होते हैं) काः शक्तयः छाया चित्राणि साक्षाद् दघति जहति चर कौन सी शक्ति इन छायाचित्रो को साक्षात धारण करती है अर्थात् विजृम्भित करती है, और फिर उनका संवरण भी कर लेती है।)

के च कायाः (यदि इन छायाचित्रो के पीछे कोई काया है, तो कौन सी है) या आदिमा गम्भीर + + अगोचर + अम्भः + तिमिर + निबिडता का क्षपा चेत (गम्भीर, अगोचर पयोराषि में जो आदिम अन्धकार है वह रात्रि है) तस्याः स्पन्दै प्रवृतैः किरणविकिरणैः स्वया भसा अहः भाते (उस रात्री के स्पन्दो द्वारा प्रवृत्त किरण विकिरणों से उसकी अपनी ज्योति से दिन भासित होता है)

रूपरस शब्द स्पर्शगन्ध कामना, वेदना, घी, हीं, विचिकित्सा छायावाद गतागति चक्रमण करते है इन कल्पित में कौन अधिष्ठान भूता होकर सत्ता स्फूर्ति दे रही है क्योंकि अधिष्ठान (अधितिष्ठन्ति इमानि भूतानि यस्मिन् जिसमें सब भूत प्रतिष्ठित हो) की इदन्ता कल्पित में प्रस्फुरित होती है

कैसे अचित्य शक्तिरूपिणी महाकाली इन सब चित्रो आकृत्तियों का आकलन करती है सजा देती है पुनः प्रमोष पोछ देती है उनका यह रस रहस्य प्रच्छन्न गुप्त विक्रीडन उनको दुरवगाह दुर्गम्य गम्भीर तमिस्रा रूप कालावर्ण अगोचर अप्रवक्र्य रात्री रूप परन्तु वे स्कृद् दिवा रूपिणी है

(3) **सत्यास्यं या पिधाय प्रलयघन रूचिश्चिरदघनेन्दु प्रकाशं,**
मायाघोरेन्द्रजालञ्च चिकुरपटलैस्तन्वती या कराली।
नानाऽसृगबीजकूटं प्रकटित रसना जक्षती सृज्यमानं,
तत्सत्यं बाधमुक्तं ह्रदयनभसि नः कुर्व्वती सा सुहासा।। (जपसूत्रम्)

अन्वय–प्रलय घनरूचिः (प्रलयघन की भाँति) या काली (जो मां काली) चिद्घनेन्दुप्रकाशं (चिद्धन में इन्दु के प्रकाश सदृश अपनी) सत्यास्यं (सत्य रूप मुखछवि को) चिकुरपटलैः (एलायित केशपास द्वारा) मायाघोरेन्द्र जालं (माया का घोर इन्द्रजाल) तन्वती (फैलाती रहती है) नानाऽसृगबीजकूटं (रक्तबीज के कूट अथवा समुद्र को) जक्षती (ग्रस लेती है) नः (हमारे) 'ह्रदयन्भसि'(ह्रदय के आकाश में) सा (वह) उदित होकर तत् सत्य (उस सत्य को) बाधमुक्तं (बाधारहित) कुर्वती (कर देती है) अतः वे सुहासा (मुख पर मृदु–यदु हास्य वाली है।)

हे विगलित चिकुरे
मै वह जुल्फ सा न परवर जिसे खौफ है हवा का
मै वह काकुले परेशाँ जो सँवर गई हवा से!

मै वह सुसज्जित केश नही हूँ जो हवा के झोंको से भयाक्रान्त रहता है । बल्कि मै तो वह बिगड़ा हुआ बाल हूँ जिसे वायु के झोक ही सँवार जाते है।

कच् विलोकि अलि–अवलि लजाहीं।

माँ काली ने अपनी एलायित बिखरी हुई कुन्तलराशि दशों दिशाओं में संञ्चालित करके मानो माया के घोर इन्द्रजाल का विस्तार किया। और करली का स्वाँग रचा है उनके इस एलायित केशपाश का यर्थाथ रहस्य क्या है इसके द्वारा उन्होंने अपने वास्तविक मुख छवि को उस परम सुन्दर आननका संगोपन कर रक्खा है उनका वास्तविक रूप सब की दृष्टि के अन्तराल में रह जाता है कपाल कामिनी को देखिऐं लोलजिह्वा! धन कृष्ण केशपाश के साथ ही यह रक्त मानो मेघ के पास बिजली जैसी शोभा पाती है वे इन्द्र जाल से शत कोटि रक्तबीजों की स्वयं ही सृष्टि करती है (जिस रक्त बीज का स्वरूप है दुष्पूर तृष्णा) जिनता ही सोचा है शायद अब तृष्णा मिट जायेगी फिर देखता हूँ वह सिर उठाकर खड़ी हो रही है फिर काली कोप का छल करके परम करूणा से अपनी लालजिह्वा द्वारा उस रक्तबीज के कूट अथव समूह अथवा पेड़ को ग्रस लेती है नही तो किसी काल में इस नित्य तरूणायमान तृष्णा का तर्पण हो सकता था। लोल रसना इन्द्रजाला द्वारा सृष्ट असंख्य कामनाओं के निधन या संहार को ही समझाती है इस प्रकार उनकी सृष्टि या संहार का संकेत. दोनों संकेत पकड पाते है वह परम रमणीय मुखच्छवि हमारी दृष्टि के अन्तराल में ही रह जाती है उनके मुख पर मृदु मृदु हास्य है।

(4) **नैष्पन्धे स्पन्द आद्यश्चिदमलगगनध्वान्त घोराम्बुदः किं,**
शश्वन्मौनं विलोड्य ध्वनिशत सततध्मात–नादस्ततः किम्।
ध्वान्तध्वसाय सान्द्रा स्फुरति च परमा

चिन्नभश्चन्द्रिका किं,
मान्द्यं जीमूतमन्द्रे भजति भवमृतेस्तुर्य
नादस्ततः किम्।। (जपसूत्रम्)

अन्वय–चिदमलगगनध्वात घोराम्बुदः (निर्मल आकाश में घोर काला मेघ) नैष्पन्धे (स्पन्दहीन स्वरूप के बीच) आद्यः स्पन्द किम् (क्या आदिम स्पन्द है) ततः(और वहाँ) शश्वन्मौनं (शाश्वत मौन को) विलोड्य (विलोडित करके) किं (क्या) ध्वनिशत सततध्मातनाद (सैकड़ों ध्वनियों से निरन्तर ध्मात विस्तृत नाद के रूप में प्रकट है ?) सान्द्रा (सघन) परमा (परम) चिन्नमश्चिन्द्रका (चिदाकाश की चन्द्रिका के रूप में)

ध्वान्तध्वंसाय (अन्धकार के नाश का लिए) किं (क्या) स्फुरति (स्फुरित होती हैं) ततःकिं जीमूतमन्द्रे मान्द्यं भजति भवमृते तुर्यनादः (तब फिर मेघचन्द्र के मन्द हो जाने पर भव अर्थात् संसरण की मृत्यु अर्थात् नाश हो जाने पर तुरीय नाद क्या नही रहता) आदि विक्षोभ आदिम स्पन्दन निर्मल चिदाकाश में जा

काली घनघटा का आविर्भाव है यह क्या उस स्पन्दहीन स्वरूपके बीच आदिम स्पन्दन के घनीभाव को सूचित करता है जो पूर्ण है उनमें कैसे कामना का उदय होता है जो निष्पन्द है उनमे कैसे स्पन्द का अर्विभाव होता है क्या यह पहेली चिरकाल से दुर्बोध्य होकर होने के कारण क्या वे काली है ? सृष्टि के मूल में जितने तत्व है जितने बीज है सभी का वर्णन उनसे है क्या इसलिए उस स्पन्द ने महावृष या वर्षणकारी मेघ का रूप धारण किया तभी क्या हमारी उस माँ ने घोर कृष्ण अम्बुद से अपनी प्रतिभा को गढ़ा है और कुछ शाश्वत के अन्तराल में ही रह जाता कराली को देखिए लेलिजिह्वा घन कृष्ण केशपाश के साथ ही यह रक्तरसना मानो मेघ के पास बिजली जैसी शोभा पाती है वे इन्द्रजाल से शतकोटि रक्तबीजों की स्वयं ही सृष्टि करती है उस नाद ने शतकोटि उर्मियों का विस्तार कर वाड्मय विश्वरचना की है अन्त में संवरण नाद में सब कुछ का संवरण तथा लय किया है क्या वे इस काले महामेघ की घटा अन्त में विलीन कर परमचिदपूर्ण चिद्गगन चन्द्रिका के रूप में प्रकाश नही पाती ? उसी प्रकार जोकभीगाढ़ कमी घोर मेघचन्द्र है उसे मन्दीभूत कर अन्त में अपने विश्वोतर अभयधाम में वही तूर्यनाद नही सुनाती है

उस तुरीयनाद स्थूल सूक्ष्म कारण सब कुछ का अवसान होता है महाभीति कर पुनः पुनः भव का संसरण का मरण हो जाता है गतागति चक रूक जाता है इस महानाद के विभिन्न गर्जन आलोडन के पीछे भी वही है शान्त प्रपचोपसम नाद–

(5) **क्षिप्येर्विश्वं विमृश्य त्वदितरदिव**
यत स्थापयेर्यत स्वभित्तौ,
तच्च स्वात्मेति विद्याः प्रमिति पदमितं वस्तु
संख्यापयेर्यत्।

स्वात्मैक्यं च प्रययादिक भिव गमयेदर्पणा–स्यं स्वबिम्बं,
सातुं स्पन्दं नदेस्त्वं तव कलनकृतौ
पञ्चधा नित्यकालिः।।

अन्वय–हे नित्यकालि, त्वं तव कलनकृतौ पञ्चधा (हे नित्यकाली तुम अपने कलन व्यापार में पञ्चा हो) यत् विश्वं त्वत् इतरत इव विपृश्य क्षिप्येः, स्व भित्तौ यत् स्थापयेः (जिस विश्व को अपने से भिन्नवत् विमर्श करके उछलती हो और स्वभित्ति में स्थापित भी रखती हो–यह क्षेपण है) तत् च 'स्वात्मा' इति विद्याः (उसे 'स्वात्मा' ऐसा समझती हो यह ज्ञान है) यत् प्रमितिपदमितं वस्तु संख्यापयेः (जिस विश्व को 'प्रमिति' पदमित अर्थात् केवल मात्र बोधभास्य वस्तु के रूप में संख्यान करती हो यह संख्यान हुआ) स्वात्मैक्य च प्रमेय + आदिकमिव दर्पणास्य स्वबिम्ब गमयेः (दर्पण स्थित स्वबिम्ब को प्रमेयादि की भाँति स्वात्मैक्य को प्राप्त कराती हो य गमन) स्पन्दं सातुं नदेः (स्पन्दका अवसान करने के लिए तुम नाद करती हों यह नाद है।)

हे मातः! नित्यकाली! तुम परम तत्व के साथ समरसा अभिन्ना शक्ति स्वरूपिणी हो! तुम्हारे अन्य क्या था या है जिसे इस विश्व कन्दुक रूप में उछाल उछाल कर खेल रही हो ? मानों वह और कुछ है तुम नहीं हो ऐसा विचार तुम्हे क्यों होता है ? इस प्रकार जिसे उछाल कर फेक देती हो उसे क्या बिल्कुल वस्तुहीन सर्वस्वहीन बनाकर अपने अंक से नितान्त दूर फेंक देती हो उसे क्या अपनी भित्ति में स्थापन करके नही रखती हो मानो आसमान में गुड्डी उड़ा रही हो किन्तु डोर रखती हो अपने पास। उन लाख लाख गुड्डियों में कोई एक कट जाये जो वे भी तुम्हारे गोद में लौट आती है जो उड़ता है वह भले ही आत्मविस्मृत हो वह नही जानता कौन सूत्रधार उसे उड़ा रहा है किन्तु तुम तो उसे नही भूलती हो बोधरूप दर्पण में जो कुछ प्रस्फुटित होता है उसे तुम्ही तो रूप मान इत्यादि दिया करती हो। जब जब दर्पण को तोड़कर प्रतिबिम्ब को बिम्ब में मिला लेती हो फिर तो वही एक हो सब कुछ को अद्वय रूप में खींच लोगी इसलिए वही स्पन्द का संवरण नाद में अवसान किया करती हो। हे नित्यकाली क्षेपण ज्ञान संख्यान गमन और नाद इन पांच रूपों में तुम ने अपना कलन प्रपञ्चित किया है।

क्षेपाच काली–क्षेपणकर्त्री काली
ज्ञानात् काली–ज्ञान काली
संख्यान संगणनरूपा काली
गजगा अग्रगा गमनशीला काली
कल कलरव निनादिनी काली

गहं शिशु बच्छ अनल अहि धाई, तोहि राखै जननि अरगाई, अर्थात् बलक अङ्गारा पकड़ना चाहता है बिच्छू (सर्पादि) पकड़ना चाहता है पर माँ उसे बचाती है

स्वाधिष्ठान प्रकाशो विमृशति च
कथं स्वामनन्यां स्फुरत्ता
मीशं माया सदाख्यं परमशिवपदे
कञ्चुकाश्चापि कस्मात्।
नाहं नेदं न चोभे न च भवति गिरः
प्रत्ययश्चापि यत्र
तत्र प्रत्येति काली विलसति च मुदा
नित्यकैवल्यतत्वा।।

अन्वय–स्वाधिष्ठान प्रकाशः कथं स्वां अनन्यां स्फुरत्तां विमृशति (तुम्हारा स्वाधिष्ठान–प्रकाशरूप अपनी अनन्या अर्थात् अभिन्ना स्फूरत्ता का विमर्श कैसे करता है, अर्थात तुम मैं, दृष्ट–द्रष्टा इस प्रकार भेदात्मक स्फूर्ति कैसे करता है) परमशिवपदे (हे परं शिव–पदस्वरूपा) सदा + आख्यं ईशं (सदाशिव ईश्वर) मायां (माया) कञ्चुकान (कञ्चुक अर्थात् कोश) (इन सबको) च अपि (भी) कस्मात् (कैसे) (प्रसूति करती हो ?) यत्र न अहं न इदं न च उभे न च गिरः प्रत्ययः च अपि भवति (जहाँ न 'मैं' न 'यह' न ये दोनो रहते है और न ही वाणी का प्रत्यय होता है) तत्र प्रत्येति काली (वहाँ काली प्रत्यय करती है) नित्यकैवल्य रूपा सामोद विलास भी करती है।

माँ–तुम अपने प्रत्यक् चैतन्य में (अधिष्ठान में) द्वैत कलन रूप दृश्य द्रष्टा, दृग–दृश्य इदं, अदस्, एतद्, यह वह यह नाना विविध वैचित्र्योपेत स्फुटन कर रखा है तुमसे भासती से सभी प्रकाशमान हो रहे है तुम अखण्ड शिव पद हो किन्तु सदाशिव, ईश्वर, प्रकृति माया इन कञ्चुक कोश की प्रसूति बनी हो तुम तो विकलेवर कैवल्य रूपा हो भेद-बीज 'साहित्य' तुझमें है तुम्हारे अपरिसीम अगाध रस रहस्य में किसी वाच्य वाचक को गति का अवकाश नही द्वैत नृत्योल्लास रूप कलन से खेला करती हो

रणे चले द्रुतगति गजगरा (श्रीकमलाकान्त)
पर्वताग्रे समाश्रित्य रक्तपानं करिष्यति (योगिनी तन्त्रे)

पर्वत श्रृङ्ग पर अधिरूढ़ होकर रक्तपान करती माँ कालिका

योग निद्रा भग्न होने के अनन्तर कर्ण मल (विष्णु कर्णमलोद्भूतौ–विष्णु कर्ण के मल से उत्पन्न मधु कैटभ)

श्रवण की अल्पता कृपणता ही मल है ब्रह्मा ने योगनिद्रा प्रबोधन के लिए वाग् देवता का स्तवन किया

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वंहि वषट्कारस्वरात्मिका सुधा त्वमक्षरे नित्यं त्रिधा मात्रात्मिका स्थिताऽर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः

विष्णु योगनिद्रा से आच्छन्न है जो मेरी अभिभूतावस्था है वही है विष्णु का योग निद्रा, मेरे क्रमिक विकास ही विष्णु का जागरण है वैष्णवी शक्ति है वही सुप्त है अङ्कुरोद्गमं ही प्रजागर अवस्था है

(6) व्यस्तं खड्गेन वस्तु क्षिपसि यदसकृत्
स्वात्मनो देशकाल
सम्बन्धापे क्षतत्वं जनिमृतिभयदं हंसि
तच्चापि हेयम्।
व्यस्तं मुण्डं कराब्जे कलयसि च गले
मुण्डमालां समस्तां
दृग्भासः वेत्सि दृष्यं गिरसि रसनया
यद् बहिः स्फारनादे।।

अन्वय–व्यस्तं वस्तु यत् असकृत खड्गेन क्षिपसि (हे माता तुम अपने खड्ग से व्यस्त' अर्थात् परिच्छिन्न वस्तु को बार–बार जो खण्ड–खण्ड कर डालती हो) तत् च अपि स्वात्मनः हेयं 'जनिमृतिभयदं' देशकाल सम्बन्धा पेक्षतत्वं हसि (वह भी तुम्हारा अपना ही रूप है जो हेय, जन्म–मृत्यु–भयप्रद है, देशकाल सम्बन्ध का अपेक्षी तत्व है उसे भी तुम छिन्न करती हो) कराब्जे व्यस्त मुण्ड गलेच समस्तां मुण्डमालां कलयसि (कर कमल में एक व्यस्त मुण्ड अर्थात् छिन्न मुण्ड और गले में समस्त मुण्डमाला धारण करती हो) दृश्ययं दृष्भाषा वेत्सि (दृग्य को तुम अपी नेत्रज्योति से जानती हो) यद् वहिः स्फारनादे रसनया गिरसि (जो बाह्य है, उसे स्फारनाद में रसना से निगल जाती हो)

सा काली निरूपाधिशुद्ध निलये शान्ते नरीनृत्यते
कैवल्यं विद्धाति निर्गुणतया द्वैतं मरीमज्यते।
ब्रह्मास्मीत्यवं बोध खड्ग महसा मिथ्या जनीन प्रत्यया
नास्ते ब्रह्मणि सर्वमेव दधती चेच्छिद्यमाना स्वयम्।।

शान्ते निरूपाधि शुद्ध निलये सा काली नरीत्तत्यते वह काली नरीनृत्यते शुद्ध शान्त चैतन्य निलय में नृत्य करती रहती है निर्गुणतया कैवल्यं विदधाति दैतं मरीमृज्यते द्वैत का मार्जन करती रहती है।

ब्रह्मणि सर्वमेव दधति मिथ्याजनीन प्रत्यान ब्रहमाऽस्मीत–अवबोध खड्ग महसा स्वयं चेच्छिद्यमाना आस्ते अपने ब्रह्मरूप में सब कुछ धारण करती हुई ब्रह्मास्मि इस ज्ञान रूपी महान् खड्ग से मिथ्या जनित प्रत्ययों को काटती हुई स्वयं स्थित है

वही कपालेश्वर बल्लभेश्वरी हृदयेश्वरी माँ काली निरूपाधि शुद्ध शान्त चैतन्य निलय में शवशिव के वक्षस्थल पर नटन, गायन रूप प्रणाद करती हुई (शिव हृदय को विक्रीडन मञ्च)रूप से परिणत करती है,

मानो भव्योदयदिव्य भाव मदिरोन्मत्त प्रतीत होती है गुणमयी गुणशोभात्मिक गुणाश्रया और गुणातीता विकलेवर कैवल्य दायिनि माँ श्यामा है, मै ब्रह्म रूप ही हूँ इस अखण्ड ब्रह्मवाक्य की करबाल (खड्ग किंवा असि से एकार्थरूप वाचकत्व ब्रह्माकाराकारित अखण्ड वृत्ति द्वैत का निः शेष परिमार्जक अर्थात द्वैत भ्रम छेदक ही तलवार है विजृम्भित भव प्रत्यय का समूल निरसन खड्ग है) तत्त्वमसि–तुम वह हो इसलिए असिच्छिन्न मुण्डास्थि कदम्ब को विदूरित नही करती हो

जो खण्डित या छिन्न है वह भी समाहृत होता है उनकी अपरिछिन्न अखण्ड अच्छेदय सत्ता में वे सर्वतत्त्वमयी भुक्ति मुक्ति ज्ञान भाक्ति की खानि है

(8) चैतन्ये निष्क्रियेऽसौ शव शिवहृदि या प्रैधते शक्तिरूपा,
या शक्तिश्चेतयित्री चितिरिति गदिता तामृते चिन्मृतेव।
यास्ते तिस्त्रसो लहर्यः कृतिरतिमतयः
सच्चिदानन्दसिन्धौ
ताभिः सद् यत्प्रमेयं प्रमितिरिति चिदा
नन्द उल्लासराशिः

अनन्य–चैतन्ये निष्क्रये शवशिवहृवि या असौ शक्ति रूपा प्रैधते (चैतन्य की निष्क्रिय अवस्था में शव–शिव के हृदय में जो शक्ति प्रकृष्ट रूप में वृद्धि को प्राप्त होती है) सा शक्तिः चेतयित्री चितिः इति गदिता (वह शक्ति चेतना देने वाली है अतः 'चिति' कहलाती है) ताम् ऋते चित् मृता इव (उस शक्ति के बिना चित् मृता जैसी रहती है, अर्थात् चिति नही बनती है) सच्चिदानन्द सिन्धौ या कृति रति मतयः ते तिस्रो लहर्यः (सच्चिदानन्द सिन्धु में कृति, रति, मति रूप जो तुम्हारी तीन लहरियाँ है) ताभिः सत् प्रमेयं ('सत्' उनसे प्रमेय बनता है) चित् प्रमिति (चित् प्रमिति या ज्ञान बनती है आनन्द उल्लासराशिः (और आनन्द उल्लास राशि बनता है)–(चतुर्थ चरण में यत् पाद–पूरक मात्र है)

नित्यकैवल्य (केवलमेव कैवल्यम) केवल आत्मस्वरूप में भी अपरूप विचित्र विलास देखते है पद के अधस्तात् तरूणेन्दु शेखर शवरूप शिव है वे क्या निष्कल निष्क्रिय निरञ्जन अधिष्ठान मात्र है किसी मूर्ति विशेष में बाहु के ऊपर भार देकर सिर को थोड़ा सा उठाये हुए है वक्र भङ्गी में शिर उठाकर तुम्हारे नृत्य, लीला कलन के साक्षी बनते है स्वरुप में रिरंसा के द्वारा दिखा देती हो तुमसे व्यतिरेक कर चित् चित् ही रहता है चिति संज्ञाने पद नही हो पाता, तुम्हारे बिना अश्म भूत स्तब्ध है विलास विकास समुल्लास नही है महोत्साह से चैतन्य अधिष्ठान मे नाचती हो कौन कहता है कि शक्ति दृश्य जड़ चैत्य भोग्या है वह चेतन की भी चेतयित्री चैतन्य निष्पादन कारिणी है व चितिरुपा जगद्व्यापिनी चिति रूपेण कृत्स्नमेतद् व्याव्य स्थिताजगद चिति के बिना शिव शव है मुर्दे के तुल्य है

तुम ही सच्चिदानन्द सिन्धु में तीन लहरियाँ उठाया करती हो ज्ञान, इच्छा, क्रिया

अथ जानाति,इच्छति, करोति आत्मा की चित्प्रधान अभिव्यक्ति नाम है सत्प्रधान अभिव्यक्ति रूप है तथा आनन्द प्रधान अभिव्यति क्रिया है नाम चित् का रूप सत् का क्रिया आनन्द की अभिव्यंजक है

क्रिया की आनन्दभिव्यञ्जकता श्रुतिसिद्धि है
यदा वै सुखं लमते अथ कारोति
नासुखं लब्वा करोति, सुखमेव लब्वा करोति (छान्दोग्य)

जब सुख प्राप्त करता है तब करता है सुख प्राप्त किये बिना नही करता निः सन्देह सुख लाभ करके ही करता है

"यया तदक्षरमधिगम्यते सा परा विद्या," जिससे क्षर रहित अक्षरा का अधिगम हो वह परा ब्रह्मविद्या है।

(9) आनन्दव्योमसान्द्रा त्वमसि शशिकला
निष्कला या तुरीया,
साऽऽद्या नैष्कल्यनित्या कलयसि च कलां
शक्तित्वादिरूपाम्।
उन्मेषे पूर्णिमोमा ध्रुवनिज निलये ऽव्या कृताऽमास्यमेया
व्यक्तौ कायादि'मुख्या': कतिविधकलनास्ते
कला अम्बा कालि।।

अन्वय–अम्ब कालि (हे माता काली) त्वम आन्दव्योम सान्द्रा शशिकला असि (तुम आनन्द व्योम की घनीभूता अवस्था चन्द्र कला हो) या तुरीया निष्कला सा आद्या भी है) नैष्कल्यनित्या शक्तितत्वादि रूपां कलां च कलयसि (नित्यनिष्कला हो फिर भी शक्तितत्वादि रूपा कला का कलन करती हो) उन्मेषे उन्मेष होने पर तुम पूर्णिमाउमा हो) ध्रुव निज निलये अव्याकृता अमा हो) व्यक्तौ अमेया असि (व्यक्त अर्थात् व्याकृति में तुम अमेया हो) कामादि मुख्यः कति विधि कलना : ते कला (तुम्हारी कलाएँ) कामादिरुप से न जाने कितने प्रकार की है

सर्वश्रुति प्रसिद्ध जो आनन्द रूप अकाश है जो सर्व द्वन्द्व का उपरमस्थान है जिसका योग वियोग नही होता उसी आदि आनन्द ब्योम में तुम कैसे अप्राकृत सान्द्र मनोरम शशिकला रूप में उदित हुई ? किस प्रकार तुमने स्वरुपतः नाद बिन्दु कलातीत निष्कला तुरीया परारूपिणी होकर भी शक्तिकला का आकार धारण किया इस इन्दुकला के प्रकाश में क्या तुम्हारी परम अचिन्त्य इच्छा का ही अभिभाव सूचित होता है इसका पूर्णोदय होने पर कला की सम्पूर्णता होने पर तुम पौर्णमासी रूपिणी उमा श्री विद्या या लक्ष्मीरूपिणी अपने गोपन धुव आलय में तुम नित्य अमारूपिणी हो जहाँ समुदित समस्त कलानिचय विलय को प्राप्त होता है

एक ओर उमा दूसरी ओर अमा यह दोनो हुई परम की सीमा इन दो सीमाओं के बीच अ, उ, म, मात्रात्रय से समुदित कामादिकला तुम्हारे कितने ही असंख्य कलन कितने ही विचित्र परिणाम है उनका गणन कौन करता।

(10) ज्योतिर्व्योम्नि स्वकीये किरसि निजकणान्
भास्करा ये महन्तो,
नादज्योतिर्वि लोम्याकलयसि लहरी केन्द्र
सान्द्रांश्च बिन्दून।

धाराधारः स कालः क्रमलवविरही वैन्दवो
यः क्रमेत्
धत्से चोभौ स्वरूपेप्यनवरगहने
काल एवासि काली।।

अन्वय–स्वकीये ज्योतिर्व्योम्नि ये महान्तः भास्करा [तान्] निजकणान् किरसि (अपने ज्योतिर्मय आकाश में तुम अपने कणों को फैलाती हो, जो कि महान् भास्कर के रूप में प्रकाशित हो रहे है। नाद ज्योतिः विलोड्य लहरी : केन्द्र–सान्द्रान विन्दून् च आकलयसि (नादज्योति को स्पन्दित करके तुम नाद लहरियों को और केन्द्र में धनीभूत को सृष्ट करती हो)

ज्योति ब्योम में तुम्हारी ज्योति मानों सहस्त्रों कणों में बिच्छुरित होकर प्रकाश पा रही हैं।

अपने आनन्द ज्योति रूप इस ब्योम को स्पन्दित करके तुम बनती हो 'नाद' की लहरी नाद है असीम और विस्तृत उसी असीम वितत् नाद में परम धनी भाव की सृष्टि करके उस विस्तृत नाद को उसकी चरम सूक्ष्म अवस्था में ले जाकर संकुचित कर तुम बिन्दु रूप धारण करती हो तुम कला कला में लीलायित होती हो।

निज को विवर्तित करती हो। नाद बिन्दु की लहरें कोनों की ओर धावमान है एक बार विस्तार एक बार संकोच धावन में भी तुम्हारी दो धाराएं हे नादरूप में महाकाल, धारा के आधार रूप में वर्तमान यह अक्रम शून्य पारम्पर्य तब भी नही आया। भग्नाशविहीन अर्थात् अखण्ड है वैन्दव रूप में तुम बिन्दु हो क्रम एवं अंशरूप धारण करती हो।

पहले के प्रतीक रूप में देखता है तुम्हारे पदतल में स्वयं महाकाल को और द्वितीयतः मुण्डमाला मेखला में देखता हूँ तुम्हारी वैन्दवी मूर्ति हो।

"नो मन्त्रैर्मन्त्रितं तद् यतिततिपटुनी यन्त्र तन्त्रे न तत्र,
नो ध्यानं तच्च धत्ते चिदपिनतु चितिर्निर्विकल्पे समाधौ।
शान्तातीतं च शान्ते हर हर दयिते चण्डमुण्डौपशूयौ
रून्धानौस्तः प्रपित्सुं स्वयमिह वृणुया यदवरेण्यं शरण्ये।।

अन्वयः– शान्तातीत यत् च वरेण्यं तत् मन्त्रे नो मन्त्रितम् (जो शान्तातीत वरेण्य तत्व है वह मन्त्रो से मन्त्रित अर्थात् मन्त्रों के अधीन नही है) यतितति पटुनी यन्त्र तन्त्रे तत्र न यति अर्थात् यमन और तति अर्थात् तनन में पटु या कुशल वहाँ समर्थ नही है ध्यान च तत् नो धत्ते (ध्यान उनको धारण नही करता। अर्थात् ध्यान का अविषय) निर्विकल्पे समाधौचित अपि न तु चिति (निर्विकल्प समाधि में उस तत्व के विषय में चिति नही बन सकती ज्ञान भी उसका चयन नही कर सकता है

हेशान्ते शरण्ये हरदयिते यौ चण्डमुण्डौ पशू प्रपित्सुं रून्धानौस्तः (तौ) हर चण्डमुण्ड नाम के दो पशु प्रपत्ति के इच्छुक का पथ रोक रहे है उनका तुम हरण करो) स्वयम् इह वृणुया (उस प्रपित्सु का स्वयं वरण करो

क्या बुद्धि के तेराजू पर हिमालय तौलों गे
बुद्धि की हैसियत ही क्या है अचिन्त्यामों के विषय में

षड्गयोगन्न तु नैव शुद्धं,
मनोविनाशान्न तु नैव शुद्धम्।

गुरूपदेशान्न तु नैव शुद्धंः
स्वयं च तत्वं स्वयमेव शुद्धम्।। (अवधूत गीता)

क्या सागर को नापेगा लहरो का पाँव
मनन त्राण रूप मन्त्र तन्यते विस्तार्यते ज्ञान मनेन इति तन्त्रम्

मन्त्राधीना होकर भी तुम सर्वमन्देश्वरी हो किस मूल मन्त्र शूल से अपने को मन्त्रित किया हैं। तुम तो सबकी मूल मन्त्री हो अपनी अमहिमा से ध्रुवा स्थिता हो। तुम्हारा चालक कौन संयमन कुशल यन्त्र चक्र है। नित्यस्वतन्त्रा तुम्हे कौन तायन (विस्तार) में निपुण तन्त्र पाशडकुशतीत गति पद्धति सिखाएगा। तुम नित्य मुक्त केशीहो अतः किस ध्यान में तुम्हारी धारणा प्राप्त होती है तदयेच्छत् शान्त आत्मनि–वह निर्विकल्प (शान्त आत्मनि) हवन होने पर तुम कहती हो मै शान्तातीता हूँ। तुम्हारा पार अवधि कहाँ है ? उपाय भी क्या है। प्रपनार्तिहरा हो तुम। तुम्हारे इन लोल चरणों में शरण लेने का सोचकर जो मन के गहन में लाल जवा खोजकर है उसके पथ में तुमने कण्टक स्वरूप चण्ड मुण्ड महापशु रख दिये है वह पशु ममतावर्त में मोहगर्त में धूमकर मरता है हे शरणा गतिपलिके –तुम्हारे बिना कौन कूल (किनारा) दिख जायेगा इस अकूल में

ह्रद्याद्या या शयाना दहरसु विपुला मानमेयाद दविष्ठा
हृल्लेखा या तनिष्ठा जगदुदय लयावृत्ति हेतुर्वरिष्ठा।
ह्रदेदशे या द्रढिष्ठेरयति च भुवनं त्वाश्रिताय म्रदिष्ठा
योगक्षेमाय साऽम्बा शमयतु ह्रदयं ग्रन्थिमेद पटिष्ठा।। (जपसूत्रम्)

या आद्या ह्रदि शयाना (जो आद्या स्वरूपिणी ह्रदय में शयाना है दहरसुविपुला (दहर अर्थात सूक्ष्मादपि सूक्ष्म भाव से स्थित है मानमेयाद् दविष्ठा (जो कुछ मान अथवा मेय है) सबसे दूरतमा है या तनिष्ठा उल्लेखा (जो तनुतमा हृल्लेखा है) जगत उदयलय आवृत्ति के हेतु भुता उरूतमा है) द्रढिष्ठा ह्रदेश में दृढ़तमा रूप में स्थित होकर विश्व का ईरण या वर्णन करती है आश्रिताय तु मुद्रिष्ठा (आश्रित के लिए जो मृदुतमा ग्रन्थिभेदे पटिष्ठा (ग्रन्थि का भेदन करने में पदुतमा है अम्ब योगक्षेमाय ह्रदयं शमयतु वह अम्बा योगक्षेम निर्वाह के लिए ह्रदय शमयतु वह अम्बा योगक्षेम निर्वाह के लिए ह्रदय को शमित करें)

गर्दन झुका के देखा दिल
के आइने मे तस्वीरे यार की
हद् कमल मञ्चे डोले कराल वदनी श्यामां

तुम आद्यास्वरूपिणी निखिल सृष्टि के ह्रदय में अथवा केन्द्रस्थल में (शयाना) सोई हुई हो। कारण के केन्द्र **(Nucleus)** का आश्रय लेकर अणु विराट सब कुछ स्पन्दित हो रहा है यह है उसका 'ह्रदि'। यह 'ह्रदि' स्थुल या पीन नही है। श्रुति कहती है वह दहर अर्थात् सूक्ष्म की पराकाष्ठा है। इस दहर के मध्य में तुम भी अवस्थिता हो सूक्ष्मतमा होकर भी फिर महान की अपेक्षा भी महीयसी हो मान या मेय है सब कुछ में तुम ही रहती हो दूरतमा ऐसी तुम्हारी विपुलता असीमता है। जो कुछ सृष्ट हुआ है उसकी 'ह्ल्लेखा' अर्थात मूल शक्ति चित्र लेखा के रूप में तुम बनी तनुतमा। इतनी सी बीजकणिका के बीच भी यहाँ तक कि धूलकण के मध्य भी तुमने अपना अत्याश्चर्य रूप प्रकट कर रखा है वहाँ भी देखता हू एक स्थिर केन्द्र का आश्रय लेकर असंख्य शक्तिपुञ्जो का अविराम नर्तन है यह मूल चित्रजगत की प्रत्येक वस्तु में नगण्य धूलिकण से आरम्भ करके जीवकणपर्यन्त सर्वत्र उदाह्रत हो रहा है सर्वभूतों के ह्रदेश में तुम वजहस्ता के रूप में सबकी चालयित्री बनकर बैठी रहती हो। केवल नीरव नही हो इसलिए सभी तुम्हारे भय से अपने निजकक्ष में अपनी अपनी धारा में आवर्तन कर रहे है कहीं भी च्युति नहीं हो रही है।

(भयाद्स्याग्निस्तपति)

तुम कुसुमकोमला हो
उदगीर्णं किञ्च जिह्वा त्वरयति
कवलं केवलं व्याकृत किम्
साध्वी वाऽसृकस्फुरन्ती दशनवररुचि चर्वणे व्याहृतानाम्
अग्नीषोमार्कक्लृप्ता किमपि तव दृशो व्यावृत व्यंज्जनाय
निर्व्यापारैकतत्त्वा कृतिहृतिर्भिर्व्यापृता व्यापिताभि।।

उद्गीर्ण किञ्च जिह्वा त्वरयति कवलं केवलं (कर्त्तु) किं जिह्वा त्वरयति (तुमसे जो कुछ व्याकृत हुआ है तुमने जो कुछ उद्गीर्ण किया है उसी को कवल बनाने के लिए तुम्हारी जिह्वा त्वरा से प्रयत्नशील है साध्वी असृकस्फुरन्ती दशवन रूचिः वा व्याह्रतानां (चर्वितानां) चर्वणे (त्वरयति (रक्त से रञ्जित तुम्हारी सुन्दर दन्तकान्ति क्या ब्याहत या सृष्ट वस्तु के लिए निगिरण अथवा चर्वितवस्तु के ही चर्वण में व्याप्त है। अग्निषोमार्कक्लृप्ता तव दृशः अपि किं व्यावृत व्यञ्जनाय (अग्नि सोम अर्क रूप तुम्हारे तीन नेत्र क्या, व्यावृत अर्थात जो विशेष रूप तुम्हारे तीन नेत्र क्याब्यावृत अर्थात जो विशेष रूप से आवृत्त है उसके व्यञ्जन तुम निर्व्यापारैकत्वा हो अर्थात पूर्ण ब्रह्मस्वरूपा हो फिर भी व्यापक कृति वृति हृति अर्थात सृष्टि स्थित लय से व्याप्त हों।

हे माँ जो बहिर्विश्व में तुममे उद्गीर्ण या वितान कर दिया है। उन सब को पुनः निगीर्ण करने के लिए ही क्या तुम्हारी लोल लोल कल्लोल रक्तस्रवित रसना को आपने सृष्टि के निर्गीर्णन में ही नियुक्त कर रखा है। लेलिह्यसे–पुनः पुनः आस्वादति।

समस्त चर्वित वस्तुओं के बार–बार आस्वादन के लिये ही भगवती की रसना व्यावृत बनी हुई है। क्या आपकी रक्तराग रंजित दशनवररूचि सृष्टि वस्तुओं के व्याहरण किंवा चर्वित के चवर्ण में ही निरत है ? भगवती सोम सूर्याग्नि नयना हैं। आप तो निर्व्यापारैक तत्वा, पूर्णब्रह्म स्वरूपा हो, तब अनन्त व्यापार में व्यावृत क्यों रहती हो ? किस प्रयोजन से इतनी व्याकृति–व्यह्यति,व्यावृति की छटा है ? क्या यह सब स्वाभावतः ही होता चलता है ? किन्तु हे पतितो द्धारिणे माँ आपकी कृपा के बिना स्वाभाव भी स्व का अभाव बन जाता है।

शिव शिवा पीताम्बरा (दालरूपा) शिव
शुभ्र चावल तण्डुल रूपाउनका समरस्य

चुरि जातू ऐ दाल महरानी
नमक पड़े से जल्दी होत है
हल्दी परे मुस्कानी
भात भतार से भेंट भइल जब
अङ्ग अङ्ग लिपटानी
चुरिजातु ऐदाल महरानी।।

हे अम्बरावीत सर्वाङ्गी दिगम्बरी"

सर्वदृश्यंममस्थानं सर्वेकाला व्रतात्मकाः।
उत्सवाः सर्वकालेषु यतोऽहंसर्वरूपिणी।। (देवीगीता)

देवी बोली हे नगाधिप–मै सर्वाधिष्ठान स्वरूपिणी हूँ इस कारण भूमण्डल में जितने स्थान है सब मेरे अधिष्ठान भूमि है मै सर्वकालमयी हूँ अतः सब समय व्रत और सपर्या उत्सव (कौलिकोत्सव) के उपयुक्त है अतः मै सर्वस्व रूपिणी हूँ

नव दिन का नवरात्र क्या? पूरा जीवन ही नवरात्र हो जाय, सबुह, शाम क्या संध्या, क्या माँ बालक को सुबह शाम ही प्रेम करती है नही अजस्र लगातार जीना ही भजन हो जाय मरना सम्यक् हवन हो जाय–

"भभाक चण्डी" (कीना राम)
भभाक काली भभाक श्मशान

छिलमिलतारा के लगायलटुकालिया तोके देखै वाले हजार (श्री कीना राम)

उमड़ा जब दरिया उल्फत का
तब चारो तरफ आजादी है
हर रात नयी एक शादी है।
हर रोज मुबारकवादी है
हर दिन गुजरता है होली की तरह
हर रात दिवाली

लाख इबादत से बढ़कर
दुनिया में हुस्न परस्ती है
इसी शबब से
आठोपहर अब मस्ती है

मस्ती में हस्ती घुल गयी
सूर्य अस्त नेपाल मस्त
तोयस्थं लवण यथा (श्रुति)

जैसे जलराशि में लवण खण्ड विगलित हो
योगवासिष्ठ में वशिष्ठ श्री राममद्र से कहते है–

चण्डिका शक्ति एक महाभयङ्कर नदी है जिसका उल्लंघन कोई नही कर सकता, महाकालरूपकाली का ऐसा भयानक और विशाल आकार है आकाश में उसका शिर है पाताल में पाँव है दशो दिशाएं उसकी भुजा है सातों समुद्र उसके हाथों के कँगन है सम्पूर्ण पृथ्वी उसके हाथ का खप्पर है प्राणिमात्र उनका भोजन है हिमालय और सुमेरु कर्ण के कुण्डल है चन्द्र सूर्य नेत्र है तारागण माथे की बिन्दिया है हाथों में त्रिशूल मूसल शस्त्र है प्राणी मात्र को बाँधने–फसाने का पाश है सब जीवो का ग्रासकर अट्टहास पूर्वक महाभैरव के सम्मुख नृत्य करती है गले में रूण्डमाल उसकी भयङ्करता को और बढ़ा देता है।

सुस्निग्धकज्जलग्रावतुल्यावयवरोचिषम
विशाल वर्तुलारक्त नयन त्रितयान्विताम्
द्विभुजां मार्जनी सूर्पहस्तां पितृवनस्थिताम्
दिगम्बरां मुक्तकेशीं नृमुण्डकृतकुण्डलाम्
अतिक्षीणकटिस्थला, विशालजघनाभोगा
त्रैलौक्यसार सौन्दर्ययौवनेन्माद गर्विता।। (अघोरकाली)

(घटोदरी, मसिपुञ्जसमप्रभा)

वाराणसी पराक्षेत्रं कालिरूपं परात्मरम्
वर्ण्यन्ते निरूप्यन्ते
वर्णीयाः वरीतुमर्हा
स्वीकर्त्तु योग्या गुणाः कर्माणि तान्
तानि च दृष्ट्वा व्रियन्ते ये ते वर्णा
कल्याण वर्णरूप,
आवृणोतिहि स आश्रयम्
शुक्लादिवर्णो स्वाश्रय
द्रव्यमावृत्त्यैव तिष्ठति
"कुं भुमिं तलयति अधीनयति स्वशोभया
इति कुन्तलम्"

अपने सौन्दर्य से भूमि भी नीचा दिखा देने वाला

न विद्यते नाथो यस्या सा अनाथा
सा अनाथा

हे अद्वैतामृतवर्णिणी,
आदौ भवः आद्या

सर्वेषाम् आदिकारण इत्यर्थः
कौलिकानां मुखं प्राप्य गृहन्ति देवताः

कुलं प्राप्ताः कौलाः

आकाश शङ्करो देवः पृथिवी शङ्करप्रिया।

मायां वर्णयतोऽमुण्य ईश्वरस्यानुमोदत।

श्रृण्वतो श्रद्धया नित्यं माययाऽऽत्मा न मुह्यति (भागवत)

राघवत्वेऽभवत् सीता रूक्मिणी कृष्ण जन्मनि (रामायण)
विविध दुःख द्रावक : रूद्ध :

विद्यरूपामुमां देवीं महाकारूण्किोत्तमाम्।

यावच्छक्यं जपं कुर्यात्साधको मीलितेक्षणः।।

प्रलयानलधूम्राभां कृष्णवर्णविधायिनीम्

नागराजलतोपेतां चन्द्रार्धकृत शेखराम्।

द्यां लिखन्तीं जतामेकां लेलिहानां शवं स्वयम्।
नागयज्ञोपवीताङ्गी नागशय्यानिषेदुषीम्।
नागेन रसनाहार कल्पितां रत्ननुपुराम्।।
प्रशस्तमर्द्धरात्रं हि भगवत्यर्चने सदा।"
अघोरः क्रौर्यादिरहितः शशिबिम्बमिव अह्लादकरः
महाग्रासायवै नमः (श्रुति)
विमर्श रक्तवर्ण काली है

विविदिषा–जिज्ञासा

पितरौ–माता च पिता च

आ–आसमन्तात् चतुरस्रम् नन्दति

समृद्धयति–जो

सब प्रकार से समृद्ध हो, जिसमें कोई कमी न हो पूर्ण हो।

तस्यैवानन्दस्य अन्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति

योनि बिन्दु को आवृत करने का आवरण है

प्रत्यक्षेणानुमित्या वा

उप ब्रह्मणः सामीप्य जीवं निः संशय सादयति

गमयति–जो जीव को ब्रह्म के समीप निश्चय पहुचा दे वह उपनिषद्रूपा माँ काली उप उपजातम् अनादिकालात् प्रवृत्तं आत्मसंसारसम्बन्धं नितरां सादयति अवसादयति या सा उपनिषद जो अनादि प्रवर्तित अनात्म संसार सम्बन्ध का अवसादन करे।

रातुर्दातुः परायणम्

सिषाधयिषा (अपने को सिद्ध करने की आकांक्षा)

दुःखेने गन्तुम योग्यः दुर्गा

विवरिषु त्वरणेच्छु

रद्रौ वै क्रूर

शुद्धा त्मतत्वविज्ञानं साख्याभिः साख्य

लतातनुललिता

वृणोति अहरोति वराही

एष एवभद्र (श्रुति)

ꣿꣿ•ꣿꣿ

कालिकोल्लास-4 (II)

इस जन्म-मरण चक्र के विराम का क्या कोई चिन्ह नहीं दिखाई देगा ? मिथ्या की इस अशेष जादू परम्परा में जो सत्य है, जो स्वरूप है, वह क्या है ? अयि अधवे वह संगृहीत हो या चिरकाल ही इस प्रकार खोया रहेगा, अथव परित्यक्त रहेगा ?

का शक्तिः शक्तिमान् कः कमिति तदुभयोर्मेलनात् सामरस्यं
का वाक् कश्चार्थ एवँ स्वरतदितरयोर्मातृकाद्यर्णयोगात्।
प्राणापानैकताने विरमति च जवे काऽजपा चाजपः को
ध्माते कः केति हँसो घमति न शृणुयाद वायसे को ध्वजस्थे।। (जपसूत्रम)

अन्वय-का शक्तिः शक्तिमान कः कमिति तदुमयोर्मेलनात् सामस्यं का वाक कश्चार्थ एवं स्वरतदितरयो र्मतिकाद्यर्ण योगात प्राणा पानैकताने विरमति च जवेकाऽजया चाजयः को ध्मातेः केति हँसो घमति न शृणुयाद् वायसे को ध्वजस्थ का शक्तिः(शक्ति है 'का')कः शक्तिमान(का शक्तिमान है)तदुमयोः(शक्ति शक्तिमान के)मेलनात् मिला देने से)कम इति सामरस्यम्(सम रस की स्थिति में सुख है) का वाक(का वाक है क च का अर्थः)(और कः का अर्थ है)एवं (इस प्रकार स्वरतदितरयो(स्वरव्यञ्जन)के मातृ काद्यर्ण योगात्(मातृका के आदि वर्ण के योग से)कम इति(सुख है)प्राणपानैकताने जवे विरमति(प्राणापान व्यापार की एकतानता या समता होने पर उनके वेग का विराम होने पर 'का' अजपा (है)च (कः) अजपः(कः अजप है) ध्वजस्थे धमति वायसे (ध्वजस्थित बोलते हुए वायस के कः केति ध्माते 'का' कः इस उच्चारण में) कः (कौन) हँस (इस मन्त्र को) न शृणुयात नही सुनता है।

भाष्य-घूमावती के रथ ध्वज पर जो यह काक है वह क्या है क्या यह सोच कर देखा है एक ओर विश्व जरा मृत्यु का आह्वान दूसरी ओर जरामृत्यु से अजर अमर को अनपाय स्थान है उससे उत्तरण का आहवान ये दोनो की वायस के क्रमशः(कःक्व)एवं हँस रुति (पुकार) सूचित है कौन कहाँ है आओ रथचक्र के नीचे गिरो और पिसो शूर्प में पड़कर विभक्त विक्षिप्त हो जाओ नियति अनतिक्रम्य है किन्तु वायस के मुख से केवल यही रव ही सुनेंगे हँस रुपी अमृत अभय का आहवान नही सुनेंगे क्या इस अभय का आह्वान कैसे सुनेंगे ? शक्ति हुई 'का', शक्तिमान् 'कः'। यदि इन दोनो में भेददृष्टि कीजिए तो शक्ति चिच्छक्ति नहीं होती। अतः जड़यन्त्र में तुम गिरे और पिस गये। किन्तु शक्ति-शक्तिमान् को यदि मिला कर समरस बना लो तभी न 'कं' अर्थात् 'सुखं' होगा।

यह प्रपञ्च वाक् और अर्थ की समष्टि है। मूलतः ये दोनों सम्पृक्त मिथुन है। किन्तु उन का वियोग विश्व व्यवहार में होते देखता हैं। तभी तो निरर्थक वाक् आनर्थक्य, वैयर्थ्य इत्यादि के कारण अमृत, अभय

का सन्धान नही देती। 'का' है वाक् 'कः' है अर्थ। काकः शब्द में स्वर व्यंजन मातृकावर्ण के आदि अकार एवं ककार वर्णद्वय युक्त हैं। यदि स्वयं एवं व्यंजन को वियुक्त कर के रखिए तो मृत्यु है, और यदि युक्त रखिए तो अमृत है योग में वही 'कं' -सुख है। स्वर क्या है, मातृकावर्ण क्या है, यह सोच कर देखें वायस के रव में इसका निर्देश है !

पुनश्च, प्राणी के प्राणापान-व्यापार की एकतानता समता की रक्षा करेंगे या नहीं करेंगे ? क्या उक्त व्यापार के प्राकृत वेग के विरामस्थल में भी शान्त स्वस्थ रहेंगे? तदि समता रख सकते हैं, तो जरा दूर रहेगी, विरामास्थल में भी यदि 'उदासीन' (मध्ये वामनमासीन) रह सकें तो मृत्यु नहीं आती। का = अजपा, कः = जपः। जरा-मृत्यु का एवं उस के पार का मूल रहस्य काक पुकार कर सुना रहा है। 'हौसः 'महाबीज में ही जरामृत्युवारिणी यह त्रिविध 'भावना' निहित है। सः = शक्ति, ह शक्तिमान्' ॐ = उभय का सामरस्य। ॐ उभय का सामरस्य। ॐकार का आद्य मात्रा अकार है, हकार व्यञ्जनों का शेष वर्ण है, इन दोनों के समर्थ संयोग का सूचक है 'सः'। और हंस स्वामाविक प्राणनक्रिया । यह ॐकार के समर्थ संयोग का सूचक है 'सः'। और हंस = स्वाभाविक प्राणनक्रिया। यह ॐकार के द्वारा जरामृत्यु जयी होती है।

(श्रीकाली तत्वम् श्लोक 109,124)

वर्णानां विश्वचित्रे निलयविलययोः स्थानमेवेति कृष्णा
वर्णैर्वाऽवर्णनीया कतियतितितिभिर्वाऽप्यनिर्देश्यवर्णा।
वर्णानां वा पटेऽस्मिन् कलनफलनयोः स्थानामेवेत शुक्लो
योऽभास्यत्वेऽपि वर्णेः पटपटुफलने भासकः स्वप्रकाशः।। (जपसूत्रम)

अन्वय-विश्वचित्रे (निखिल विश्व के चित्रपट में) वर्णानां (समस्त वर्णो के) निलयविलययोः (निलय और विलय का) स्थानं (स्थानभूत) एव (ही) (वह श्री काली हैं) इति (इसलिए) कृष्णा (घोर कृष्णवर्ण बाली हैं) वा (अथवा) वर्णेः (वर्णो द्वारा वह अवर्णनीया वर्णनीय नहीं हैं) कति + यति + ततिभिः वाऽपि अनिर्देश्य वर्णा (कति = कितने, यति = जितने, तति उतने इत्यादि के द्वारा उनका निर्देश नहीं हो सकता, क्या इसलिए वे श्यामा हैं ?) अस्मिन् पटे वा वर्णानां कलनफलनयोः स्थानम् एव इति (अथवा इस पट) पर वर्णो के कलन और फलन का स्थान होने के कारण क्या) शुक्लः स्वप्रकाशः यः अभास्यत्वे अपि वर्णे पटपटुफलने भासकः (काली में शुक्ल स्वप्रकाश है, जो अभास्य होते हुए भी विश्वपट पर वर्णो द्वारा पटुरूप से फलन या चित्रविस्तार का भासक है)।

भाष्य–परिशेष से सोलह श्लोकों में श्री श्री कालिका के तत्त्व का उद्घाटन किया जाता है। श्री श्री काली की मूर्ति घोर कृष्णवर्णा है। उनके इस काले रूप का क्या रहस्य हैं, पहले वह समझने का यत्न करते हैं।

इस निखिल विश्व के चित्रपट में जो असंख्य वर्ण हैं, उन सब वर्णों का निलय और विलय उन्हीं में है। वे स्वयं वर्णहीना हैं अथच सभी वर्णों की प्रसूति हैं, और वर्ण समापिका, वर्ण की ग्रासिका हैं। इसलिए क्या वे काली हैं ? वर्ण, पद, पादमात्रा, क्रम या अन्वय आदि के द्वारा वे वर्णनीया नहीं हैं क्या इस प्रकार अवर्णनीया होने के कारण ही वे काली हैं ? विश्व की अनन्त तरङ्ग यह ऊर्मिराशि एक अगाध दुरवगाह महाअज्ञात में उठती है और गिर–गिर पड़ती है। अतः इतनी, जितनी, कितनी' कह कर कौन इयत्ता करेगा ? इस प्रकार अनिर्देश्या हैं, इसलिए क्या वे श्यामा हैं? फिर माँ के पदतल में देखता हूँ उज्जवल शुभ्र रूप है। एक ओर काला और एक ओर धवल! वे विश्व चित्रपट के कलन–फलन में सभी वर्णों का आधार हैं, सर्ववर्णमय हैं, तो क्या वे धवल हैं ? अब 'वर्ण' शब्द त्रिविध अर्थ में व्यवहत होता है। पट या रंग Colour, पद letter, जाति Cast। 'वर्ण' शब्द का चाहे जो अर्थ हो, किसी भी अर्थ के द्वारा वे प्रकाशित नहीं होती। वे अपने आप में प्रकाशित है। स्वप्रकाशस्वरुपा है, और सभी कुछ की प्रकाशिका वही है। इस विश्वचित्र के फलन में उनके पटुत्व की और तुलना ही नहीं है।

ये ग्राह्यश्चित्रवर्णा ग्रहणपरिचया मानसे बिम्बतास्ते
छायाचित्राणि साक्षाद् दधाति जहतिः काः शक्तयः के च कायाः ।
गम्भीरागोचराम्भस्तिमिरनिबिड़ता याऽऽदिमा सा क्षपा चेत्
स्पन्दैस्तस्याः प्रवृत्तैः किरण विकिरणैर्भाति भासा स्वयाऽहः (जपसूत्रम)

अन्वय–ये ग्रहणपरिचयाः चित्रवर्णाः ग्राह्माः ते मानसे बिम्बताः (जो शब्द, स्पर्श आदि प्रत्यक्ष ग्रहण–मात्र से हमारे परिचय में आते हैं, वे ग्राह्य चित्रवर्ण हमारे मन में बिम्बत होते हैं), काः शक्यः छायाचित्राणि साक्षात् धारण करती हैं, अर्थात विजृम्भित करती हैं, और फिर उनका संवरण भी कर लेती हैं ? के च कायाः (यदि इन छायाचित्रों के पीछे कोई काया हूँ, तो कौन सी है?) या आदिमा गम्भीर + अगोचर + अम्भः + तिमिर + निबिड़ता का क्षपा चेत् (गम्भीर , अगोचर पयोराशि में जो आदिम घनान्धकार है, वह रात्रि है) तस्याः स्पन्दै : प्रवृत्तै : किरणविकिरणै : स्वया भासा अहः भाति (उस रात्रि के स्पन्दों द्वारा प्रवृत्त किरण–विकरणों से,उसकी अपनी ज्योति से, दिन भासित होता है)।

भाष्य–तत्पश्चात, यह सब शब्द स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, कामना, वेदना प्रभृति छायाचित्र की भाँति आते और चले जाते हैं। क्या यह सब इस चलचित्र में कभी अपना सत्य परिचय देते हैं ? यदि यह सब वस्तुहीन इन्द्रजाल ही है, तब कौन सी जादूगरी शक्ति इन छवि और पट, दृश्य और द्रष्टा इत्यादि रूप में इस भ्रांति को विजृम्भित करके भीतर–बाहर का छायारूपी खेल दिखला रही है। यदि यह छाया वस्तुहीन इन्द्रजाल ही है, तब कौन सी जादूगरी शक्ति इन छवि और पट, दृश्य और द्रष्टा इत्यादि रूप

में इस भ्रान्ति को विजृम्भित करके भीतर–बाहर का छाया रूपी खेल दिखला रही है यदि यह छाया वस्तुहीन अर्थात् अवास्तव नहीं है, यदि इसके पीछे सचमुच ही कोई काया है, तब वह काया कौन–सी है ? कैसे वह अचिन्त्य शक्तिरूपिणी महाकाली ये सब छवियाँ आँकती हैं, पट के ऊपर सजा देती हैं और फिट हटा भी लेती है ? वेयह रहस्यक्रीड़ा छिप कर खेलती हैं, अतः क्या वे काली हैं ? श्रुति के नासदीय सूक्त और रात्रिसूक्त प्रभृति में जिस आदिम, आगोचर, गम्भीर अम्भोराशि का वर्णन है, जिसके वक्ष पर यह विश्वबोध बुदबुद की भाँति ऊर्मिभङ्गो में फूट उठता है, क्या वह गाढ़ तमिस्रा ही मेरी माँ का नित्य काला रात्रिरूप है? यदि वही है तो अपने स्पन्दन या आलोड़न से क्या वह फिर प्रकाश की लहरी प्रस्फुट नहीं कर लेतीं ? इसीलिए वे स्वरूपतः आलोक में अथवा अंधकार में , सर्वत्र समान रूप से प्रकाशमयी हैं। उनकी आत्मज्योति अनिर्वाण है। वे पूर्ण दिवा या श्रुति की 'सकृत् दिवा' रूपिणी हैं।

स्त्यास्यं या पिस्राय प्रलयघनरूचिश्चिद्घनेन्दुप्रकाशं
मायाघोन्द्रजालञ्च चिकुरपटलैस्तन्वती या कराली।
नानासृग्बीजकूटं प्रकटितरस जक्षती सृज्यमानं
तत्सत्यं बाधमुक्तं ह्रदयनभसि न : कुर्व्वंती सा सुहासा। (जपसूत्रम)

अन्वय–प्रलयघनरुचिः (प्रलय मेघ की भाँति) या काली (जो मां काली) चिद्घनेन्दुप्रकाशं (चिद्घन में इन्दु के प्रकाश सदृश अपनी) सत्यास्यं (सत्यरूप मुखच्छवि को) चिकुरपटलैः (एलायित केशपाश द्वारा) मायाघोरेन्द्रजालं (माया का घोर इन्द्रजाल) तन्वती (फैलाती रहती है) नानाऽसृग्बीजकूटं (रक्तबीज के कूट अथवा समुद्र को) जक्षती (ग्रस लेती हैं) नः (हमारे) ह्रदयनभसि (ह्रदय के आकार में) सा (वह) (उदित होकर) तत् सत्यं (उस सत्य को) बाधमुक्तं (बाधारहित) कुर्वती (कर देती हैं) (अतः वे) सुहासा (मुख पर मृदु–मृदु हास्य वाली हैं)।

भाष्य–माँ काली ने अपनी एलायित (बिखरी हुई) कुन्तलराशि दसों दिशाओं में सञ्चनित करके मानो माया के घोर इन्द्रजाल का विस्तार किया है और कराली का स्वाँग धरा है। उनके इस एलायित केशपाश का यथार्थ रहस्य क्या है, इसके द्वारा उन्होंने अपनी यथार्थ या वास्तविक मुखच्छवि को, उस परम सुन्दर आनन को ढक रखा है। गोपन कर रखा है। अतः उनका यथार्थ रूप की दृष्टि के अन्तराल में ही रह जाता है। कराली की देखिए लोलजिह्वा! धन; कृष्ण केशपाश के साथ हो यह रक्त रसना मानों मेघ के पास बिजली जैसी शोभा पाती है। वे इन्द्रजाल से शत कोटि रक्तबीजों की स्वयं ही सृष्टि करती हैं। (जिस रक्तबीज का स्वरूप है दुष्पूर तृष्णा) जितना ही सोचा है कि शायद अब तृष्णा मिट जायगी, फिर देखता हूँ वह सिर उठाकर खड़ी हो रही है वही काली फिर कोप का छल करके परम करुणा से अपनी लोलजिह्वा द्वारा उस रक्तबीज के 'कूट' अथवा समूह अथवा पेड़ को ग्रस लेती है। नहीं तो किसी

क्षणों में इस नित्य तरुणायमान तृष्णा का तर्पण हो सकता था ? इस प्रकार हमने समझा कि उनका प्रसारित केशपाश इस घोर इन्द्रजाल के विस्तार की सूचना देता है। लोल रसना इस इन्द्रजाल द्वारा सृष्ट असंख्य कामनाओं के निधन या संहार को ही समझात है। इस प्रकार उनक सृष्टि और संहार का संकेत, दोनों संकेत पकड़ पाते हैं, फिर भी उनका यथार्थ स्वरूप, वह परम रमणीय मुखच्छवि हमारी दृष्टि के अन्तराल में ही रह जाती है। वह मुख कैसा है? काला या धौला ? हम लोग नित्य ही इस प्रकार के द्वन्द्व–संशय की दोला मे झूल रहे हैं। यह धन्धा, यह द्वन्द, यह संसद वह स्वयं ही हमारे मोहयुक्त हृदयाकाश में पूर्णरूप से उदित होकर दूर कर देगी। इसलिए उनके मुख पर यह मृदु–मृदु हास्य है।

नैष्पद्ये स्पन्द आद्यश्चिदमलनध्वान्तधराम्बुदः किं
शश्वन्मौनं विलोड्य ध्वनिशतसततध्मातनादस्ततः किम्।
ध्वान्तध्वंसाय सान्द्रा स्फुरित च परामा चिद्यन्नभचन्द्रिका किं
मान्द्यं जीमूतमन्द्रे भजति भवमृतेस्तुर्यनादस्ततःकिम्।।

अन्वय–चिदमलनध्वान्तधोराम्बुदः (निर्मल आकाश में घोर काला मेघ) नैष्पन्द्ये (स्पन्दहीन स्वरूप के बीच) आद्यः स्पन्दः किम् (क्या आदिम स्पन्द है !) ततः (और वहाँ) शश्वन्मौनं (शाश्वत मौन को) विलोड्य (विलोडित कर के) किं (क्या) ध्वनिशतसततध्मातनादः (सैकड़ों ध्वनियों से निरन्तर ध्मात विस्तृत नाद के रूप में प्रकट है ?) सान्द्रा (सघन) परमा (परम) चिन्नभश्चन्द्रिका (चिदाकाश की चन्द्रिका के रूप में) ध्वान्तध्वंसाय (अन्धकार के नाश के लिए) किं (क्या) स्फुरित (स्फुरित होती है) ततः कि जीमूतमन्द्रे मान्द्यं भजति भवमृते तुर्यनादः ?(तब फिर मेघमन्द्र के मन्द हो जाने पर भव अर्थात् संसरण की मृत्यु अर्थत् नाश हो जाने पर तुरीय नाद क्या नहीं रहता है ?)।

भाष्य–निर्मल चिदकाश में जो काली घनघटा का आविर्भाव है, यह क्या उस स्पन्दहीन स्वरूप के च आदिम स्पन्दन के घनीभाव को सूचित करता है ? जो पूर्ण हैं, उन मे कैसे कामना का उदय होत है ? जो निः स्पन्द है, उनमें कैसे स्पन्द का आविर्भाव होता है? क्या यह पहेली चिरकाल से दुर्बोध्य होने के कारण ही वे काली हैं ? सृष्टि के मूल के जितने तत्त्व हैं, जितने बीज है सभो का वर्षण उन से है, क्या इसलिए उस स्पन्द ने महावृष या वर्षणकारी मेघ का रूप धारण किया है ? तभी क्या हमारी उस माँ ने घोर कृष्ण अम्बुद से अपनी प्रतिमा को गढ़ा है? और किसी शाश्वत मौन का आलोड़न कर के वे महानाद के रूप में प्रकट हुई है ? उस नाद ने शत कोटि ऊर्मियों का विस्तार कर वाङ्मय विश्व सृष्टि रचना की है और अन्त में संकरण नाद में सब कुछ का संवरण तथा लय किया है। क्या वे इस काले मह में सृष्टी अंत में विलीन कर परम चिन्पूर्ण चिद्गगन चन्द्रिका के रूप में प्रकाश नही पाती है ? उसी प्रकार जों कभी गाढ़, कभी घोर मेघचन्द्र है, क्या उसे मन्दीभूत कर अन्त में अपने विष्वोत्तर अभय धाम में वही तूर्यनाद या तुरीय नाद नहीं सुनाती हैं?–उस तुरीय नाद में स्थूल, सूक्ष्म, कारण, सब कुछ का, ही अवसान होता है, एवं महाभीतिकर पुनः–पुनः–'भव' का या 'संसरण' का भी 'मरण' हो जाता है,

अर्थात् गतातिचक्र रुक जाता है। उनके काले रूप के पीछे रहता है परम् आलोक, उनके इस महानाद के विभिन्न गर्जन–आलोड़न के पीछे भी है वह परम नाद या तुरीय शान्त प्रपंचोपशम नाद।।

क्षिप्ये विश्वं विमृश्य त्वदितरदिव यत् स्थापयेर्यत् स्वभित्तौ
तच्च स्वात्मेति विद्याः प्रमिति पदमितं वस्तु संख्यापयर्यत्।
स्वात्मैक्यं च प्रमयादिकमिवग मयेर्दर्पणास्यं स्वबिम्बं
सातु स्पन्दं नदेस्त्वं तव कलनकृती पञ्चधा नित्यकालि।।

अन्वय–हे नित्यकालि त्वं तव कलनकृती पञ्चधा (हे नित्यकालि! तुम अपने कलन व्यापार में पञ्चधा हो) ,यत् विश्वं त्वत् इतरत् इवसमृश्य क्षिप्येः, स्वभित्तौ यत् स्थापयेः (जिस विश्व को अपने से भिन्नवत् विमर्श कर के उछालती हो और स्वभित्ति मे स्थापित भी रखती हो–यह क्षेपण है), तत् च 'स्वात्मा' इति विद्याः (उसे 'स्वात्मा' ऐसासमझती हो यह ज्ञात है) यत् प्रमितिपदमितं वस्तु संख्यापयेः (जिस विश्व को 'प्रमिति' पदमित अर्थात केवलमात्र बोधभास्य वस्तु के रूप में संख्यान करती हो–यह संख्यान हुआ), स्वात्म ऐक्यं च प्रमेय आदिकमिव दर्पणास्यं स्वबिम्बं गमयेः (दर्पणस्थित स्वबिम्ब को प्रमेयादि की भाँति स्वात्मैक्य को प्राप्त कराती हो–यह गमन है) स्पन्दं सातुं नदेः (स्पन्द का अवस्थान करने के लिए तुम नाद करती हो–यह नाद है)।

भाष्य–हे मातः! नित्यकाली! तुम परम तत्त्व के साथ समरसा,अभिन्ना शक्तिस्वरूपिणी हो। तुम्हारे सिवा अन्य क्या था या है जिसे इस विश्व कन्दुक रूप में उछाल–उछाल कर यह खेल रही हो ? मानो वह और कुछ है तुम नही हो"ऐसा विचार तुम्हें क्यों होता है? इस प्रकार जिसे उछाल कर फेंक देती हो उसे क्या बिल्कुल ही वस्तुहीन, सर्वस्वहीन बना कर अपने अङ्क से नितान्त दूर फेंक देती हो ? उसे क्या अपनी भित्ति में स्थापन कर के नही रखती हो ? मानो आसमान में गुड्डी उड़ा रही हो किन्तु डोर रखती हो अपने हाथ में। उन लाख–लाख गुड्डियों में से यदि कोइ एक कट जाय तो वह भी तो तुम्हारी ही गोद में लौट आती है। जो उड़ता है वह भले ही आत्मविस्मृत हो, वह नहीं जानता कौन सूत्रधर उसे उड़ा रहा है किन्तु तुम तो उसे नहीं भूलती हो! बोधरूप दर्पण में जो कुछ प्रस्फुटित होता है उसे तुम्ही तो रूप मान इत्यादि दिया करती हो। जब जब दर्पण में जो कुछ प्रस्फुटित होता है, उसे तुम्ही तो रूप मान इत्यादि दिया करती हो। जब जब दर्पण को तोड़ कर प्रतिबिम्ब को बिम्ब में मिला लेती हो, तब फिर तो वही एक हो। सब कुछ को अद्वयस्वरूप में खींच लोगी इसलिए वहि स्पन्द का संवरण नाद में अवसान किया करती हो। हे नित्यकाली ! क्षेपण, ज्ञान, संख्यान, गमन और नाद, इन पाँच रूपों में तुम ने अपना कलन प्रपञ्चित किया है।

व्यस्तं खड्गेन वस्तु क्षिपसि यदसकृत स्वात्मनो देशकाल
सम्बन्धापेक्षतत्त्वं जनिमृतिभयदं हंसि तच्चापि हेयम्।
व्यस्तं मुण्डं कराब्जे कलयसि च गले मुण्डमालां समस्तां
दृग्भासा वेत्सि दृश्यं गिरसि रसनया यद् बहिः स्कारनादे।।

अन्वय–व्यस्तुं वस्तु यत् असकृत् खड्गेन क्षिपसि (हे माताः तुम अपने खड्ग से 'व्यस्त' अर्थात् परिच्छिन्न वस्तु को बार–बार जो खण्ड खण्ड कर डालती हो)तत् च अपि स्वात्मनः हेयं जनिमृतिभयदं देशकालसम्बन्धापेक्षतत्वं हंसि (वह भी तुम्हारा अपना ही रूप है, जो हेय है, जन्म–मृत्यु–भयप्रद है, देशकाल–सम्बन्ध क अपेक्षी तत्व है, उसे भी तुम छिन्न करती हो, कराब्जे व्यस्तं मुण्डं गले च समस्तां मुण्डमालां कलयसि (कर–कमल में एक व्यस्त मुण्ड अर्थाता् छिन्न मुण्ड और गले में समस्ता मुण्डमाला धारण करती हो) दृश्यंदृग्भाषा वेत्सि (दृश्य को तुम अपनी नेत्रज्योति से जाना हो) यद् वहिः स्फारनादे रसनया गिरसि (जो बाह्य है, उसे स्फारनाद में रसना से निगल जाती हो)।

भाष्य–माँ ! तुम्हारे खड् का ही क्या अपूर्व रहस्य है! तुम भूमारूपिणी अखण्ड सामग्री हो; अथच अपने खगड् से उसे व्यस्त् परिच्छिन्न वस्तुरूप में बार–बार खण्ड साम्रगी हो, अथच अपने खड्ग से उसे व्यस्त, परिच्छिन्न वस्तुरुप में बार–बार खण्ड करके फेंक देती हो। स्वयं 'दो बनूंगी' बहु बनूंगी, अगणति बनूंगी' क्या इसी साध से तुमने असि धारण किया है ? देश–काल, कार्य कारण इत्यादि नाना सम्बन्धों का जाल ऊर्णनाभ (मकड़ी) की भाँति बुन कर क्या व्यस्त, खण्ड वस्तुओं को अपने बीच गूँथ लेती हो ? क्या अपूर्व उपादेय तुम्हारा यह सब विरचन है ? सब तो तुममय है, तुम्हीं तो सब हो ! अथच भ्रान्ति–रूप मे सब को भुलाकर अपने को जन्म, मृत्यु, दुःख, पाश महाबल दैत्यों के रूप में ही दिखलाती हो। मातृज्ञान में तुम उपादेय हो, फिर भी भ्रान्तिज्ञान में मानो हेय गई हो! फिर दयारूप में इस हेयरूप असुर को तुमने असि द्वारा छिन्न किया तुम्हारा इसे लीला का पार पाना कठिन है। और तुम्हारें हाथ में देखते हैं एक छिन्न मुण्ड इस ओर गले में देखते हैं, बहुत से छिन्न मुण्डों के एकत्र समावेश से ग्रथित एक अपरूप मुण्डमाला तुम्हार करमकल में एक व्यस्त मुण्ड है, और ले में समस्तमुण्डों की माला है। इस प्रकार व्यस्त और समस्त को तुम धारण किए हुए हो। तुम्हारे एक हाथ में वर, दूसरे हाथ में अभय है। यह व्यस्त समस्त की जो सन्धि या साम्यस्थल है, क्या वही वर है ? व्यस्त समस्त की अतीत भूमि ही क्या अभय है? इसलिए क्या श्रुति में सुनते हैं कि इस सन्धि अथवा मिथुन में सब कुछ समृद्धि और तृप्ति, अभ्युदय या वरलाम है, उसके भी पार उस रसतम में परम अभय, चरम शान्ति है? हे माँ! इसलिए अभ्युदय और निः श्रेयस्, भोग और मोक्ष का अपने दोनों हाथों से वितरण करती हो! यह सभी रहस्य अपनी नेत्रज्योति से देखा करती हो। दूसरा और कौन जानता है ? तुम्हारी जिह्वा बाह्यवत् इस अनात्मा का आत्मसात् करती है, और अन्त में स्फारनाद में प्रपञ्च का लय हो जाता है।

स्वाधिष्ठानप्रकाशो विमृशति च कथं स्वामनन्यां स्फुरत्ता
मीशं मायां सदाख्यं परमशिवपदे कञ्चुकांश्चापि
नाहं नेदं न चोभे न च भवति गिरः प्रत्ययश्चापि यत्र
तत्र प्रत्येति काली विलसति च मुदा नित्यकैवल्यतत्त्वा।। (जपसूत्रम)

अन्वय–स्वधिष्ठान प्रकाशः कथं स्वाम् अनन्यां स्फुरत्तां विमृशति (तुम्हारा स्वाधिष्ठान–प्रकाशस्वरूप अपी अनन्या अर्थात् अभिन्ना स्फूरत्ता का 'विमर्श' कैसे करता है। अर्थात् 'तुम' 'मैं','दृश्य' 'द्रष्टा' इस प्रकार की भेदात्मक स्फूर्ति कैसे करता है ? परमशिवपदे (हे परम शिव–पदस्वरूपा) सत् + आख्याम् ईशं (सदाशिव ईश्वर) मायां (माया) कञ्चुकान् (कञ्चुक अर्थात् कोश) (इन सबको) च अपि (भी) कस्मात् (कैसे) (प्रसूत करती हो ?) । यत्र न अहं न इदं न च उभे न च गिरः प्रत्ययः च अपि भवत (जहाँ न 'मैं', न 'यह', न ये दोनों रहते हैं, और ही वाणी का प्रत्यय होता है) तत्र काली प्रत्येति (वहाँ काली प्रत्यय करती हैं) नित्यकैवल्रूरूपा मुद्रा विलसति च (च नित्य कैवल्यस्वरूपा सामोद विलास भी करती है)।

भाष्य–पुनः प्रश्न उठता हैं 'माँ'! तुमने अपने स्वाधिष्ठान प्रकाश स्वरुप में किस प्रकार 'तुम–मैं' 'दृश्य–द्रष्टा' 'यह–वह' इन सब विचित्र स्फूर्तियों के रूप प्रस्फुटित कर रखे हैं!' किन्तु जहाँ, जो कुछ स्फूर्ति या प्रकाश है, वह सभी तो तुम्हारी ही स्वतः स्फूर्ति है, तुम्ही तो एकमात्र प्रकाश हो। तुम्ही हो स्वयं परम शिवपद हो, किन्तु किस प्रकार उससे सदाशिव, ईश्वर, प्रकृति, माया प्रभृति तत्त्वों की, कंञ्चुक 'कोश' की तुम प्रसूति बनी हो ? सुनते है तुम नियम कैवल्यारूपा हो अपने में भेद का कोई बीज नहीं रखती हो! क्या अपने संगोपन में 'मैं–तुम' रूपी भेद का बीज अपने में ही रख लेती हों ? तुम्हारे अगाध रहस्य में किसी वाच्य वाचक को गति या अवकाश नहीं है। तब भी हे काली! तुम अपने कलन में प्रत्यय या बोधरूप में,तत्त्व, वस्तु, सम्बन्ध के वेश में, अपने को दिखलाती हो, प्रकाशित करती हो। तुम चिति होकर भी विश्व–भुवन की पर चिति हो। और अपने कैवल्यस्वरूप में साक्षात् आनन्दरूपिणी हो शिवादि तत्त्व को लेकर नियत आनन्द–उल्लास किया करती हो।

चैतन्ये निष्क्रियेऽसौ शवशिवहृदि या प्रैधते शक्तिरूपा
सा शक्तिश्चेतयित्री चितिरिति दिता तामृते चिन्मृतेव।
यास्त तस्रो लहर्यः कृतिरतिमतयः सच्चिदानन्दसिन्धौ
ताभिः सद् यत्प्रमेयं प्रमितिरिति चिदानन्छ उल्लासराशिः।।

अन्वय–चैतेन्य निक्रिष्ये शवशिह्वदि या असौ शक्तिरूपा प्रैधने (चैतन्य की निष्क्रिय अवस्था में शव–शिव के हृदय में जो शक्ति प्रकृष्टरूप में वृद्धि को प्राप्त होती है। सा शक्तिः चेतयित्री चितिः इति गदिता (वह शक्ति चेतना देने वाली है, अतः 'चिति' कहलाती है) ताम् ऋते चित् सृतां इव (उस शक्ति के बिना चित् मृता जैसी रहती है, अर्थात् चिति नहीं बनती है) सचिदानन्दसिन्धां याः कृतिर तेमतयः ते

तिस्रो लहर्यः (सच्चिदानन्द सिन्धु में कृति, रति, मति रूप जो तुम्हारे तीन लहरियाँ है) ताभिः सत् प्रमेय ('सत्' उनसे प्रमेय बनता है) चित् प्रमिति ('चित्' प्रमिति या ज्ञान बनती है) आनन्द उल्लासराशिः (और आनन्द उल्लसराशि बनता है)। चतुर्थ चरण में 'यत्' पाद–पूरक–मात्र है)।

भाष्य–नित्यकैवल्य में भी हम तुम्हारा अपरूप विचित्र विलास देखते है। तुम्हारे पदतल में शव–शिव हैं। वह क्या केवल निष्क्रिय चैतन्य, निरञ्जन अधिष्ठान मात्र है ? किसी किसी मूर्ति में देखा जाता है, शिव बाहु के ऊपर भार देकर सिर को थोड़ा सा उठाए हुए हैं। क्या इस प्रकार के वक्रभङ्गी में सिर उठाकर तुम्हारी लीला के 'साक्षी' या द्रष्टा भी बनते है ? स्वरूप में रमणेच्छा के द्वारा तुम दिखा देती होकि तुम्हारे बिना चित् केवल चित् ही रहता है, चिति नहीं बनता। तुम्हारे बिना वह मूक, स्तब्ध आनन्द मात्र है, वहाँ उल्लास–विलास नहीं हैं। चैतन्य के अधिष्ठान में शक्तिरूपा तुम महोत्साह से, नाचती चलती हो। कौन कहता है कि वह शक्ति जड़, केवल दृश्य या भोग्या है ? वह चेतना की भी चेतयित्री या चैतन्यसम्पादनकारिणी है। वह चितिरूपा जगद्व्यायिनी चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् है। चिति के बिना चित् शवशिव है मानो मुर्दे की भाँति है। तुम ही सच्चिदानन्द समुद्र में तीन लहरियाँ उठाया करती हो येथा ज्ञान, इच्छा और क्रिया। फलस्वरूप सत् ने ज्ञेय के आकार में सत रूप धारण किया। चित् की ज्ञान ज्ञातृरूप में चेतना हुई, और आनन्द तो अनन्त उल्लासराशिरूप में आनन्दी हुआ। इसरूप में सच्चिदानन्द का आत्मप्रकाश हुआ है।

आनन्दव्योमसान्द्रा त्वमसि शशिकला निष्कला या तुरीया
साऽऽद्या नैष्कल्यनित कलयसि च कलां शक्तितत्त्वादिरूपाम्।
उन्मेषे पूर्णिमोमा ध्रुवनिजलियेऽव्याकृताऽमास्यमेया
व्यक्तौ कायादिमुख्याः कतिविधकलनास्ते कला अम्ब कालि।। (जपसूत्रम्)

अन्वय–अम्ब कालि (हे माता काली) त्वम् आनन्दव्योमसान्द्रा शशिकला असि (तुम आनन्द व्यो की घनीभूत अवस्था चन्द्रकला हो) या तुरीया निष्कला सा आद्या (जो तुरीया और निष्कला है, वह फिर आद्या भी है) निष्कल्यनित्या शक्तितत्त्वादिरूपां कलां च कलयसि (नित्यनिष्कला हो, फिर भी शक्तित्त्वादिरूपा कला का कलन करती हो) उन्मेषे पूर्णिमा उमा (कला का उन्मेष होने पर तुम पूणिमा उमा हो) ध्रुवनिजनिलये अव्याकृता (अपने ध्रुव आलय में अव्याकृता अमा हो) व्यक्तौ अमेय असि (व्यक्त अर्थात् [illegible]कृति में तुम अमेया हो) कामादिमुख्याः कतविधकलनाः ते कलाः (तुम्हारी कलाएँ कामादि रूप में न [illegible] कितने प्रकार की हैं)।

भाष्य–सर्वश्रुति प्रसिद्ध जो आनन्दरूप आकाश है, जो [illegible] नहीं होता, जो पूर्ण और परम है, उसी आदि आनन्दव्योम में तुम कैसे [illegible] उदित हुई ? किस प्रकार तुमने स्वरूपतः नाद–बिन्दु–कलातीत [illegible] शक्तिकला का आकार धारण किया ललाट में यह शशिकला धारण किया? [illegible] सामरस्य में अच्युत रहकर भी तुम शिव शक्ति तत्त्वपादि कला में कैसे [illegible] में क्या तुम्हारी परम अचिन्त्य इच्छा का ही आविर्भाव सूचित होता है ? [illegible] कला की सम्पूर्णता होने पर तुम हो पौर्णमासि–रूपिणी उमा, [illegible] ध्रुव आलय में तुम नित्य अमारूपिणी हो। जहाँ समुदित समस्त कलानिचय [illegible] भी तुम क्या ललाट में शशिकला धारण करती हो ? एक ओर उमा दूसरी ओर [illegible] की सीमा। इन दो सीमाओं के बीच 'अ उ म्' मात्रात्रय से समुदित कामादिकला [illegible] असंख्य कलन कितन ही विचित्र परिणाम हैं, कौन उनका संख्यान या गणना करेगा ? ।।

ज्योतिर्व्योम्नि स्वकीये किरसि निजकणान् भास्करा ये महान्तो
नादज्योतिर्विलोम्याकलयसि लहरीः केन्द्रसान्द्रांच बिन्दून्।
धाराधरः स कालः क्रमलवविरही बैन्दवो यः क्रमेत
धत्से चोभौ स्वरूपेप्यनवरहने काल एवासि काली।।

([illegible])

अन्वय–स्वकीये ज्योतिर्व्योम्नि ये महान्तः भास्कराः [तान्] निजकरणान् किरसि (अपने [illegible] आकाश में तुम अपने कणों को फैलाती हो, जो कि महान् भास्कर के रूप में प्रकाशित [illegible]) नादज्योतिः विलोम्य लहरीः केन्द्र सान्द्रान् विन्दून् च आकलयसि (नादज्योति को [illegible] नादलहरियों को और केन्द्र में घनीभूत बिन्दुओं की सृष्ट करती हो।) स कालः क्रमलवविरही [illegible] धार (वह काल क्रमशून्य धारा का आधार–रूप है) यः बैन्दवः क्रमेत (वही काल बैन्दव रूप में [illegible] बनता है) उभौ च अनवरगहने अपि स्वरूपे धत्से (अपने श्रेष्ठ और गहन स्वरूप में तुम काल के इन [illegible] रूपों को धारण करती हो) काली काल एव असि (तुम काल–स्वरूपा काली हो)।

भाष्य–पूर्वश्लोक में हमने आनन्द व्योग या आनन्द रूप आकाश की बात कही है। [illegible] आनन्द व्योम है ? वह तो सभी ज्योतिों की ज्योति है। परम आश्चर्यमय ज्योतिर्व्योम में तुम्हारी [illegible] मानो सहस्र कणों में विच्छुरित होकर आन्तर और बहिर्विश्व में कितने ही महान् भास्कर [illegible] प्रकाश [illegible] रही है! अपने आनन्दज्योति रूप इस व्योम को स्पन्दित करके तुम बनती हो 'नाद' की लहरी। [illegible] है असीम और विस्तृत। उस असीम वितत नाद में परम घनी भाव की सृष्टि करके, अर्थात् उस विस्तृत नाद को उसकी चरम सूक्ष्म अवस्था में ले जाकार सङ्कुचित कर तुम 'बिन्दुरूप' धारण करती हो। [illegible]

एवं बिन्दु में तब तुम पूर्ण होती हो। और इन दोनों पूर्णो के बीच तुम कला–कला में लीलायित होती हो, निज की विवर्तित करती हो। नाद–बिन्दु की लहरें कोनों की ओर धावमान हैं। अर्थात् एक बार विस्तार–फिर संकोच एवं एक बार संकोच फिर विस्तार। इस प्रकार से एक बार विस्तार अपने को संङकुचित करना चाहता है, फिर संकोच अपने को विस्तृत करने का प्रयास करता है। यह जो परस्पर के बीच की गति या धावन है–यही जगत् है। धावन में भी तुम्हारी दो धाराएँ हैं, नादरूप में नित्य महाकाल, धारा, के आधार–रूप में वर्तमान। वह अक्रम का क्रमशून्य अर्थात् Succession या पारम्पर्य तब भी नहीं आया है। भग्नांशविहीन अर्थात् अखण्ड है। और वैन्दव रूप में तुम बिन्दु बनती हो। क्रम एवं अंशरूप धारण करती हो, पहले के प्रतीक के रूप में देखता हूँ तुम्हारे पतल में स्वयं महाकाल को और द्वितीयतः मुण्डमाला मेखला में देखता हूँ तुम्हारी बैन्दवी मूर्ति को। इसलिए तुम कालब्रह्म काली हो।

उदगीर्ण किञ्च जिहा त्वरयति कवलं केवलं व्याकृतं कि
साध्वी वाऽसृक्स्फुरन्ती दशनवररूचिश्चर्वणे व्याहृतानाम्;
अग्नीषोमार्कक्लृप्ता किमपि तब दृशौ व्यावृतव्यञ्जनाय
निर्व्यापारैकतत्त्वा कृतिहृतिभिर्व्यापृता व्यापिताभि।। (जपसूत्रम)

अन्वय–किञ्च उदगीर्ण व्याकृतं केवलं कवलं (कर्त्तु) कि जिह्वा : त्वरयति (तुमसे जो कुछ व्याकृत हुआ है, अर्थात् तुमने जो कुछ उदगीर्ण किया है या उगल दिया है, उसी को कवल बनाने के लिए क्या तुम्हारी जिह्वा त्वरा से प्रत्यनशील है!) साध्वी असृक्स्फुरन्ती दशनवररूचिः वा व्याहृतानां (चर्विताना) चवणे त्वरयति) (अथवा रक्त से रञ्जित तुम्हारी सुन्दर दन्तकान्ति क व्याह वस्तु के ही निगिरण अथवा चर्चित वस्तु के ही चवर्ण में व्याप्त है) मार्कनलुप्ताः तव दृशः अपि कि व्यावृत–व्यञ्जनाय (अग्नि, सोम अंक रूप तुम्हारे तीन नेत्र क्या 'व्यावृत अर्थात् जो विशेष रूप से आवृत है, उसके व्यांजन के लिए है ?) निर्व्यापारैकतत्त्वा व्यापिताभिः कृतिवृतिहृतिभिः कथं व्यापृता (तुम निर्व्यापारैकत्त्वा हो, अर्थात् पूर्ण ब्रह्मस्वरूपा हो, फिर भी व्यापक कृति, वृत्ति, हृति अर्थात् सृष्टि, स्थिति लय से क्यों व्यापृत हो ?)!

भाष्य–तुम अव्याकृत से कुछ व्याकृत होता है, अर्थात् तुमने जो कुछ उदगीर्ण कर दिया है, अथवा बाहर फेंक दिया है, उस सब कुछ की फिर अपने कवल में लाने के लिए ही क्या तुम्हारी रसना व्यापृत बनी हुई है? उसे क्या और कोई काम तुमने नहीं दिया है ? तुम्हारी रक्तरागरंजित दशनवररूचि दनत पङ्क्ति क्या केवल व्याहृत या सृष्ट वस्तुओं के ही व्याहरण में चर्वित के ही चर्वण में निरत है? तुम्हारी आदि व्याहृति क्या है–जिसे तीन या सात या अनन्त व्याहृतियों के रूप में तुमने प्रकाशित किया है? व्याहृति की ग्रन्थि सन्धि सब कुछ तुम्हारे चवर्ण में समीकृत है। तब क्या तुम्हारे दशन की रक्तच्छटा, जिस व्याहृति होम में सब वैगुण्यों का समाधान होता है, उस व्याहृति–होम की शिखा है ? फिर देखता हूँ तुम त्रिनयनी हो–अंर्क, अग्नि, सोम–ये तीन नयन क्या तुम्हाने रसन स्रुवा से चलने वाले

नित्यहोम के तीन होता हैं। क्या वे केवल इसी कर्म में व्रती है ? क्य सृष्टि स्थिति लय, नाभि–अर–नेमि, तुम्हारे इस महाकर्म के संकेत हैं ?

तुम हो निर्व्यापारैकतत्त्वा, पूर्णब्रह्मस्वरूप हो, तब अनन्त व्यापार में व्यावृत क्यों रहती हो? किस प्रयोजन से इतनी व्याकृति, व्यह्वति, व्यावृति की घटा है? क्या यह सब स्वाभाववशतः ही होता चलता है ? स्वाभाववादी तो यह कहत हैं कि सब कुछ अपने आप प्रकृति के कारण होता चलता है,किन्तु हम तो जानते हैं कि तुम जब तक निमित्त न बनो तब तक स्वभाव भी स्व अभाव बन जाता है। अर्थात् उसका भी अस्तित्व नहीं रहता। अतएव तुम्हीं सब कुछ का मूल हो।

जिह्वायां बैखरी वात् दति किमपि वसेन्मध्यमा स्फोटमध्या
पश्यन्तीं च त्रयीं कि व्यवसितमनुदृग्–ज्योतिषा स्वेन पश्येः
सौषुम्णं मध्यगा त्वं प्रविशसि कुहरं न्यस्यसि न्यस्तवर्णान्
मात्रा वाऽप्यर्धमात्राऽप्यमितपररवा नीरवा त्वं परा वाक्।। (जपसूत्रम)

अन्वय–जिह्वायां बैखरी वाक् (जिह्वा में बैखरी वाक्) स्फोटमध्या किमपि दति वसेत् (और स्फोट मध्या मध्यमा क्या तुम्हारी दन्तपंक्ति में रहती है ?) पश्यन्तीं च त्रयीं कि स्वेन व्यवसितमनुदृग–ज्योतिषा पश्येः (त्रयी या वेद रूपा पश्यन्ती को क्या तुम निश्चित मन्त्र और मान्त्रार्थ के रूप में अपनी नयनज्योति से देखती हो ?) मध्यमा त्वं सौषुम्णं कुहरं प्रविशसि (मध्यवर्तिनी होकर तुम सुषुम्ना कुहर में प्रवेश करती हो) व्यस्तवणार्न् न्यस्यसि (यथास्थान वर्णो का न्यास करती हो) मात्रा वाऽपि अर्धमात्राऽपि अमितपररवा त्वं नीरवा परा वाक् (मात्रा, अर्धमात्रा, पूर्णमात्रा और अमात्रा इन चार चरणों) द्वारा चलने पाली हे परा वाक् ! तुम अमित पर रवा अर्थात परात्परा और नीरवा हो।

भाष्य–जब वाक् की दृष्टि से देखता हूँ, तब सोचता हूँ कि तुम ने अपनी व्यक्त रसना में क्या बैखरी वाक् को प्रकाशित कर रखा है ? बैखरी वाक् है स्थूल स्फुटवाणी या व्यक्त शब्द। वाचिक, उपांशु और मानस रूप त्रिविध व्यवहार भी बैखरी के अन्तर्गत हैं। क्या तुमने अपनी ईषत् विस्फुट दशनपङक्ति पर उसी मध्यमा वाक् को प्रकाशित किया है जो मध्यमा बाहर की स्फुट दशनपङ्वि पर उसी मध्यमा वाक् को प्रकाशित किया है जो मध्यमा बाहर की स्फुट वाणी रूप में नित्य स्फीट के उतरण का सेतु स्वरूप है? अपौरूषेय त्रयी या वेदरूपा पश्यन्ती वाक् को क्या तुम साक्षादनुभवगोचर मन्त्र एवं मन्त्रार्थ के रूप में अपनी अकृपण, अकुण्ठित नयनज्योति से प्रकाशित किए हुए हो ! तुम बैखरी रूप का त्याग करते हये मात् कारूपिणी प्रथम निगूढा मध्यमा तनु धारण कर सुषुम्ना कुहर में प्रविष्ट हुई! उस के

फलस्वरूप चक्र–चक्र में, कमल–कमल में, प्रत्येक का वर्णमय मन्त्रविन्यास करती चली गई ! अन्त में महाकुण्डलिनीस्वरूपा तुम, परतत्त्व–सामरस्य के पथ पर अग्रसर होकर क्या अपने मुदित यन्त्र–तन्त्र को प्रस्फुटित, 'पश्यत्' या प्रकट रूप में प्रकाशित कर देती हो ? तुम कौन से अभिसार में चली हो! क्या परतत्व या परा वाक् की ओर नहीं चलती हो ? क्या स्वरूपतः परात्परा या परा नहीं हो ? तब भी हे परा वाक् ! तुम क्यों मात्रा, अर्धमात्रा, पूर्णमात्रा, एवं अमात्रा के चतुष्पाद में नियति ही चल रही हो? क्या तुम नाद, बिन्दु, ज्योति और आनन्द की विच्छिन्न धारा को मुक्त वेणी को पर संगम से युक्त करती हो ? क्या तभी तुम्हारा यह अशेष अभिसार है ?

वाग्दोहं धोक्षि तारं कलयसि च मनून् हुंफडादीन् समर्थान्
वौषट् स्वाहा स्वधैवं कतिविधमनवस्ते च विद्याः कियत्यः
लक्ष्मीर्वाणो च काली निजजिमनुगाः स्वस्ववर्णैः प्रकाश्याः
स्वैः स्वैस्तन्त्रैः प्रकार्यास्त्वमसि निजकृतौ कालिकाद्या स्वतन्त्रा।। (जपसूत्रम)

अन्वय–वाग्दोहं तारं धोक्षि (वाग्दोह–रूप ॐकार का तुम दोहन करती हो) हुंफडादीन् समर्थान् च कलयसि ('हूँ फट' इत्यादि समर्थ मन्त्रों का कलन करती हो), वौषट् स्वाहा स्वधा एवं ते कतिविधमनवः विद्याः च कित्यतः ('वौषट्''स्वाहा''स्वधा' इत्यादि कितने ही प्रकार के तुम्हारे मन्त्र हैं, ओर कितनी ही विद्याएं हैं) लक्ष्मीः वाणी काली च निजनिजमनुगाः स्वस्ववर्णैः प्रकाश्याः (लक्ष्मी,वाणी और काली अपने–अपने मन्त्रों द्वारा गम्य हैं और अपने–अपने वर्णो द्वारा प्रकाश्य हैं) स्वैः स्वैः तन्त्रैः प्रकार्या (वे तीनों देवियाँ अपने अपने तन्त्र द्वारा आकारित हैं) त्वं निज कृतौ आद्या स्वतन्त्रा कालिका अति (तुम अपनी कृति में स्वतन्त्रता हो, आद्या कालिका हो।)

भाष्य–तुम ने किससे निखिल वाक् के सार वाग्दोहरूप ॐकार का उस शान्तातीता परा वाक् से दोहन किया है? तुम तो केवल शान्ता नहीं हो, शान्तातीता हो इसलिए अपने को 'तृष्णीं नाद' के युग्म रूप में व्यक्त कर बिन्दु का मन्थन किया है। उसी मन्थन से ही अकारादि समस्त कलावर्णो का उद्भव हुआ। तूष्णीं हैं शिव! शिव है नाद! इन दोनों के मेलन से ही बिन्दु का मन्थन होता है, जैसे उत्तर और अधर अरणि के घर्षण से अग्नि का मन्थन होता है। उस के पश्चात्, तुम 'हुँ' 'फट्' इत्यादि कितने ही उत्सों के रूप में शक्ति का सोत खोल देती हो। तुम्हारी मन्त्रमयी महाविद्या कितनी असंख्या हैं। महाकाली महालक्ष्मी, महासरस्वती को तुम ने अपना–अपना मन्त्र,तन्त्र,यन्त्र दिया है। उसके मध्य से ही प्रकाशित और अकारित हुई है। यह दैवी सम्पत् तुम स्वयं किसी मन्त्र से किसी यन्त्र तन्त्र से पकड़ में आओगी, इसलि सर्वेश्वरी, स्वच्छन्दा, स्वतन्त्रा नहीं रही हो? अर्थात् तुम स्वतन्त्रा होकर भी हमारी पकड़ में आओगी।

ॐॐ•ॐॐ

कालिकोल्लास–5 (I)

इयं सा राधिका देवी मायया योनिरुपिणी
(कृष्णयामल)

अतिकान्ति कलापिनी, कामकेलि विलासिनी अम्बरावीत सर्वाङ्गी सर्वलीला विलास सदना पराशक्ति कालिका परमेश्वर में विलीन रहती है वही कौलो में शिवशक्ति का सामरस्य समझा जाता है यही कौल चित्त का भाव मय प्रकाश भक्ति अहलादिनी शक्ति का एक विशेषवृत्ति है। अहलादिनी शक्ति महाभाव रुप काली ही है। अनन्तानन्त शक्ति केन्द्रभूता आनन्द प्रधान ही काली है

हे मुक्तानन्द सुधानन्द अमृतानन्द भैरवी
वलयानां नूपुराणां किंकणीणां च सुस्वरम्
क्वचित श्रृङ्गारलीलाभिः
क्वचिद् वीररसेन वै
क्वचित करुणया हास्यरसै
रौद्ररसै क्वचिद्
अदभुतेन रसेनापि वीमत्सरसतः क्वचित्
भयानकरसे ताभिः कृष्णः क्रीडितुमिच्छति (कृष्णयामल)

शक्ति शक्तिमान मे श्रृङ्गार करुण, वीर, हास्य, रौद्र आदि सभी रसो का उन्मेष परिलक्षित होता है श्रृंङ्गार तथा अङ्गार दोनो रुप से माँ काली

पुं प्रकृत्यात्मिका सैव योनिलिङ्ग स्वरुपिणी (कृष्णयामल)

राधाकृष्ण शिव शिवा राघव राघवी लिङ्ग योनि रुप से ही यामल में वर्णित है शिव शक्ति सामरस्य अवस्था का द्योतक है अद्वैतामृतवर्षिणी निर्द्वय अद्वय द्वन्द्वातीत चरम्परमतत्व यह बुद्धयातीत विचारातीता ध्यानातीता अव्यक्ता स्वयं प्रकाश प्रख्या विद्युत गौरी ही है।

निष्कलत्व (वृक्ष की छाया सदृश) सकलतत्व वृक्ष सदृश इस अवस्था का प्रतिपादन वेद भी चकित हो कर करता है वहाँ मौन ही श्रेष्ठ है तन्न मौन एवं वरम् अतद् व्यावृत्या यं चकितमभिधत्ते

शाक्त निष्क्रिय निर्विचेष्ट आत्मा को नही मानते वे तो कर्तृत्व शक्ति से आत्मिका काली को सम्पन्न ही अङ्गीकार करते है हर अवस्था की अभिव्यक्ति ही शक्ति है समभाव साम्यभाव ही सामरस्य है विचित्र वैविध्य रुप समस्त विश्व हि प्रकाश विमर्श के अर्न्तगत है विमर्श की अप्रतिहत सामर्थ्य विश्रुत है

यामल या युगलभाव यही कौलतत्व कौलिकेन्द्र और कौलिनी का युगनद्ध अद्वय स्थिति है शक्ति ऐश्वर्य,उद्यम,स्पन्द स्वातन्त्रय स्फूर्ति उर्मि ओजस कला यह सब काली विमर्शरुपा के पर्याय है आत्मविमर्श रुपिणी चिति भगवती यह अखण्ड एकरसा,अविपर्यासित अव्यभिचरित शक्ति राजधानी है शक्ति नगर की रानी शक्ति अनुत्तरानन्दचिति इच्छाशक्तिनियोजिते (श्री तन्त्रालोके)

नित्यानुकूल भावमयी चिदवस्था है
स्वातन्त्रयमानंद आनन्द शक्ति
स्वतंन्त्रता ही आनन्द का आनन्द तत्व है। (तंत्र सारे)

आनन्दः स्वातन्त्र्यम् स्वात्मविश्रांतिरुपा

युगल भाव बिना आनन्द उल्लसित नही होता

तस्मादेकाकी न रमते स द्वितीयमैच्छत्

निधर्मक ब्रह्म अकेले ऊबगया रमण न कर सका उसने जाया मे स्यात् (मेरे स्त्री हो जाय)सोडकामयत् उसने द्वित्व की कामना किया जाया च पतिश्च

पुमान जायन्ते पुत्र रुपेण अस्यां इति जाया

पुरुष जिसमें पुत्र आदि रुप से उत्पन्न हो उसे जाया कहते है परमदशा अविभक्ता है वहाँ द्वित्व बहुत युगलत्व नही है वह रुपवती है अरुपा हो कर और कलावती है निष्कला हो कर विश्वतीता विश्वोर्त्तीर्णा तथा विश्वात्मक भी है यही शाक्त दर्शन सम्मत है

यदा शिव शक्तयुन्मुखः शक्तिश्च शिवोन्मुखी तदा शिवशक्तोः सामरस्य यामलावस्था भवति यही अर्द्धनारीश्वर की स्थित है एकरुपा एकस्थिता एकप्राणा एकभावापन्न बभूवः इस सामरस्य के भङ्ग होने पर क्रमगत विश्व का प्रादुर्भाव होता है शिवांश साक्षी रुप से रहता है साक्षी अपरिणामी एक है किन्तु शक्ति प्रसरात्मिका संकोचात्मिका होकर प्रसूति सम्पादन करती है

स्पन्द बिन्दु को स्पर्श करता है बिन्दु द्वय रेखा का निर्माण करते है रेखा तीन हो कर त्रिकोण रुप जगद् प्रसवयित्री योनि हो जाती है यही आधार भूता सर्वकार्यकारिणी स्पन्दनात्किा नित्यकार्यकारिणी क्रिया रुपा काली है।

सा एव शुक्लवर्णा वाणी सरस्वती
सरो नीरं तदवद् रसो यस्याः सा सरस्वती।

जल की तरह प्रसरणशीला भक्तरसनाग्र नर्तकी, भक्तरसनाग्रसदना सरस्वती धवलाङ्गी धावन शीला है

पीत वर्णा भुवनेश्वरी है

चौदह भुवनो की स्वामिनी ह्रीङ्कार बीज भूता भुवनेश्वरी दामिनी द्युति पीताभाः है तनु काञ्चनमञ्जरी राधा रक्तवर्णा त्रिपुरसुन्दरी राजराजेश्वरी दामिनी षोडसी पराबाला अरुणाक्षी जीवन साक्षी श्याम वर्णा कालिका सर्वतो अधिका है गम्भीर दुखगाह्रय श्याम वर्णा कालिका सर्वतो अधिक है।

सर्वान्तर्यामिनी–सदा जनानां ह्वदि संनिविष्टा।

कृष्णोऽपि शक्तिरहितः कर्त्तुं शक्तो न किञ्चन।
तस्यापि शक्तिरुपाहं राधिका सर्वतोऽधिका।। (कृष्णयामले)

कृष्णे ब्रह्मणि राधायामषीदभेदो न विद्यते।
एकमेवाद्वयं ब्रह्मेत्युच्ते ब्रह्मवादिभिः।। (कृष्णयामले)

स्वेच्छया स्वभित्तौ विश्वमुन्मीलयति (आगमे) स्वेच्छया अपनी भित्ति पर विश्व को विस्तार कर देती है निमित्त और उपादान स्वतः है स्वयं लीला द्रष्ट्री स्वयं ही अभिनय स्वयं ही अभिनेत्री की प्रेक्षिका भी है नृत्य मे जैसे नर्तकी ब्याप्त है वैसे सृष्टि में सृष्टिकर्त्री व्याप्त है

'जग पेरवन तुम दरवनि हारा' सृष्टिकर्त्री और सृष्टि द्रष्ट्री भी वही है काञ्ची मे कामाक्षी रुप से केरल मे कुमारी रुप से गुजरात में अम्बा रुप से प्रयाग में ललिता रुप से, वाराणसी में विशालाक्षी रूप से, गया में मङ्गवलावती, के रूप से, नेपाल में गुह्येश्वरी के रुप से, बिन्ध्याचल में विन्ध्यवासिनी के रुप से, आसाम में कामाख्या रुप से, बंगाल में दक्षिणा कालिका रुप से अवस्थित है।

एकज्जयोतिरमूद्वेधा राधामाधवरुपकम् राधा माघव एक ही ज्योति के दो विभाग है

राधा सङ्गे यदा भाति
तदा मदन मोहनः।
अन्यथा विश्वमोहेऽपि
स्वयं मदन मोहितः।।

राधा सहकृत श्याम सुन्दर मदन मोहक है अर्थात मन्मथ को भी मोहित कर लेते है राधा से विलग होते ही श्याम सुन्दर स्वयं मदन से विमोहित हो जाते है। जैसे पूर्णिमा राका को हि निर्मल निष्कलङ्क चन्द्र का अमृतमय दर्शन सम्भव है। गहवर्त्त नाभ्यावर्त केलिकल्लोल तरङ्गिणी धवलांगी धावनशील राधा के बिना ब्रज राजकिशोर का दर्शन अशक्य है गौराङ्गी राधा की काया स्थानीय आत्मा की छाया

श्याम प्रतीत होते है आत्मा तु राधिका प्रोक्ता भाया रतः भारतः (जो प्रकाश मे रत) भारत को भारत माता कहा जाता है एतर्थ पूरा भारत शाक्त ही प्रतीत होता है। अमेरिका या ब्रिटेनादि इतर देशो के साथ मातृत्व की विवक्षा श्रवण गोचर नही होती है।

जय जय गिरिवर राज किशोरी
जय महेश मुरव चन्द्र चकोरी
जय गजवदन षडाननमाता
जगत जननी दामिनी द्युतिगाता
भव भव विमव पराभवकारिणी
विश्व विमोहिनी स्ववस विहारिणी
देवि पूजि पद कमल तुम्हारे
सुर नर मुनि सब होहि सुखारे (श्री राम चरितमानस)

देवेन्द्र दानवेन्द्र वन्द्य पादारविन्द सुर असुर के कीरीट (मुकुटशीर्ष) से चुम्बित पाद नियन्तृत्वादन्तर्यामि संज्ञा भवती सर्वनियमकिा भगवती मुक्त केशी

है विकिरिद्रा–विविधान् कीरीन् उपद्रवान
तान द्रावयति इति विकिरिद्रा

नाना उपद्रव द्रावक होने से विकिरिद्रा शब्द व्यवहृत होती है भक्त एकान्त मे जाते नही वही स्वतः एकान्त रुप हो जाते है कालकान्ता मे सब का अन्त ही एकान्त है भक्त का हृदय निर्जन होता है कौलो का निजगृह श्मशान है अरे तत्वजिज्ञासा के लिए नचिकेता यम सदन अर्थात मृत्यु के पास गया जीवन असुरक्षित सा है मृत्यु सुरक्षित सी लगती है

मरो हे योगी मरो मरो मरण रस मीठा।
तिस भरणी मरो जिस मरणी गोरख डीठा।।

कब्र चाहे जितना दूर बनाओ मृत्यु तो गॉव मे घटेगी कोटि कोटि चिता

चीयन्ते काष्ठादीन भूमौ

इति चिता मुझ आत्मस्वरुप मृत्युञ्जय को जला नही सकते अहंग्रहोपासना प्रकार है युवा आकांक्षा करता है मै वृद्ध न होऊ पर नदी के तट पर बैठकर यह सोचना की नदी न बहे कैसे हो सकता है

दीयेरोज बुझते है पर अग्नि शाश्वत है। मृत्यु महात्मा है जो उसे देखे या जान लेता है वह परमात्मिका अमृतरुपा की खोजने लगता है ध्यान मन की मृत्यु है अमृताश्यामा की सघन श्यामल स्निगध छाया की खोज।

या देवी सर्वभूतेषु छाया रुपेणु संस्थिता
छिनत्ति असारं इति छाया (छाया श्याम वर्णा काली ही है)

तेरा चिन्तन तुझको टटोलना ही है पर तू तो अबूझ पहेली अचिन्त्या है क्रीं कुञ्जी भब्य काली महल की दूर नही जाना है डूब जाना है अपने मे ही जो पुरुष ज्ञानी उन्हे क्या मोक्ष से मतलब वे अपने आप मे ही आप अपनी सैर करते है।

यदानन्द सिन्धौ निग्मनः पुमनस्यात्।
अविद्या विलासः समस्त प्रपञ्चः ।।

तू ही गन्ता तू ही गन्तव्य भोक्ता भोग्य और प्रेरयिता तुम्ही हो माँ मै अन्न हूँ भोग्य हूँ तुम भोक्ता बन कर मै अपने आपको निवेदनीय नैवेद्य रुप से समर्पित करता हूँ। ए बार तोमाय खाबो अहमन्नम अहमन्नादः (तैतरीयोपनिषद) भक्त भगवान को आत्मसात करना चाहता है

तस्वीर तुम्हारी मेरे दृग में।
जैसे कस्तूरी रहती मृग में।।

प्रियतम छविनैन वसी आँख की पुतरियाँ काली है काली भी कारी है जैसे अन्धे को सर्वत्र अन्धकार इपाश्यामा –तत्वतः सकृददिवस रुपा भी है

न स्वर्ग ही कुछ बोलता
न नर्क द्वार खोलता
हर आँख में आँख डाल
तस्वीर तेरी टटोलता

दीपक जला तेरे नाम का (माँ काली) कुए का पानी सदा सदा के लिए तृषा को व्याकोप कर देती है ऐ तृषा निवर्तिका तृषा रुपा माँ–आन्तरिक उदभाव ही पूजा है

हजारो नूर उसी की हसरते दीदार पर कुरबाँ।
कि जिसकी जिन्दगी ही हसरते दीदार हो जाय।।

तत्व रुपी काली से मिलना ही जिसका जीवन हो जाय उस पे नूर न्यौछावर है।

अब जाके आरजू का मुकम्मल हुआ नक्श

सब मानने लगे कि मै दिवाना हो गया

तेरा कोई सहज मार्ग नही अदम्य साहस चाहिए हिमालय से अनन्तगुना ऊँची हो और सागर से अनन्त गुणित गम्भीर रम्य नील वर्णा सागर मैं लहरो की हलचल अजस्त्र रुप से तुम्हारा संकीर्तन प्रतीत होता है।

मस्त करना है तो खुम से मुह लगादे साकी।

तू पिलायेगा कहाँ तक मुझे पैमाने से।।

खुम–मद्य भरी सुराही

शुष्क नदी नदीनाथ (समुद्र तक जा भी नही सकती है)

वे गोता कैसें मिलता हमे गौहरे मुराद।

हम तैरते रहे सदा लहरो के झाग पर ।।

गौहरे मुराद (अभीष्ट प्रिय) अब तो इस मंजिल पे आ पहुँचे है तेरी चाहत मे खुद को तुझको खुद मे पाते है

आँख की अर्न्तदशा को काजल क्या जाने

मोर के मन के नशा को बादल क्या जाने।

जो अपने ही मधुर झंकार पे ही मुग्ध है

पाँव कितना कसा है पायल क्या जाने।

आभ्यन्तरीण भाव प्रवाह समुल्लिसित हो रहा है अर्न्तमाया मृण्यमय को चिन्तमय में रुपान्तरित करता हुआ अखण्डित घनाकार काली सर्वत्र व्याप्त है अन्य के लिए अवकाश ही नही

ब्रह्मादयः सुरगणाः कथमत्र सन्ति

स्वर्गादयः वसतयः कथमत्र सन्ति।

यद्येकरुपममलं परमार्थ तत्वम्

ज्ञानामृतं समरसं गगनोपमोऽहम्।।

ब्रह्मा आदि सुरगण यहाँ कैसे है स्वर्गादि वस्तियाँ यहाँ कहाँ–यदि एक रुप अमल परमार्थ तत्व शिवा–ज्ञानामृत समरस गगन सदृश मै ही हूँ

सत्यमूर्ति दुर्गा रज मूर्ति सिंह पर आरुढ होकर तमस्वरुप महिषासुर का उद्‌भेदन करती है। करुणा को करुणा आ जाय भक्त के ऐसे सान्द्र क्रन्दन से अकारण करुण करुणा वरुणालया भक्त की ओर उन्मुख हो जाती है अवारित आँचल का प्रसार और छाया प्रदान करती है

आह जाती है फलक पे रहम लाने के लिए।

बादलो हट जाओ दे दो राह जाने के लिए ।।

काली भुजंडगप्रयातस्तोत्र में उन्मादमुरली, लिए हुए है।

करे उन्मादमुरली

कण कण में छण–छण में सान्द्रोन्माद परम्परा का प्रवाह करती है।

रुन्धन्नम्बुभृतश्च मत्कृतिपरं

जय हो भूतेशगृहणी

रु–धन्नम्बुमृतश्चमकृतपरं कुर्वन मुहुस्तुम्बरु
ध्यानादन्तरयन् सनन्दनमुखान् विस्मापयन् वेधसम।
औत्सुक्यावर्लिभिर्बलिं चटुलयन भोगीन्द्रमाघूर्णयन्
भिन्दन्नण्ऽकटाहमित्तिममितो ब्रभ्राम वंशी ध्वनिः।।

जब वंशी वजती है तो बादलो का गतिरोध हो जाता है संगीत सम्राट तुम्बरु गन्धर्व बार बार चमत्कृत हो उठते सनक सनन्द आदि के हृदय मे रस समुद्र उमड़ने लगता है वे अपनी सब धारणा छोण बैठते ब्रहमा चकित स्तम्भित विस्मित हो कर कहने लगते है मेरी सृष्टि में इतना माधुर्य कहाँ रसाताल के एकछत्र अधिपति दैत्य राजा बलि का चित्त उत्सुकता की परम्परा से आस्थिर हो जाता है। शेष नाग आघूर्णित होने लगते है अनन्त कोटि ब्रहमाण्डो का घेरा तोड़ फोड़ कर सम्पूर्ण जगत में परिव्याप्त हो जाती है यह वंशी ध्वनि।।

ततः शक्तिखट्‌वांगमुण्डं भुशुण्डीं
धनुश्चक्रघण्टा शिशुप्रेत शैलान्
ततो नरकंकाल बभ्रूरगोन्माद
बंशी तथा मुद्‌गरं वह्निकुण्डम् (काली भुजडग प्रयातस्तोत्र)
वंशी धरं कृष्णदेहं द्वापरे संञ्चकारह (महाकाल)

काली द्वापर में वंशीधर कृष्णरुप बन गयी थी हृदयदंशी ये वंशी उन्मादित करती उन्माद मुरली शैलान् विद्रावयस्तैः प्रकटयति परं वाचमोऽकारयोनिम्

यह उन्मादमुरली पाषाण खण्डो को नवनीत की भाँति विगलित करती हुई वाग् योनिपरावाकरुप ओङ्कार संध्वनि करती है

उन्मादवेणुहस्ता–काली

त्रैलोक्यसौन्दर्य सार यौवन से गर्विता काली–स्वच्छ शीतांशुशकल से समलडकृता केलिबल्लभ महाकाल के साथ

अनङ्गाकुलायै विद्महे मदनातुरायै
धीमहि तन्नः कामकलाकाली प्रचोदयात्।।
कामकलाकाली का गायत्री मन्त्र है

महाभैरवी योगिनी डाकिनीभिः,
करालाभिरापाद लम्बत्कचाभिः।
भ्रमन्तीभिरापीय मद्याभिषास्रा
न्यजस्र समं सञ्चरन्तीं हसन्तीम्।।
महाकल्पकालान्तकादम्बिनीत्विट्
परिस्पर्द्धिदेहद्युति घोरनादाम्।
स्फुरद्द्वादशादित्य कालाग्निरुद्र
ज्वलद्विद्युदोघ प्रभा दुर्निरीक्ष्याम्।। (काली भुजङ्ग प्रयात् स्त्रोत)

विलसन्नू पुरां देवीं ग्रथितैः शवपञ्ज़रै से ग्रथित लोकोत्तर नूपुर या गुह्यकाली सैवेयं काली कामकलाभिधा

जो गुह्य काली है वही कामकला काली है
हसन्तीं चरन्तीं डाकिनी षष्टि कोटिभिः

महाभैरवी (भीषणप्रणाद करने वाली है) योगिनी चतुषष्ठि (६४) पदोलक्षित असंख्य) और मारण रुपाहास्यहीना डाकिनीयो के साथ पादपर्यन्त लम्बायमान इन्द्रजालरुप कच(मानो अलि कुलमाला प्रकम्पित और संचूर्णित केश इषात् स्रवति (ईख की विशिष्ट) मदिरा आमोद से अजस्र अश्रान्त संचरण और हास्य युक्त प्रतीत होता है प्रलय कालीन मेघो से भी ज्यादा काले मेघो से बनी देह वाली मेघांड्गी घोर घोषात्मक नादरुपा–द्वादश आदित्य स्फुरणशील कालाग्नि रुद्ररुपा (भगवती) संज्वलित विद्युत सत्यस्यात्मा विद्युत

(सत्य की आत्मा विद्युत है) ओघ प्रवाहा सदृश दुर्निरीक्ष्य प्रतीत होती है विद्योतन करती हुई संविद प्रकाश रुपा चिदग्नि कुण्ड में उल्लास विकास प्रकाश मयी काली

जब भी छाती है मयकदे पे घटा
तेरे बालो की याद आती है।

ध्यायतीव लेलायतीव

लेला खेला विलास करने लगती है मानो निज कालकान्त का ध्यान कर रही है कालकान्ता स्वमुखाम्बुज स्रवित कान्ति सुधा से स्नात प्रतीत होती है जिसके द्वारा समस्त चित्त धर्म देह धर्म विगलित हुआ जा रहा है उस लावण्यसारसर्वस्व से मानो श्री काली विग्रह रचित है।

"स्मरमदनमाङ्गल्य गृहतोरण चिल्लिका"

मुखाम्बुज कामस्मर मदन का मंङ्गल सदन है ओर भ्रू लता मानो सदन पर तोरण द्वार है

"वक्त्र लक्ष्मी परिवाह चलन्मीनाभ लोचना"

मुख सौन्दर्य सरोवर है नेत्र द्वय चञ्चल मीन है

परिवार सरोवर–छविसुधापयोनिधि

ह्रीङ्कारध्वनिकण्ठ कोकिलकूहू प्रोल्लासचूत द्रुमम् मानोश्यामाँ कोयल होकर आम्र शाखाओ पादप पर चढ़कर ह्रीङ्कार ध्वनि कर रही है ह्रीङ्कार रुपी पञ्जर में शुकी (तोतिन) हो कर माँ त्रिपुरसुन्दरी राजराजेश्वरी श्यामाँ

शुकी के बिना पिञ्जडा निरर्थक

ह्रीङ्कार हिमवद्ग गङ्गा की भाँति भगवती ह्रीङ्कार रुपी अम्भोज पर भृङ्गिका बनकर ह्रीङ्कार रुपी उद्यान में केकिनी मयूरी बनकर फल फूल मय उद्यान ह्रीङ्कार है वहा पर मयूरीरुपा लयहीनलसत् तनु गौरी माँ लग्न चामर हस्त श्री शारदा परिवीजिता सरस्वती और लक्ष्मी हाथो में चवँर लिए भगवती का वायु सुख प्रदान करते है

गुहाहितं गह्वरेष्ठं पुराणम् अर्थात मन के खोह में काली रहती है तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरा।

अन्तस् में चित्ति संघान
रामा रमण लम्पटा

लम्पटा–लं पृथ्वी बीज है पट–आवरक है

गह्वर्त मे मणिमाणिक्यमुक्ता
आवृत किये हुए है

वसूनि रत्नानि धारयति इति वसुधा (इति वसुधा)

हानिवृद्धिविवर्जिता न कमर्णा वर्धते नोकनीयेति न कर्म से विवृद्ध हो और न उपक्षीण हाकिनी शक्ति कपालिप्राण नायिका सर्वात्मिक आत्मिका आत्मस्वरुपिणी

यच्चाप्नोति यदादत्ते यच्चात्ति विषयानिह।
यश्चास्य सन्ततो भावस्तस्मादात्मेतिगीयत।।

जो व्याप्त करके है जो ग्रहण किया जाता है जो यहाँ विषयो का भोक्ता है जिसका सतत भाव रहता है इसलिए आत्मा गाया जाता है इश्वरोत्सङ्ग निलया–उत्सङ्ग जङ्घा ईश के जघन प्रान्त पर निलय और इश भी निजकान्ता वक्षोजैक निलय है

जय काली कल्याण करी
खेलति ब्रहमाण्डे काली
खेलति पिण्डाण्डे काली

श्रयते हरिम् या सा श्री (श्रिञ् सेवायाम्) जो भगवान की सेवा करे वही श्री देवी है उत्कट उत्कठा पूर्ण प्रियतम् परिष्वङ्ग ही उत्कृष्ट सेवा है विजातीय प्रत्यय निरासपूर्वक सेव्याकारा कारति मानसीवृत्ति प्रवाह ही सेवा है श्री ने जिसे पूर्ण दृष्टि से देखा वही सर्वेश्वर हो गया और जिसे अल्पदृष्टि से देखा वही जीव हो गया

श्रीयते सर्वेगुणैर्या सा श्री

अगणित गुण गण जिसे भजे आराधना करे वही श्री म्रदिमा–कोमलता की अधिष्ठात्री विग्रहवती अति कोमलाङ्गी है उनके पाद पद्य में कमल की पंखुड़िया कर्कश (गड़ना) प्रतीत होते है कहते हे पंङ्कज का पराग चुभता है ऐसी लोकोत्तर मसृणता कुसुमकोमलता श्यामामाँ की श्रीयते सर्वेर्जगद्‌भिः स्थावरैः जङ्गमैष्च या सा श्री स्थावर और जङ्गम सभी जिसका समाश्रयण करे वह श्री माता जी है

ब्रह्मदयो बहुतिथं यदपाङ्गमोक्षकामस्तपः समचरनः भगवत्प्रपन्नाः।
साश्री स्ववासमरविन्द वन। विहाय यत्पादसौभगमलं भजतेऽनुरक्ता।। (भागवत)

जिनका कृपा कटाक्ष प्राप्त करने के लिए ब्रह्म आदि देवता शरणागत हो कर बहुत दिनो तक तपंस्या करते रहे वही लक्ष्मी जी अपने निवास स्थान कमलवन का परित्याग करके बड़े प्रेम से जिनके चरण कमल की शुभग छत्रछाया का सेवन करती है।

ब्रह्म रुद्र इन्द्र आदि देवाधिदेव अनन्त काल तक तपस्या करते है इस दृष्टि से कि श्री जी अनुग्रह भरी दृष्टि से निहार दे क्योकि उनकी दृष्टि उनकी आँखो में ही चमत्कार है

श्रीयते श्री कृष्णेनापि (हरिणाऽपि) या सा श्री

हरि स्वयं ही जिसकी आराधना करते है वंशी में और क्या गाते है।

शृ हिसायाम् श्रृणाति भक्तानां
दोषान् हिनस्ति इति श्रीः

श्रु श्रवणे धातु से श्री बनता है
श्रृणोति भक्तानां दुख गाथाः

श्रुत्वा च भगवन्तं श्रावयति इति श्री जो भक्तो का दुख गाथा को सुनती है फिर भगवान को सुनाती है वे हैं श्री।

"बन्दे विदेह तनयापदपुण्डरीकं"

श्रीञ पाके श्रीणाति परिपक्वान करोति शुभगुणान इति श्री।

विवेक वैराग्यादि गुणगणो को परिपक्व कर देती है श्री सीता जी श्री हनुमान से बोली

पापानां वा शुभानां वा वधार्हाणामप्लवंगमः वा।
कार्य कारुण्यमार्येण न कश्चिन्ना पराध्यति।।

श्रेष्ठ पुरुष को चाहिए कि कोई पापी हो या पुण्यआत्मा वे वध के योग्य अपराध करने वाले ही क्यो न हो उन सब पर दया करें क्योकि ऐसा कोई भी प्राणी नही है जिससे कभी अपराध ही न होता हो नाम्यावर्त काम दहन कुण्ड है या शङ्कर के ध्यान की गुफा है श्रीमन्न नगर नायिका श्रीमत् त्रिपुर सुन्दरी सच्चिदानन्द सिन्धु है उसमें चिन्मय मणि द्वीप है उसमें चिन्तामणिमय भवन है एक दिव्य सिंहासन है क्रमशः ब्रह्म विष्णु रुद्र ईशान आदि उसके चार पाँव है फलक राजराजेश्वर सदा शिव है उनकें पर्यङ्कपर सिन्दुरारुण विग्रहा श्रीमत् त्रिपुर सुन्दरी समासीन है देवाधिदेव इन्द्र पीक दान है ललिता ताम्बूल उद्‌गीर्ण करती है।

क्वणत्–कञ्चीदामाकरिकल भकुम्भस्तन नता
परक्षीणा मध्ये परिणत शरच्चन्द्र वदना।
धनुर्बाणान् पाशं सृणिमपि दधाना करतलैः
पुरस्तादास्तां नः पुर मथितुराहो पुरुषिका।।

सुधासिन्धोर्मध्ये सुर विटपि वाटी परिवृत
मणिद्वीपे नीपोपवन वति चिन्तामणि गृहे
शिवाकारे मञ्चे परम शिव पर्य्यङ्क निलायाम्
भजन्ति त्वां धन्या कति चनचिदानन्दलहरीम्।।

भाषा में पद्यानुवाद–

मुखरित काञ्ची कृश कटि शोभित
करि कलभो के कुम्भ समान कुच
युग सें कुछ झुकी हुई मुखशरचन्द्र
कें सम छविमान चारो कर कमलो
में धारे अदभुत पाशांकुश धनुष
वाण करै शम्भु पुरुषत्व बोधनी हमें
सदा निज दर्शन दान सुधा सिन्धु
के मध्य कल्प वृक्षो की वाटी से
वेष्टित मणि द्वीप में नीप वनो के
चिन्तामणि गृह में सज्जिता

शिवाकार–मञ्च–स्थित पर शिव पर्यङ्कोपरि शोभा वान
चिदानन्द लहरी तुमको है भजते कोई धन्य सुजान।।

नानानिगमागमाऽनुयायी श्री तुलसी दास के शब्दो में–

रंग भूमि जब सिय पगु धारी
देखिरुप मोहे नर नारी
सियहि बिलोकि धीरता भागी
रहे कहावत परम विरागी

ऐ हूँ हूँ कारा पतङ्गिनी ज्वलदङ्गार कलिका महाभीषण भुजङ्ग के वलय(चूड़िया) सिंह गोमाय प्लवङ्ग केशरि भल्लूक मनुष्य गरुण हाथी मकर और तुरगानन (अश्व) ये तेरे दश मुख गुह्य काली के रुधिरार्णव में रक्तबालूकामय द्वीप पर निवास करने वाली गुह्य भाग का पतन स्थल नेपाल पीठ हुआ वहाँ इकार की उत्पत्ति हुई वाममार्ग का मूल स्थान है छप्पन लाख भैरव भैरवी दो हजार शक्तियों तीन सौ पीठ और चौदह श्मशान सन्निहित है भक्तजनमनोरथदोहिनि माँ गुह्येश्वरी वेद उपवेद अष्टदिक पाल पञ्चप्रेत रुप सिंहासन पर संसरुढ़ कालिका कोटि कोटि मालामन्त्रमय दिव्य कलेवर माँ कालिका है त्रयस्त्रिशत् कोटि (३३करोड़) दिव्य शस्त्र का रणाङ्गण में संधान करती है हे रण पण्डिते रणविशारदे शत्रुपक्षक्षति प्रीता शत्रु पद्धति खण्डनी कोटि कोटि कण्ठो से समर में प्रणाद करती कालिका

दंष्ट्राकरालनि च ते मुखानि
दृष्टैवकालान संनिभानि।
दिशो न जाने न लभे
च शर्म प्रसीद देवेश जगन्नि वासः।। (गीता)

दष्ट्रा (बड़े दशंक दन्त) से कराल विकराल कालानल (प्रलय कालीन अग्नि के तुल्य) भयंकराणि करालानि भय वश दिशाओ का पूर्वापर विवेक शून्य हो गया।

वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति
दष्ट्रा करालानि भयनकानि

केचिद्विलगना दशनान्तरेषु सन्दृश्यन्ते चूर्णि तैरुत्तमाङ्गै

वक्त्राणि–मुखानि

एते सर्वे त्वरमाणा धावन्तः
दष्ट्रा–दंश+ष्ट्रन प्रत्यय अर्थात विकरालदाँत
दष्ट्राभि करालानि भयंकराणि
तेषा मध्ये (दाँत के बीच मे)
केच्चिूर्णीकृतैरुत्तमाङ्गै

(शिर चूर्ण होकर किसी का)

शिरोभिरुपलक्षिता

दन्तसंधिसु संश्रिष्टाः संदृश्यते भक्षित मासमिव (खाये हुए मांस की तरह)

हे प्रलयाब्धि समग्ना–प्रलयाब्धि विहारीणि प्रलय समुद्र में काल कान्ता का विहरण है मानो भयका घट ही फूट गया मुहँ के भीतर दाँतो और दाढ़ो की अत्यधिक भीड़ हो गयी प्रलय काल में शस्त्रो की बाढ़ मानो अमा की रात्री में काल रात्री अपनी अगणित सैन्य शक्ति के संङ्ग विश्व को ग्रसनशील विश्वग्रासा कालिका निर्गीर्ण कर रही है जिस प्रकार बादल आकाश में अदृश्य हो जाते है उसी प्रकार अगणित सेना वाहन शिरस्त्राण कवच भगवती विश्वरूप के मुहँ में निलीन हो जाती है शत्रुसंवर्ग के योद्धाओ का मुकुट विहीन मस्तक दोनो होठो के बीच पिस रहा है।

लेलिह्मसे ग्रसमानः समन्ताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलदभि।
तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रं मासस्तवोग्रा प्रतपन्ति विष्णो।। (गीता)

लेलिह्मसे–आस्वादयसि

लोकान्समग्रान्तानवदनैर्वक्त्रैर्ज्वलद्भिः
दीव्यमानैस्तेजोभिरापूर्य

दीप्तयस्तवोग्राः क्रूराः प्रतपन्ति प्रतापं कुर्वन्ति सर्वान एतान् वीरान्

लेलिह्मयसे–अतिश्येन भक्षयसि किंवा भूयो भूयो–अतिशयेन आस्वादयति प्रतपन्ति–संतापयन्ति जैसे दरिद्र अकाल पड़ जाने पर जीभ चाटता है सारे विश्व का भक्षण करने के बाद भी जीभ लपलपा

रही है कलयति भक्षयति सा काली कुछ अवशेष खाने को बचा नही एक ही घूट में समुद्र पी जायेगी पर्वता कार एक ग्रास(कवल) समस्त पृथ्वी को फुटबाल की तरह कई बार पटक देगी जिस प्रकार इन्धन (लकड़ी) डालने पर अग्नि संदिप्त होती है उसी प्रकार विश्व चर्बण के अनन्तर क्षुधा क्षुधेश्वरी महा काली महामारी क्षुधा तृषा माँ काली विवृद्ध हो गयी ।

हे एक वीरा त्रिभुवन तुम्हारे मुह में वड़वाग्नि में पड़ा कैथा के तुल्य जान पड़ता है अगणित मुख है जैसे चारो ओर दावनल फैल जाय और उसमे मृगी फस जाय ऐसे तुम्हारे मुँह में विश्व प्रतीत होता है सारे संसार की मारण तारण रुप

होली खेलती (कमलाकान्त)
रणे चले द्रुतगति गजगरा

दहन भैरवी ही विश्व के श्मशान होने पर अट्यहास करती हुई अवशेषविशेषातीत

दहन पवन हीनं विद्धि विज्ञानमेकम्
अवनिजलविहीनं विद्धि विज्ञानरूपम्।
समगमनविहीनं विद्धि विज्ञानमेकम्
गगनमिव विशालं विद्धि विज्ञानमेकम्।।

एक विज्ञानधनमूर्ति को ही (विद्धि) जानो शेष दहन पावन अवनि जल साथ गमन आदि अपास्त सत्ता है चिद्व्योम् रुपा विज्ञानधन मूर्ति भगवती ही शेषगा।

संभूति वर्जितमिदं सततं विभाति
संसारवर्जितभिदं सततं विभाति।
संहारवर्जिभिदं सततं विभाति
ज्ञानामृतं समरस गगनो पमोऽहम।।

ऐश्वर्य संसार संहार इत्यादि वर्जित मै ही(निजबोधरूपा काली)ज्ञानामृत समरस आनन्दव्योम रुप से सततविभासित हूँ

माया प्रपञ्च रचना न च मे विकारः
कौटिल्यदम्भरचना न च मे विकारः।
सत्यानृतेति रचना न च मे विकारः
ज्ञानामृतं समरसं गगनोपमोऽहम्।।

माया प्रपञ्च कौटिल्य दम्भ सत्य असत्य द्वन्द्व ये सब विकार मुझमें नही है मै तो विशुद्ध समरस ज्ञानामृत सद्व्योम रुप हूँ। हे माँ तेरी कृपादृष्टि से ही महान पुरुष विषयमृगतृष्णा से बच जाते है वाराहोपनिषद में क्या सुन्दर चित्रण है।

पुङ्खानुपुङ्ख विषयेक्षणतत्परोऽपि
ब्रह्मावलोकन धियं न जहातियोगि।
संगीतताल लयवाद्यवशं गताऽपि
मौलिस्थ कुम्भ परिरक्षण धीर्नटीव।।

रुप रस, गब्द आदि विषय बाण का अग्रभाग (पुङ्ख) एक पर एक गिरे पर योगीन्द्र ब्रह्मतत्व को देखना बन्द नही करता जैसे नर्तकी संगीत ताल लय वाद्य वश गत दीखती है पर शीर्षस्थ घट पर पुरा ध्यान रखती है।

कामक्रो धाद्योः धूर्ता
धुर्तितं यै जगत्त्रयम्।
तान् धूर्तयति यो युक्तया
स धूर्तः धूर्जटिप्रियः।।

काम क्रोद्ध आदि धूर्त है जिससे त्रिभुवन को ठग लिया है जो ग्ज्जान युक्त योगी उसी को ठग ले ऐसा धूर्त (ज्ञानी योगी) धूर्जटि शिव को प्रिय है

;धूः गङ्गा जटासु यस्य सः धूर्जटि

जिसकी जटा में गङ्गा
शङ्करमौलिविहारिणी हिमवदगङ्गा।
अष्टकुलाचल सप्तसमुद्रा
ब्रह्म विष्णु दिवाकर रुद्रा।
न त्वं नाहं नायं लोकः
तदपि किमर्थ किमर्थं क्रियते शोकः।।

ये (सह्याद्रि हिमालय आदि कुल पर्वत सात समुद्र ब्रह्म विष्णु तुम हम ये लोक कुछ नही रहता एक मात्र चिति का संज्ञान अव्वहित रहता है

अवधूताश्र मे देवि यस्य भक्तिश्च निश्चला तस्य
तुष्टा भवेद् काली किंन सिद्धयति भूतले।। (निर्वाण तंन्त्र)

अवधूत आश्रम मे जिसकी निश्चल भक्ति है उससे काली सन्तुष्ट होकर क्या नही भूतल पर सिद्ध करी है अर्थात सब साधन साध्य हस्तामलक करती है

अवधूतं समालोक्य शम्भुं ज्ञात्वा तु पूज्येत् (निर्वाण तन्त्रे)

अवधूत–अवधुनोति बाह्मय प्रकृति विकारान् = अवधूतः

बाह्मय प्रकृति विकार को जो कम्पित (धूञ्कम्पने) कर दे

क्षपितकल्मष अवधूत को शम्भु मानकर पुजें अवधूतेश्वर शिव का अवधूतेश्वरी का प्रणय व्यग्य– 'झगन मगन बउरहवाँ नाचें'

कौन ये महानट हूँ नाचौ जा नरीन संग
भीम हूँ मिरौ न जा दुर्योधन से रन में।
वाम हूँ तो छैल दूढ़ो शूली हूँ न दोषी
यहाँ मै तो हूँ अहिधिर तो पुङ्गी लो करन।
में मै हूँ पशुपति तो काम न तिहारो यहाँ।
चारो वृष धेनु हाँ पधारो आप वन में
शंकर सो शैल सुता सुखद सहाय ऐसो।
करत निवास करौ दास के मन में।।

यह द्रावक रसाधायक प्रसंङ्ग द्रवीकरण हो अन्तः करण जैसे ठोस बर्फ प्रतिबिम्ब का धारक नही और द्रवीभूत होकर बर्फ जल बनता है और प्रतिबिम्ब ग्रहण करता है उद्वेलित रसोद्रेक अवस्था प्रियाप्रियतम छवि का विधारक है रहस्यतम् रहस्य यही है कि अपनी आत्मा ही कालिका है तुम उसी को खोज रहे हो जो तुम हो श्री काली विग्रह संनिविष्ट चित्तं अनन्तर चिद हो जाता है सर्वलोक संज्योति हो जाता है **चित्तं चिद् विजानीयत् यदा तकार रहितम्**

चित्त में से (त्) निकाल देने पर चिद्।

चेतनं चित्तरिक्तं प्रत्येक् चेतनमुच्यते प्रतीपं विपरीतं अञ्चति गच्छति इति प्रत्यक् (अन्तरम् आत्मा ही प्रत्येक चिति है।

आत्मोल्ला सरुपा काली ततो भूयः ततोऽपि भूयः–उर्ध्वविशाल ज्योतिर्धाम विशाल से विशालतर उज्जवलतर धामग योगी तारतम्योपेत होता है बिन्दुरुप में भी देश काल कारणता जन्य निरुक्ति नही है बिन्दु स्वयं निष्कल है किन्तु अनन्त कलनवृत्ति तारुप अर्थात कला के सम्भाव्यसम्भावना रुप समर्थ्य है धनरुपता निखिल अभिव्यक्ति की मूल भूत बीज रुपता क्रीं कपालिन्यै नमः परमकेन्द्राश्रयिणी आनन्दघनः रूपा ही सोऽकामयत् बहुस्याम् प्रजायेय क्रीं है। आसंग ही कामेश्व–कामेश्वर क्रीं है इसी का जप बहिर्जापक से अर्न्तजापक के हाथ में ले जाय–क्रियाङ्ग ज्ञानाङ्ग और भावाङ्ग क्रमशः पुष्ट करें

छाया रुपेण संस्थिता शक्तिरुपेण संस्थिता
वृत्तिरुपेण संस्थिता स्मृतिरुपेण संस्थिता
लज्जारुपेण संस्थिता श्रद्धारुपेण संस्थिता

यही तो विभुत्व है जो विविध रुप से संस्थिता है श्री श्री घूमावती ने अपने हाथ में सूप ले रक्खा है सस्य और भूसा दोनो अविमिश्र पृथग भाव से है सार का निर्वाचन करती है असार को विदूरित करती है वृहदारण्यक में **भूमि अन्तरिक्ष द्यौः** इन आठ अक्षरो को गायत्री का प्रथम पाद कहा है ऋचो यजूषिं सामानि इन आठो अक्षरो को गायत्री का द्वितीय पाद कहा गया है **प्राणाऽपानो ब्यानः** इन आठ अक्षरो को गायत्री का तीसरा पाद माना गया है इस तरह लोकात्मा वेदात्मा एवं प्राणात्मा ये तीनो ही गायत्री के तीनो ही गायत्री के तीन पाद है

शब्दकारी वागादि प्राण गय है गायत्री के **उपस्थान मन्त्र** में कहा है। गय है हे गायत्री आप त्रैलोक्य रुप पाद से एकपदी हो नयी विद्या रुप **से द्विपदी हो प्राणादि** तृतीय पाद से त्रिपदी हो। तुरीय पाद से चतुष्पदी हो। वही कौलाचारो की काली या **चण्डिका अब** धूतेश्वरी है अखंडित धनाकारो वर्तते केवलं शिवः "गुरु शिष्य विचार विशीर्णं इति उपदेश विचार विर्शीव इति। अहमेव शिवः परमार्थ इति अभिवादन मन्त्र करोमि कथं।

"शून्यागारे समरसपूतिस्तिष्ठन्नेकः सुखमवधूतः। चरति हि नग्नस्त्यक्त्वा गर्वं विन्दति केवलमात्मनि सर्वम्।

रथ्था कर्पट विरचित कन्थः पुण्यापुण्य विर्वजितपथः शून्यागारे तिष्ठति नग्नो शुद्ध निरञ्जनि समरसमग्नः।।

गलियो में गिरपड़े टुकड़ो की गुदडी बनाकर पुण्य पाप से विवर्जित शून्यागार किंवा श्मशानागार में निरावरण रुप से स्थित होता है शुद्ध मायामलरहित महामाया की गोद में

जितेन्द्रियोऽहं त्वजितेन्द्रियो वा
न संयमो में नियमो न जातः। (अवधूत गीता)

उस अनामय आत्मा में कोई फर्क नही है लक्ष्यालक्ष्य विवर्जित लक्ष्यो युक्तायुक्त विवर्जित दक्षः, केवलतत्व निरञ्जन पुतोवादविवाद कथमव धूतः।।

महानुभावो नें कहा भोज्य रुप में महाकाल को पार्वती निगल गई अर्थात स्वात्म्य तादात्म्यापदन किया वही रुप घूमाँ माँ अवधूतेश्वरी अघोरेश्वरी धूमावती माँ वर्णातीता आश्रमातीता मृडानी हर बल्लभा ज्येष्ठा श्रेष्ठा वरिष्ठा गरिष्ठा माँ घूमावती अवधूतो की माँ घूमावती ध्यान प्रक्षीण चित्त के लिए कुछ भेद नही प्रतीत होता है

दिन रात्रि विभेद निराकरणमुदितानुदितस्य निराकरणं
यदि चैक निरन्तर सर्व चन्द्रमसौ ज्वलनक्ष कथम् ।।

उस अखण्डित तत्व में दिन रात्रि उदित अनुदित का कुछ भेद नही जब सर्वत्र चिति ही है तो सूर्य चन्द्र अग्नि इन सब के लिए अवकाश कहाँ हर सास(श्वास) मोहब्बत का धुआँ घूमाँवती को समर्पित है धूम्रपान रतेष्टदा

"आब्रहमस्तम्बमेतज्जिरिषति कुतश्च्योतितुस्थेष्ठमिच्छे मात्रा
पादांशकाष्ठाऽकलितरथपदां लौल्यमिच्छेच्च
नेमिः, सम्पाते विश्वबीजं हसितमपि सिताद मिद्यमानिवमिच्छेत
शूर्पेणाढयां रथस्थां विविदिषुरधवां वेंद घूमावती कः।।

अन्वय–एतत् (यह सब) आब्रह्यस्तम्बं (ब्रह्म से ले कर तृण पर्यन्त)कुतः क्यो जिजरिषति(जरा को प्राप्त होना चाहता है स्थेष्ठा च्योतितुम इत्छेत(जो धुव है वह क्यो च्युत होना चाहता है नेमि(चक की नेमि) मात्रा+पाद+अंश+काष्ठा+आकलित+रथपदा) मात्रा पाद कला ये काष्ठा ये भुवन रथ के चार पाएद या चरण है इनकी लौल्यं(चञ्चलता को इच्छेति चाहती है विश्वबीजं(सृष्टि का बीज)सम्पाते (मिलितअवस्था मे)हि +असितम् अपि सितात् मिद्य मानत्व इच्छेत(आसित अशुक्ल विश्वबीज शुक्ल से भिन्न रहना चाहता है शूर्पेण आढ्यां(शूर्पहस्था रथस्था (रथ में स्थिता)अधवां(विधवा घूमावती माता को)कः विविदिषु वेद(कौन जिज्ञासु जान सकता है। क्षुद्र तृण से ब्रह्म पर्यन्त सभी कुछ जराकवलित होना चाहता है यह विश्वजरा क्यो है जो ध्रुवतम् है वह भी क्षयिष्णु है क्या ध्रुव का अपाय या विनाश है मात्रा पाद कला है काष्ठा ही भुवन रथ के चार चरण या चक्र है चक्र की नेमि वो घूमते घूमते लाल होना चाहती है नियति का यह लौल्य क्यो है निखिल सृष्टि का बीज जहाँ एकत्र पिण्डीभूत होता है वहाँ भी जो शुक्ल है वह अशुक्ल से अलग ही रहना चाहता है क्यों यह मौलिक भेद है। रथस्थिता शूर्पहस्ता जरालोला विधवा घूमावती कौन है वे रुथारुढ होकर विश्वभुवन की नियत गति को दिखाती है स्वयं जरालोला होकर इसकी नियत जीर्णता और लौल्य को प्रकट करती है माँ के हाथो में जो सूप है उसके द्वारा विश्व के समस्त सृष्टि बीज को फटक कर नर्वाचन करते हुए बीनते हुए प्रत्येक स्वतं रुप से पृथक रुप से बनाए रखती है विश्व का विपरिणाम उसकी जरा लौल्य प्रत्येक सृष्टि वस्तु पार्थक्य या वैशिष्ट्य रुपी सृष्टि के सभी रहस्य घूमावती की है मूर्ति में छिपे हुए है हमारी माँ अघवा पतिहीना है उनके पति होने स्पर्धा भी किसमें है उनके सीमान्त में सिन्दूर भी डालने का दुःसाहस भी किसको होगा इसलिए चिरकाल से अघवा के वेष में अर्विभूत है।

का शक्तिः शक्तिमान् कः कमिति तदुमयोर्मेलनात् सामस्यं
का वाक कश्चार्थ एवं स्वरतदितरयो र्मातकाद्यर्ण योगात
प्राणा पानैकताने विरमति च जवेकाऽजया चाजयः को ध्मातेः
केति हँसो घमति न शृणुयाद् वायसे को ध्वजस्थ।।

का शक्तिः(शक्ति है 'का')कः शक्तिमान(का शक्तिमान है)तदुमयोः(शक्ति शक्तिमान के)मेलनात् मिला देने से) कम इति सामरस्यम्(सम रस की स्थिति में सुख है) का वाक(का वाक है क च का अर्थः)(और कः का अर्थ है)एवं (इस प्रकार स्वरतदितरयो(स्वरव्यञ्जन)के मातृ काद्यर्ण योगात्(मातृका के आदि वर्ण के योग से)कम इति(सुख है)प्राणपानैकतानै जवे विरमति(प्राणापान व्यापार की एकतानता या समता होने पर उनके वेग का विराम होने पर 'का' अजपा (है)च (कः) अजपः(कः अजय है)ध्वजस्थे घमति वायसे (ध्वजस्थित बोलते हुए वायस के कः केति ध्माते 'का' कः इस उच्चारण में) कः (कौन) हँास (इस मन्त्र को) न शृणुयात नही सुनता है।

भाष्य–घूमावती के रथ ध्वज पर जो यह काक है वह क्या है क्या यह सोच कर देखा है एक ओर विश्व जरा मृत्यु का आह्वान दूसरी ओर जरामृत्यु से अजर अमर को अनपाय स्थान है उससे उत्तरण का आहवान ये दोनो की वायस के क्रमशः(कःक्व)एवं हँस रुति (पुकार) सूचित है कौन कहाँ है आओ रथचक्र के नीचे गिरो और पिसो शूर्प में पड़कर विभक्त विक्षिप्त हो जाओ नियति अनतिक्रम्य है किन्तु वायस के मुख से केवल यही ख ही सुनेंगे हँस रुपी अमृत अभय का आहवान नही सुनेंगे क्या

शक्ति हुई 'का' शक्तिमान कः

यह प्रपञ्च वाक और अर्थ की समष्टि है

मूलतः ये दोनो सम्पृक्त मिथुन है किन्तु उनका वियोग विश्व व्यवहार में होते हुए देखता हूँ का है वाक कः है अर्थ काकः शब्द में स्वरव्यञ्जन मातृका वर्ण के आदि अकार एवं ककार वर्णद्वय युक्त है यदि स्वर एवं व्यञ्जन को वियुक्त करके रखिए तो मृत्यु है यदि युक्त रखिए तो अमृत है योग में वही कं–सुखं है स्वर क्या है मातृका वर्ण क्या है यह सोचकर देखें विधूत कल्पनाजाल होकर माँ घूमाँ का चिन्तन जैसे उदाशय में हाँथी निमज्जित होकर आनन्द उपेत होती है वैसे रसिक का चित्त रसतमा रसवन्ती में निलीन हो जाता है

सा कालिका निजविबोधरुप
निजविबोधारण्य निजविनोदारण्य

नाहं मनुष्यो न च देव यक्षो
न ब्राह्मण क्षत्रियवैश्य शूद्रः।
न ब्रह्मचारी न गृही वनस्थो भिक्षुर्न चाहं विजबोधरुपः।। (तत्व पञ्चकाम्)

न मै मनुष्य हूँ न तो देव,यक्ष ब्राह्मण न क्षत्रिय वैश्य शूद्र न ब्रह्ममचारी न गृही न वनस्थ(वानप्रस्थ)न भिक्षु, सन्यासी अपितु निजबोधरुपा (माँ श्यामाँ) हूँ

नाहं योगी नो वियोगि न रागी
नाहं क्रोधी नैव कामी न लोभी।
नाहं बद्धो नापि युक्तो न मुक्तः
साक्षी नित्यः प्रत्यगेवाहमस्मि।।

शुद्ध प्रत्यक आत्मा मै ही हूँ तदितर कुछ नही महान्त विभुं आत्मानं मत्वा धीरो न शोचति (आध्यात्मोपनिषद)

निज वैभव को जानता हुआ ज्ञानी कुछ भी चिन्ता नही लेता "वंज स्तम्भवद् आत्मानमवलम्बय स्थिरोऽस्म्यिहम" ब्रजस्तम्भवद् आत्मिका कालिका का अवलम्ब (श्रुति) ले कर स्थिर हूँ।

माँ कपालिनी आद्या शक्ति हीन अशक्त किङ्कर्त्तव्यविमूढ़ को शक्ति प्रदान करो माँ चरणाश्रित निपतित तनय का अभाव मोचन करो जननी तुम पूर्ण हो। हे माँ तुम्हारा अपत्य होकर अपत्य केसे अपूर्ण रहूँगा यह तुम्हारा ही उपदेश है कि पूर्ण हूँ अतः तुम से जो सम्भूत है वह प्रजा वर्ग भी पूर्ण है भुवनेश्वरी की संन्तान ऐश्वर्य रहित हो रही है जिसके कृपा कटाक्ष से मरु मे भूमि प्रसन्न सलिला लोल कल्लोल प्रवाह आरब्ध करती है माँ के अङ्ग की कान्ति ही महाज्ञान का आलोक है इसी आभा से अज्ञान का अपसारण करती हे जिस प्रकार अशोक वन में जनकनन्दिनी सीता राक्षसियो के द्वारा वेष्टित थी तदवदिव कालराज्य के अर्न्तगत क्षुधा तृष्णा वासना कामना वार्धक्य जरामृत्यु प्रभृति द्वारा निर्विण्ण हो रहा हूँ। हे दीनरक्षामणे हे दयार्णवे

तेरा गुनहगाँर गुनहगाँर ही सही
तेरे करम की आस लगाये हुए तो हूँ।
ये तुझको इख्तियार है तासीर दे न दे
दस्ते दुवाँ मै आज उठाए हुए तो हूँ।।
तेरे जलवे को दिल में छिपाये हुए तो हूँ।

अखिरकार तेरे अनुकम्पा की भीख माँग ही रहा हूँ(देखि न सकत दीन कर जोरे) (जेहि याचत याचकता जरि जाई)

तुम लिए दूर हो पर क्या मै भी तुम्हारे लिए दूर हू तुम तो सर्वत्र सर्वरुप से सर्वदा अकुण्ठ प्रणय का वितान करती हो मै प्रयास पर तो भरोसा नही करता तुम्हारा प्रसाद ही अवसाद का अपनोदक होगा

तुम मुझ बल्ब की विद्युत हो पहाडो से झरने की ध्वनि आकाश में बादलो की ध्वनि सागर में तरङ्गो का कलरव प्रभात में पक्षियों का हलचल वायु का वृक्षो से सरसराहट ध्वनि ये ध्वनिया तेरे नाद की खबर देते है हृदय की तन्त्री झङ्कृत हो उठी मन बुद्धि चित्त अहमिति विसराई

प्रेमाम्बु धरामयी भगवती रस सुधा सारोवगाह कुशल भक्त को भजनमहिमोदगार में निमज्जित कर देती है जिसका दिवाला निकल गया है ऐसे आर्त भक्त दीवाली अवस्था में ला देती है साँप होके डस लेती है ओझा होके झाड़ देती है।

ब्रह्म स्मीति प्रमाणात् पदतलदलिता विप्रतीता रिरंसा।
प्रज्ञानं ब्रह्म पूर्णादिति पदगमनाच्छान्तिकृन्मन्त्र वर्णेः
आत्मागं ब्रह्म चेति श्रुतिषु निगमनात् तत्वमस्यादितत्वं
नादमृंग्य स्तदर्थः स्फुटितपरिचया छिन्नमस्ताऽस्तु गुह्या।।

अन्यव—(अहं ब्रह्ममास्मि इस प्रमाण से) विप्रतीपा (विपरीता) रिरंसा (रमणेच्छा) उन छिन्नमस्ता के) पदतलदलिता (चरणो में दलित है) शान्ति कृन्मत्र वर्णः (ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं इत्यादि शान्तिपाठ के मन्त्रवर्णो द्वारा) प्रज्ञान ब्रह्म इति पूर्णात पदगमनात् (इस पद द्वारा प्रकाशन में अयमात्मा ब्रह्म इति)इस के (श्रुतिषु) वेंदो में निगमनात् (प्रकाशन से) तत्वमसि आदि तत्वम् (को जो प्रकाशित करती है) तदर्थः (वाक् चतुष्टय का अर्थ) नादैः मृग्यः नादानुसंन्धान द्वारा अन्वेषणीय है (वह गुह्या रहस्यमयी) छिन्नमस्ता देवि स्फुटित परिचया अँस्तु (हमारी बुद्धि में उद्भासित हों)

अर्थ—अहं ब्रह्मस्मि रुप प्रथम पद के द्वारा उन्होने विप्रतीप रिरंसा को सर्वतोभाव से दलित किया है क्योकिं उक्त निश्चय होने पर केवल परमात्मा में ही पूर्ण रति हुवा करती है विप्रतीप रिरंसा का अर्थ स्वरुप से जो विपरीत है उस में रमणेच्छा आत्मा ही निरतिशय प्रिय है अनात्मवस्तु में जो प्रियता धर्म है वह स्वाभाविक नही है अथच अल्प खण्डित अनात्मपदार्थ में ही जीव की रमणेच्छा होती है। छिन्नमस्ता के पदतल में विपरीत रतातुर रतिकाम इसी की प्रतिमूर्ति है मै स्वरुपतः आनन्द ब्रह्म हूँ ब्रह्ममेतर कुछ भी नही अपना मस्तक स्वयं ही छेदन कर के एवं अपने रुधिर का स्वयं ही पान करके वे दिखाती है कि 'यह भी पूर्ण है वह भी पूर्ण है पूर्ण से पूर्ण को ले नेने पर पूर्ण ही रहता है पूर्ण के सिवा अपूर्ण कहा है ?

सः बाह्मयाम्यन्तरो ह्यजः।

अपने दिब्य कलेवर के भीतर जो आत्मा रुधिर रुप में है वह अर्न्तबर्हि सर्वत्र में है।कर की असि का प्रतीक है अपनी देह त्वं पदार्थ अपना उत्त्माङ्ग तत् पदार्थ ही है देह के धर्मादि रुप नाम एव मुण्ड के धर्मादि दोनो का त्याग करके हुए 'रुधिर' रुपी अभिन्न वस्तु या सत्ता रुप में दोनो का ग्रहण हो रहा है देह से जो निर्गलित है वह मुण्ड में सर्मपित व समाप्त हो रहा है।

नादैमृग्यं तदर्थः तदद्येश्य में उसके लिए नादादि द्वारा अन्वेषण करना होगा 'म' है स्पर्श वर्णो का अन्तिम वर्ण उच्चारण में अकार युक्त है 'अ' 'म' के बाद है। अ को 'म' के आगे लाइए। उससे हुआ विपरीत करण 'उ' कार उदानवृत्ति है नाद में जो तत्व निर्गलित है बिन्दु में वह पर्यवसित है।हे सर्वभूत वंशङ्करी सर्वभूत क्षेमङ्करी सर्वभूत क्षयङ्करी सर्वभूत शुभङ्करी भगवती कालिके

फिकिर छांड़ि दे जिकिर किया कर अजब रंगीला मौला है (भगवान कीनाराम)

ए बचवा फिक्र न करे अगर फिक करे भी तो इस बात की फिक्र करे कि हम कैसे बेफिक हो (काला बाबा)।

कामो योनिः कमला वज्रपाणि
र्गुह्वा ह्सा भातरिश्वाभ्रमिन्द्रः।
पुनर्गुह्वा सकला मायया च
पुरुच्यैषा विश्वमातादिविद्योम।। (त्रिपुरोपनिषद)

काम(क) योनि (ए) कमला (ई) वज्रपाणि इन्द्र (ल) पुनः गुह्वा (ह्रीं स क ल वर्ण और माया ह्रीं)

न केवलं साधारणेषु सर्वेषु सुप्तेषु जागर्ति अपि तु सुप्तेऽपि जगन्नाथे जागर्ति अर्थात केवल साधारण सब जीवों के नही बल्कि जगत्पिता के सोते रहने पर भी अपने बच्चो की रक्षा और कल्याण के लिए भी दिन रात सदा सर्वदा जागती है।

शक्तिः प्राक्रमः प्राणः

चिरकाल से यह बात मानी जा रही है मणि मन्त्र और औषधि के प्रभाव से अग्नि का स्पर्श होने पर भी दाह उत्पन्न नही होता अतएव अग्नि में दाहोपयोगी एक ऐसी शक्ति को मानना पड़ेगा जो मणि मन्त्रोषध्यादि के प्रभाव से नष्ट हो सकती है उसके अभाव में उत्पन्न होती है बल्कि भाव पदार्थ अलग अलग शक्ति है यह बात भी विष्णु पुराण में कही गयी है।

शक्तयस्सर्वभावानामचिन्त्यज्ञानगोचरः

एक ही अग्नि में पाचकता दाहकता प्रकाशकता मिथोविलक्षण तीन शक्ति वैसे एक ही है सच्चितानन्दमूर्ति भगवान में आनन्दांश की अह्लदिनी चिदंश की सवित और सदंश की संधिनी शक्तिया है।

भवानि स्तोतु त्वां प्रभवति चतुर्भिन वदनैः।
प्रजानामीशानस्त्रिपुर मथनः पञ्चभिरपि ।।
न षऽभिः सेनानि दशशत मुखरैप्यहिपति।
स्तादान्येषां केषां कथय कथमस्मिन्नवसरः।।

हे भगवती कालिके चतुर्मुख ब्रह्म भी चारमुख से आपकी महिमा बताने में असमर्थ है भगवति भगवान शिव पाँच मुखे से षडानन छः मुख से और शेष सहस्त्र मुख से भी आपकी विरुदावली नही गा सके फिर मुझ अकिञ्चन कि क्या गति होगी किन्तु हे माँ मै गा नही तो क्या हुआ हकलाया तो दौड़ नही पाया लड़खड़ाया तो भूमि पर स्खलित बालक का अवलम्बन भी भूमि ही तो है।

सपर्णामाकीर्णा कतिपय गुणै सादर मिह
श्रयन्त्यये वल्लीं मम तु मतिरेव विलसति।
अपर्णेका सेब्या जगति सकलैर्यत्परिवृतः
पुराणोऽपि स्थाणुः फलति किल कैवल्यपदवीम्।।

मस्ती के आलय में शूरमा ही प्रवेश लेते है

अभी मुनिगणा भगवदीया मुख्या, अरे कालकामिनि–ये काली खोह के वृक्ष लता गुल्म पाषाण मृत्तिका जल कृष्णमुखाम्बुज मर्कट (मरता काटता हुआ) उत्तुङ्ग पर्वत शिखर डाकिनी परिक्षेत्र (आधुनिक डाक बगँला) सब के सबस्थवर जङ्गम कौलिकेन्द्र गण है।

खेलति ब्रहमाण्डे काली खेलति पिण्डाण्डे।
खेलति कालि खोहे काली खेलति कालि खोहे।।

स्थावर जङ्गम नाहं देखे देखे काली मूर्ति!
इन पदार्थ चैत्य दृश्य वर्ग से झाकँती श्यामा माँ सब उसकी खबर दे रहे है

चलना हवा का तुमतुमक
लाता पयामे यार है।
टुक आँख जब लगने लगी
तीरे निगाह तैयार है।।

सर्व कालीमयं रे सर्व कालीमयं रे

पदार्थ घूघट है परमात्मिका माँ की

क्रीड्डराऽम्भोज भृङ्गिका

काले काले भ्रमर क्रीड्कार रुप गुञ्जारव मानो भ्रामरी देवी अरुणासुर को मारकर स्वच्छन्द गीत गा रही है जप चले जैसे श्वास प्रश्वास चलता है जैसे धमनियों में रक्त बहता है जैसे हृदय धड़कता जैसे क्षुधा लगती है कापालिक उसे कहते है जिसने काल का भक्षण किया है जिसके आकाश के कपाल में आलय हो सभी ब्रहमाण्ड का निर्माता हो उन कापालिक भगवान को भक्त जन सहस्त्रो मुखो से प्रणाम करते है कापालिक के पैर की रेखा को ब्रह्म विष्णु महेश आदि निहारा करते है यही सर्वेश्वर सर्व भूतपाल है।

एष सर्वेश्वरः एष भूताधिपतिरेष (वृ 3)

यस्याग्निरास्यं द्यौर्मूधा खं नाभिश्चरणौ क्षिति।

सूर्यश्चक्षुः दिशः श्रोत्रं तस्मै लोकात्मने नमः।। (महाभारत शान्ति पर्व)

अग्नि ही जिसका मुख है स्वर्ग जिसका मूर्धा है आकाश नाभि और चरण पृथ्वी है सूर्य चक्षु दिशाएें श्रोत्र ऐसा लोकात्मक (विराट) रुद्र को नमस्कार है देवी माँ का खण्डन करना परमात्मा जो सर्वशक्ति मान है उसे शक्ति हीन करना है कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुसमर्था तेरा सहारा लेने पर किसी अन्य का सहारा खोजना पड़ता है अपनी दुःख निवृति अशान्ति निवृति अज्ञानता और अल्प शक्ति की निवृत्ति सब कुछ तेरे अराधना से सम्भव है संसार में इष्ट बुद्धि धोखा है फिर जब हम हीरो का व्यापार कर सकते है तो कोयला की दलाली में क्या हाथ गन्दा करना अर्थात तेरा आश्रय लेना ही उत्तमोत्तम है माता पिता भ्राता भी सहायता से इस्तीफा दे देते है आपत्ति काल की ऐ माँ काली तुही शरण्य है परात्परा सर्वेश्वरत्व और सुलभत्व तुझ में है द्रौपदी की रक्षा के लिए बड़े बड़े महारथियो ने इस्तीफा दे दिया तुही चीराऽवतार वस्त्र बनकर साभागार में कृष्णावतार में समरक्षण करती हो वस्तुतः दुख भी भ्रम मूलक है यदि दुःख की पारामार्थिक सत्ता होती तो उसकी निवृत्ति विधाता भी न कर सकता अतः दुख भी रज्जु में सर्प की भाति कल्पित है अर्थात जगद् जादुगर की नोट की भाँति नकली फिर हे सर्वाधारस्वरुपे निराधार का आधार तुम्ही हो यह निष्ठा भी स्वसंवेद्य है हे माँ मेरा मन गोंद की भाँति तेरे उपरिष्टात कृष्ण वर्णा अधःस्तात पृष्ठ रक्त वर्ण शिववक्ष परन्यस्त पादाम्बुज में चिपक (सम्पृक्त) भगत देख राजी हुई जगत देख रोई मसिपुञ्जसमप्रभारुपा–मन ही साधना का मंत्र है

जब शब्द की अपरोक्ष अनुभूति प्राप्त होती है यह लौकिक शब्द नही यह वही विश्वव्यापी शब्द है जो जीव के हृदय से उदभूत होकर विश्व के समस्त अणु परमाणु में परिव्याप्त है। शब्द को धारण के द्वारा आयत्त कर सकते पर शब्द की सिद्धि प्राप्त होती है उस समय शब्द में तन्मयता के साथ

मग्न हो सकने पर समग्र मन को औरो से हटाकर शब्द में लीन कर सकने पर एक अदभुत और विशाल ज्योति का अनुभव होता है शब्द जैसे सर्वव्यापक है समग्र विश्व में प्रसारित रहता है। वह ज्योति भी उसी प्रकार सर्वव्यापक है नित्य शब्द ब्रह्म कं नाम से और नित्य ज्योति ब्रह्मज्योति के नाम से साधक सम्प्रदाय में प्रसिद्ध है। यही नीलज्ज्योति श्यामाँ माँ

शिवं न जानामि कथं वदामि।

शिवं ज जानामि कथं भजामि।।

अहं शिवश्चेत्परमार्थतत्त्वं।

समस्वरुपं गगनोपमं च।।

बोध का अन्तिम पर्यवसान यही स्वयं को शिवरुपा शिवा जाने

काली–रुपमात्मानं विभावयेत (कालिकोपनिषद)

काल क्रम का अपोहन करती कालसङ्कर्षणी काली भावना के बल से कालीत्व प्राप्त कर काली पूजा का अन्यतम् उद्येश्य है। काल शक्ति पर जय प्राप्त करने पर ही जरा मरण का भय दूर हो सकता है परम सुख शान्ति मिलती है द्वेष विवाद आदि समस्त अनर्थ दूर हो जाते है।

ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय का सम्बन्ध है ज्ञानेन्द्रिया बाह्रय जगत से सम्पर्क कराती है इनमें आँख कान विशेष महत्व की इन्द्रिया है जाग्ररत अवस्था में हम एक तरह से बाह्रय विषयो के अधीन रहते है इन्द्रिय एवं विषयो का सनिकर्ष ध्यानात्मक ही होता है आसन से द्रब्यशक्ति प्रणायाम से क्रिया शक्ति एवं प्रत्याहार से विविध ज्ञानात्मक इन्द्रियशक्ति को समाधिस्थ किया जाता है निखिल सृष्टि का चित्त तत्व एक ही है। इन्द्रियो की उपाधि से भिन्न भिन्न विषयो को ग्रहण करने वाली इन्द्रिय शक्तियाँ चित्त सत्व की वृत्ति हैं। इन्द्रियो के द्वारा सत्वात्मक ज्ञान शक्ति भी पृथक पृथक विषयो को ग्रहण करते समय वृत्ति रुप से विक्षिप्त होती है और विषयो का ग्रहण न करने पर अपने गोलक में शान्त हो जाती है अपने अपने गोलक में शान्त हो जाती है अपने गोलक में स्थिर हो जाना ही प्रत्याहार है। द्रब्य समाधि क्रिया समाधि ऐन्द्रियक वृत्ति समाधि के द्वारा चित्त निरोध में पूर्णत उपयोगी है। चित्त वृत्ति धर्मक है वृत्तियाँ उदित और लीन होती रहती है वृत्ति का उपादान त्रिगुणात्मक है। चिन्तन कर्ता ही चित्त है तद् तद् विषय में प्रक्षिप्त चित्त रजस व्याप्त एवं तमस व्याप्त समुद्रिक्त मूढ वृत्ति क्षिप्त विशिष्ट विक्षिप्त' वृत्ति परा तत्व की अभिव्यञ्जिका नही है।

प्राणायामेन पवनं प्रत्याहारेण चेन्द्रियम् ।

वशीकृत्य ततः कुर्याच्चितस्थानं शुभाश्रये।। (विष्णुपुराण)

प्राणायाम से पवन और प्रत्याहार (स्व स्व विषय से मन हटाकर स्व गोलक संस्थापना से इन्द्रियो को वशीकृत कर चित्त को शुभाश्रय सर्वाश्रय कपालकामिनि में लगा देना ऐकाग्रमेकतानम् (सदृश प्रवाह) काली आकाराकारित द्रुत चित्त का माँ काली की ओर प्रधावन एकतानता ही एकाग्रता है ध्येयाकार (भगवती आकार से आकारित निर्भास ही ध्यान है)**मनसा ध्याननिष्पाद्य समाधि सोऽभिधीयते**

(विष्णु पुराण)

मन से ध्यान का निष्पादन (समाधान) ही समाधि कहलाती है।

सर्वेषामेव यज्ञानां ध्यानयज्ञः परस्मृतः।
नित्यश्शुद्धः प्रसन्नश्च सर्वदोषविवर्जित।।

सभी यज्ञो में ध्यान यज्ञ उत्कृष्ट है नित्यशुद्ध प्रसन्न और सर्वदोष विवर्जित ध्यान यज्ञ है हृत्पुण्डरीक निलया श्यामाँ

श्यामाच्छबलं प्रपद्ये शबलाच्छयामं प्रपद्ये

उपरोक्त दहर मन्त्र–श्यामो गम्भीरवर्णः श्यामा इव श्यामो हार्द ब्रहा अत्यन्त दुखगाह्य होने से हार्द अत्यन्त दुखगाह होने से हार्द ब्रहा

शबलात्–ब्रहा लोकात्
नीलज्ज्योति श्यामाँ माँ
कस्तूरिकामृगमदरुपा
श्यामा य एषोऽन्तर्हदय आकाशस्मिन् शेते सर्वस्य वशी।

नास्ति ध्यानसमं तीर्थं नास्ति ध्यानसमं तपः।
नास्ति ध्यानसमो यज्ञस्तस्माद्धयानं समाचरेत्।।

ध्यान के बराबर तीर्थ नही है न ध्यान के तुल्य तप भी नही न ध्यान के बराबर यज्ञ नही है अतः ध्यान का समाचरण करो निरोध का अर्थ मारण नही होता स्वायत्तीकरण होता है इन तीनो में इतना अन्तर अवश्य है आसन और प्रणायाम तो बिना वैराग्य के केवल अभ्यास के लिए किये जा सकते है परन्तु प्रत्याहार अपनी स्थिरता के लिए वैराग्य की अपेक्षा रखता है न्याय वैशेषिक एवं पूर्व मीमासा में द्रव्य रुप से स्वीकृत देश काल योगाभ्यास में कहा विलुप्त हो जाते है देश तथा काल योगसिद्धान्त में पदार्थ नही है वृत्ति के संकोच–विस्तार का नाम देश है

जैसे पंच भूतो में कल्पित आकृतियो अर्थात कार्याभासो को वस्तु समझना अविवेक है वैसे ही ब्यष्टि समष्टि काल को वृत्ति से परे पृथक स्वीकारना अविवेक ही है धारणा के द्वारा प्रधानतः कालकार वृत्ति का संकोच किया जाता है वृत्ति के संकोचन से साक्षात सम्बन्ध होने के कारण तीन साधनो से दोनो

अन्तरंग है पूर्व पश्चिम–उत्तर दक्षिण उर्ध्व–अधः अन्तबर्हिरुप वृत्तियाँ ही दिशाओ के आकार में फैली हुई प्रतीत होती है देश के किसी एक आकार में वृत्ति बाँध दीजिए–मूलाधार या सहस्त्रार वृत्तियो का निरोध अथवा समाधि होने पर देश काल विविध कार्य वस्तुए भासती ही नही चित्तवृत्तियाँ एक अखण्ड चित्त सब विभु द्रष्टा होती है दूसरा पुरुष है कोई ईश्वर है ध्यान ही ध्येय के आकार में भासित हो अपने स्वरुप को छोड़ दे वही समाधि है समाधि में ध्यान और ध्याता का भान नही होता केवल ध्येय रहता है। धारणा ध्यान समाधि इन तीनो का समुदाय एक ही विषय में होने से योग शास्त्र के प्रर्वतक इसे संयम कहते है यह संयम इसलिए कहा जाता है इन तीनो के सिद्ध होने से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ उपलब्ध होती है। हे कामेश्वराङ्कनिलये हे सिद्धिबुद्धिस्वरुपे गणपतिप्रिये संसार विषयो का विषम जाल यहा तेरे अभयहस्त का सहारा न हो तो सारे विवेक कारगर नही होते।

चहुँ दिशि कीचण पानी
जो आता सो फँसता है।
बबरा गाँव अनोखी वस्ती
कोउ हँसता कोउ रोता है।

कही विद्वानो की गोष्ठी और कही सुरामत्त कलह लोगो का हर्षोल्लास में वीणा वादन कहीं कोई मर गया है हाहाकार रोदन और कही रमणी रम्य नृत्य कर रही है कही जर्जर निर्विण्ण बुढ़िया दण्डा लेकर काँप रही है ऐसा विषम विविध जगत है हा तेरे अङ्क की शीतलता हो तेरे कृपादृष्टि की वृष्टि हो तब तो।

प्रलयस्याऽपिहुङ्कारै चलाचलविचालकैः।
विक्षोभं नैति यस्याऽत्मा समहात्मा इति कत्थ्यते।।

चाहे प्रलय (अभी) हुङ्कार करे चल अचल स्थावर जङ्गम को (अस्त व्यस्त) करने वाले भी जिसकी अन्तरात्मा में विक्षोभ नही होता उसे महात्मा कहते है **मह पूजायां आत्मा मनो यस्य स महात्मा** जिसका मन पूजा में (निरन्तर)लगा रहे वही महात्मा (आत्मिका काली में संनिविष्ट चित्त) अशुभ कर्म निर्मूलन परायण आतमा महात्मा है बज्र स्तम्भवत आत्मानां अवलम्बय स्थिरोऽस्मि।

श्रुति सीमन्त का सम्भरण तेरे अद्यःस्तात(अद्य पृष्ठ पादाम्बुज का रक्त वर्ण और उसका पराग मकरन्द से पूरण अर्थात तेरे पैरो की धूल उपनिषद के माँग का सिन्दूर है। **एक एवात्मा मन्तव्यो जाग्रतस्वप्नसुषुप्तिषु** जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति इन अवस्था में एक मात्र आत्मा(आत्म स्फुरता) ही मनन के योग्य है।

जे देखछे मायेर दोल
से देखछे मायेर कोल (श्री राम प्रसाद)

जिसमे माँ का रुप का बोध होगा वो माँ श्यामा के (कोल) गोद में बैठ सकता है। मन की गति अत्यन्त चञ्चल है परन्तु उसका भी विज्ञान है उपनिषदो में मन को ताम्र से उपमित किया है अर्थात साफ करो नींबू आदि से तो चमकता है कुछ काल के बाद पुनः मलिन हो जाता है मन रस लम्पट है और माँ रसवती रासवती रसघना रसतमा है रसतमा माँ में रसलिप्सु मन को संनिविष्ट कर दे यही परमार्थ का मनोविज्ञान है रागास्पद में राग प्रेमास्पद में प्रेम यही भक्ति है वाह्य उपाधि निरपेक्ष प्रेम होता है प्रेम का कोई आन्तरिक रस रसायन रहस्य है क्या कारण है कि सूर्य संदर्शन मात्र से कमल प्रभिन्न विकसित हो जाता है। चन्द्र (चदि आह्लादने) दर्शन मात्र से चन्द्रकान्ता मणि विगलित हो जाती है कोई दृश्यकारण न होने पर भी बिना मार्ग के कमलिनी एक सरोवर से एक अन्य सरोवर में गगन कर जाती है।

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतु।
न खलु बाहिरुपा धीन्प्रीतयः संश्रयन्ते।
विकसति हि पतङ्गस्योदये पुण्डरीकं ।
द्रवति च हिमरश्चमावुद्गते चन्द्रकान्तः ।। (उत्तरामचरितम्)

जगयश भाजन चातक मीना
नेम प्रेम नित निपुण्न नवीना

चातक की टेक अर्थात स्वाती नक्षत्र का जल बिन्दु पान करेगा इतर जल के लिए उसके चञ्चु कुण्ठित (बन्द) है वैसे ही मीन भी जल राशि प्रेमी है दुग्ध सरोवर धृत दधि मधु आदि सरोवर के प्रति कोई लगाव नही केवल जल सरोवर।

आपेदिरेऽम्बरपथं परितः पतङ्गा
भृङ्गा रसालमुकुलानि समश्रायन्ति।
संङ्कोचमञ्चति सरस्त्वयि दीनदीनो
मीनो नु हन्त कतमां गतिमम्युपैतु
(श्री सुभाषित रत्न भण्डा गारम्)

जल से भरपूर सरोवर है कमल कमलिनी कुमुद कुमुदिनी प्रभिन्न रुप से है हंस सारस कारण्डवादि विङ्ग सरोवर की श्री विवृद्धि कर रहे है मृगमण्डली आदि परन्तु ये समृद्धिकाल के ही मित्र है विपत्ति आयी ग्रीष्म काल सरोवर जलहीनशुष्क हो गया हंस सारस विहङ्गमादि अम्बर पथ की शोभा बढ़ाने लगे (अर्थात सरोवर को छोड़ दिये कुमुदकुमुदनी कमल कमालिनी मुरझा गयी भ्रमर मण्डली आम्र बौरो पर परिचक्रमण और गुञ्जारण करने लगे अर्थात सरोवर को छोड़ दिये परन्तु–

सङ्कोचमञ्चति सरस्वती दीनदीनो
मीनो नु हन्त कतमां गतिमम्युपैति

हे सरोवर तू शुष्क होने लगा तेरे सब मित्र चल दिये पर मीन किसगति को जाय वह तुम्हे छोड़ कर कही ही जा सकती तुझ सरोवर के सूखने के पहले मीन सूख जायेगा।

अल्लारी कामयाबी ये आवारगाने इश्क।
खुद गुम हुए तो क्या उसे पाये हुए तो है।।

ये प्रम में भटकन सिखावन और इष्ट मिलावन

मोहब्त नाम है लाहासिल और नातमामी का।
मोहब्त करना है तो दिल को फारिगे सूदे जिया कर ले।।

लाहासिल (कुछ न मिलना) नातमामी(ना कुछ) होना प्रेम राज्य में लाम हानि की दृष्टि भी व्यर्थ है प्रेम साम्राज्य वैचित्र्य सम्पन्न है जहाँ जय ही पराजय है पराजय जय है सर्वज्ञ अल्पज्ञ व्यवहार परायण है अल्पज्ञ अल्प शक्ति जीव सर्वज्ञा माँ श्यामाँ की गोद में बैठ कर शाँहसाहो को पराभूत करता हुआ कितने काँटो की बददुआ ली होगी चन्द कलियो की जिन्दगी के लिए।

इश्क आसा नहि गालिब
इक आग का दरिया है डूब के जाना है।
यद्यपि समं नहि राग न रोषू।
गहहि न पाप पुण्य गुन दोषू।।
तदपि कर सम विषम विहारा।
भगत अभवत् ह्रदय अनुसारा ।। (रामचरित मानस)

भक्ति सम दृष्टि ईश्वर की भक्त के प्रति विषम (अर्थात् भक्तों के लिए कुसुम कोमला और अभक्तों के लिए वज्र से भी ज्यादा भ्यास्पदा माँ है)

हे युद्धोद्यतकलेवरे
नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधय न बहुनाश्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्य
स्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनू स्वाम्।।

शब्दकारी वागादि प्राण गय है गायत्री के उपस्थान मन्त्र में कहा है। हे गायत्री आप त्रैलोक्य रुप पाद से एकपदी हो नयी विद्या रुप से द्विपदी हो प्राणादि तृतीय पाद से त्रिपदी हो। तुरीय पाद से चतुष्पदी हो। वही कौलाचारो की काली या चण्डिका अब धूतेश्वरी है अखंडित धनाकारो वर्तते केवलं

शिवः गुरु शिष्य विचार विशीर्ण इति उपदेश विचार विर्शीव इति। अहमेव शिवः परमार्थ इति अभिवादन मन्त्र करोम कथं।

शून्यागारे समरसपूतिस्तिष्ठन्नेकः सुखमवधूतः। चरति हि नग्रस्त्यक्त्वा गर्वं विन्दति केवलमात्मनि सर्वम्।

रथ्या कर्पट विरचित कन्यः पुण्यापुण्य विर्वजितपथः शून्यगारे तिष्ठति नग्नो शुद्ध निरञ्जनि समरसमानः।।

गलियो में गिरपड़े टुकड़ो की गदडी बनाकर पुण्य पाप से विवर्जित शून्यागार किंवा श्मशानागार में निरावरण रुप से स्थित होता है शुद्ध मायामलरहित महामाया की गोद में

जितेन्द्रियोऽहं त्वजितेन्द्रियो वा
न संयमो में नियमो न जातः (अवधूत गीता)

उस अनामय आत्मा में कोई फर्क नही है

लक्ष्यालक्ष्य विवर्जित लक्ष्यो युक्तायुक्त विवर्जित दक्षः।
केवल तत्व निरञ्जन पुतोवादविवाद कथमव धूतः।।

महानुमावो नें कहा भोज्य रुप में महाकाल को पार्वती निगल गई अर्थात स्वात्म्य तादात्म्यापदन किया वही रुप घूमॉं माँ अवधूतेश्वरी अघोरेश्वरी धूमावती माँ वर्णातीता आश्रमातीता मृडानी हर बल्लभा ज्येष्ठा श्रेष्ठा वरिष्ठा गरिष्ठा माँ घूमावती अवधूतो की माँ घूमावती ध्यान प्रक्षीण चित्त के लिए कुछ भेद नही प्रतीत होता है

दिन रात्रि विभेद निराकरणमुदितानुदितस्य निराकरणं
यदि चैक निरन्तर सर्व चन्द्रमसौ ज्वलनक्ष कथम्

उस अखण्डित तत्व में दिन रात्रि उदित अनुदित का कुछ भेद नही जब सर्वत्र चिति ही है तो सूर्य चन्द्र अग्नि इन सब के लिए अवकाश कहाँ हर सास (श्वासें) मोहब्त का धुआँ घूमाँवती को समर्पित है धूम्रपान रतेष्टदा

आब्रहमस्तम्बमेतज्जिरिषति कुतश्च्योतितुस्थेष्ठमिच्छेन
मात्रा पादांशकाष्ठाऽकलितरथपदां लौल्यमिच्छेच्च नेमिः

सम्पाते विश्वबीजं ह्यसि हसितमपि सिताद मिद्यमानिवमिच्छेत
शूर्पेणाढयां रथस्थां विविदिषुरधवां वेंद घूमावती क :।।

अन्वय–एतत् (यह सब) आब्रह्यस्तम्बं (ब्रह्म से ले कर तृण पर्यन्त) कुतः क्यो जिजरिषति(जरा को प्राप्त होना चाहता है स्थेष्ठा च्योतितुम इत्छेत (जो ध्रुव है वह क्यो च्युत होना चाहता है नेमि(चक्र की नेमि) मात्रा + पाद + अंश + काष्ठा + आकलित + रथपदा) मात्रा पाद कला ये काष्ठा ये भुवन रथ के चार पाएँ या चरण है इनकी लौल्यं(चञ्चलता को इच्छेति चाहती है विश्वबीजं (सृष्टि का बीज)सम्पाते (मिलित अवस्था में) हि + असितम् अपि सितात् मिद्य मानत्व इच्छेत (आसित अशुक्ल विश्वबीज शुक्ल से भिन्न रहना चाहता है शूर्पेण आढ्यां (शूर्पहस्था रथस्था (रथ में स्थिता) अधवां (विधवा घूमावती माता को) कः विविदिषु वेद (कौन जिज्ञासु जान सकता है। क्षुद्र तृण से ब्रह्म पर्यन्त सभी कुछ जराकवलित होना चाहता है यह विश्वजरा क्यो है जो ध्रुवतम् है वह भी क्षयिष्णु है क्या ध्रुव का अपाय या विनाश है मात्रा पांद कला है काष्ठा ही भुवन रथ के तार चरण या चक्र है चक्र की नेमि वो घूमते घूमते लाल होना चाहती है नियति का यह लौल्य क्यो है निखिल सृष्टि का बीज जहाँ एकत्र पिण्डीभूत होता है वहाँ भी जो शुक्ल है वह अशुक्ल से अलग ही रहना चाहता है क्यों यह मौलिक भेद है। रथस्थिता शूर्पहस्ता जरालोला विधवा घूमावती कौन है वे रुथारुढ़या होकर विश्वभुवन की नियत गति को दिखाती है स्वयं जरालोला होकर इसकी नियत जीर्णता और लौल्य को प्रकट करती है माँ के हाथो में जो सूप है उसके द्वारा विश्व के समस्त सृष्टि बीज को फटक कर नर्वाचन करते हुए बीनते हुए प्रत्येक स्वतं रुप से पृथक रुप से बनाए रखती है विश्व का विपरिणाम उसकी जरा लौल्य प्रतयेक सृष्टि वस्तु पार्थभ्य या वैशिष्ट्य रुपी सृष्टि के सभी रहस्य घूमावती की है मूर्ति में छिपे हुए है हमारी माँ अघवा पतिहीना है उनके पति होने की स्पर्धा भी किसमें है उनके सीमान्त में सिन्दूर भी है डालने का दुःसाहस भी किसको होगा इसलिए चिरकाल से अघवा के वेष में अर्विभूत है।

का शक्तिः शक्तिमान कः कमिति तदुभर्योर्मेलनात् सामस्य
का वाक कश्चार्थ एवं स्वरतदितरयो र्मातृकाद्यर्ण योगात
प्राणा पानैकताने विरमति च जवेकाऽजपा चाजपः को
ध्मातेः केति हौंसो धमति न शृणुयाद् वायसे को ध्वजस्थे

का शक्तिः(शक्ति है 'का') कः शक्तिमान (का शक्तिमान है) तदुभयोः(शक्ति शक्तिमान के) मेलनात् मिला देने से) कम इति सामरस्यम् (सम रस की स्थिति में सुख है) का वाक (का वाक है क च का अर्थः) (और कः का अर्थ है) एवं (इस प्रकार स्वरतदितरयो (स्वरव्यञ्जन)के मातृ काद्यर्ण योगात्

(मातृका के आदि वर्ण के योग से) कम इति(सुख है) प्राणपानैकतानै जवे विरमति (प्राणापान व्यापार की एकतानता या समता होने पर उनके वेग का विराम होने पर 'का' अजपा (है) च (कः) अजपः (कः अजय है) ध्वजस्थे

हे एक वीरा त्रिभुवन तुम्हारे मुह में वड़वाग्नि में पड़ा कैथा के तुल्य जान पड़ता है अगणित मुख है जैसे चारो ओर दावनल फैल जाय ऐसे तुम्हारे मुँह में विश्व प्रतीत होता है सारे संसार की मारण तारण रुप होली खेलती

रणे चले द्रुतगति गजगरा (कमलाकान्त)

दहन भैरवी ही विश्व के श्मशान होने पर अट्यहास करती हुई अवशेषविशेषातीत

दहन पवन हीनं विद्धि विज्ञानमेकम्
अवनिजलविहीनं विद्धि विज्ञानरूपम्
समगमनविहीनं विद्धि विज्ञानमेकम्
गगनभिव विशालं विद्धि विज्ञानमेकम्

एक विज्ञानधनमूर्ति को ही (विद्धि) जानो शेष दहन पवन अवनि जल साथ गमन आदि अपास्त सत्ता है चिद्व्योम् रुपा विज्ञानधन मूर्ति भगवती ही शेषगा।

संभूति वर्जितमिदं सततं विभाति
संसारवर्जितभिदं सततं विभाति
संहारवर्जिभिदं सततं विभाति
ज्ञानामृतं समरस गगनो पमोऽहम

ऐश्वर्य संसार संहार इत्यादि वर्जित मै ही (निजबोधरूपा काली) ज्ञानामृत समरस आनन्दव्योम रुप से सततविभासित हूँ

माया प्रपञ्च रचना न च मे विकारः
कौटिल्यदम्भरचना न च मे विकारः
सत्यानृतेति रचना न च मे विकारः
ज्ञानामृतं समरसं गगनोपमोऽहम्

माया प्रपञ्च कौटिल्य दम्भ सत्य असत्य द्वन्द्व ये सब विकार मुझमें नही है मै तो विशुद्ध समरस ज्ञानामृत सद्व्योम रुप हूँ। हे माँ तेरी कृपादृष्टि से ही महान पुरुष विषयमृगतृष्णा से बच जाते है नागहोपनिषद में क्या सुन्दर चित्रण है।

पुङ्खानुपुङ्ख विषयेक्षणतत्परोऽपि
ब्रह्मावलोकन धियं न जहातियोगि
संगीतताल लयवाद्यवशं गताऽपि
मौलिस्थ कुम्भ परिरक्षण धीर्नटीव

रुप रस शब्द आदि विषय बाण का अग्रभाग(पुङ्ख) एक परसगिरे पर योगीन्द्र ब्रह्मतत्व को देखना बन्द नही करता जैसे नर्तकी संगीत ताल लय वाद्य वश गत दीखति है पर शीर्षस्थ घट पर पुरा ध्यान रखती है।

कामक्रो धाद्योः धूर्ता
धुर्तितं यै जगत्त्रयम्
तान् धूर्तयति यो युक्ताया
स धूर्तः धूर्जटिप्रियः

काम क्रोद्ध आदि धूर्त है जिससे त्रिभुवन को ठग लिया है जो युञ्जान युक्त योगी उसी को ठग ले ऐसा धूर्त (ज्ञानी योगी) धूर्जटि शिव को प्रिय है

धूः गंङ्गा जयसु यस्य सः धूर्जटि

जिसकी जटा में गंङ्गा शङ्करमौलिविहारिणी हिमवद गंङ्गा।

अष्टकुलाचल सप्तसमुद्रा
ब्रह्म विष्णु दिवाकर रुद्रा
न त्वं नाहं नायं लोकः
तदपि किमर्थ किमर्थं क्रियते शोकः

ये (सहचाद्रि हिमालय आदि कुल पर्वत सात समुद्र ब्रह्म विष्णु तुम हम ये लोक कुछ नही रहता एक मात्र चिति का संज्ञान अव्वहित रहता है अवधूताश्रमे देवि यस्य भक्तिश्च निश्चला तस्य तुष्टा भवेद् काली किंज सिद्धयति भूतले (निर्वाण तंन्त्र)

अवधूत आश्रम मे जिसकी निश्चल भक्ति है उससे काली सन्तुष्ट होकर क्या नही भूतल पर सिद्ध करी है अर्थात सब साधन साध्य हस्तामलक करती है

अवधूतं स्मालोक्य शम्भुं ज्ञात्वा तु पूज्येत् (निर्वाण तन्त्रे)

अवधूत–अवधुनेति बाहृय विकारं इति

बाहृय प्रकृति विकार को जो कम्पित (धूञ्कम्पने) कर दे

क्षपितकल्मष अवधूत को शम्भु मानकर पुजें अवधूतेश्वर शिव का अवधूतेश्वरी का प्रणय व्यग्य–झगन मगन बउरहवाँ नाचें

कौन ये महानट हूँ नाचौ जा नरीन संग
भीम हूँ भिरौ न जा दुर्योधन से रन में
वाम हूँ तो छैल दूढ़ो शूली हूँ न दोषी
यहाँ मै तो हूँ अहिधर तो पुङ्गी लो करन
मे मै हूँ पशुपति तो काम न तिहारो यहाँ
चारो वृष धेनु हाँ पधारो आप वन में
शंकर सो शैल सुता सुखद सहाय ऐसो
करत निवास करौ दास कर मन में

यह द्रावक रसाधायक प्रसङ्ग द्रवीकरण हो अन्तः करण जैसे ठोस बर्फ प्रतिबिम्ब का धारक नही और द्रवीभूत होकर बर्फ जल बनता है और प्रतिबिम्ब ग्रहण करता है उद्वेलित रसोद्रे अवस्था प्रियाप्रियतम छवि का विधारक है रहस्यतम रहस्य यही है कि अपनी आत्मा ही कालिका है तुम उसी को खोज रहे हो तुम हो श्री काली विग्रह संनिविष्ट चित्तं अनन्तर चिद हो जाता है सर्वलोक संज्योति हो जाता है चित्त

चिद् विजानीयत् यदा तकार रहितः
चित्त में से (त्) निकाल देने पर चिद्।

यच्चितस्तन्मयो भवति गुह्यमेंतत्सनातनम् (जैसा चित्त होगा वैसा सिद्धान्त हो जायेगा यह गुह्य सनातन का सिद्धान्त है)

चित्तमेव हि संसार तत्प्रयत्नेन शोधयत् चेतनप जब चित्त से रिक्त हो जाता है तो प्रत्येक चेतन (चिति) ही शेष रहता है अशेषविशेषातीते

चेतनं चित्तरिक्तं प्रत्यक चेतनमुच्यते प्रतीपं विपरीतं अञ्चति गच्छति इति प्रत्यक्(अन्तरतम् आत्मा ही प्रत्यक चिति है।

आत्मोल्ला सरुपा काली लतो भूयः ततोऽपि भूयः–उर्ध्वविशाल ज्योतिर्धाम विशाल से विशालतर उज्जवलतर धामग योगि तारतम्योपेत होता है बिन्दुरुप में भी देश काल कारणता जन्य निरुक्ति नही है बिन्दु स्वयं निष्कल है किन्तु अनन्त कलनवृत्ति तारुप अर्थात कला के सम्भाण्यसम्भावना रुप समर्थ्य है धनरुपता निखिल अभिव्यक्ति की मूल भूत बीज रुपता क्रीं कपालिन्यै नमः परमकेन्द्राश्रयिणी आनन्दघनःपता ही सोऽकामयत् बहुस्याम् प्रजेययं क्रीं है इसी का जप बहिर्जापक से अनन्तर्जापक के हाथ में ले जाय–क्रियाङ्ग ज्ञानाङ्ग और भावाङ्ग क्रमशः पुष्ट करें

छाया रुपेण संस्थिता शक्तिरुपेण संस्थिता
वृत्तिरुपेण संस्थिता स्मृतिरुपेण संस्थिता
लज्जारुपेण संस्थिता श्रद्धारुपेण संस्थिता

यही तो विभुत्व है जो विविध रुप से संस्थिता है श्री श्री घूमावती ने अपने हाथ सूप ले रक्खा है सस्य और भूसा दोन अविमिश्र पृथग भाव से है सार का निर्वाचन करती है असार को विदूरत करती है वृहदारण्यक में भूमि अन्तरिक्ष द्यौः इन आठ अक्षरो को गायत्री का प्रथम पाद कहा है ऋचो यजूषिं सामानि इन आठो अक्षरो को गायत्री का द्वितीय पाद कहा गया है प्राणाऽपानो ब्यानः इन आठ अक्षरो को गायत्री का तीसरा पाद माना गया है इस तरह लोकात्मा वेदात्मा एवं प्राणात्मा ये तीनो ही गायत्री के तीनो ही गायत्री के तीन पाद है गायन्तं त्रायते या सा गायत्री

गायेन गानेन त्रायते या सा गायत्री
गान से या गान परायण होने से समुद्धार त्राण करती है।

सम्पूर्ण छन्दो में गायत्री छन्द प्रधान है क्योकि वही छन्दो के प्रयोक्ता गयाख्या प्राणो रक्षक है। सम्पूर्ण छन्दो का आत्मा प्राण है विश्व तैजस प्राज्ञ विराट हिरण्य गर्भ अव्याकृत व्यष्टि समष्टि जगत उसकी जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति यह तीनो अवस्थाएं प्रणव की अ उ म इन तीनो मात्राओ के अर्थ है सर्वपालक परमब्रह्म प्रणव का वाच्यार्थ सर्वाधिष्ठान सर्वप्रकाशक सगुण सर्वशक्ति सर्वरहित ब्रह्म प्रणव का लक्ष्यार्थ है। त्रैलोक्य त्रैविद्य तथा प्राण जिस गायत्री के स्वरुप है वह त्रिपदा परोरजा आदित्यः चछुः स्वरुप सत्ता में प्रतिष्ठित है। शब्दकारी वागादि प्राण गय है गायत्री के उपस्थान मन्त्र में कहा है। शब्दकारी वागादि प्राण ग: है गायत्री के उपस्थान मन्त्र में कहा है। हे गायत्री आप त्रैलोक्य रुप पाद से एकपदी हो नयी विद्या रुप से द्विपदी हो प्राणादि तृतीय पाद से त्रिपदी हो। तुरीय पाद से चतुष्पदी हो। वही कौलाचारो की काली या चण्डिका अब धूतेश्वरी है अखंडित धनाकारो वर्तते केवलं शिवः गुरु शिष्य विचार विशीर्ण इति उपदेश विचार विर्शीव इति। अहमेव शिवः परमार्थ इति अभिवादन मन्त्र करोम कथं।

शून्यागारे समरसपूतिस्तिष्ठन्नेकः सुखमवधूतः। चरति हि नग्रस्त्यक्त्वा गर्वं विन्दति केवलमात्मनि सर्वम्। रथ्या कर्पट विरचित कन्यः पुण्यापुण्य विर्वजितपथः शून्यगारे तिष्ठति नग्नो शुद्ध निरञ्जनि समरसमानः।। गलियो में गिरपड़े टुकड़ो की गदडी बनाकर पुण्य पाप से विवर्जित शून्यागार किंवा श्मशानागार में निरावरण रुप से स्थित होता है शुद्ध मायामलरहित महामाया की गोद में

जितेन्द्रियोऽहं त्वजितेन्द्रियो वा
न संयमो में नियमो न जातः (अवधूत गीता)

उस अनामय आत्मा में कोई फर्क नही है लक्ष्यालक्ष्य विवर्जित लक्ष्यो युक्तायुक्त विवर्जित दक्षः केवलतत्व निरञ्जन पुतोवादविवाद कथमव धूतः।

महानुभावो नें कहा भोज्य रुप में महाकाल को पार्वती निगल गई अर्थात स्वात्म्य तादात्म्यापदन किया वही रुप घूमाँ माँ अवधूतेश्वरी अघोरेश्वरी धूमावती माँ वर्णातीता आश्रमातीता मृडानी हर बल्लभा ज्येष्ठा श्रेष्ठा वरिष्ठा गरिष्ठा माँ घूमावती अवधूतो की माँ घूमावती ध्यान प्रक्षीण चित्त के लिए कुछ भेद नही प्रतीत होता है

दिन रात्रि विभेद निराकरणमुदितानुदितस्य निराकरणं यदि चैक निरन्तर सर्व चन्द्रमसौ ज्वलनक्ष कथम् उस अखण्डित तत्व में दिन रात्रि उदित अनुदित का कुछ भेद नही जब सर्वत्र चिति ही है तो सूर्य चन्द्र अग्नि इन सब के लिए अवकाश कहाँ हर सास (श्वास) मोहब्त का धुआँ घूमाँवती को समर्पित है धूम्रपान रतेष्टदा आब्रहमस्तम्बमेतज्जिरिषति कुतश्च्योतितुस्थेष्ठमिच्छे मात्रा पादांशकाष्ठाऽकलितरथपदां लौल्यमिच्छेच्च नेमिः सम्पाते विश्वबीजं हसितमपि सिताद मिद्यमानिवमिच्छेत शूर्पेणाढयां रथस्थां विविदिषुरधवां वेंद घूमावती कः

अन्वय–एतत् (यह सब) आब्रह्मयस्तर्म्ब (ब्रह्म से ले कर तृण पर्यन्त)कुतः क्यो जिजरिषति(जरा को प्राप्त होना चाहता है स्थेष्ठा च्योतितुम इत्छेत(जो धुव है वह क्यो च्युत होना चाहता है नेमि (चक्र की नेमि) मात्रा + पाद + अंश + काष्ठा + आकलित + रथपदा) मात्रा पाद कला ये काष्ठा ये भुवन रथ के चार पाएद या चरण है इनकी लौल्य(चञ्चलता को इच्छेति चाहती है विश्वबीजं (सृष्टि का बीज)सम्पाते (मिलितअवस्था में) हि + असितम् अपि सितात् मिद्य मानत्व इच्छेत (आसित अशुक्ल विश्वबीज शुक्ल से भिन्न रहना चाहता है शूर्पण आढ्यां (शूर्पहस्था रथस्था (रथ में स्थिता) अधवां (विधवा घूमावती माता को) कः विविदिषु वेद (कौन जिज्ञासु जान सकता है। क्षुद्र तृण से ब्रह्म पर्यन्त सभी कुछ जराकवलित होना चाहता है यह विश्वजरा क्यो है जो ध्रुवतम् है वह भी क्षयिष्णु है क्या धुव का अपाय या विनाश है मात्रा पाद कला है काष्ठा ही भुवन रथ के तार चरण या चक्र है चक्र की नेमि वो घूमते घूमते लाल होना चाहती है नियति का यह लौल्य क्यो है निखिल सृष्टि का बीज जहाँ एकत्र पिण्डीभूत होता है वहाँ भी जो शुक्ल है वह अशुक्ल से अलग ही रहना चाहता है क्यों यह मौलिक भेद है। रथस्थिता शूर्पहस्ता जरालोला विधवा घूमावती कौन है वे रुथारुठ्या होकर विश्वभुवन की नियत गति को दिखाती है स्वयं जरालोला होकर इसकी नियत जीर्णता और लौल्य को प्रकट करती है माँ के हाथो में जो सूप है उसके द्वारा विश्व के समस्त सृष्टि बीज को फटक कर नर्वाचन करते हुए बीनते हुए प्रत्येक स्वतं रुप से पृथक रुप से बनाए रखती है विश्व का विपरिणाम उसकी जरा लौल्य प्रतयेक सृष्टि वस्तु पार्थम्य या वैशिष्ट्य रुपी सृष्टि के सभी रहस्य घूमावती की है मूर्ति में छिपे हुए है हमारी माँ अघवा पतिहीना है उनके पति होने की स्पर्धा भी किसमें है उनके सीमान्त में सिकन्दर भी है डालने का दुःसाहस भी किसको होगा इसलिए चिरकाल से अघवा के वेष में अर्विभूत है।

का शक्तिः शक्तिमान कः कमिति तदुमयोर्मेलनात् सामस्यं का वाक कश्चार्थ एवं स्वरतदितरयो र्मातकाद्यर्ण योगात प्राणा पानैकताने विरमति च जवेकाऽजया चाजयः को ध्मातेः केति हौंसो घमति न शृणुयाद वायसे को ध्वजस्थे

का शक्तिः(शक्ति है 'का') कः शक्तिमान(का शक्तिमान है) तदुमयोः (शक्ति शक्तिमान के)मेलनात् मिला देने से) कम इति सामरस्यम्(सम रस की स्थिति में सुख है) का वाक(का वाक है क च का अर्थः) (और कः का अर्थ है) एवं (इस प्रकार स्वरतदितरयो (स्वरव्यञ्जन) के मातृ काद्यर्ण योगात् (मातृका के आदि वर्ण के योग से) कम इति (सुख है) प्राणपानैकतानै जवे विरमति (प्राणापान व्यापार की एकतानता या समता होने पर उनके वेग का विराम होने पर 'का' अजपा (है) च (कः) अजपः(कः अजय है)ध्वजस्थे धमति वायसे(ध्वजस्थित बोलते हुए वायस के साथ कः केति ध्माते("का" क. इस उच्चारण में)कः (कौन) हौंस (इस मन्त्र को) न शृणुयात (नही सुनता है)।

भास्य–घूमावती के रथ ध्वज पर जो यह काक है वह क्या है क्या यह सोच कर देखा है एक ओर विश्व जरा मृत्यु का आह्वान दूसरी ओर जरामृत्यु से अजर अमर को अनपाय स्थान है उससे उत्तरण का आहवान ये दानो की वायस के क्रमशः(कःक्व)एवं हौंस रुति(पुकार) सूचित है कौन कहाँ है आओ रथचक्र के नीचे गिरो और पिसो शूर्प में पड़कर विभक्त विक्षिप्त हो जाओ नियति अनतिक्रम्य है किन्तु वायस के मुख से केवल यह ख ही सुनेंगे हौंस रुपी अमृत अमय का आहवान नही सुनेंगे क्या शक्ति हुई 'का' शक्तिमान कः

यह प्रपञ्च वाक और अर्थ की समष्टि है मूलतः ये दोनो सम्पृक्त मिथुन है किन्तु उनका वियोग विश्व व्यवहार में होते हुए देखता हूँ का है वाक कः है अर्थ काकः शब्द में स्वरव्यञ्जन मातृका वर्ण के आदि अकार एवं व्यञ्जन को वियुक्त करके रखिए तो अमृत है योग में वही कं–सुख है स्वर क्या है मातृका वर्ण क्या है यह सोचकर देखें विधूत कल्पना जाल होकर माँ घूमाँ का चिन्तन जैसे उदाशय में हाँथी निमज्जित होकर आनन्द उपेत होती है वैसे रसिक का चित्त रसतमा रसवन्ती में निलीन हो जाता है

सा कालिका निजबोधरुपा
निजविबो धारण्य निजविनोदारण्य
नाहं मनुष्यो न च देव यक्षो
न ब्राह्मण क्षत्रियवैश्य शूद्रः
न ब्रह्मचारी न गृही वनस्थो भिक्षुर्न चाहं विजबोरुपः (तत्व पञ्चकाम्)

शक्ति हुई 'का' शक्तिमान कः

यह प्रपञ्च वाक और अर्थ की समष्टि है मूलतः ये दोनो सम्पृक्त मिथुन है किन्तु उनका वियोग विश्व व्यवहार में होते हुए देखता हूँ का है वाक कः है अर्थ काकः शब्द में स्वरव्यञ्जन मातृका वर्ण के आदि अकार एवं व्यञ्जन को वियुक्त करके रखिए तो अमृत है योग में वही कं–सुख है स्वर क्या है मातृका वर्ण क्या है यह सोचकर देखें विधूता कल्पना जाल होकर माँ घूमाँ का चिन्तन जैसे उदाशय में हाँथी निमज्जित होकर आनन्द उपेत होती है वैसे रसिक का चित्त रसतमा रसवन्ती में निलीन हो जाता है

सा कालिका निजबोधरुपा निजविबो धारण्य निजविनोदारण्य

नाहं मनुष्यो न च देव यक्षो
न ब्राह्मण क्षत्रियवैश्य शूद्रः
न ब्रह्मचारी न गृही वनस्थो भिक्षुर्न
चाहं विजबोरुपः (तत्व पञ्चकाम्)

न मै मनुष्य हूँ न तो देव,यक्ष ब्राह्मण न क्षत्रिय वैश्य शूद्र न ब्रह्ममचारी न गृही न वनस्थ(वानप्रस्थ)न भिक्षु, सन्यासी अपितु निजबोधरुपा(माँ श्यामाँ) हूँ

नाहं योगि नो वियोगि न रागी
नाहं क्रोधी नैव कामी न लोभि
नाहं बद्धो नापि युक्तो न मुक्तः
साक्षी नित्यः प्रत्यगेवाहमस्मि

शुद्ध प्रत्यक आत्मा मै ही हूँ तदितर कुछ नही महान्त विमुं आत्मानं मत्वा धीरो न शोचति

(आध्यात्मोपनिषद)

निज वैभव को जानता हुआ ज्ञानी कुछ भी चिन्ता नही लेता ब्रज स्तम्भवद आत्मानमवलम्बय स्थिरोऽस्मियिम ब्रजस्तम्भवद् आत्मिका कालिका का अवलम्भ(श्रुति) ले कर स्थिर हूँ।

माँ कपालिनी आद्या शक्ति हीन अशक्त किङ्कृत्तव्य वमूढ़ को शक्ति प्रदान करो माँ चरणाश्रित निपतित तनय का अभाव मोचन करो जननी तुम पूर्ण हो। है माँ तुम्हारा अपत्य होकर अपत्य होकर केसे अपूर्ण रहूँगा यह तुम्हारा ही उपदेश है कि पूर्ण हूँ अतः तुम से जो सम्भूत है वह प्रजा वर्ग भी पूर्ण है भुवनेश्वरी की संन्तान ऐश्वर्य हो रहित हो रही है जिसके कृपा यक्ष से मरु भूमि प्रसन्न सलिला लोल कल्लोल प्रवाह आरब्ध

करती है माँ के अङ्ग की कान्ति हा महाज्ञान का आलोक है इसी आभा से अज्ञान का अपसारण करती हे जिस प्रकार अशोक वन में जनकनन्दिनी सीता राक्षसियो के द्वारा वेष्टित थी तदवदिव कालराज्य के अर्न्तगत क्षुधा तृष्णा वासना कामना वार्धक्य जरामृत्यु प्रभृति द्वारा निर्विण्ण हो रहा हूँ।

हे दीनरक्षामणे हे दयार्णवे
तेरा गुनहगाँर गुनहगाँर ही सही
तेरे करम की आस लगाये हुए तो हूँ
ये तुझको इख्तियार है तासीर दे न दे
दस्ते दुवाँ मै आज उठाए हुए तो हूँ
तेरे जलवे को दिल में छिपाये हुए तो हूँ

अखिरकार तेरे अनुकम्पा की भीख माँग ही रहा हूँ(देखि न सकत दीन कर जोरे) (जेहि याचत याचकता जरि जाई)

तुम मेरे लिए दूर हो पर क्या मै भी तुम्हारे लिए दूर हू तुम तो सर्वत्र सर्वरुप से सर्वदा अकुण्ठ प्रणय का वितान करती हो मे प्रयास पर तो भरोसा नही करता तुम्हारा प्रसाद ही अवसाद का अपनोदक होगा तुम मुझ बल्ब की विद्युत हो पहाड़ो से झरने की ध्वनि आकाश में बादलो की ध्वनि सागर में तरङ्गो का कलरव प्रभात में पक्षियो का हलचल वायु का वृक्षो से सरसराहट ध्वनि ये ध्वनिया तेरे नाद की खबर देते है हृदय की तन्त्री झकृत हो उठी मन बुद्धि चित्त अहमिति विसराई प्रेमाम्बु धरामयी भगवती रस सुधा सारोवगाह कुशल भक्त को भजनमहिमोदगार में निमज्जित कर देती है जिसका दिवाला निकल गया है ऐसे आर्त भक्त दीवाली अवस्था में ला देती है साँप होके डस लेती है ओझा होके झाड़ देती है।

ब्रह्म स्मीति प्रमाणात् पदतलदलिता विप्रतीता रिरंसा प्रज्ञानं ब्रह्म पूर्णादिति पदगमनाच्छान्तिकृन्मन्त्र वर्णैः आतमागं ब्रह्म चेति श्रुतिषु निगमनात् तत्वमस्यादितत्वं नादैर्भृग्य स्तदर्थः स्फुटितपरिचिया छिन्नमाऽस्तु गुह्या अन्यव (अहं ब्रह्ममास्मि इस प्रमाण से) विप्रतीपा (विपरीता)रिरंसा(रमणेच्छा) उन छिन्नमस्ता के) पदतलदलिता (चरणो में दलित है) शान्तिकृन्यत्र वर्णैः (ऊँ पूर्णमटः पूर्णमिदं इत्यादि शान्तिपाठ के मन्त्रवर्णो द्वारा) प्रज्ञान ब्रह्म इति पूर्णात पदगमनात् (इस पद द्वारा प्रकाशन में अयमात्मा ब्रह्म इति) इस के (श्रुतिषु) वेंदो में निगमनात् (प्रकाशन से) तत्वमसि आदि तत्वम्(को जो प्रकाशित करती है) तदर्थः (वाक् चतुष्टय का अर्थ) नादैः मृग्यः नादानुसंन्धान द्वारा अन्वेषणीय है(वह गुह्या रहस्यमयी)छिन्नमस्ता देवि स्फुटित परिचिया अस्तु (हमारी में उदभासित हों)

अर्थ–अहं ब्रह्मास्मि रुप प्रथम पद के द्वारा उन्होने विप्रतीप रिरंसा को सर्वतोभाव से दलित किया है क्योकिं उक्त निश्चय होने पर केवल परमात्मा में ही पूर्ण रति हवा करती है विप्रतीप रिरंसा का अर्थ स्वरुप से जो विपरीत है उस में रमणेच्छा आत्मा ही निरतिशय पिय है अनात्मवस्त में जो प्रियता

धर्म है वह स्वाभाविक नही है अथच अल्प खण्डित अनात्मपदार्थ में ही जीव की रमणेच्छा होती है। छिन्नमस्ता के पदतल में विपरीत खातुर रतिकाम इसी की प्रतिमूर्ति है मै स्वरुपतः आनन्द ब्रह्म हूँ ब्रह्मेतर कुछ भी नही अपना मस्तक स्वयं ही छेदन कर के एवं अपने रुधिर का स्वयं ही पान करके वे दिखाती है कि 'यह भी पूर्ण है वह भी पूर्ण है पूर्ण से पूर्ण को ले नेने पर पूर्ण ही रहता है पूर्ण के सिवा अपूर्ण कहा है ?

सः बाह्ययाभ्यन्तरो ध्यजः।

अपने दिव्य कलेवर के भीतर जो आत्मा रुधिर रुप में है वह अर्न्तबर्हि ये है।कर की असि का प्रतीक है अपनी देह त्वं पदार्थ अपना उत्त्माङ्ग तत् पदार्थ ही है देह के धर्मादि रुप नाम एव मुण्ड के धर्मादि दोनो का त्याग करके हुए 'रुधिर' रुपी अमिन वस्तु या सत्ता रुप में दोनो का ग्रहण हो रहा है देह से जो निर्गलित है वह मुण्ड में सर्मपित व समाप्त हो रहा है।

नादैमृग्यं तदर्थः तदद्येश्य में उसके लिए नादादि द्वारा अन्वेषण करना होगा 'म' है स्पर्श वर्णो का अन्तिम वर्ण उच्चारण में अकार युक्त है 'अ' 'म' के बाद है। अ को 'म' के आगे लाइए। उससे हुआ विपरीत करण 'उ' कार उदानवृत्ति है नाद में जो तत्व निर्गलित है बिन्दु में वह पर्यवसित है।हे सर्वभूत वंशकरी सर्वभूत क्षेमङ्करो सर्वभूत क्षयङ्करी सर्वभूत शुभङ्करी भगवती कालिके फिकिर छांड़ि दे जिकिर किया कर अजब रंगीला भोला है (भगवान कीनाराम) ए बचवा फिक न करे अगर फिक करे भी तो इस बात की फ्रिक करे कि हम कैसे बेफ्रिक हो (काला बाबा)।

कामो योनिः कमला वज्रपाणि
र्गुह्या ह्सा भातरिश्वाभ्रमिन्द्रः
पुनर्गुह्या सकला मायया च
पुरुच्यैषा विश्वमातादिविद्योम **(त्रिपुरोपनिषद्)**

काम (क) योनि (ए) कमला (ई) वज्रपाणि इन्द्र (ल) पुनःगुह्या (ह्रीं स क ल वर्ण और माया ह्रीं)

न केवलं साधारणेषु सर्वेषु सुप्तेषु जागर्ति अपि तु सुप्तेऽपि जगन्नाथे जागर्ति अर्थात केवल साधारण सब जीवों के नही बल्कि जगत्पिता के सोते रहने पर भी अपने बच्चो की रक्षा और कल्याण के लिए भी दिन रात सदा सर्वदा जागती है।

शक्तिः प्राक्रमः प्राणः

चिरकाल काल से यह बात मानी जा रही है मणि मन्त्र और औषधि के प्रभाव से अग्नि का स्पर्श

होने पर भी दाह उत्पन्न नही होता अतएव अग्नि में दाहोपयोगी एक ऐसी शक्ति को मानना पड़ेगा जो मणि मन्त्रोषध्यादि के प्रभाव से नष्ट हो सकती है उसके अभाव में उत्पन्न होती है बल्कि भाव पदार्थ अलग अलग शक्ति है यह बात भी विष्णु पुराण में कही गयी है।

शक्तयस्सर्वभावानामचिन्त्यज्ञानगोचरः

एक ही अग्नि में पाचकता दाहकता प्रकाशकता मिथोविलक्षण तीन शक्ति वैसे एक ही है सच्चितानन्दमूर्ति भगवान में आनन्दांश की हलादिनी चिदंश की सवित और सदंश की संधिनी शक्तिया है।

भवानि स्तोतु त्वां प्रभवति चतुर्मिन वदनैः।
प्रजानामीशानस्त्रिपुर मथनः पञ्चभिरपि ।।
न षडाभिः सेनानि दर्शशत मुखरैप्यहिपति।
स्तादान्येसा केषां कथय थमस्मिन्नवसरः।।

हे भगवती कालिके चतुर्मुख ब्रह्म भी चारमुख से आपकी महिमा बताने में असमर्थ है भगवति भगवान शिव पाँच मुखे से षडानन छः मुख से और शेष सहस्त्र मुख से भी आपकी विरुदावली नही गा सके फिर मुझ अकिञ्चन कि क्या गति होगी किन्तु हे माँ मै गा नही तो क्या हुआ हकलाया तो दौड़ नही पाया लड़खड़ाया तो भूमि पर स्खक्षित बालक का अवलम्बन भी भूमि ही तो है।

सपर्णामाकीर्णा कतिपय गुणै सादर मिह
श्रयन्त्यन्ते वल्लीं मम तु मतिरेव विलसति।
अपर्णेका सेब्या जगति सकलैर्यत्परिवृतः
पुराणोऽपि स्थाणुः फलति किल कैवल्यपदवीम्।।

मस्ती के आलय में शूरमा ही प्रवेश लेते है

अभी मुनिगणा भगवदीया मुख्या अरे कालकामिनि–ये काली खोह के वृक्ष लता गुल्म पाषाण मृत्तिका जल कृष्णमुखाम्बुज मर्कट (मरता काटता हुआ) उत्तुङ्ग पर्वत शिखर डाकिनी परिक्षेत्र (आधुनिक डाक बगँला) सब के सबस्थवर जङ्गम कौलिकेन्द्र गण है।

खेलति ब्रहमाण्डे काली खेलति पिण्डाण्ड।
खेलति कालि खोहे काली खेलति कालि खोहे।।

स्थावर जङ्गम नाहं देखे देखे काली मूर्ति !
इन पदार्थ चैत्य दृश्य वर्ग से झाकँती श्यामा माँ सब उसकी खबर दे रहे है

चलना हवा का ठुमठुमक

लाता पयामे यार है

टुक आँख जब लगने लगी
तीरे निगाह तैयार है

सर्व कालीमयं रे सर्वं कालीमयं रे
पदार्थ घूघट है परमात्मिका माँ की
क्रीङ्कराऽम्भोज भृङ्गिका

काले काले भ्रमर क्रीङ्कार रुप गुञ्जारण मानो भ्रामरी देवी अरुणासुर को मारकर स्वच्छन्द गीत गा रही है जप चले जैसे श्वास प्रश्वास चलता है जैसे घमनियाँ में रक्त बहता है जैसे हृदय धड़कता जैसे क्षुधा लगती है कापालिक उसे कहते है जिसने काल का भक्षण किया है जिसके आकाश के कपाल में आलय हो सभी ब्रहमाण्ड का निर्माता हो उन कापालिक भगवान को भक्त जन सहस्त्रो मुखो से प्रणाम करते है कापालिक के पैर की रेखा को ब्रह्म विष्णु महेश आदि निहारा करते है यही सर्वेश्वर सर्व भूतपाल है।

एष सर्वेश्वरः एष भूताधिपतिरेष (वृ 3)
यस्याग्निरास्यं द्यौर्मूधा खं नाभिक्षरणौ क्षिति
सूर्यश्चक्षुः दिशः श्रोत्रं तस्मै लोकात्मने नमः (महाभारत शान्ति पर्व)

अग्नि ही जिसका मुख है स्वर्ग जिसका मूर्धा है आकाश नाभि और चरण पृथ्वी है सूर्य चक्षु दिशाएं श्रोत्र ऐसा लोकात्मक (विराट)प को नमस्कार है देवी माँ का खण्डन करना परमात्मा जो सर्वशक्ति मान है उसे शक्ति हीन करना है कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुसमर्था तेरा सहारा लेने पर किसी अन्य का सीरा खोजना पड़ता है अपनी दुःख निवृति अशान्ति निवृति अज्ञानता और अल्प शक्ति की निवृत्ति सब कुछ तेरे अराधना से सम्भव है संसार में इष्ट बुद्धि धोखा है फिर जब हम हीरो का व्यापार कर सकते है तो कोयला की दलाली में क्या हाथ गन्दा करना अर्थात तेरा आश्रय लेना ही उत्तमोत्तम है माता पिता भ्राता भी सहायता से इस्तीफा दे देते है आपत्ति काल की ऐ माँ काली तुही शरण्य है परात्परा सर्वेश्वरत्ण और सुलभत्व तुझ में है द्रौपदी की रक्षा के लिए बड़े बड़े महारथियो ने इस्तीफा दे दिया तुही चीराऽवतार वस्त्र बनकर साभागार में कृष्णावतार में समरक्षण करती हो वस्तुतः दुख भी भ्रम मूलक है यदि दुःख की पारामार्थिक सत्ता होती तो उसकी निवृत्ति विधाता भी न कर सकता अतः दुख भी रज्जु में सर्प की भाति कल्पित है अर्थात जगद् जादुगर की नोट की भाँवि नकली फिर हे सर्वाधारस्वरुपे निराधार का आधार तुम्ही हो यह निष्ठा भी स्वसंवेद्य है हे माँ मेरा मन गोंद की भाँति तेरे उपरिष्यत कृष्ण वर्णा अधः पृष्ठ रक्त वर्ण शिववक्ष परन्यस्त पादाम्बुज में चिपक (सम्पृक्त)
भगत देख राजी हुई जगत देख रोई हे मसिपुञ्जसमप्रभारुपा–मन ही साधना का मंत्र है

जब शब्द की अपरोक्ष अनुभूति प्राप्त होती है यह लौकिक शब्द नही यह वही विश्वव्यापी शब्द है जो जीव के हृदय से उदभूत होकर विश्व के समस्त अणु परमाणु में परिव्याप्त है। शब्द को धारण के द्वारा आयत्त कर सकते पर शब्द की सिद्धा प्राप्त होती है उस समय शब्द में तन्मयता के साथ मग्न हो सकने पर समग्र मन को औरो से हटाकर शब्द में लीन कर सकने पर एक अदभुत और विशाल ज्योति का अनुभव होता है शब्द जैसे सर्वव्यापक है समग्र विश्व में प्रसारित रहता है। वह ज्योति भी उसी प्रकार सर्वव्यापक है नित्य शब्द ब्रह्म कं नाम से और नित्य ज्योति ब्रह्मज्योति के नाम से साधक सम्प्रदाय में प्रसिद्ध है। यही नीलज्ज्योति श्यामाँ माँ

शिवं न जानामि कथं वदामि
शिवं ज जानामि कथं भजामि

अहं शिवश्चेत्परमार्थतत्त्वं
समस्वरुपं गगनोपमं च

बोध का अन्तिम पर्यवसान यही स्वयं को शिवरुपा शिवा जाने
काली–रुपमात्मानं विभावयेत
(कालिकोपनिषद)

काल कृम का अपोहन करती कालसङ्कर्षणी काली भावना के बल से कालीत्व प्राप्त कर काली पूजा का अन्यतम् उद्येश्य है। काल शक्ति पर जय प्राप्त करने ही जरा मरण का भय दूर हो सकता है परम सुख शान्ति मिलती है द्वेष विवाद आदि समस्त अनर्थ दूर हो जाते है।

इन भगवान की प्राप्ति बहुत प्रवचन से नही होती जो बहुत प्रवक्ता है। उनको भगवान मिल जायेगें ऐसी कोई बात नही है। कोई बहुत श्रवण करता है यहाँ तक कि युग युगान्तर बीत जाय इसलिए उसको भगवान मिल जाये ऐसी कोई बात नही हैं धारणाशक्ति मेधा के द्वारा बहमात्म तत्व समझ में आ जाएगा सभी नही अर्थात कोई बहुत मेधावी है इसलिए उसे भगवान मिल जायेगे ऐसा भी सम्भव नही है फिर किसको और कैसे भगवान मिल जायेगे ,

यमेवैष वृणुते तेन लभ्य

श्री रामानुजाचार्य इसका अर्थ करते है एष परमात्मा यं साधकं प्रार्थयते तेन लभ्यः तस्य उपासकस्य एष आत्मा परमात्मा स्वरूप प्रकाशयति स्वात्मानं प्रयच्छती त्यर्थ :

ये भगवान (परमात्मा) जिस साधक को स्वयं वरण करते है वही इनको पाता है स्वयंवरा राजकन्या जिसके गले में जयमाला डाल दें जिसको वरण कर ले वही उसके अनन्तमाधुर्य के रसास्वादन का अनुभव कर सकता है ऐस सर्वान्तरात्मा सर्वश्वर सर्वाधिष्ठान प्रभु जिसके गले में में जायमाला डाल दें जिसको अपना बना लें उसी को भगवक्स्वरूप को अनुभव हो सकता है। श्री आद्यशंकर कहते है।

यमेव स्वात्मानमेव साधके वृणुते प्रार्थयते तेनैवाऽमाना वरित्रा स्वयमात्मा लभ्यो ज्ञायत एवमित्येतत्।

निष्काम स्त्यात्मानमेव प्रार्थयत, आत्मनैवात्मा लभ्यत इत्यर्थः कथ लभ्यत इत्युच्येत तस्यात्मकामास्यैश आत्मा विवृणुते प्रकाशयति पारमार्थिकी तनूं स्वां स्वकीयां स्वयाथात्म्यमित्यर्थः'(कठो०) 1–2–23

साधक जिसे अपने मन में आत्मा का वरण प्रार्थना करता है उस वरण करने वाले आत्मा द्वारा स्वयं ही प्राप्त किया जाता है "उससे ही यह ऐसा है" इस प्रकार जाना जाता है तात्पर्य यह है कि केवल आत्मलाभ के लिए ही प्रार्थना करने वाले निष्काम पुरूष को आत्मा के द्वारा ही आत्म लाभ होता है किस प्रकार उपलब्ध होता है ? इस पर कहते हैं उस आत्मकामी के प्रति यह आत्मा अपने यथाम्य को विवृत प्रकाशित कर देता है। शकराचार्य महाराज के अनुसार साधक जब भगवान को वरण करता है अपना सर्वस्व अर्पण कर भगवान को अपनाता है तब भगवान उसे अपनाते हैं।

योऽयमात्मा व्याख्यातो यस्य लाभः परः पुरूषार्थो नासौ वेदशास्त्रध्ययन बाहुल्येन प्रवचनेन लभ्यः। तथा न मेघया ग्रन्थार्थ धारण शक्त्या । न बहुना श्रुतेन नापि भूयसा श्रवणेनेत्यर्थः । केन तर्हि लभ्य इत्युच्यते–यमेव–परमात्माने वेष विद्वान्वृणुते प्राप्तुमिच्छति तेन वरणेनैष परमात्मा लभ्यो नान्येन साधनान्तरेण नित्यलब्ध स्वाभत्वात कीदृशोऽसो विदुष आत्मलाभ इत्युच्यते ? तस्यैष आत्माऽविद्यासंछन्ना स्वां परां तनुं स्वात्मतत्वं स्वरूपं विवृणुते प्रकाशयति प्रकाश इव घटादिर्विद्यायां सत्यामा विर्भवतीत्यर्थः । तस्मादन्य त्यागेनाऽत्मलाभ प्रार्थनैवात्म लाभ साधनमित्यर्थः। (मुण्डक)

इस प्रकार दोनों मतों में कोई मौलिक झगड़ा नहीं है क्योंकि विचार करते हैं तो मालूम पड़ता है यदि भगवान किसी को वरण करें और किसी को वरण न करें तो उसमे वैषम्य दोष और नैर्धृण्य दोष आता है। वैषम्य माने विषमता भेदभाव और नैघृण्य माने निर्दयता अगर परमेश्वर में विषमता या निर्दयता आ गई तो संदोष है ऐसा सिद्ध होगा अन्त में श्री रामानुजाचार्य जी खण्डन करते हुए लिखते है।

"औषनिषद परमपुरूष वरणीयता हेतुगुण विशेष विरहिणां अनादिपाप वासना दूषिता शेष शेमुषीकाणां अनधिगत पद वाक्यस्वरूप तदर्थ याथत्म्य प्रत्यक्षादि सकल प्रमाणवृत्त तदिति कर्तव्यता रूपसमीचीन न्यायमार्गीणां विकल्पासह विविध कुतर्क कल्प कल्पितमिति न्यायानुगृहीतं प्रत्यक्षादि सकल प्रमाणवृत्त याथात्म्यवदिरनादरणीयम"

अर्थात् भगवद गुणवरणीयता गुणगण विरहितो को भगवत्तत्व का साक्षात्कार नही होता। एतावता मालूम पड़ता है कि कुछ अपेक्षा है भगवान भी सर्वथा निरपेक्ष वरण नही करते नही तो वैषम्य नृधृर्ण्ये दोष आ जायेगा । यदि वरणीयता के गुणगण नही होगे तो भगवान उस व्यक्ति का वरण नही करेंगे वे कोई लूल्लू बुद्धू थोड़े ही है कि अन्धेर खाते में मनमानी किसी का वरण करें। बड़े–बड़े योगीन्द्र मुनीन्द्रगण तरसते है कि भगवान हमारा वरण कर ले ऐसी स्थिती में वरणीयता के उपयुक्त गुणगण होना चाहिए।

श्री रामानुजाचार्य केवल श्रवण मनन, निदिध्यासन से प्रभु मिलते है ऐसा न मानकर श्री भगवान के लिए वरणीय प्रियतम होने के लिए भगवान को प्रियतम मानने की आवश्यकता मानते है।

नायात्मा प्रवचन लभ्यो न मेघया न बहुना श्रुतेन इति अनेन केवल श्रवण मनन निदिध्यासनानामात्म प्राप्त्यनु पायत्वमुक्त्वा यमे वैषवृणुते तेन लभ्यस्तस्येशे आत्माविवृणुते तनूँ स्वाम्। इत्युक्तम्

प्रियतम एव वरणीयो भवति यस्यायं निरतिशय प्रियः स एवास्य प्रियतमो भवति येथायं प्रियतमात्मान प्राप्नोति तथा स्वयमेव भगवान प्रयतत् इति भगवतैवोक्तम् "तेषांसतत युक्ताना ददामि बुद्धियोग तं "पियो हि ज्ञानिनोत्यर्थं महं स च मम् प्रियः इति च।

जो जिसका प्रिय होता है वही उसका वरणीय होता है। अतः साक्षात्काररूपा स्मृतिः

अत्यन्त प्रिय प्रभु ही स्मृति मार्ग में प्रगट होकर साक्षात्कार के अनुरूप अपनी प्रिय स्मृति प्रदान करते है, जिससे उपासक परमात्मा का वरणीय हो जाता है उसी से भगवती जो कि स्वयं स्मृति रूप है मिल जाती है।

तैरना क्रिया

आन्तरिक मौन में तेरा नाद निनादित होता है।
शान्ति चैत्य पदार्थ अनात्मज्ञान से नही हो

चिति संज्ञान

प्रकम्पालिसुस्निग्ध सं भुग्न केशान्
देवी का खण्डन परमात्मा का खण्डन है

इ – तालव्य

पाणिरसालपल्लवम्
नवनीरदद्युति
कुचकाञ्चनाचल

ललिज्जिहवा लास्यकर्वी लासिका

मधुमाध्वीक मत्ता
भुजान्दोलविलासिनी

भञ्जनी भट्दुर्घटा
अरुणाक्षि जीवन साक्षी

ꩡꩡ•ꩡꩡ

कालिकोल्लास 5 (II)

श्री श्री कर्पूरादिस्तोत्रम्

कर्पूरं मध्यमान्त्यस्वरपरिरहितंसेन्दुवामाक्षियुक्तं
बीजं ते मातरेतत्त्रिपुरहरवधु त्रिः कृतं ये
जपन्ति। तेषां गद्यानि पद्यानि च
मुखकुहरादुल्लसन्त्येव वाचः स्वच्छन्दं ध्वान्त
धाराधरेरुचिरुचिरे सर्वसिद्धिं गतानाम्।।१।।

टीका

ॐ विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुषे।
श्रेयः प्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे ।। श्री श्री चण्डी।
प्रणमामि माहदेवीं तुरीयां ब्रह्मरूपिणी।
यस्याः स्मरणमात्रेण भवाब्धौ न निमज्जति। गन्धर्वतन्त्रम्।
कालीं कालहरां देवीं क्रीङ्कारबीजरूपिणीम्।
कामरूपां कलातीतां कालिकां दक्षिणां भजे।। कालीहृदयम्।

कर्पूरमिति। कर्पूरमित्यादिपञ्चिभः श्लोकैर्महादेव्याः सूक्ष्मरूपात्मक–विद्याराज्ञीनाम द्वाविंशत्यक्षरं मन्त्रम् उद्धृतम्, तथा तस्याः साधनप्रकारं माहात्म्यञ्च क्रमेणोक्तम्। षष्ठश्लोके तस्या विविधमन्त्रोद्धारश्च कथितः। उक्तञ्च कालिकाश्रुतौ–"अथ हैनां ब्रह्मरन्ध्रे ब्रह्मस्वरूपिणीमाप्नोति सुभगां कामरेफेन्दिरासमष्टिरूपिणीम्। एतत्त्रिगुणितमादौ तदनु कूर्च्चद्वयम्, कूर्च्चबीजं तद्व्योम षष्ठस्वरबिन्दुमेलनरूपम्। तदेव द्विरुच्चार्य्य दक्षिणे कालिके चेत्यभिमुखं गता, तदनु बीजसप्तकमुच्चार्य्य बृहाद्भनुजाया मुच्चरेत्। अयं सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः। तथा च निरुत्तरतन्त्रे–

अथ वक्ष्ये महेशानि दक्षिणाकालिकामनुम्।
येन विज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तः प्रजायते।।
ब्रह्मानलयुतं देवि नादबिन्दुसमन्वितम्।
वामनेत्रेण संयुक्तं चित्स्वरूपं परात्परम्।।
एकाक्षरी सिद्धविद्या मन्त्रराज्ञी कुलेश्वरि ।
त्रिगुणा च कूर्च्चयुग्मं लज्जायुग्मं ततः परम्।।

दक्षिणे कालिके चेति सप्तबीजानि योजयेत्।
अन्ते वह्निवधूं दद्याद् विद्याराज्ञी प्रकीर्त्तिता।।
सर्वमन्त्रमयी विद्या सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी।।

अपरञ्च प्रथमश्लोके श्रीमत्कालिकाया एकाक्षरी मन्त्राज्ञी क्रीं–बीजमुद्धृतम्, द्वितीयश्लोके श्रीमत्ताराया एकाक्षरमन्त्रं हूँबीजमुद्धृतम्। तृतीयश्लोके श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्या एकाक्षर ह्रींबीजमुद्धृतम्। तृतीयश्लोके श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्या एकाक्षरमन्त्रं ह्रींबीजमुद्धृतम्, तथा कालीतारासुन्दरीणां रहस्यसाधनप्रकरणञ्च वर्णितम्, तेन एतत्स्वरूपाख्य स्तोत्रं ककारकूटस्तोत्रवत् त्रिशक्तिविषये पाठ्यम् इति क्रमदीक्षितसाध केन्द्राणां मतम्। उक्तच मतम्। उक्तञ्च ताराहस्यतन्त्रे

यथा काली तथा तारा तथा नीलसरस्वती ।
सर्वाभीष्टफलप्रदा तथा त्रिपुरसुन्दरी।।
अभेदमतमास्थाय यः कश्चित् साधयेन्नरः ।
त्रिलोक स तु पूज्यः स्यात्तारासुतश्च एव स :।
भेदं कृत्वा यदा मन्त्री साधयेदत्र साधनम्।
न तस्य निष्कृतिर्देवि निरये पच्यते हि सः।।

उक्तञ्च ताराध्याने कवचे च –'हूङ्कारबीजोद्भवा', 'हूँ घाटां मे सदा पातु बीजैकाक्षररूपिणी'।। तथा श्री सुन्दर्याः स्तोत्रं च–

ह्रीङ्कारमेव तव नाम गृणन्ति ये वा
मातस्त्रिकोणनिलये त्रिपुरे त्रिनेत्रे।
ह्रीं ह्रीमिति प्रतिदिनं जपतां तवाख्यां
किन्नाम दुर्लभमहि त्रिपुराभिधाने।।

तथा च महाकालसंहितायाम्–

"श्री विद्या कालिका तारा त्रिशक्तिविषये पठेत्'।

वस्तुतस्तु यद्वद्विभिन्नजातीयबीजेभ्य एकविधा लता कदापि न उत्पद्यते, तद्वत् क्रीङ्कार–हूङ्कर ह्रीङ्कारादिभ्यों विभिन्न–बीजमन्त्रेभ्य एकरूपा मूर्त्तिर्न सम्भवति, अतः पूर्वोक्तेस्त्रिभिर्बीजैर्ब्रह्मविद्या श्रीमद्दक्षिणकालिकैव सर्वरूपिणीत सूचिता।

हे मातः! ध्वान्तधाराधर रुचि–रुचिरे नीलमेघकान्तिरिव मनोज्ञे नवीन जलधरो यथा अमृतवारिवर्षणेन आतपतप्तपृथ्वीं आतपतप्तपृथ्वीं शीतलां करोति, तद्वत्त्व–

मपि कृपामृतवर्षणेन त्रितापतप्तसाधकाय अमृतत्वं ददासीति भावः। त्रिपुर–हरवधु स्वर्गमर्त्यपातालस्थैस्त्रिपुरैः सह त्रिपुराख्यासुरनाशकमहेशक्ते। कर्पूरं मध्यमान्त्यस्वनपरिरहितं कर्पूरशब्दस्य मध्यमो रेफयुक्तः पकारः, अन्त्यम् अनुस्वारः, स्वरा अकारोकारान्तिमरेफसीकारास्तैः सर्वतोभावेन वर्जितम्, तेन 'क्र' इति स्थितम्। सेन्दु बिन्दुयुक्तार्द्धचन्द्रेण सह वर्तमानम्। वामाक्षियुक्तम् ईकारेण युक्तम् तथा च 'क्रीं इति। ते तव बीजं मन्त्रात्मक शरीरस्य कारणम्। त्रिःकृतं त्रिगुणीकृतं ये जनाः जपन्ति मन्त्राथगतमानसाः सन्तो मनसा उच्चारयन्ति। सर्वसिद्धिं गतानां शिवस्य अणिमाद्यष्टसिद्धि प्राप्तानां साधकानां मुखकुहराद् आस्यबिबरात्। गद्यानिपद्यानि च वाच गद्यपद्य मयानि वाक्यानि स्वच्छन्दम् अप्रयत्नसुलभमुल्लसन्ति प्रस्फुरन्ति इत्यर्थः। अपि च श्रुयते यत् श्रीमत्कालिकाया इदं 'क्रीं' बीजम् इस्लाम– धर्मावलम्बिनः साधका मोक्षलाभकामनया आरबीयभाषया रुपान्तरितं 'करीम्' इति मन्त्रं जपन्ति तथा खृष्टानधर्म्मावलम्निः साधका अपि 'क्राइष्ट' इति मन्त्रं जपन्ति, तथा खृष्टानधर्म्माविलम्बिनः साधका अपि 'काइष्ट' इति मन्त्रं मुक्तिकामनया सदेव जपन्ति।।1।।

अथस्य स्वरूपव्याख्या ।।1।।

नत्वा श्रीपादुकां भक्त्या रामानन्दस्य योगिनः।
कृता स्वरूपव्याख्येयं विमलानन्ददायिनी।।

हे मातः (माति परिमितं ददातीर्ति माता–मा + तच्) सकामनिष्काम भेदेन भोगमोक्षदात्रि। ध्वान्दधाराधररुचिरुचिर[1] शुद्धसत्त्वगुणात्मकघनी भूततेजोमयत्वात् तथा चिदाकाशत्वाच्च नीलवर्णचिन्तनीये। 'त्रिपुरहरवधु स्थूल सूक्ष्म कारणदेहान् हरतीति विदेहमुक्तिदायक त्रिपुरहरस्तस्य विदेहमुक्ति दातुर्या शक्ति : सा त्वमेव विदेहकैवल्यदात्रीति भावः। मध्यमान्त्यस्वरपरि

1. शिवयोर्व्योमरूपत्वादसितं लक्ष्यते वपुः (योग–वासिष्ठम्)
(शिवा च शिवश्च शिवौ, तयोः)
(त्रिपुरासारसमुच्चयः)
मोक्षे साक्षादपेताम्बुदगगननिभां भावये द्भक्तिगम्याम् ।।

2. पुरत्रये क्रीडति यश्च जीवस्ततस्तु जातं सकलं विचित्रम्।
(कैवल्योपनिषद्)
आधारमानन्दमखण्डबोधं यस्मिल्लयं याति पुरत्रयञ्च।।

रहितं सत्त्वर जस्तमोगुणात्मिकाया मूलप्रकृतेर्मध्यम उकारात्मको रजोगुणः, अन्त्यं मकरात्मकस्तमोगुणः, ताभ्यां रहितं शुद्धसत्त्वगुणात्मकम्। सेन्दुवामाक्षियुक्त[2] निर्वाणमोक्षदायिनी शक्तिस्तथा साधकाभीष्टदायिका शुद्धसत्त्वप्रधाना मायाशक्तिस्ताभ्यां युक्तम् कर्पूरं कल्पयति जगत्प्रपञ्च यत् तत् सगुणब्रह्म इत्यर्थः। ते तव बीजं[3] जगत्कारणमावं सच्चिदानन्दरूपिणी त्वं निर्गुणापि जीवकर्मकालविष्टिया मायया यक्ता सर्त

तत्तज्जीवतत्तत्कर्मफलभोगसमये प्राप्ते जगत्सर्जने बीजात्मतां गतासीति भावः । एतत् क्रीं वाच्यं तव शुद्धसत्त्वात्मकं सच्चिदानन्दरूपम्। ये साधकास्त्रिकृतं त्रिगुणीकृतम्, सात्त्विकराजसिकतामसिकभेदेन, तथा स्थूल,–सूक्ष्म–कारणभेदेन त्रिविधं त्रिशाक्तिरूपञ्च। जपन्ति[4] स्वात्माभेदेन चिन्तयन्ति ते अनिच्छन्तोऽपि धर्मार्थकाममोक्षरूपचतुर्वर्ग लभन्त इति भावः। उक्तच विश्वसारतन्त्रे दक्षिणाकालिकायाः क्रमस्तोत्रे।

त्वदीयबीजत्रयेमेदम्ब जपन्ति सिद्धास्तु विमुक्तिहेतो–।
तदेव मातस्तव पादपद्मगा भवन्ति सिद्धाश्च दिनत्रयेऽपि।।१।।

1. अकारः सात्त्विको ज्ञेय उकारो राजसः स्मृतः।
मकारस्तामसः प्रोक्तस्त्रिभिः प्रकृतिरुच्यते।। (ज्ञानसङ्कलिनी)
स्वरेण सन्धयेद् योगमस्वरं भावयेत् परम्।। (ब्रह्मबिन्दूपनिषद्)

2. ककारोज्ज्वलरूपत्वात् केवलं ज्ञानचित्कला ।
ज्वलनार्णयमायोगात् सर्वतोजेमयी शुभा।।
दीर्घेकारेण देवेशि साधकाभीष्टदायिनी।
बिन्दूनां निष्कलत्वाच्च कैवल्यफलदायिनी।। (तन्त्रकल्पद्रुमः)

तोडलतन्त्रे च

ककारं धर्म्मदं देवि ईकारं चार्थदायकम्।
रकारं कामदं कान्ते मकारं मोक्षदायकम्।।
एकत्रोच्चारणादेवि निर्वाणमोक्षदायिनी।।

3. तादात्म्यरुपं चित्संवित् परब्रह्मैकनामकम्।
स्वशक्तेश्च समायोगादहं बीजात्मतां गता।।
अव्यक्तं कारणो देहः स चोक्तं पूर्वमेव हि।
यस्मिन् जगद्वीजरूपं स्थितं लिङ्गद्भवो यतः।।

4. सदा कालीपमात्मानं विभावयेत्।। (काच्युपनिषत्)

ईशानः सेन्दुवामश्रवणपरिगतो बीजमन्यन्महेशि
द्वन्द्वन्ते मन्दचेता यदि जपति जानो वारमेकं कदाचित्।
जित्वा वाचामधीशं धनदमपि चिरं मोहयन्नम्बुजाक्षी
वृन्दं चन्द्रादर्धचूडे प्रभवति स महाघोरबालावतंसे ।। 2।।

टीका

हे महेशि ! ब्रह्मविष्णुरुद्राणामपि ईशो महेशस्तस्य शक्ते। हे चन्द्रार्द्ध चूड़े चन्द्रार्द्धाङ्कितमस्तके! हे महाघोरबालावतंसे अतिभयानकशवबाल–कृतकर्णालङ्कारे! मन्दचेता जनो मूढबुद्धिर्जनः । ते तव सेन्दुवामश्रवण परिगतः चन्द्रबिन्दुसहितो यो दर्घ ऊकारस्तेन युक्तः। ईशानो हकारः । एतेन 'हूँ' इति तव द्वितीयमूर्त्तेस्ताराया एकाक्षरबीजमन्त्रञ्च उद्धतम्। द्वन्द्वमेतद् युग्मं कृत्वा। यदि कदाचिद् एकबार मपि जपति तदा स चिरं यावज्ज्वीवं वाचामधीशं बृहस्पतिं धनदमपि कुबेरंच जित्वा पराभूय अम्बुजाक्षीवृन्द्रं सुन्दरीसमूहं मोहयन् प्रभवति मोहयितुं समर्थो भवति, स साधकोऽतीव विद्वान धनवान् रूपवांश्च भवतीत्यर्थः। तथा च तारा रहस्ये–

'तारकत्वात् सदा तार या काली सैव निश्चिता'।

क्रमस्तोत्रे च –

त्वदीयकूर्च्चद्वपजापकत्वात् सुरासुरेभ्योऽपि भवेच्च पूज्यः
धनित्वं पाण्डित्यं लभन्ति सर्वे किं वापरं देवि परापराख्ये।। 2।।

स्वरूपव्याख्या।। 2।।

हे महेशि सृष्टि–स्थिति विनाशात्मकमहैश्वर्य्यवति। चन्द्रार्द्धचूडे[1] निर्वाणमोक्षदायिनि। हे महाघोरबालवर्तसे[2] महेश्वरसदृशनिर्विकार

1. नित्यायाः कालरूपायाः अरूपायाः शिवात्मनः।
   अमृतत्वाल्ललाटेऽस्याः शशिचिह्नं निरूपितम्।। (महानिर्वाणतन्त्रम्)
2. क्षुधां देहव्यथां त्वक्तवा बालः क्रीडति वस्तुनि।
   तथैव विद्वान् रमते निर्ममो निरहं सुखी।। (विवेक–चूडामणिः)
   तथा च ब्रह्मोपनिषदि।

यथा कुमारो निष्काम आनन्दमुपयाति।।

बालकवन्निश्कामसाधकाभ्यां कृते अतिप्रिये कर्णभूषणे यया तत्सम्बोधने। बालकवन्निर्विकारतत्त्वश्च साधको ब्रह्मरूपिण्या अतीव प्रिय इत्यर्थः। सेन्दुवामश्रवणपरिगत1 इन्दु अमृतत्वं वाग्दातृत्वं रूपकर्षिणीत्जञ्च तैर्युक्तः। ईशानः2 ईश्वरः । इति ते अन्यद्वीजं 3 हूँबीजात्मककारणभावम्। द्वन्द्व[4] शिवशक्त्यात्मकं स्वरूपम् । यदि कदाचित् एकबारमपि जपति मानसजपेन चिन्तयति। तर्हि स साधकः ज्ञान–विज्ञानवान् धनवांश्च भूत्वा सर्वं जगद् मोहयितुं शक्नोतीति भावः।।2।।

ईशो वैश्वानरस्थः शशधरविलसद् वामनेत्रेण युक्तो
बीजन्ते द्वन्द्वमन्यद् विगलितचिकुरे कालिके ये जपन्ति।
द्वेष्टारं घ्नन्ति ते च त्रिभुवनमपि ते वश्यभावं नयन्ति
सृक्वद्वन्द्वस्रधाराद्वयधरवदने। दक्षिणे त्र्यक्षरेति।।3।।

टीका

हे विगलितचिकुरे मुक्तकेशि। हे कालिके ब्रह्मरूपिणिं हे सृक्द्वन्द्वास्रधाराद्वयधरबदने ओष्ठप्रान्तद्वयगलितरुधिरधाराशोभितानने। वैश्वानरस्थे रकारायुक्तः। शशधरविलसत् चन्द्रबिन्दुयुक्तः। वामनेत्रेण युक्त इकारेण युक्तः ईशो हकारः। अन्यत् 'ह्रीं' इति त्रिपुरसुन्दरीबीजम्। द्वन्द्वम् उक्तबीजं द्विगुणीकृतम्। तथा 'दक्षिणे'इति नामात्मकत्र्यक्षरमन्त्रच ये जनाः जपन्ति, ते द्वेष्टारं शत्रुं घ्नन्ति नाशयन्ति त्रिभुवनमपि स्वर्ग मर्त्य–पातालस्थं देवनरनागादिकूंच वश्यभावं नयन्ति अधीनत्वं प्रापयन्ति इत्यर्थः।।3।।

1. ऊकारो भैरवः सूक्ष्मो दीर्घघोणा सरस्वती।
   विलासिनी विघ्नकर्त्ता लक्ष्मणो रूपकर्षिणी।।
2. अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषो ज्योतिरिवावधूमकः।।
   ईशानों भूतभव्यस्य स एवाद्यः स ईश्वरः।। (कठोपनिषद्)
3. शब्दबीजद्वयेनैव शब्दराशिप्रबोधिनी।। (यामलम्)
4. शिवशक्तिसमायोगाज्जनितो मन्त्रराजकः
   तन्मयीं परमानन्दनन्दितां मन्त्ररूपिणीम्।। (गन्धर्वतन्त्रम्)

स्वरूपव्याख्या।। 3।।

हे विगलितचिकुरे केशविन्यासादिविलासविकाररहिते, निर्विकारे इत्यर्थः। कालिके के1 ब्रह्मा, आ[2] अनन्त, ल[3] विश्वात्मा, इ[4] सूक्ष्मा, क ब्रह्मा, आ अनन्त इति कालिका, एतेन महादेव्या आद्यन्तरहित्वम्, अनन्तत्वम्, सूक्ष्मत्वं विष्वात्मकत्वच सूचितम्, हे अनाद्यनन्तब्रह्मरूपिणि इत्यर्थः। उक्तच अद्भुतरामायणे श्रीरामकृतासितास्तोत्र–

सृक्कद्वन्द्वास्रधाराद्वयधरवदने सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविस्फुरितानने, अत्र रक्तधारया रजोगुणः सूचित :, तस्माद् महादेवी रजोरहिता शुद्धसत्त्वात्मिका विरजा[5] इति निरूपिता। त्रिपुरसुन्दरीपक्षे तु रजोगुणेन महादेव्याः रक्तवर्णा मूर्तिः सूचिता। वैश्वानरस्थस्तेजोमयः शशधरविलसद् अमृतदातृ शक्त्या सह वामनेत्रेण युक्तः शुद्धसत्त्वागुणात्मिकया मायया युक्तः। ईशः ईश्वरात्मकसूक्ष्मबीजात्मभावः, इति ते तव अन्यद् अपरं द्वन्द्वं 'ह्ल्लेखा–वाच्यशिवशक्त्यात्मकं बीजात्मरूपम्। तथा 'दक्षिणे'[7] इति सम्बोधनामा

1. कः क्रोधीशो महाकाली कामदेवः प्रकाशकः
श्रीपुरं रमणो वङ्गकुसुमा परमात्मकः
2. आकारो विजयानन्तः।
3. लश्चन्द्रः पूतना पृथ्वी माधवः शक्रवाचकः ।
विश्वात्मा मन्दो बलवान् मेरुर्गिरिकलारसः ।। (तन्त्राभिधानम्)
4. इः सूक्ष्मा शाल्मली विद्या चन्द्रः पूषा सुगुह्यकः।।
5. हिरण्मये परे कोषे विरजं ब्रह्मनिष्कलम्।
तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्वदात्मविदो विदुः।। (मस्तक–उप०)
6. हकारः स्थूलदेहः स्याद्रकारः सूक्ष्मदेहकः
ईकारः कारणात्मासौ ह्रीङ्करोऽहं तुरीयकः। (देवीगीता)
7. दक्षिणस्यां दिशि स्थाने संस्थितश्च रवेः सुतः।
कालीनाम्ना पलायते भीतियुक्तः समन्ततः।।

त्मकत्र्यक्षरं मन्त्रवाच्यं कैवल्यदायकसच्चिदानन्दरूपं ये साधकाः जपन्ति ध्यायन्ति, ते द्वेष्टारं साधनविघ्नकरकामक्रोधादिक ध्नन्ति नाशयन्ति, त्रिभुवनमपि वश्यभावं नयन्ति वश्यतां प्रापयन्ति। श्री सुन्दरीपक्षे तु हे कालिके रक्तकालिके तृतीयमहाविद्याश्रीमत्त्रिपुरसुन्दरि इत्यर्थः। उक्तञ्च बृहन्नीलतन्त्रे–

इयं नारायणी काली तारा स्यात् शून्यवाहिनी।
सुन्दरी रक्तकालीय भैरवी नादिनी तथा।।

तथा च तन्त्रान्तरे–

कालिका द्विविधा प्रोक्ता कृष्णारक्ताप्रभेदतः।
कृष्णा तु दक्षिणा प्रोक्ता रक्ता तु सुन्दरी मता।।

दक्षिणे दक्षिणामूर्तिभैरवाराधिते इत्यर्थः । त्र्यक्षरे ऐं क्लीं ह्रीं मन्त्रवाच्ये इत्यर्थः। तथा च क्रमस्तोत्रे–

त्वदीयल ज्जाद्वयजापकत्वाद् भवेन्महेशानि चतुर्थसिद्धिः।
दयासमुद्रस्य वरप्रसादद् भवाधिपत्यं लभते नरेशः ।।3।।
ऊर्ध्वे वामे कृपाणं करकमलतले छिन्नमुण्डं तथाधः
सव्ये चाभीर्वरञ्च त्रिजगदघहरे दक्षिणे कालिके च।
जप्त्वैतन्नाम ये वा तव मनुविभवं भावयन्त्येतदम्ब
तेषामष्टौ करस्थाः प्रकटितरदने सिद्ध त्र्यम्बकस्य।।4।।

अतः सा दक्षिणा काली त्रिषु लोकेषु गीयते।। (निर्वाणतन्त्रम्)
तथ च कामाख्यातन्त्रे–

यथा कर्म्मसमाप्तौ च दक्षिणा फलसिद्धिदा।
तथा मुक्तिरसौ देवी सर्वेषां फलदायिनी।।
अतो हि दक्षिणाकाली कथ्यते वरवर्णिनि।
पुरुषो दक्षिणः प्रोक्तः वामाशक्तिर्निगद्यते ।।
वामा सा दक्षिणं जित्वा माहमोक्षप्रदायिनी।
ततः सा दक्षिणानाम्ना त्रिषु लोकेषु गीयते।।

टीका

हे त्रिजगदघहरे त्रिजगतां जनानां पापनाशिनि। हे प्रकटितरदने1 प्रकाशितदशने। हे अम्ब मातः। दक्षिणे निर्वाणदात्रि ये साधकास्तव मनुविभवं पूर्वोक्त कालीबीजत्रयं कूर्चद्वय[2] मायाद्वयं 'दक्षिणे' इति त्र्यक्षरमन्त्रञ्च जप्त्वा वामे ऊर्ध्वे करकमलतले कृपाणं खडग तथा अधः निम्ने छिन्नमुण्डं छिन्नमस्तकम्। सव्ये दक्षिणे ऊर्ध्वे। करकमलतले अभीः अभयमुद्राम्। वरञ्च दक्षिणे अधः करकमलतले वरमुद्रञ्च। एतद ईदृशम् ऊर्ध्वे वामे कृपाणम् इत्यादिप्रकाररूपं भावयन्ति चिन्तयन्ति। त्र्यम्बकस्य शिवस्य। अष्टौ सिद्धयः[3] अणिमादयः अष्टप्रकाराः सिद्धयस्तेषां साधकानां करस्थाः अनायासलब्धा भवन्तीत्यर्थः ।।4।।

स्वरूपव्याख्या।। 4।।

हे त्रिजगदघूहरे त्रिलोकीनां कायिकवाचिकमानसिकत्रिविधपापनाशिनि। हे प्रकटितरदने स्वप्रकाशसत्त्वगुणसूचकशुभ्रदशनपङ्क्त्या रजोगुणसूचक[1] रक्तवर्णां लोलरसनां रजस्तमश्च नाशयति या तस्याः सम्बोधने। हे अम्ब मातः। दक्षिणे निर्वाणदात्रि। ते तव मनुविभवं निजबीजत्रयात्मकचिद्घनमूर्त्तिं कूर्च्चबीजद्वयात्मकसत्त्वात्मकमूर्त्तिं तथा मयाबीजद्वयात्मकरजः प्रधानसत्त्वमूर्त्तिञ्च । तथा कालिके,कालिके इति नामवाच्यम् आद्यनतरहितं सच्चिदानन्दमूर्त्तिञ्च जप्त्वा चिन्तयित्वा। (योगिनीतन्त्रम्)

1. दन्तुरां परमां नित्यां रक्तमण्डितविग्रहाम्।।
तथा च ताराकल्पे–
नवाम्भोदश्यामां प्रकाटरदभीमां पृथुकुचाम्।।
2. माया लज्जा च ह्रीङ्कारः हूँकारः कूर्च्च उच्यते।
3. अणिमा महिमा चैव लघिमा प्राप्तिरेव च।
प्राकाम्यञ्च तथेशित्वं वशित्वञ्च तथापरम्।।
तथा कामावशायित्वं गुणोतानन्नैश्वरान्।
प्राप्नोत्ययष्टौ नरव्याघ्रः परनिर्वाणः–सुचकान्।। (मार्कण्डेयपुराण)

स्त्रीमूर्त्तिधारिणी त्वं[1] स्वीयवामोर्ध्वहस्तेन ज्ञानखड्गेन[2] निष्कामसाधकानां मोहपाशं छित्वा तदधोहस्तेन विगतरजं तत्त्वज्ञानाधारं मस्तकं दधासि, तथा दक्षिणसाधकेभ्योऽभयं तथा तद धोहस्तेन चाभीष्ट वरञ्च दधासीति। एवम्भूतां त्वां ये साधका ध्यायन्ति, तेषमणिमाद्यष्ट सिद्धयोऽनायासलब्धा भवन्तीति भावः।।4।।

वर्गाद्यं वह्निसंस्थं विधुरतिवलितं तत्त्रयं कूर्च्चयुग्मं
लज्जाद्वन्द्वञ्च पश्चात् स्मितमुखि तदधष्ठद्वयं बोजयित्वा।
मातर्यं ये जपन्ति स्मरहरमहिले भावयन्तः स्वरूपं
ते लक्ष्मीलास्यलीलाकमलदलदृशः कामरूपा भवन्ति।।5।।

टीका

हे स्मितमुखि ईषद्धस्यवदने। हे स्मरहरमहिले मदनान्तकमोहिनी।

हे मातः ! ये ये जनाः वह्निसंस्थ[3] रकारोपरि स्थितम्। विधु[4]रतिललित

विधुश्चन्द्रबिन्दुः, रतिर्दीर्घ ईकारस्ताभ्यां युक्तम्। वर्गाद्यं पञ्चवर्गाणामादिभूर्त 'क' वर्णम्,'क्री' इति बीजं तत्त्रयं तस्य त्रितयम्। पश्चात् तदन्तरं कूर्च्च युगमं हूँ बीजद्वयम्। लज्जाद्वन्द्वञ्च ह्रीँ बीजद्वयञ्च तदधः तत्पश्चात्। ठद्वयं[5] द्विठं 'स्वाहा' शब्दम्। योजयित्वा संयोज्य। स्वरूपं ध्वान्तधाराधररूचिरे द्विठं 'स्वाहा' शब्दम्। योजयित्वा संयोज्य। स्वरूपं ध्वान्तधाराधररूचिरे

1. स्त्रीरूपां वा स्मरेद्देवीं पुरूपां वा स्मरेत् प्रिये।
   स्मरेद् वा निष्कलं ब्रह्म सच्चिदानन्दविग्रहम्।।
2. तस्माद् ज्ञानासिना तूर्णमशेषं कर्म्मबन्धनम्।
   कामाकामकृतं छित्वा शुद्धश्चात्मनि तिष्ठति।। (शिवधर्म्मोत्तरे)
   तथा च योगिनीतन्त्रे–
   पापपुण्यं पशुं हत्वा ज्ञानखड्गेन शाम्भवि।।
3. री रक्तः क्रोधनी रेफः पावकस्तैजसो मतः।। (तन्त्राभिधानम्)
4. ईस्त्रिमूर्तिर्महामाया—रतिश्च पौण्ड्वर्द्धनः।। (तदेव)
5. द्विठः स्वाहानलप्रिया।। (वर्णाभिधानम्)

इत्यादि त्वदीय–द्वाविंवशत्यक्षर–मन्त्रघटित्तं रूपम्। भावयन्तः1 जपन्ति क्रीँ क्रीँ क्रीँ इत्यादि स्वाहान्तं द्वाविंषत्यक्षरीं विद्याराज्ञीं पुनः पुनः उच्चारयन्ति, ते साधकाः लक्ष्मीलास्यलीलकमलदलदृशः लक्ष्म्याः या नृत्यक्रीडा, सा यत्र कमले पद्येतद्दलमिव पत्रमिव दृशो चक्षूषि येषां तथाविधाः। कामरूपाः कामदेवसदृषकमनीयरूपा भवन्ति।।5।।

स्वरूपव्याख्या।। 5।।

हे स्मितमुखि नित्यानन्दरूपिणि। स्मरहरमहिले स्मरहरः काम नाशकः हरस्तस्य महिला शक्ति स्वीयसाधकानां कामक्रोधादिनाशिनीति भावः। हे मात ये यं[2] केचित् साधका नराधमा अपि यदि तब

वहि वह्निसंस्थं तेजोमयम्। विधुरतिललितं शैत्यसौन्दर्ययुक्तम्। वर्गाद्यं सृष्टेः आदिभूतं चिन्मयरुपम्। तत्त्रम् पश्चात् तथा कूर्च्चयुगमं शब्दब्रह्मरुपम्। लज्जाद्वन्द्वञ्च मायाबलबलब्रह्मरूपञ्च। तदधः ठद्वयं योजयित्वा स्वाहा वह्ने प्रकाशक्तिस्या सह ते स्वप्रकाश रुपं स्वरूपं[2] स्वस्य आत्मनः रुपम, जीवात्मना सह अभेदम्। भावयन्ती।

1. क्रीँकारो मस्तक देवी क्रीँ कारश्च ललाटकम्।
   स्वाशब्देन पदद्वन्द्वं हाकारेण नखस्तथा।।
   इत्यादि शाक्तानन्दतरङ्गिण्याः नवमपटले द्रष्टव्यम्।
2. महामहाब्रह्मविद्या विद्येयं कालिका मता।
   यमासाद्य च निर्वाणमुक्तिमीति नराधमः।।
   तथा च कालीकुलसर्वस्वे–
   श्रद्धयाअश्रद्धया वापि यः कश्चिद् मानवः स्मरेत्।
   दुर्गञ्च दुर्गति जित्वा स याति परामं गतिम्।।
3. सर्वदा कालीरूपमात्मनं विभावयेत्।। (कालिकोपनिषत्)
   तथा च सहस्रनामस्तोत्रे
   आत्मानं कालिकात्मानं भावयन् स्तौति यः शिवाम्।
   शिवोपमं गुरुं ध्यात्वा स एव श्रीसदाशिवः ।।

जपन्ति अनुध्यायन्ति,ते साधकाः लक्ष्मीलास्यलीला1 लक्ष्म्याः श्रियः, लास्यं नृत्यम्, लीला क्रीडा रमणञ्च इत्यर्थः, लक्ष्म्या नृत्यादिविहार इति भावः। तस्या आधारभूतो यः कमलदृक् कमलाक्षः विष्णुस्तत्सदृशाः। उक्तचञ्च देवीमाहात्म्ये–'श्रीः' कटभारिहृदयैक कृताधिवासा'। कामरुपाः स्वेच्छानुसारेण शरीरग्रहणसमर्था भवन्ति। यथा पुण्डरीकाक्षो विष्णुः स्वेच्छया मत्स्य कूर्म–वराहादिदशविधमूर्त्तीन् तथा मोहिनीमूर्तिञ्च दधार, तद्वत् कालीसाधकः स्वेच्छानुसारेण मूर्त्ति परिग्रहीतुं शक्नुवन्तीति भावः । उक्तक्रमस्तोत्रे–

ततः स्वनाम्नः शृणु मातरेतत् फलं चतुर्वर्ग मन्ति सन्तः।
बीजत्रयं वै पुनरप्युपास्य सुराधिपत्यं लभते मुनीन्द्रः।।
पुनतस्था कूर्च्चयुगं जपन्ति भवन्ति सिद्धा नरसिंहरूपाः[2]।
ततोऽपि लज्जाद्वयजापकत्वाद् लमन्ति सिद्धिं मनसा जनास्ते।
अन्ते पदंक्षिप्य विभा विभावसोस्तन्मन्त्रमुद्धारमिदं वदन्ति।।5।।

प्रत्येकं वा द्वयं वा त्रयमपि च परं बीजमत्यन्तगुह्यं
त्वन्नाम्ना योजयित्वा सकलमपि सदा भावयन्तो जपन्ति।
तेषा नेत्रारबिन्दे विहरति कमला वक्त्रशुभ्रांशुबिम्बे
वाग्देवी देवि मुण्डस्रगतिशयलसत्कण्ठिपीनस्तनाढ्ये।।6।।

तथा च योगिनीतन्त्रे–

क्षणं ब्रह्माहमस्मीति यः कुर्यादात्मचिन्तनम्।
तस्मै दद्यात् फलं देवी तस्यान्तं नैव गण्यते ।
आत्महदेहं स्वेष्टरूपं सदैव परिचिन्तयेत्।
ब्रह्माण्डञ्च तथा सर्वं स्वेष्टरूपं विचिन्तयेत्।।

निर्वाणतन्त्रे–अस्य ग्रहणमात्रेण नरो नारायणो भवेत्।

भैरवतन्त्रोक्तश्यामाकवचे च–

"नारायणोऽपि यद्धृत्वा नारी भूत्वा महेश्वरम्।
योगेशं क्षोभमनयत्....................." ।।

निर्वाणतन्त्रे च–

"ध्यानेन लभते सर्वं ध्यानेन विष्णुरूपकः"।

विष्णुरूपाः।

हे देवि द्योतनशीले। हे मुण्डस्रगतिशलयसत्कण्ठि मुण्डमालिनि। हे पीनस्तनढये पीवरस्तनि।

अत्यन्तगुह्यं साधकेतराणां समीपे अतीवगोपनीयम्। प्रत्येकं[1] वा पूर्वोक्तानां बीजानामेकैकम्। द्वयं वा द्वयक्षरं वा । त्रयमपि त्र्यक्षरमपि। त्वन्नाम्ना सम्बोधनान्तेन दक्षिणकालिकेति नाम्ना। योजयित्वा एकाक्षरं द्वयक्षरं त्र्यक्षरं पुटितं कृत्वा। सकलमपि द्वाविंशत्य क्षरात्मकविद्याराज्ञी वा। भावयन्तः[2] तत्तन्मन्त्रार्थवाच्यं त्वद्ध्यानोक्तं तव नवघननील–दिगम्बरी–पीनस्तनी–मुण्डमालिनी–मुक्तकेशीरूपम्। ध्यायन्तः पूर्वोक्तमन्त्राणां मन्त्रोकं जपन्ति च, तेषां साधकानाम्। नेत्ररविन्दे नयन पद्मे । कमला लक्ष्मीः। विरहति सदैव तिष्ठति। तथा तेषां वक्त्रशुभ्रांशुबिम्बे मुखचन्द्रे ! वारदेवी सरस्वती च विहरति विहरं करोति। ते घनवन्ती विद्यावन्तश्च भवन्ति इति भावः श्रीसुन्दरीपक्षे तु–हे देवि त्रिपुरसुन्दरि ये साधकः 'सकलं' इति त्र्यक्षरबीजं तव ह्रीं इति शक्तिकूटख्यामन्त्रम्, अथवा कामराज–कूटसहितं कूटद्वयं किं वा वागभवकामराजक्त्याख्यकूट त्रयात्मं पञ्चदशाक्षरमन्त्रराजम्। त्वां ध्यायन् जपन्ति तेषां नेत्रारविन्दे इत्यादि सर्वं पूर्ववत् ।। 6।।

स्वरूपव्याख्या।। 6।।

हे देवि स्वप्रकाशरूपिणी। हे मुण्डस्रगतिशयलसत्कण्ठ हे पञ्चाशदवर्ण[3]

1. अथ सर्वां विद्यां प्रथममेकं द्वयं वा बीजत्रयपुटितं नाम वा जपेद् गति स्यस्यास्ति इति कालिकाश्रुतौ।
2. यस्य यस्य च मन्त्रस्य उद्दिष्टा या च देवता।
   चिन्तयित्वा तदाकारं मनसा जपमाचरेत्।। (कामधेनुतन्त्रम्)
   तथा च विश्वसारतन्त्रे–
3. पञ्चाशद्वर्णमुण्डालीं गलद्रुधिरचर्च्चिताम्। (निरुत्तरतन्त्रेम्)
   मम कण्ठे स्थितं बीजं पचाशद्वर्णमद्मुतम्।। (कामधेनुतन्त्रम्)
   तथा च विश्वसारतन्त्रे–
   परानन्दमयं ब्रह्म शब्दब्रह्मविभूषितम्।
   आत्मनो देहमध्ये तु सर्वमन्त्रात्मक प्रिये।।

अयि शब्दब्रह्मरूपिणी । हे पीनस्तनाढ्ये स्तन्यरूपाहार्यादिदानेन त्रिजगतां पालयित्रि तथा स्तन्यामृतदानेन साधकानां मोक्षदात्रि च। मातस्तव प्रत्येकं वा द्वयं वा त्रयमपि च परम् अत्यन्तगुह्यं सकलं सगुणम्। बीजं तब प्राज्ञतेजसंविष्वाख्या–व्यष्टिरूपं तथा ईश–सूत्र विराटख्य–समष्टिभूत मूर्त्तीश्च1 भावयन्तः जपन्ति, श्रवण–मनन–निदिध्यासनात् सदा चिन्तयन्ति। तेषां कृपादृष्टिपातेन अन्येषामपि धनैष्वर्ष्य भवति का कथा आत्मनाम् इति भावः। वक्त्र शुभ्रांशुबिम्बे वाग्देवी विहरति तेशां गद्य पद्यमयीवाणी भवतीति भावः। अथवा हे मातः! ये जनास्तव सकलं सगुणं शब्दब्रह्ममयरूपं स्वात्माभेदेन चिन्तयन्त इमान् मन्त्रान् जपन्ति तेषां साधकानां नेत्रारविन्दे इत्यादि।।6।।

गतासूनां बाहुप्रकरकृतकाञ्चीपरिलस
न्नितम्बां दिग्वस्त्रां त्रिभुवनविधात्रीं त्रिनयनाम्।
श्मशानस्थे तल्पे शवहृदि महाकालसुरत
प्रयुक्तां त्वां ध्यायन् जननि जडचेता अपि कविः ।।7।।

टीका

हे जननि त्रिजगतां सृष्टिकत्रि। गतासूनां मृतानाम्। बहुप्रकरराधातन्त्रे च–

अकारादिक्षकारान्त पञ्चाशन्मातृकाक्षरा।
अव्यया जपरिछिन्ना त्रिपुराकण्ठसंस्थिता।
शुक्लाभा रक्तवर्णाभा पीताभा कृष्णरूपिणी।।

1. प्राज्ञस्तु कारणात्मा स्यात् सूक्ष्मदेही तु तैजसः।
स्थूलदेही तु विष्वाख्यस्त्रिविधः परिकीर्तितः।।
एवमीशोऽपि सम्प्रोक्त ईश–सूत्र विराट्–पदैः।
प्रथमां व्यष्टिरूवस्तु समष्टयात्मा परः स्मृतः।। (देवीगीता)

2. स्पर्द्धामुद्ध्य कमला वाग्देवीमन्दिरे मुखे।
पौत्रान्तं स्थैय्यमास्थाय निवसत्येव निश्चितम्।। (भैरवतन्त्रम्)

कृतकञ्चीपरिलसन्नितम्बा करसमूहरचितकटिभूषणशोभमाननितम्बाम् ।दिग्वस्त्रां दिगम्बरीं त्रिभुवन विधात्रीं त्रिजगतां भोगमोक्षविधानकर्त्रीम्। त्रिनयनां[1] शशिसूर्याग्निनेत्राम्। श्मशानस्थे शवहृदि तल्पे श्मशानस्थशव रूपसदाशिवशय्यायाम्। महाकालसुरतप्रयुक्तां परमशिवेन सह रीतिक्रीडाभिः निविष्टाम्। त्वां ध्यायन् चिन्तन् जनः। जडचेता मन्दबुद्धिः सन्नपि कविः काव्यरचनाकुशला भवति।।7।।

स्वरूपव्याख्या।। 7।।

हे जननि चराचराणां उत्पादियित्रि। गतासूनां मृतानां बाहुप्रकरकृत काञ्चीपरिलसन्नितम्बां[2] सर्वे जीवाः कल्पावसाने स्थूलदेहान् त्यक्त्वा स्वस्वकर्म्मभिः सह लिङ्गदेहमाश्रित सगुणब्रह्मरूपिण्याः कारणदेहस्य अविद्यामयांशे पुनः कल्पारम्भपर्यन्तम् आमोक्षं अवतिष्ठन्ते, अत एवात्र मृतजीवनां प्रधानकर्म्मसाधनभूतैः करसमूहैः विराट्रूपिण्या महादेव्याः गर्भधारणयोग्यनिम्नोदरस्य तथा योनेश्च ऊर्ध्वस्थितकटिप्रदेशे क़ाञ्ची कल्पिता इति भावः । दिग्वस्त्रां वस्त्रं मायावरणम् तेन शून्यां मायातीतामित्यर्थः। त्रिभुवनविधात्रीं पुनः कल्पारम्भे जीवानां स्वस्वसतञ्चितकर्म्मानुसारण पुनर्ज्जन्मानां भोगानाञ्च विधानाकर्त्रीम्। त्रिनयनां त्रिकालज्ञाम् श्मशानस्थे[3] महाप्रलये सर्वभूतानि शवरूपैः शेरते लोयन्ते यस्मिन्, तत्

1. शशिसूर्य्यादिभिर्नेत्रैरखिलं कालिका जगत्।
सम्पश्यति यतस्तस्मात् कल्पितं नयनत्रयम्।। (महानिर्वाणतन्त्रम्)

2. कर्म्मणा जायते जन्तुः कर्म्मणैव विलीयते।
देहे विनष्टे तत्कर्म्म पुनर्देहे प्रलम्यते।। (तदेव)

श्री श्री देवीगीतायाञ्च–

तस्यां कर्माणि जीवनां जीवाः कालाश्च सञ्चरे ।
अभेदेन विलीनाः स्युः सुषुप्तौ व्यवहारवत्।।
साहं सर्वं जगत् सृष्ट्वा तदन्तः प्रविशाम्यहम्।
मायाकर्म्मादिसहिता गिरौ प्राणपुरः सरा।।

3. महान्त्यपि च भूतानि प्रलये समुपस्थिते।
शेरतेऽत्र शवो भूत्वा श्मशानन्तु ततो भवेत्।।

स्थानं तस्मिन् महाकाशे। शवहृदि तल्पे शवः निर्गुणब्रह्म, तल्पे आधारे, निर्गुणब्रह्मरूपाधारे, निर्गुणब्रह्म, तल्पे आधारे,निर्गुणब्रह्मरूपाधारे, निर्गुणब्रह्मरूपस्वीयपदे अवस्थिता सतीत्यर्थः। महाकालसुरतप्रयुक्तां कल्पावसाने सृष्ट्याद्यादिकार्य्याभावात्, निष्क्रियत्वाच्चपरमशिवेन सह अभिन्नतया अखण्डानन्दमनुभवन्तीम्। एवं ध्यायन् सच्चिदानन्दरूपिणीं त्वां चिन्तनेन प्रत्यक्षीकुर्वन्। जड़चेता विषयरागगोपहतचित्तो जनोऽपि। कविः महाज्ञानी भवतीति भावः।।7।।

शिवाभिर्घोराभिः शवनिवहमुण्डास्थिनिकरैः
परं सङ्कीर्णायां प्रकटित–चितायां हरवधूम्।
प्रविष्टां सन्तुष्टामुपरि सुरतेनातियुवतीं
सदा त्वां ध्यायन्ति क्वचिदपि न तेषां परिभवः।।8।।

टीका

घोराभिः भीमाभिः। शिवाभिः श्रृगालैः। शवनिवहमुण्डास्थिनिकरैः शवसमूहानां कपालैः कुडालैश्च। परम्,अत्यन्तम् । सङ्कीर्णायां सङ्कुलायाम्। प्रकटितचितायां प्रविष्टां कृतप्रवेशाम्, श्मशानवहिनमध्यस्थंमित्यर्थः। उपरिसुरतेन सन्तुष्टां महाकालेन सह विपरीतविहारेण आनन्दिताम्। अतियुवतीं[2] बाल्यवार्द्धक्याद्यसंस्पृष्टाम्। हरवधूं कालमाहिनोम्। त्वां सदा ध्यायन्ति अविश्रामं चिन्तयन्ति । तेषां त्वत्साधकानाम्। कवचिदपि इहामुत्र वा। परिभवः अनादरो न स्यादित्यर्थः ।।8।।

स्वरूपव्याख्या।। 8।।

घोराभिः भयङ्कराभिः अतीवदुर्द्धीषिभिः।शिवाभिः शिवप्रकृतिभिः, अपञ्चीकृतमहाभूतैरित्यर्थः । शवनिवहमुण्डास्थिनिकरैः, अत्र अस्थिकङ्कालानां

1. शव इत्यक्षरे ब्रह्मवाचकः प्रेतनिर्णयः ।। (गायत्रीतन्त्रम्)
गन्धर्वतन्त्रे च–
या शय्या परमेशानि स एव श्रीसदाशिवा।
तस्योपरि महेशानि सूक्ष्मा त्रिपुरसुन्दरीम्।।

2. आद्याप्यशेषजगतां नवयौवनासि।। (शादातिलकम्)

श्वेतवर्णत्वेन सत्त्वगुणं सचितम् अतएव प्रहाप्रलये मृतानां जीवानां सत्त्वादि गुणसमूहैः। पर सङ्कीर्णायाम् अत्यन्तसङ्कुलायां युक्तायाम्। प्रकटितचितायां[1] स्वप्रकाशरुपायां चिच्छक्तौ। प्रविष्टाम् अधिष्ठाम् उपरि सुरतेन सन्तुष्टां[2] परमशिवमभिय स्वेच्छया सृष्टि–स्थिति–लयादि–कय्येषु रममाणाम्। अतियुवतीं सदैव एकभावपन्नाम् अव्ययामित्यर्थः हरवधूः तत्त्वज्ञानप्रदानेन जीवनां त्रितापं हरतीति हरस्तस्य वधूः शक्तिस्तां जीवानां मुक्तिदात्रीमित्यर्थः। एवम्भूतां चिदानन्दमयीं त्वां ये साधकाः सदा ध्यायन्ति, अहरहःनिश्चलचेतसा प्रत्यक्षीकुर्व्वन्ति। तेषां क्वचिदपि कस्यामपि योनौ। परिभव इत्थम्भूतं जन्म पुनर्ज्जन्म भवति, ते निर्वाणमोक्षं लभन्त इत्यर्थः ।।8।।

वदामस्ते किं वा जननि वयमुच्चैर्ज्यडधियो
न धाता नापीशो हरिरपि न ते वेत्ति परमम्।
तथापि द्धत्वदक्तिः मुखरयति चास्माकममिते
तदेतत् क्षन्तव्यं न खलु पशुरोषः समुचितः।।9।।

टीका

हे अमिते[3] इयत्तारहिते। हे जननि त्रिजगताम उत्पादयित्रि । ते तव
1. चितिरूपेण या कृत्स्नम् एतद्व्याप्य स्थिता जगत्।। (श्री श्री चण्डी)
2. वामा या दक्षिणं जित्वां माहमोक्षप्रदायिनी।।(निर्वाणतन्त्रम्)

तथा गन्धर्वतन्त्रे–

अधः कृत्वा तु पुरुषं हकारार्द्धस्वरूपिणी।
विपरीतेन रमते वहीन्द्वर्कस्वरूपिणी।।
निरुत्तरतन्त्रे च–
विपरीतरता काली निर्गुणा सगुणा यदा।।
वासिष्ठरामायणे च–
अस्वभावात्मता सगैः स्वभावैकात्मता शिवाः।।
(निरूत्तरतन्त्रम्)

3. अमा स्यान्निगुणे सापि अनिरूद्धसरस्वती।।

महाकालसंहितायाम्–

अचिन्त्यामिताकारशक्तिस्वरूपा प्रतव्यक्त्यधिष्ठानसत्त्वैकमूर्त्तिः
गुणातीतनिर्द्वन्द्वबोधैकगम्या त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा।।

परमं यथार्थतत्त्वम् । धाता ब्रह्मा न वेत्ति, न जानाति, ईषो रूद्रः अपि न जानाति, हरिः विष्णुः अपि न वेत्ति। उच्चैः अत्यन्तं जडधियः मन्दबुद्धयो वयं ते तव सम्बन्धे कि वदामः। तथापि अज्ञत्वेऽपि त्वद्भक्तिस्तव स्तवनोद्देश्यक प्रवृत्तिः। अस्मान् मुखरयति स्तुतिवचनेशु पेरयति। तत् तस्माद्धेतोः। अस्माकमेतत् तदयोग्यां कर्म्म। क्षन्तव्यं सहनीयम्। खलु निश्चितम्। पशुरोषः अज्ञानेषु कोपः, न समुचितः न योग्यो भवति।।9।।

स्वरूपव्याख्या।।9।।

हे अमिते गुणपरिच्छेदरहिते, निर्गुणे इत्यर्थः । हे जननि[1] हे ब्रह्मविष्णु रूद्रादीनामस्माकं च उत्पादयित्रि। अतएव ते तब परमं परमतत्त्वं धाता जीवनां कर्म्मानुसारेण जन्मादिविधानकर्त्ता ब्रह्मा न वेत्ति न जानाति। ईशः ऐशीशक्तिसम्पन्नरूद्रोऽपि न वेत्ति। हरिः जीवानां त्रितापहार को विष्णु रपि न वेत्ति। यतस्त्वं तेषामपि जननी। अतएव जगन्मातुस्तव स्वरूप त्तवस्य ज्ञानम् एतेषु कथं सम्भवति, स्वस्वजनन्याः जन्मकर्म्मा सन्तानानाम् अतीव असम्भवमित्यर्थः। उच्चैः जडधियो वयं ते किं वदामः ?

यतो ब्रह्मादयो देवेशास्तव स्वरूपं न जानन्ति किञ्चिल्लौकिकमात्रज्ञानवन्तो वयं तव स्वरूप कथने कथं समर्था भवाम् भावः । तथापि तवद्भक्ति र्मुखरयति तव गुणकथने अयोग्यांस्तर्थापि तव विषयिणी भक्तिः किञ्चद्

1. एकानेका सुक्ष्मरूपाविकारा ब्रह्माण्डानां कोटि कोटि प्रसूषे।
कोऽहं विष्णुः को परो वा शिवाख्यो देवाश्चान्ये स्तोतुमीषा भवेम।। (देवीसूक्तम्)
तथा च देवीमाहात्म्ये–
विष्णोः शरीरग्रहणमहमीशान एव च।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत्।।

विष्णु यामले च–

मातस्त्वत्परमं रुपं च जानाति कश्चन्।
काल्यादिस्थूलरुपं तदर्च्चन्ति दिवौकसः।।

पुनः महाकालीस्तोत्रे च –

यदा नैव धाता न विष्णुर्नै रुद्रो न काली न वा पञ्चभूतानि चासन्।
तथा कारणीभूतत्त्वैकमूर्त्तिस्त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा।।
गुणकथनै[1] अस्मान् प्रेरयति। तद् अस्माकमेतत् क्षन्तव्यं पशुरोषों न समुचितः न योग्यो भवति।।9।।

समन्तादापी न्स्तनजघनधृग् यौवनवती–
रतासत्तः नक्तं यदि जपति भक्तस्तव मनुम्।
विवासास्त्वां ध्यायन् गलितचिकुरस्तस्य वशगाः
समस्ताः सिद्धौघा भुवि चिरतरं जीवति कविः।।

टीका

हे मातः भक्तः[1] वीराचाररतः तव साधकः। यदि नक्तं निशीथे। समान्तादापीनस्तनधनध्‍ृगयौवनवतीरतासक्तः सर्वतः सम्यक् पीवर स्तनजघनधारिण्या युवत्या सह मैथुररतः सन् आनन्दमयों भूत्वा। विवासा दिगम्बरः गलितचिकुरः मुक्तकेशः सन्। त्वां महाकालेन सह सदा सुरतानन्दनिरतां ध्यायन् स्वीयहृदि चिन्तयन् प्रत्यक्षीकुर्वन्। तव मनु तव पूर्वोक्तमन्त्र राजं जपति। समस्ताः सिद्धौघाः सर्वार्थसिद्धयस्यतस्य वीरसाधक्य वशगा वशीभूता भवन्ति। स च कविः सन् भुवि पृथिव्यां चिरतरं सुदीर्धकालं व्याप्य जीवति।।2।।

स्वरूपव्याख्या।।10।।

अस्मिन लययोगो वर्ण्य। हे मातः ! जननि ! भक्तो दिव्याचाररतो योगी।
1. अभिषेक कृतो मन्त्री कुलपूजां समाचरेत्।
कुलाचारं विना देवी कालीमन्त्रं न सिद्धयति।। (निरुत्तरमन्त्रम्)
2. रात्रौ नग्नः शयानश्च मैथुने सुव्यवस्थितः ।। (फेत्कारिणीतन्त्रम्)

कालीक्रमे च–

स्वाचारनिरतः नित्यं दिवा लक्षंजपेत् पशुः ।

दिव्यो वाप्यथवा वीरो रात्रौ लक्ष्यजपञ्चरेत्।।

कुब्जिकातन्त्रे च–

पशुभावरता ये चे केवलं पशुरूपिणः।

रात्रौ मन्त्रञ्च मालाञ्च न स्पृशेत्तु कदाचन।।

साधकः। यदि नक्त[1] निशायां ब्रह्मविद्यालक्षणयां सर्वभूतनिशायां प्रबुद्ध सन् इत्यर्थः। समन्तादापीनस्तनजघन दृग्यौवनवतीरतासक्तः[2] सर्वदिग्विदिक्स्थितानां जीवानाम् उत्पादयित्र्या पालयित्र्या च नित्ययुवतीरूपया कुलकुण्डलिनीशक्त्या सह जीवात्मानं परमात्मनि लीनं कुर्वन् सन्। अत्र स्तनजघनधृक्[3] इत्यनेन कुलकुण्डलिन्याः जगतां सृष्टि–स्थिति कर्त्तित्वं सूचितम्। विवासा विगतं वासो मायावरणो यस्य तथाभूतः प्रबुद्ध इत्यर्थः गलितचिकुरः गलितं नष्टं चिकुरत्वं चापल्यं यस्य स निश्चलचित्तः सन् त्वां परमशिवेन सह सामरस्यानन्दनिरतां त्वाम्। चिन्तयन् तव मन्त्रराजं मनसा जपति, स तत्त्वज्ञानी भूत्वा दिव्यौघसिद्धौघमानवौघसदृशचिरजीवी भवतीत्यर्थः । समस्ताः सिद्धौघ, अत्र बहुवचन प्रयोगेन दिव्यसिद्ध मानवौघानां ग्रहणं बोद्धव्यम्।।10।।

समाः सुस्थीभूतो जपति विपरीतां यदि सदा

विचिन्त्या त्वां ध्यायन्नतिशयमहाकालसुरताम्।

तदा तस्य क्षौणीतलविहरमाणस्य विदुष :

कराम्भोजे वश्या पुरहरवधू सिद्धिनिवहाः

(श्रीमद्भगवतद्गीता)

1. या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्त्ति संयमी।

2. योनिमुद्रां समासाद्य स्वयं शक्तिमयो भवेत्।

सुश्रृङ्गाररसेनैव विहरेत् परमात्मनि।।

(घेरण्डसंहिता)

आनन्दमयः संभूय ऐक्यं ब्रह्मणि सम्भवेत्।।

तथा च गोरक्षसंहितायाम्

जीवेनसंहितां शक्तिं समुत्थाप्य शिरोऽम्बुजे।

शक्तिमयः स्वयं भूत्वा परशिवेन सङ्गमम्।

नानासुखं विहारञ्च चिन्तयेत् परमं पदम्।।

3. ध्यायेत् कुण्डलिनीं देवीम् इष्टदेवस्वरूपिणीम्।

सदा षोडशवर्षीयां पीनोन्नतपयोधराम्।।

श्यामां सूक्ष्मां सृष्टिरूपां सृष्टि–स्थिति–लयात्मिकाम्।। (तन्त्रकल्पद्रुमः)

टीका, स्वरूपव्याख्या च ।।11।।

हे पुरहरवधू! हे त्रिपुरहरसुन्दरि! सुस्थीभुतो[1] निश्चलचित्तो यदि विपरीतां विपरीतभावापन्नाम्, अतिशयमहाकालसुरतां कामेश्वरमहाकालेन सह अत्यर्थ रतानन्दनिरताम्, सृष्ट्युन्मुखां त्वां ध्यायन्[2] सन् तव मन्त्रार्थ चिन्तयन्। समाः संवत्सरं व्याप्य सदा सर्वदा विचिन्त्य त्वां ध्यायन् जपति[3], तब मन्त्रजपं करोति, तदा तर्हि क्षौणीतलविहरमाणस्य भूतले सुखेन निवसतो बिदुषः पण्डितस्य तस्य कराम्भोजे करकमलतले सिद्धिनिवहाः श्रीविद्याया इच्छासिद्ध्यादिशक्तिसमूहाः वश्या वशीभूता भवन्तीत्यर्थः महासिद्धिनिवहा इति पाठे सालौक्य–सारूप्य–सायुज्य निर्वाणाख्यास्तस्य आयत्ता भवन्तीत्यर्थः ।।11।।

प्रसूते संसारं जननि भवती पालयति च

समस्तं क्षित्यादि प्रलयसमये संहरति च।

अतस्त्वं धातासि त्रिभुवनपतिः श्रीपतिरपि

महेशोऽपि प्रायः सकलमपि किं स्तौमि भवतीम्।।12।।

टीका, स्वरूपव्याख्या च ।।12।।

हे जननि ! जगतां उत्पादयित्रि! संसारं जगत्प्रपच प्रसूते भवती जनयति । अतस्त्वं धाता ब्रह्मा तस्य सृष्टिशक्तिरित्यर्थः। भवती जगतीं पालयति च, विभर्त्ति च, अतः अज्ञमरद्धेतरेस्त्वं त्रिभुवनपतिः श्रीपतिरपि

1. शान्तः शुचिर्मिताहारो भूशायी भक्तिमान् वशी।
निर्द्वन्द्वः स्थिरधीम्मौनी संयतात्मा जपेत् प्रिये।। (कुलार्णवन्त्रम्)

2. जपस्यादौ शिवां ध्योद् ध्यानस्यान्ते पुनर्जपेत्।
जपध्यानसमायुक्तः शीघ्रं सिध्यति साधकः ।। (कौलावलीतन्त्रम्)

3. मनसा मन्त्रवर्णस्य चिन्तनं मानसं स्मृतम्।
वाचिकस्य शतं ज्ञेयम् एकेत्तरमुपांशुना।
तस्माच्छतगुणं प्रोक्तं मानसं जपमुत्तमम्।। (तदैव)

त्रिलोकीश्वरः विष्णुर्भवसि, तस्य जगत्पालनकारिणी वैष्णवीशक्तिस्त्वमसीत्यर्थः।

प्रलयसमये जगत्संहारसमये। समस्तं क्षित्यादि पञ्चमहाभूतात्मकं जगत् संहरति स्वीयकारणदेहे लीनं करोति। अतस्त्वं महेशोऽपि रूद्रश्च भवसि, त्वं संहारशक्तिरिति भावः। सकलमपि स्वारजङ्गमात्मकजगतो निमित्त कारणम् उपादानकाणञ्चासीति भावः। अतो भवतीं जगदेककारण भूताम् अद्वितीयां त्वाम्। किं स्तौमि तव स्वरूपाख्यानं किं करोमि। त्वमेव वाचातीता इति भाव उक्तञ्च त्रिपुटास्तोत्रे–

क्षितिस्त्वं विधाता जगत्सृष्टिकर्त्रीं त्वमापोऽपि विष्णुः जगत्पालिका च।

त्वमग्निस्तु रुद्रो जगत्क्षोभकर्त्री त्वमैश्वर्य्यरूपा वियद्वायरूपा।।

तथा च स्तोत्रान्तरे–

उत्पत्ति स्थितसंहृतीर्घटयितुं धत्ते त्रिरूपां तनुम्।
त्रैगुण्याज्जगतस्त्वदीयविकृतिब्रह्माच्युतः शूलभृत्।।12।।
अनेक सेवन्ते भवधिकगीर्वाणनिवहान्
विमूढास्ते मातः किमपि न हि जानन्ति परमम्।
समाराध्यामाद्यां हरिहरविरिञ्चादिविबुधैः
प्रपन्नोऽस्मि स्वैरं रतिरसमहानन्दनिरताम्।।13।।

टीका, स्वरूपव्याख्या च ।।13।।

हे मातः! अनेके बहवो जनाः। भवदधिकगीर्वाणनिवहान् त्वदतिरिक्त देवसमूहान्, सेवन्ते आराधयन्ति, विमूढाः विचारशून्यास्ते जनाः किमपि परम[1] किञ्चिदपि परमतत्त्वं न हि जानन्ति, न विदन्ति हरिहरविरिञ्चादि

1. कूर्मपुराणे श्रीकूर्म उवाच
सर्ववेदान्तवेदेषु निश्चितं ब्रह्मवादिभिः।
एकं सर्वगतं सूक्ष्मं कूटस्थमचलं ध्रुवम्।।
अनन्तमक्षरं ब्रह्म केवलं निष्कलं परम्।
योगिनस्तत् प्रपश्यन्ति महादेव्याः परं पदम्।।

विबुधैः[1] ब्रह्मविष्णुरुद्रादिसुरेशैः। आराध्यां सदा उपास्याम्, आद्यां जगतः आदिकारणभूतां रतिरस[2] महानन्दनिरतां महाकालेन सह रतिर्विपरीत रमणं तथा रसं मद्यपानं ताभ्याम् उत्पन्नं यन्महानन्दं तस्मिन् निरताम्। त्वां ब्रह्माद्यैराराध्यां चिदानन्दरूपिणीं भवतीं स्वैरम् अतिशयेन। प्रपन्नोऽस्मि शरणागतोऽस्मि।

धरित्री कीलालं शुचिरपि समीरोऽपि गगनं
त्वमेका कल्याण गिरिशरमणी कालि सकलम्।
स्तुतिः का ते मातर्निजकरुणया मामगतिकं
प्रसन्ना त्वां भूया भवमनु न भूयान्मम जनुः।।14।।

परात्परतरं तत्त्वं शाश्वतं शिवमच्युतम्।
अनन्तं प्रकृतौ लीनं देव्यास्तत्परमं पदम्।।
शुभ्रं निरञ्जनं शुद्धं निर्गुणं द्वैतवर्जितम्।
आत्मोपलब्धिविषयं देव्यास्तत्परमं पदम्।।

तत्रैव श्रीदेवीवचनम्–

यत्त में निष्कलं रूपं चिन्मयं केवलं परम्।
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तमनन्तममृतं पदम्।।
ज्ञानेनैकेन तल्लभ्यम् अक्लेशेन परं पदम्।।
ज्ञानमेव प्रपश्यन्तो मामेव प्रविशन्ति ते।।

तथा च योगिनीतन्त्रे–

परमानन्दकं रूपं जगतां कारणं महत्।
तस्या देव्यास्तु तद्रूपदुदयास्तविवर्ज्जितम्।।

1. महामहाब्रह्मविद्या विद्येयं कालिका मता।
यामासाद्य च निर्वाणमुक्तिमेति नराधमः।।
तथा च अर्गलास्तोत्रे
चतुर्भुजे चतुर्ववत्रसंस्तुते परमेश्वरि ।
कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या सदाम्बिके।।
हिमाचलसुतानाथसंस्तुते परमेश्वरि ।
2. पीत्वा कुलरसं वीरो ब्रह्मध्यानमुपाश्रयेत्।
ब्रह्मध्यानं महेशानि ब्रह्मनिर्वाणकारणम्।।
(योगिनीतन्त्रम्)

टीका, स्वरूपव्याख्या च ।।14।।

हे कालि कालभयनिवारिणि। त्वं धरित्री1 क्षितिः कीललं जलम, शुचिः अग्निः,अपि समीरः वायुः, अपि गगनम् आकाशम् एका अद्वितीय कल्याणी निर्वाणमोक्षदानेन जीवनां मङ्गलविधायिनी । गिरिशरमणी शिवानी, गिरौ कूटे शेते इति गिरिशः कूटस्थब्रह्म, कूटस्थब्रह्म, तस्य रमणी ह्लादिनी शक्तिः। त्वं निर्विकारापि[2] स्वकीयाघटन–घटनपटीयसीमायया क्षित्यादि चतुर्विंषतितत्त्वरूपिणीत्यर्थः । सकलं सर्व चराचरञ्च 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' इति श्रुतिः, 'सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते' इति चण्डी। हे मातः ते तव स्तुतिः का सर्व्वस्वयपायास्तव स्तुतिर्न सम्भवतीति भावः। त्वं निजकरूणया स्वीयासाधारणकृपया। अगतिकं साधनहीनत्वादनुपायम्। मां प्रति प्रसन्ना भूयाः प्रसीद भवमनु संसारे इत्यर्थः, मम जनुः जन्म न भूयात् न भवतु मां स्वीयाभयपदे लीनं कुरू इत्यर्थः।।14।।

श्मशानस्थः सुस्थो गलितचिकुरो दिक्पटधरः
सहस्रंत्वर्काणां निजगलितवीर्येण कुसुमम्।
जपंस्त्वत्प्रत्येकं मनुमपि तव ध्यानिरतो
महाकालि स्वैरं स भवति धरित्रीपरिवृढः।।15।।

टीका

हे महाकाली महाकाले शक्ते, तु पुनः, योजनः[3] श्मशानस्थः प्रतभूमौ अवस्थितः सुस्थः स्थिरचित्तः गलितचिकुरः मुक्तकेशः दिक्पटधरः दिगम्बर :

1. त्वं भूमिस्त्वं जलौघस्त्वमसि हुतवहस्त्वं जगद् वायुरूपा
त्वं चाकाशी मनश्च प्रकृतिरपि महत्पूर्विहङ्कृतिश्च।
आत्मा चैवासि मातः परमपि भवती त्वत्परं नैव किञ्चित्
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितरदने कामरूपे कराले।। (गुप्तार्वणवतन्त्रम्)
2. एकानेका सूक्ष्मरूपाऽविकारा ब्रह्माण्डानां कोटि कोटि प्रसूते । (देवीसूक्तम्)
3. श्मशानस्थो भवेत् सुस्थो गलितं चिकुरं चरेत्।
दिगम्बरः सहसञ्च सूर्यपुष्पं समर्पयेत्।।

सन् तव ध्याननिरतः त्वदीयं 'मेघाङ्गीं विगताम्बराम्' इत्यादि स्थूलरूपं चिन्तयन् त्वत् तव मनुमपि मन्त्रराज्ञीं च जपन् उच्चारयन् निजगलित वीर्येण स्वीयस्खलितशुक्रेण तदलिप्तम् इत्यर्थः। अर्काणां सूर्यपुष्पाणाम्, आकन्द इति ख्यातानाम्। सहस्रकुसुमं दशशतसंख्यानि पुष्पाणि प्रत्येकम् एकैकं त्वामुद्दिश्य ददातीति शेषः, स साधकः स्वैरम् अनायासेन धरित्री परिवृढो भूपतिर्मवति।।15।।

टीका, स्वरूपव्याख्या च ।।15।।

तु पुनः दिव्यानां पक्षे । हे महाकाली परंब्रह्मरूपिणि यो जनः श्मशानस्थः महाप्रलयसमये सर्वभूतानि शवरूपेण लीयन्ते यस्मिन् तत् श्मशानं परब्रह्मपरायण इत्यर्थः । सुस्थः स्थिरचित्तः दिक्पटधरः मायावरणरहितः निर्विकारचित्तः । तव ध्याननिरतः त्वदीय सच्चिदानन्दरूपं चिन्तयन् इत्यर्थः। उक्तञ्च रुद्रयामले।

चिद्रूपां ज्ञाननिलयां चैतन्यानन्दविग्रहाम्।
कोटि सौदामिनीभासां सर्वतत्त्वस्वरूपिणीम्।।
आश्रित्य प्रजपेन्मत्रं कुलमार्गाश्रयो नरः।

तव मनुमपि जपन् त्वदीयमन्त्रराजं मनसा उच्चारयन् सन् । निज गलितवीर्येण1 सहस्रारकमलात् स्वाभाविकक्षरितं यद् अमृतं तेन सह।

स्ववीर्येण युतं कृत्वा प्रत्येकं प्रजपन् हुनेत्।
ध्यात्वाभ्यर्च्य महाभक्त्या कुलालापः स्तवं पठेत्।। (महाकालसंहिता)

1. हृत्पद्मासनं दद्यात् सहस्रारच्युतामृतैः ।
पाद्यं चरणयोर्दद्याद् मनस्त्वर्घ्यं निवेदयेत्।।
चित्तं प्रकल्पयेत् पुष्पं धूपं प्राणान् प्रकल्पयेत्।। (महानिर्वाणन्त्रम)

ब्रह्मरान्ध्रचन्द्रपात्रात् तर्पयेत् तारिणीं पराम्।
तत्रस्थसूर्य्यपात्राच्च अर्घ्यं दद्यान्मनोहरम्।
ज्ञानदानपुण्यपुष्पम् दातव्यं पुष्पञ्च साधकार्च्चनम्।
दशपुष्पं यः प्रदद्यात् स गच्छेत् ताराकादम्।। (तारारहस्यम्)

अर्काणां सहसं कुसुमं ब्रह्मरन्ध्रावस्थितम्[1]। आदित्यख्यचित्तोद्भव–चित्त–वृत्तिरूपणि दयाज्ञानक्षमादिरूपभावपुष्पाणि। प्रत्येकम् एकैकं त्वामुद्दिश्य ददाति, मानसोपचारविधिना चिदग्नौ तुभ्यं समर्पयति । स दिव्यसाधकः स्वच्छन्देन धरित्रीपरिवृढः धरित्र्याः पृथ्व्याः पार्थिवदेहस्य इन्द्रियादि वृत्तीनाम् अधिपो भूत्वा सहजावस्थां[2] प्राप्नोतीति भाव : ।।15।।

गृहे सम्मार्ज्जन्या परिगलितवीर्य्यं हि चिकुरं
समूलं मध्याह्ने वितरति चितायां कुजदिने।
समुच्चार्य्य प्रेम्णा मनुमपि सकृत् कालि सततं
गजारूढो याति क्षितिपरिवृढः सत्कविवरः।।16।।

टीका

हे कालि कालनाशिनि। यो जनो वीरसाधकः। गृहे सम्मार्ज्जन्या

परिगलितवीर्यम् अत्र गृहे मदनागारे सम्मर्ज्जनी लिङ्गम्, स्वशक्त्या रमण जनितनि : सृतं शुक्रम्। यथा समूलं चिकुरं सूलेन सह उत्पाटितं केशञ्च । कुजदिने मङ्गलवासरे मध्याह्न[3] दिनमध्यभागे अर्द्धरात्रे वा। प्रेम्णा भक्त्या

1. सूर्याग्रे वसते चित्तं चन्द्राग्रे जीवितं प्रिये । (ज्ञानसंकलिनीतन्त्रम्)
तथा च याज्ञवल्क्यसंहितायाम्—
इडायां चन्द्रमा ज्ञेयो पिङ्गलायां रविः स्मृतः।
उक्तञ्च प्राणाग्निहोत्रे–
तत्र सूर्योऽग्निर्मि सूर्य्यमण्डलाकृतिः सहस्ररश्मिभिः परिवृढ एक ऋषिर्भूत्वा मूर्ध्नि तिष्ठतीति।
2. उत्पन्नशक्तिबोधस्य त्यक्त निः शेषकर्म्मणः।
योगिनः सहजावस्था स्वयमेवोपजायते।।
कालिका तनुतामेत चिदादित्यप्रकाशनात्।। (महोपनिषत्)
उत्तमा सहजावस्था मध्यमा ध्यानधारणा।
जपस्तुतिः स्यादधमा होमपूजाधमाधमा।। (कुलार्णवे)
3. नखं केशं स्ववीर्यञ्च यद्यत् सम्माज्र्यनीगतम्।
मुक्तकेशो दिशावासो मूलमन्त्रपुरः सरः ।।

तव मनुं ते मन्त्रं समुच्चार्य्य चितायां श्मशाने सकुदपि' एकवारमपि वितरति, तुभ्यं निवेदयति, हि निश्चतं स जनः सत्कविवरः सत्कविश्रेष्ठः क्षितिपरिवृढः भूपतिश्च सन् सततं सर्वदा गजारूढः हस्त्यारूढः सन् याति सर्वत्र विचरतीत्यर्थः।।16।।

टीका, स्वरूपव्याख्या च ।।16।।

हे कालि कालभयनिवारिणि। यो जनः दिव्याचाररतः साधकः गृहे सहस्रदलकमलरूपब्रह्मसदने। सम्मर्ज्जन्या परिगलितवीर्य्य परमशिवेन कुलकुण्डलिन्या रमणोद्भूतं वीर्य्यामृतम्। समूलं चिकुरं चाञ्चल्यादिवृत्ति सहितं मनः। कुजदिने मङ्गलवासरे मध्याह्ने द्विप्रहरे रात्रौ दिवसे वा प्रेम्णा परया भक्त्या तव मनुं मन्त्रं समुच्चार्य्य सकृदपि एकवारमपि, चितायां चिद्रूपायां त्वयि वितरति, विलीनं करोति, निर्बीजसमाधिं करोतीति यावत्। स भुक्तिं मुक्तिं च लभत इत्यर्थः।। 16।।

स्वपुष्पैराकीर्णं कुसुमधनुषो मन्दिरमहो
पुरो ध्यायन् यदि जपति भक्तिस्तव मनुम्।
स गन्धर्व्वश्रेणीपतिरपि कवित्वामृतनदीं
नदीनः पर्य्यन्ते परमपदलीनः प्रभवति।।17।।

कुजवारे मध्यरात्रे होमं कृत्वां श्मशानके।
पठेन्नामसहस्रं यः पृथ्वीशाकर्षणञ्चरेत्।। (ककारकूटरहस्यम्)

1. सदाशिवेन देवेशि क्षणमात्रं रमेत् प्रिये।
अमृतं जायते देवि तत्क्षणात् परमेश्वरि।।
तदुद्भवामृतं देवि लाक्षारससमायुतम।। (गन्धर्वमालिका)

2. सर्ववृत्तिनिरोधाद् निर्बीजसमाधिः।। (पातञ्जलसूत्रम्)

टीका

हे मातः भक्तः वीरसाधकः । यदि स्वपुष्पैराकीर्णं[2] स्वयम्भुकुसुमैः व्याप्तं कुसुमधनुषो मन्दिर योनिं पुरः अग्रे ध्यायन् पुनः ध्यायन् पुनश्चिन्तयन्। तव मनुं अयुतसंख्यकमन्त्रं जपति, अहो आश्चर्य स गन्धर्व्व श्रेणीपतिः नायकश्रेष्ठः, अपि च कवित्वामृतनदीनदीनः कवित्वामृतस्य नद्यस्तासां नदीनः समुद्रः अशेषकवित्वाधारः, पर्य्यन्ते देहावसाने परमपदलीनः प्रभवति तव उत्कृष्टपदे विलीनः सन् सृष्ट्यादिकार्य्ये समर्थो भवतीति भाव :।।

स्वरूपव्याख्या च ।।17।।

अस्मिन् योनिमुद्रासाधनं वर्ण्यते । उक्तञ्च शाक्तागमे–
मन्त्रार्थं मन्त्रचैतन्यं योनिमुद्रां न वेत्ति यः।
लक्षकोटिजपेनापि तस्य विद्या न सिद्ध्यति।।

हे मातः। भक्त दिव्याचाररतः योगी साधकः। यदि स्वपुष्पैराकीर्ण स्वरूम्भूलिङ्गरूपकुसुमेनधिष्ठितम्। कुसुमधनुषो मन्दिरं मूलाधारास्थित–त्रिकोणमण्डलम् हृत्पद्मस्थितत्रिकोणमण्डलम् वा। उक्तञ्चशिवसंहितायाम्

तस्मिन्नाधारपाथोजे कर्णिकाया सुशोभना।
लक्षकोटिजपेनापि तस्य विद्या न सिद्ध्यति।।

पुनस्तत्रैव चतुर्थपटले–

ब्रह्मयोनिगतं ध्यात्वा कामं बन्धूकसन्निभम्।
सूर्य्यकोटिप्रतीकाशं चन्द्रकोटिसुशीतलम्।।

1 मातृकाभेदतन्त्रे–
विवाहिताया कन्यायाः प्रथमं ऋतुसम्भवे।
तच्छोणितं महेशनि स्वपुष्पं सर्वमोहनम्।।
रजः कीर्णभंग नार्य्याः ध्यायन् योऽयुतमाजपेत्।
स कवित्वेन रम्येण जनान्मोहयति ध्रुवम्।। (तन्त्रकल्पद्रुमः)

तस्योर्ध्वे तु शिरवा सूक्ष्मा चिद्रूपा परमा कला।
तया पिहितमात्मानमेकीभूतं विचिन्तयेत ।।

तथा च ताराहस्ये–

स्वीकयहृदये ध्यायेद् योगिमण्डलमुत्तमम्।
रजोभिश्च समोपेतं त्रिकोणं सर्ववर्णकम् ।।

पुरो निजाग्रे ध्यायन् चिन्तयन्, ध्यायन् तव मन्त्रार्थघटितरूपञ्च तस्मिन् भावयन्। उक्तञ्च भूतशुद्धितन्त्रे–

यस्य यस्य च मन्त्रस्य उद्दिष्टा या च देवता।
चिन्तयित्वा तदाकारं मनसा जपमाचरेत्।।

कुलार्णवे च–

तन्निष्ठस्तद्‌गतप्राणः तच्चित्तस्तत्परायणः।
तत्पदार्थनुसन्धानं कुर्व्वन् मन्त्रं जपेत प्रिये।।

तव मनुं.तव मन्त्रराजं जपति शः‌ः शनै मनसा जपति। उक्तञ्च तत्रैव 'शनैः शनैरविस्पष्टं न दुतं न विलम्बितम्। स गन्धर्व्वश्रेणीपतिः गायक श्रेष्ठः'–'गानात् परतरं न हि' इति दर्शनात्, अथवा चित्ररथगन्धर्वराज इव। अपि च कवित्वामृतनदीनदीनः महाकविकालिदास इस भवति, अपि च पर्य्यन्त देहावसाने।

परमपदलीन[1] प्रभवति सच्चिदानन्दरूपायां त्वयि विलीनः सन् निर्वाणपदं लभते इति भावः। योनिमुद्रा साधनफलं शिवसंहितायाम्– "अभ्यासाज्जायते सिद्धिरभ्यासान्मोक्षमाप्नुयात्" इति ।।18।।

त्रिपञ्चारे पीठे शवशिवहृदि स्मेरवदनां
महाकालेनोच्चैर्मदनरसलावण्यनिरताम्।
समासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्दनिरतो
जनो यो ध्यायेत्त्वामयि जननि स स्यात् स्मरहरः।।19।।

1 देवीगीतायां देवीवाक्यम्–
'तदैव तस्य चिन्मात्रे मद्रूपे विलयो भवेत्'।
अपरं त्रयोदशश्लोकस्य टीकायां द्रष्टव्यम्।

टीका

अयि जननि हे मातः। यो जनः साधकः नक्तं रात्रौ समासक्तः त्वयि आसक्तचित्तः स्वयम् आत्मना अपि रतानन्दनिरतः सुरतानन्दयुक्तः सन्। त्रिपञ्चारे पीठे[1] पञ्चदशकोणयुक्त यन्त्रे शवशिवहृदि शवरूपसदाशिव हृदये। स्मेरवदनां स्मितमुखीं महाकालेन परमशिवेन सह। उच्चैः अत्यन्तं मदनरसलावण्यनिरतां विपरीतरति माधुर्यासक्ताम्। त्वां ध्यायेत् चिन्तयेत्, स साधकः स्मरहरः साक्षात् शिवो भवेदित्यर्थः।।19।।

स्वरूपव्याख्या।। 18।।

अयि जननि अस्माकम् उत्पादयित्रि। यो जनः नक्तम् अर्द्धरात्रौ। उक्तञ्च–

महानिशायां ब्राह्मे वा मुहूर्ते ध्यानतत्परः।
तद्रूपं परमानन्दं तदा पश्यति निश्चितम्।।

समासक्तः त्वयि एकाग्रचित्तः स्वयम् आत्मना अपि रतानन्दनिरतः[2]

योनिमुद्राम् अवलम्ब्य स्वयं शक्तिमयो भूत्वा परात्मना सह लयरूपरता नन्दासक्तः सन् इत्यर्थः।
त्रिपञ्चारे पीठे[3] अविद्यारूपवृत्तवेष्टिते, क्षित्याद्यष्ट

1. आदौ त्रिकोणं तद्बहिर्न्यसेत्।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम्।।
मध्ये तु बैन्दवं चक्रं बीजमायाविभूषितम्
षट्कोणन्तु बहिर्वृत्तं ततोऽष्टदलकं न्यसेत्।।
बहिर्वृत्तेन संयुक्तम् भूपुरैकेन संयुतम्।
तीव मुक्तिमाप्नोति यन्त्रराजे न संशयः (कालीतन्त्रम्)

2. योनिमुद्रां समासाद्य स्वयं शक्तिमया भवेत्।
सुशृङ्गाररसेनैव विहरेद् परामात्मनि।
आनन्दमयः संभूय ऐक्यं ब्रह्मणि सम्भवेत्।। (घेरण्डसंहिता)
3. तथा मन्त्रात्मकं चक्रं देवतायाः परं वपुः।
शिवशक्त्यात्मकं यन्त्ररूपिणी ब्रह्मरूपिणी।।
निजदेहाख्ययन्त्रन्तु सर्वयन्त्रात् परं स्मृतम्।। (गन्धर्वतन्त्रम्)

प्रकृतिरूपाष्टदलयुक्ते, पञ्चज्ञानेन्द्रिय–पञ्चकर्मेन्द्रिय पञ्चप्राणरूपत्रिकोण विशिष्टे, शुद्धसत्त्वात्मिकामायाप्रतिबिम्बितचैतन्यरूप–बिन्द्वात्मक–बीजभूषिते, क्षित्यादिपञ्चभूतात्मक[1] भूपुरान्विते स्वदेहयन्त्रे इत्यर्थः। शवशिवहृदि शववदनिष्क्रियस्य शिवस्य हृदये, स्वकीयनिर्गुणब्रह्मपदे स्थिता सती इच्छा क्रियाज्ञानयुक्तयामायया शिवशक्तिविभागेनचणकाकारवद् द्विधा भूत्वा इत्यर्थः महाकालेनोच्चैर्मदनरसलावण्यनिरता[2] सगुणब्रह्मपरमशिवेन सह विपरीतभावेन नियतयुक्ताम्। स्मेरवदनां सदानन्दमयीं त्वां ब्रह्मरूपिणीं योध्यायेत्[3], स्वीयदेहयन्त्रे चिदाभासरूपेण स्थितत्वात् स्वात्माभेदेन त्वां चिन्तयेत्।

उक्तञ्च देवीमहामात्म्ये

या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता।

गन्धर्वतन्त्रे च

निर्लेपं निर्गुणं शुद्धं स्वात्मानं त्रिपुरामयम्।
आत्माभेदेन सञ्चिन्त्य याति तन्मयतां नरः।।

1. भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।। (गीतायाम्)
तथा च गन्धर्वतन्त्रे–
पञ्चप्राण–मनोबुद्धिर्दशेन्द्रिसमन्वितम्।
अपञ्चकृतभूतोत्थ सूक्ष्माङ्गं भोगसाधनम्।।
अनाद्यविद्यानिर्वाच्या कारणोपाधिरुच्यते।
उपाधित्रितयादन्यदात्मानमवधारया।।
2. यदा सा परमा शक्तिः स्वेच्छया विश्वरूपिणी।
अधःकृत्वा तु पुरुषं सङ्गमेच्छाऽभवत्तदा।।
तदाक्रम्य स्वयं देवी भैरवोपरि संस्थिता।
सहजानन्दसन्दोहैः निजानन्दप्रवर्द्धिनी।।

3. अथवाद्वैतभावेन आत्मानं तन्मयं स्मरेत्।
अद्वैतभावसम्पन्नस्त्रिपुरीकृतविग्रहः
आत्मन्येव यजेद्देवीं उपचारैर्यथाविधि ।। (गन्धर्वतन्त्रम्)

स्व स्मरहरः स्याद् अद्वैतभावसम्पन्नः साधकाः परमात्मनि त्वयि लीनी भूत्वा कैवल्यपदं लभेदित्यर्थः।।19।।

सलोमस्थि स्वैरं पललमपि मार्ज्जारमसिते
परोश्चष्ट्र मैषं नरमहिषयोश्छागमपि वा।
बलिं ते पूजायामयि वितरतां मर्त्त्यवसतां
सतां सिद्धिः सर्वा प्रतिपदमपूर्वा प्रभवति।।18।।

टीका

अयि असिते! हे कालिके! ते तव पूजायां नैमित्तिकार्च्चनायाम्। मार्ज्जारं[1] माज्जरिसम्बन्धि औष्ट्रम् उष्ट्रसम्बन्धि मैषं मेषसम्बन्धि नरमहिषयोः नरमहिषसम्बन्धि, अपि वा अथवा छागं छागसम्बन्धि सलोमास्थि लोमास्थि सहितं परम् उत्कृष्टं पललं मांसं बलिं पूजोपहारं स्वैरं स्वच्छन्दं वितरतां ददतां साधकानां प्रतिपदं पदे पदे अपूर्वा आश्चर्य्या सर्वा सर्वविधा सिद्धिः कर्म्मसफलता प्रभवति प्रकर्षेण सम्पद्यते।।19।।

स्वरूपव्याख्या ।।19।।

अयि असिते[2] न सिता बद्धा असिता, नित्यमुक्तस्वभाव। ते तव पूजायाम् अन्तर्यागविधौ मानसपूजायामित्यर्थः। मार्ज्जारादिपशून्[3] सलोमास्थि पललं सर्वावयविसमन्वितान् षड्रिपुरूपमार्ज्जारादिपशून्[3] इत्यर्थः,। अत्र छागः कामः, महिषः क्रोधः, मार्ज्जारः, लोभः, नरः मदः, मेषः मोहः, उष्ट्रः मात्सर्य्यम् इति गुणासाम्याद् बोध्यम्। बलिं वितरतां[4]

1. अस्थिलोमत्वचायुक्तं मांसं मार्ज्जारमेषयोः।
उष्ट्रस्य महिषस्यापि बलिं यस्तु समर्पयेत्।।
2. षिङ् बन्धने—क्तः = सितः। वद्धार्ज्जुनौ सितौ इत्यमरः।। (अन्नदाकल्पः)
3. कामक्रोधौ छामबाहौ बलिं दत्त्वा प्रपूजयेत्।।
4. धर्म्माधर्म्महविर्दीप्ता वात्माग्नौ मनसा स्रुचा।
सुषुम्नावर्त्मना नित्यमक्षुवृत्तीर्जुहोम्यहम्।।स्वाहा।। (बृहन्नीलतन्त्रम्)

विनाशकामनाया चिद्रूपायां त्वयि पूजोपहाररूपेण ददताम्। सतां मर्त्त्यवसतां साधुशीलानां जनानाम्। प्रतिपदं पदे पदे यथाक्रममित्यर्थः। अपूर्वा सर्वोत्कृष्टा सर्वा सिद्धिः पञ्चविधा मुक्तिः1 प्रभवति प्रकर्षेण सम्पद्यते, एवंविधाः साधकाः सालोक्यादिका मुक्तीः लभन्त इत्थर्यः।।19।।

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्यशनरतो
दिवा मातर्यु युष्मत्चर णयुगलध्याननिपुणः ।
परं नवतं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनुं
जपेल्लक्षं स स्यात् स्मरहरसमानः क्षितितले।।20।।

टीका

हे मातः। यो जनः वशी जितेन्द्रियः। हविष्याशनरतः[2] जपान्ते हविष्याशी सन्। दिवा दिवसे युष्मच्चरणयुगलध्याननिपुणस्तव पादपद्मद्वय चिन्तायाम् एकान्तनिरतः, सन् लक्षं लक्षसंख्यकम् प्रजपति परं पुनश्च नक्तं रजन्यां नग्नो विवस्त्रः निधुवनविनोदेन[3] च सुरतप्रमोदेन विशिष्टः सन्। लक्षं मनुं लक्षसंख्याकमन्त्रं जपेत्, स क्षितितले पृथिव्यां स्मरहरसमानः शिवतुल्यः स्याद् भवेत्। 'सम्यक्' इति पाठे तु यथोक्तविधानेन सेतुमहा सेतुकुल्लुकादिकं जप्त्वा इत्यर्थः।।20।।

स्वरूपव्याख्या ।।20।।

यो जितेन्द्रियः हविंष्याशी साधकः दिवसे पश्वाचारेण तव पादपद्म चिन्तायाम् एकान्तासक्तः सन् लक्षसंख्यकं .तव मन्त्रं प्रजपति, पुनः रजन्यां कुलाचारेण नग्नः मायावरणरहितः निर्विकारः सन्नित्यर्थः। निधुवन

1. सालोक्यमपि सारूप्यं साष्टर्य सायुज्यमेव च।
कैवल्यञ्चेति तां विद्धि मुक्तिं राधव पञ्चधा।। (श्रीशिवगीता)
2. यो हविष्याशनरतो दिवा देवीं स्मरन् जपेत्।
नक्तं निधुवनासक्तः लक्षं स स्याद् धरापतिः।। (तन्त्रकल्पद्रुमः)
3. भवोन्निधुवर्न कम्पे सुरते च नपुंसकम्।। (मेदिनी)

विनोदेन च निधुवनविनोदः[1] रमणं तेन विशिष्टः सन् परशक्त्यात्ममिथुन संयोगानन्दरतः सन् इत्यर्थः। तव लक्षसंख्यकं मन्त्रं जपेत्, स पृथिव्यां स्मरहरसमानः शिवसदृशः जीवन्मुक्तो भवेदित्यर्थः ।।20।।

इदं स्त्रोतं मातस्तव मनुसमुद्धारणजनुः
स्वरूपाख्यां पादाम्बुजयुगलपूजाविधियुतम्।
निशार्द्ध वा पूजासमयमधि वा यस्तु पठति
प्रलापस्यापि प्रसरति कवित्वामृतरसः ।।21।।

टीका

हे मातः। यस्तु यो जनः पुनः। तव मनुसमुद्धारणजनुः तव मनूनां मन्त्राणां समृद्धॉरणे सम्यगुद्धारणे जनुउत्पत्तिर्यस्य तत। पादाम्बुजयुगल पूजाविधियुतं तव श्रीपादपद्मस्य पूजानियमसहितम्। स्वरूपाख्यं तव स्वरूपस्य स्वस्थ आत्मनः रूपं तस्य, निजनिर्गुण[2] सगुणभेदेन स्थूलासूक्ष्मकारण तुरीयात्म कध्यानस्य आख्या कथनं यस्मिन् तत्। इदं स्त्रोतं निशार्द्ध मध्यरात्रं पूजासमयं वा अधि अधिकृत्य पठति[3] उच्चैरूदीरयति। तस्य प्रलापः अनर्थकवाक्यमपि। कवित्वामृतरसः[4] कवित्वरूप सुधास्वादपूर्णः। प्रसररित निः सरति तस्य गद्यपद्यमयी वाणी भवतोत्यर्थः ।।21।।

1. परशक्त्यात्ममिथुनसंयोगानन्दनिभरः । (कुलार्णवतन्त्रम्)
   य आस्ते मैथुनं तत् स्याद् अपरे स्त्रीनिषेवकाः।।
2. यज्जीवब्रह्मणोरैक्यं सोऽहमस्मीति वेदनम्। (शिवाच्चैनचन्द्रिका)
   तदेवं निर्गुण ध्यानमिति ब्रह्मविदो बिन्दुः ।।
3. मनसा पठितं स्तोत्रं वाचा वापि मनुं जपेत्। (विशुद्धेश्वरतन्त्रम्)
   उमयोनिष्फलं देवि भिन्नभाण्डोदकं यथा।।
4. यस्यैकवारपठनात् सर्वे विघ्नाः समाकुलाः।
   नश्यन्ति दहने दीप्ते पतडा इव सर्वतः। (कालीकुलसर्वस्वम्)
   गद्यपद्यमयी वाणी तस्य गङ्गाप्रवाहवत्।।

कुरङ्गाक्षीवृन्दं तमनुसरति प्रेमतरलं
वशस्तस्य क्षौणीपतिरपि कुबेरप्रतिनिधिः।
रिपुः कारागारं कलयति च तं केलिकलया
चिरं जीवन्मुक्तः प्रभवति स भक्तः प्रतिजनुः।।22।।

।। इति श्रीमन्हाकालविरचितं श्रीमद्दक्षिणाकालिकायाः
स्वरूपाख्यां स्तोत्रं समाप्तम्।।

टीका, *स्वरूपव्याख्या*।। 22।।

कुरगाक्षीवृन्दं मृगनयनारमणीसमूहः। प्रेमतरलम् अनुरागचञ्चलं तं साधकम् अनुसरति अनुगच्छति, क्षौणीपतिः क्षितीश्वरः अपि तस्य वशः तद्वशीभूतः कुबेर प्रतिनिधिः स कुबेरतुल्यः धनवान भवति। रिपुः तस्य शत्रुः तम् एतत्स्तोत्रपाटक कारागारं बन्धनागारवद् भीषणम्। कलयति गणयति सः प्रतिजनुः जन्मनि जन्मनि भक्तः त्वयि भक्तिमान् सन् चिरं बहुकालं व्याप्य केलिकलया अनायासेन जीवनमुक्तः विदहमुक्तो भवति। अथवा स भक्तः केलिकलया क्रीडाकौतुकेन चिरं दीर्घकालं व्याप्य जीवन् प्राणान् धा(र)यन्। मुक्तः देहान्ते मुक्त्तिं प्राप्तः सन् प्रतिजुनुः प्रतिनिवृत्तं जनुः जन्म यस्य स पुनर्जन्मरहितो भवति स ब्रह्मनिर्वाण[1] प्राप्तनोतीति भावः।।22।।

या काली कालकान्ता कलयति कलुषं कीर्त्तिता कालहन्त्री
या तारा ताररूपा कमलजमहिता ब्रह्मविद्या परा च।
श्री विद्या मोक्षपन्था हरिहरनमिता साधकानां हितार्था
सा देवी सर्वरूपा जनयतु जननी स्तावकानां शुभानि।।

1. महाकालरूद्रोदितस्त्रोत्रमेतत् सदा भक्तिभावेन योऽध्येति भक्तः।
   न चापन्न शोको न रोगो न मृत्युर्भवेत् सिद्धिरन्ते च कैवल्यलाभः।। (महाकालसंहिता)

येनैव स्तवराजेन महाकालेन वर्णितम्।
कालिकायः स्वरूपञ्च भक्तानन्दविधायकम्।।
स्त्रोत्रं यत् कर्पूराद्यं हि वासनापरिशेवितम्।
व्याख्यान्तरेण भणितं सरलार्थविशोभितम्।।
मुनिनेत्रभूधरेन्दुशाके माने मया कृता।
साधकानां विबोधाय विमलनन्दस्वामिना।।
व्याख्येयं स्वरूपाख्यां च विमलानन्ददायिनी।
पठतामपि भक्तानां कण्ठे सदा विराजतु।।

कोटालिपानगरे शुनकान्ववाये
गोष्ठीपतिर्हरिहरो महतां गरिष्ठः ।
कालीप्रसाद इति तत्कुलजो महात्मा
तस्यात्माजे रघुमणिर्विहितक्रियावान्।।

तत्पुत्रो विमलानन्दस्वामी तच्चरणानुरागः।
सतीशचन्द्ररायाख्यः चौधुरीपदभूषितः ।।

कर्पूरादिस्तोत्रटीका तत्कृता कृतिनां मुदे।
वर्त्ततां कालिकाप्रीत्यै चापि सञ्चायतामियम्।।

।। इति श्रीमद्दक्षिणकालिकायाः स्वरूपाख्यस्तोत्रस्य टीका
विमलान्ददायिनी स्वरूपव्याख्या च समाप्ता।।

।।ॐ तत् सत् ॐ।।

कालिकोल्लास-6

श्रीकाली पञ्चाशिका

'श्रीकाली-पञ्चाशिका' का प्रादुर्भाव

पालिकाऽखिल-लोकानां, सर्व-कर्म-निभालिका।
कपाल-मालिकाढ्या सा, कालिका श्रेयऽसेस्तु मे।।

सकल लोकों की पालन करने वाली, सबके सभी प्रकार कर्मों की देख-रेख करने वाली, कपाल-माला धारण करने वाली वह प्रसिद्ध काली भगवती मेरे लिए श्रेय-दात्री होवे।

सचिन्तिता भगवती सुख-निद्रितं माम्,
सम्बोध्य सुस्मित-वती वै कुमारिकैका।
काली-मनोहर-तरैरूप-जाति-वृत्तै--
र्द्वित्रिरुष्टुत-वती बहु मामवादीत्।।१

एक दिन (वि० सं० 2020 के आषाढ़ी नवरात्र) की बात है। चिन्तन (ध्यान) करते-करते सुख-पूर्वक सोते हुए मुझको सम्बोधन कर मन्द मधुर मुस्कान करती हुए सो एक कुमारिका बसन्त-तिलका छन्द (दो-तीन) पढ़कर भगवती काली की स्तुति करती हुई बार-बार मुझसे कहने लगी--

पश्य त्वमेहि गगनोदित-मूर्तिमेताम्,
काली कराल-वदनां स्तुहि देव-वाचा।
इत्याज्ञया सह तयाऽहमपि प्रवृत्तः
काली-स्तवं कलयितुं परमादेरण।। 2

'आओ! तुम देखो, यह अनन्ताकाश में उदित हुई कराल वदन वाली काली महा-माया है। तुम भी देव-वाणी में इसकी स्तुति करो।'

उस कुमारी की इस आज्ञा से मैने आकाश की ओर देखा, तो आकाश में बहुत बड़ी लम्बी अन्धकार को या यह कहिए कि कज्जला-राशि की लाट-सी, जिसकी लम्बाई-चौड़ाई मैं नही बता सकता, अन्धकार की राशि अनन्त काल तक बढ़ी हुई दिखाई पड़ी। मै इसे देख स्तब्ध, विस्मित, शून्य-मन का सा हो गया। मै उसके मुख, नेत्र नासा, कर्ण, स्कन्ध, स्तनादि कुछ भी न देख पाया और न पहचान पाया।

उस कुमारी की आज्ञा से प्रभावित हो मैं स्वयं भी पूर्ण आदर, से स्तुति बोलने (बनाने) लगा।

सम्यक् तदद्भुतमिवेदमुप-स्मरामि,
ह्यर्ध मुक्तमखिली-कुरुते कुमारी।
त्यक्तं तयाऽहमपि साभि सु-पूरयामि,
मध्ये कदापि विरमापि पुनर्वदामि।।३

मै इसे अच्छी तरह स्मरण करता हूँ। यह अद्भुत ही बात हुई। मै आधा छन्द बोलता, उसे वह कुमारी पूर्ण कर देती थी, और मैं भी उसके छोड़े हुए अर्ध-पथ को पूरा कर देता था, पर मै कभी कहीं-कहीं अटकता था, कुछ ठहर कर फिर बोलता था, किन्तु वह कुमारी अनायास ही बोलती थी। इसे अद्भुत की तरह मैं याद करता हूँ।

ब्रूते कदाप्यविकलं ललितं कुमारी,
सोऽहं वदामि तदु शोधयते तदित्थम्।
ब्रहीति मामुपदिशत्यपि मत्-पदानि,
नैक-स्थलेषु च तया परिवर्तितानि।।४

कभी तो वह कुमारी पूरा सुललित पद्य ही बोल देती और मेरे पद्यों को शोधित करती हुई कहती कि 'इस प्रकार बनाओं, इस पद की जगह यह पद रखो।' ऐसे मुझे उपदेश करती हुई अनेक स्थलों पर मेरे पदों को बदलती थी।

अत्रान्तरे तदचिराय विराट् स्वरूपम्,
संह्रत्य सा भगवती बहु-रम्य-रूपा।
जाताऽधनुऽहमवलोकित-वान् स्वरूपं,
तच्चाऽप्यलौकिकमुपस्थितमस्मदग्रे।।५

इसी बीज में शीध्र ही उस विराट् स्वरूप को समेट कर वह आद्या काली महा-माया अत्यन्त रम्य-रूपवती हो गई। अब मैं इसके रूप को देख सका था, पर वह भी हमारे सम्मुख एक प्रकार अलौकिक ही दृश्य उपस्थित हुआ।

आशाम्बरा प्रपदलम्बि-विकीर्ण-केशा,
नीलोत्पलच्छविरिवाऽमल-मेचकाङ्गी।
नेत्र त्रयोज्जवल-विभा परि-लोल-जिह्वा,
ह्रष्टा वराभय-कृपाण-नृ-मुण्ड-हस्ता।।६

पूरी दिगम्बर, एड़ी तक नीचे लटकते चिकने साँवले बिखरे केश-समूह (पुष्प) वाली, नील-कमलों को प्रभा-समान निर्मल सधन श्यामल अङ्गोवाली, तीनों नेत्रों से उज्जवल प्रभा बरसती, मुख से जिह्वा बाहर लटकाती-हिलाती, प्रसन्न, हर्ष-पूर्ण और चारों भुजाओं में कृपाण, नरमुण्ड, वर तथा अभय धारण किए थी।

ह्रष्टाश्योऽहमुप–वर्णित–वान् कुमार्या,
साकं तदद्भुत–सुरूप–विवर्णनायाः।
साऽपि स्फुटं व्यरच्यन् मृदुला मनोज्ञाः
सूक्तिः स्वभाव–मधुराः सरलाऽत्युदाराः।।7

सुप्रसन्न मनवाला मैं इस अद्भुत दृश्य को देखता हुआ भी उस कुमारी के साथ–साथ उस अद्भुत सुरूप की वर्णना में पद्य पढ़ता रहा। उस कुमारी ने भी मृदुल, मनोज्ञ, सहज–मथुरा सरल और उदार सूक्तियाँ पढ़ी (विरचीं)।

एवं समं कवयतोरुभयोर्मुखाभ्याम,
पञ्चाशिका समुदितेति न विस्मरामि।
सा मां विहस्य मम साहसमेधयन्ती,
देव्या सहैव सहसान्तरिता कुमारी ।।8

इस प्रकार साथ–साथ कविता पढ़ते–बनाते हुए हम दोनों के मुखों से पचास पद्य भगवती काली की वर्णना में बन गए अर्थात् 'काली–पञ्चाशिका' उदित हुई। इसकी मैं खूब स्मरण करता हूँ। यह मुझे अच्छी तरह याद है। बस, इतने में ही वह कुमारी मेरी तरफ हँस कर,

मेरा साहस बढ़ाती हुई, साधुवाद बोलती हुई एकाक उस भागवती काली की मूर्तिके साथ ही अन्तर्ध्यान हो गई!

एतानि तानि ललितार्थ–समन्वितानि,
पद्यनि जागृतिमतः स्मृतिमागतानि।
पूर्णानि कानिचिदपास्त–तदर्द्धकानि,
पादोनकानि कतिचिच्च पदोनकानि।।9

ललित अर्थ पूर्ण ये पद्य–जग जाने पर भी मुझे स्मरण आए। इन पचास में से कुछ आधे याद रहे, कुछ पूरे याद आए, कुछ एक पादरहित और कुछ पद–रहित याद रहे। मैने रात्रि–शेश प्रभात मं ही उठ कर स्मरण कर–कर इन्हें लिखा और इनका समन्वय तथा अर्थ पूर्णता उस समय की याद कर भगवती स्मरण, प्रार्थना कर–कर जोड़ता और लिखता रहा।

अह्नि–द्वितीय उदिते स्मरणाश्रयेण,
सर्वाणि तानि लिखितानि यथोदितानि।
अर्द्धानि पूरित–वता मयैका तथैव,
पादोनकेषु सम–योजित च पाद–मात्रम्।।10

दूसरा दिन उदित होते ही शौच, सन्ध्या, जगदम्बा की आराधना आदि से निवृत्त ही स्मरण केबल से उक्त सभी पद्यों को यथोचित लिख लिया । जो आधे थे, उनमें आधा पूर्ण किया, जो पाद–रतिह थे, उनमें चरण बना पूर्ण किया।

सम्बिस्मृतानि च पदानि विवतितानि,
अर्थानुयोजनिकया समुपस्कृतानि।
सम्मील्य नेत्र–युगलं मुहुरामृशामि,
नैतस्य दिव्य–कुतुकस्या पुनः स्मरामि।।11

भूले हुए पद अर्थानुसन्धान से परिवर्तित कर जोड़ दिए। औचित्यत्यानुसार उपस्कृत कर दिए। अब मैं आँखें बन्द कर ध्यान करता हूँ और बार–बार स्मरण करता हूँ, तो भी इस दिव्य कुतूहल की फिर याद नही आती। ये पचास पद्य पूर्ण किए। तब किए मुझे वह दृश्य और कविता पढ़ती हुई वह कुमारी तथा मेरी रचना को भी मुझे याद रही। 'पञ्चिशिका' पूर्ण लिख लेने के बाद उस दृश्य की भी याद नहीं आती है।

वृत्तैक–विंशतिरिहास्ति कुमारिकायाः,
तत् षोडशी ह्यविकला मयकोद्धृता च।
शेषाश्च सुक्तत्यवयवा : समुपस्कृताश्च,
संयोजिता अपि यथा मति पूरिताश्च ।।12

उक्त 'पञ्चिशिका' में अर्थात पचास पद्यों में 21 पद्य उस कुमारी के पठित (रचित) हैं और 16 पद्य मेरे स्वयं के बनाए (पढ़े) हुए हैं।

शेष सूक्तियो के अववय जोड़े उपस्कृत किए हुए है और यथा–बुद्धि पूर्ण किए हुए हैं।

इत्थं कवित्व–कलना–कृत–कौतुकायाः,
पञ्चाशिकां तदिह दक्षिण–कालिकायाः।
सम्पूर्य्य सम्प्रति सतां पुरतोऽर्पयामि,
वृत्तान्तमसप्तमद्भुतमिदवानुभवामि चेतत्।।13

लो, मैं यहाँ कवित्व कला सफल कौतक कर देने वाली आद्या श्री दक्षिणा कालिका को इस 'पञ्चाशिका'को पूर्ण कर विद्वान् आप महानुभावों शाक्त बन्धुओं के सम्मुख समर्पित करता हूँ। उस दिन जब मैं इस दृश्य को देखता हुआ कई बातें बोलता था––पढ़ता था, तो मेरे सभी घरवाले–स्त्री, पुत्र, विद्यार्थी, पड़ोस के जो वहीं सो रहे थे, कुछ दूरी पर भी 2–3 आगन्तुक सो रहे थे–उन सबने प्रभात

में मुझसे कहा कि 'आप आज रात को बहुत ही बड़बड़ाए, स्वप्न में किसी विद्वान् से लड़ते और कुछ पढ़ते हमने देखा, क्या बात हुई, उन्हें मैं क्या उत्तर देता, चुप रहा। कुछ हँस कर बोल कि 'मुझे तो ऐसे ही स्वप्न हुआ था और कोई बात नहीं है।' बस ।

प्रख्यातये न हि कवित्त्व–निदर्शनाय,
नोपासनासु निज–सिद्धि–विकासनाय।
इष्टं सदैव निशि, सत्सु निवेदयामि,
मान्यं न मान्यमिति नैव विदोनुऽरुन्धे।।14

मै इस पचीसिका और इसके प्रादुर्भाव की बात को कोई कवित्व के प्रदर्शनार्थ नहीं और उपासना में कुछ सिद्धि दिखाने की मनासा से नही निवेदन कर रहा हूँ। मैंने जो उस रात में जैसा देखा, वह ज्यों का त्यो सत्य ही सज्जनों, विद्वानों, शाक्त बन्धुओं के सम्मुख निवेदन करता हूँ और इसे मानें या न माने, इसके लिए मै कोई अनुरोध किसी विद्वान् से नहीं करता हूँ।

कादम्बिनीमिव नभोडन्तरमुल्लिखन्तीम्,
काधिन्महेन्द्र–मणि–पूर्ण–गिरीन्द्र–मालाम्।
स्वप्ने वराभय–कृपाण–नृ–मुण्ड–हस्ता–
मालोक्य मां स्वयमहं कलये कृतार्थम्।।

मेघ–माला की तरह आकाश में प्रविष्ट होती, बढ़ती हुई माहेन्द्र' मणि, नीलम रत्न–राशि से पूर्ण अथव नीलम मणियों की बनी गिरीन्द्र–माला, वर, अभय, कृपाण और नर–मुण्ड हाथों में लिए (भगवती महा–काली को) स्वप्न में भी देख कर मै अपने आपकों कृतार्थ समझ रहा हूँ।

या मां प्रदर्शित–वती तदिदं हि दिव्यंम्,
दृश्यं प्रशस्यमधिकाधिक–मोहनीयम्।
तस्यै कृपा–मधुर–कोमल–मानसायै,
नित्यं नमञ्च कलयामि कुमारिकार्य ।।16

जिसने मुझकों यह दिव्य प्रशंसनीय अधिकाधि मोहनीय दृश्य दिखालाया, उस कृपा–पूर्ण मधुर कोमल–मन (हृदय) वाली कुमारी (देवी) की मै नित्य प्रमाण करता हूँ।

ख–भुज ख–भुज वर्षे शुक्ल आषाढ़–मासे,
रवि–दिवस–निशायां स्वप्न–दृश्यं यदाप्तम्।
विमलमति–मनोजं तत सदाऽऽवेदयामि,
सुललित–कवितायां कीर्त्तन कालिकायाः।।17

विक्रम सम्वत् 2020 में आषाढ़–मासीय शुक्ल–पक्ष में, सप्तमी के दिन की रात्रि में, जो स्वप्न–दृश्य प्राप्त हुआ, वही निर्मल और अत्यन्त मनोहर सत्य–रूप, लालित्य–पूर्ण कविता में गुम्फित हुआ। श्री काली भागवती का कीर्तन (गुण–गुण) आप लोगों के सम्मुख निवेदन करता हूँ।

श्रीकाली पञ्चाशिका

कस्तूरिका–कोकिल–काल कण्ठ–
कालिन्द–कन्याऽलि–कुल–प्रभाढ्याम्
कपाल–मालाऽऽभरणां करालाम्,
कालीं महा–काल–युतां नमामि।।

कस्तूरी, कोयल, काल–कण्ठ, महा–काल महादेव के कण्ठ और यमुना–प्रवाह तथा भ्रमर–समूह की प्रभा के समान प्रभा से पूर्ण और कपालों (मुण्डों) की की माला रूप आभरणवाली, महा–काल शिव से संयुक्त, कराल आकारवाली काली भगवती में प्रणाम करता हूँ।

ज्वलच्चिताभिः परितः प्रदीप्ते,
भयावही शून्य–तमे श्मशाने।
दंष्ट्रा करालां परिकीर्ण–बालाम,
काली कृपाणं दधतीं स्मरामि।।2

जलती चिताओं से चारों ओर प्रकाशित, भय पैदा करने वाले,सूने श्मशान में, दाढ़ों की चमक से कराल दिखाई पड़ेनवाली, विखरे हुए वालींवाली, कृपाण धारण करने वाली काली भगवती को मैस स्मरण करता हूँ।

सृक्क–द्वयाचच्योतित–शोण–धाराम,
हेला–लुलद्–बाल–शबावतंसाम्।
तेजस्त्रयी दीप्ति–भृत–त्रिनेत्राम्,
कालीमुदञ्चद् भ्रकुटी भजामि।।3

ओठों के अग्र भाग से पिए हुए रूधिर की शेष रहिती धार–वर–सानेवाली, लीलया ही हिलते–डुलते रहने वाले बाल शव के (मृत बच्चों कें) कर्ण–भूषणवाली, चन्द्र, सूर्य और अग्नि–रूप तीनों तेज–पूर्ण नेत्र धारण करने वाली, चढ़ती–उछलती भौंहोंवाली काली भगवती को मैं भजता हूँ।

अट्टाट्टहासो–द्वि–वृतौष्ठ–युग्माम,
दन्तावली–दीप्ति–हृतान्धकाराम्।
विलोल–जिह्वां परि–लम्बयन्तीम्,
कालीं कुलोल्लास–करीं श्रयेऽहम्।4

खुले हुए दोनों ओठवाली, दन्त पंक्ति की दीप्ति (प्रकाश) से खूब जोर से अट्टहास करने के कारण खुले हुए दोनों ओठवाली, दन्त पंक्ति की दीप्ति (प्रकाश) से चारों ओर के अन्धकार को लुप्त करती, अपनी चंचल जीभ के नीचे (बाहर) लटकाती हुई, अपने भक्त साधकों के कुलों का उल्लास (वृद्धि) करने वाली काली भगवती का मैं आसरा लेता हूँ।

दिगम्बरां व्यायत–भीषणास्या–
मापीन–तुग–स्तन–बन्धुराङ्गीम्।
वराभये सन्दधतीं कराभ्याम्,
कालीं कृपा–सान्द्र–हृदं प्रणौमि।।5

नितान्त नङ्गी और लम्बे–चौड़े भयावह मुखवाली, मोटे ऊँचे स्तनों से बन्धुर नतोन्नत शरीरवाली, करो में वराभय, धारण करती हुई, कृपा–पूर्ण हृदयवाली काली माँ को मैं प्रणाम करता हूँ।

अन्त्रोप–विद्धां शव–हस्त–काञ्चीम,
कटि–प्रदेश परितो दधानाम्।
कुहू–निशा–घोर–महा–वनालीम,
काली पराम्बां हृदि चिन्तयामि।।6

अपने कटि–प्रदेश के चारों ओर अँतड़ियों की तन्तु लता से गुथे, बँधे प्रेत–हाथों की काञ्ची (करधनी) पहनने वाली, अमावस की रात में अन्धकार पूर्ण महा–वन–श्रेणी–रूपा काली पराऽम्बिका का मैं हृदय में चिन्तन करता हूँ।

अन्त्रोप–विद्धां शव–हस्त–काश्चीम्,
कटि–प्रदेशं परितो दधानाम्।
कुहू–निशा–घोर–महा–वनालीम,
काली पराम्बरां हृदि चिन्तयामि।।6

अपने कटि–प्रदेश के चारों ओर अँतड़ियों की तुन्त–लता से गुथे,
बँधे प्रेत–हाथों की काश्चा (करधनी) पहनने वाली, अमावस की रात में अन्धकार–पूर्ण महा–वन श्रेणी–रूपा काली पराऽम्बिका का मैं हृदय में चिन्तन करता हूँ।

नाना–सुमनोल्लास वतीं विशालाम,
सायन्तनी पर्वत–राजि–तुल्याम्।
भव्य स्फुरद्–भूषण–कान्ति–जालाम्,
वालां महेशस्य विभोर्भजेऽहम्।।7

अपनी सेवा में चमर डुलाती हुई लक्ष्मी और छत्र लगाए हुई खड़ी सरस्वती को निहारती हुई करूणा की समुद्र श्री काली को मैं भजता रहता हूँ, ध्यान हूँ, पूजता हूँ, सेता हूँ

परेत–भूमौ गतमाध्व–मानाम्,
स्व–साधकानां पुरतः प्रसद्यः।
आविर्भवन्तीं वरमादिश्न्तीम्,
कालीं महा–मीहमयास्तुमीडे।।9

मै अपने महा–मोह को दूर करने के लिए प्रेत–भूमि (श्मशान) में निर्भय हुए बैठे, अपने ध्यान तथा जप में लीन हुए साधक जनों के आगे प्रकट हुई वर माँगने की आदेशना देती हुई श्री काली भगवती की स्तुति करता हूँ।

स्वतः प्रकाशां विकटाट्टहाससाम,
सच्चिद्–विलासां दुरितोध–नाशाम्।
तत्काल–भक्तोद्धरण–प्रयासाम,
त्रासापहाराय भजे भवानीम्।।10

जो स्वतः अपने आप प्रकाशवाली तथा विकट् अट्टहास–गरज जैसा हास करने वाली, सत् और चित् (श्मशान) में निर्भय हुए बैठे, अपने ध्यान तथा जप में लीन हुए साधक–जनों के आगे प्रकट हुई वर माँगने की आदेशना देती हुई श्री काली भगवती की स्तुती करता हूँ।

नालीक–माला दधतीं विशालाम्,
व्याली–निबद्धाकुल–केश जालाम्।
भासा स्वया ध्वस्त–मधु–व्रतालिम,
काली मनस्थां कलये करालीम्।।11

विशाल कमलों की माला पहने हुए और व्याली (भुजङ्गियों) से बँधे हुए केश–जालवाली तथा अपने तनु की प्रभा से भ्रमर–पुञ्ज की प्रभा का तिरस्कार करती हुई, कराल कालिका की मैं जिन मन में स्थापित करता हूँ। (उपर्युक्त अलङ्कार की यहाँ भी विशेष प्रभा स्फुरित हो रही है)।

कामाग्नि–वामाक्षि–सुधांशु–योगा,
यन्मूल–वीजं दिशतीष्ट–भोगान्।
तामीश्वरीं दक्षिणं–कालिकाख्याम्
आद्यां पराम्बं जगतां श्रयेऽहम्।।12

विशाल कमलों की माला पहने हुए और व्याली (भुजङ्गियों) से बँधे हुए केश–जालवाली तथा अपने तनु की प्रभा से भ्रमर–पुञ्ज की प्रभा का तिरस्कार करती हुई, कराल कालिका की मैं जिन मन में स्थापित करता हूँ। (उपर्युक्त अलङ्कार की यहाँ भी विशेष प्रभा स्फुरित हो रही है)।

कामाग्नि–वामाक्षि–सुधांशु–योगा,
यन्मूल–वीजं दिशतीष्ट–भोगान्।
तामीश्वरीं दक्षिणं–कालिकाख्याम्
आद्यां परामबं जगतां श्रयेऽहम्।।12

काम 'क', अग्नि 'र', वामाक्षि 'ई' तथा सुधाशु (ं) अनुस्वार–

इनके योग से जिसका मूल बीज 'क्रीं' मुख्य बीज मन्त्र बनता है और जो सभी के अभीष्ट भोगों को देता है उस सकल जगत् को ईश्वरी आद्या, सबकी आदि–भूता, पराम्बिका श्रीदक्षिणा–कालिका का आसरा लेता हूँ।

यस्याः स्वरूपं हृदि चिन्तयन्तः,
सन्तो वनान्तेषु सुखं वसन्ति।
काम–प्रदेहा गत–शोक–मोहा–
स्तां कालिकाम्बामनिशं स्मरामि।।13

जिनके स्वरूप का चिन्तन करते, सुमरते, ध्याते हुए, सन्त, सज्जन, विद्वान् वन–प्रान्तों में सुख से बसते हैं; जिसके ध्यान, स्मरण से उनका शोक मोह दूर हो जाता है और वे काम–सर्वाभिलाव पुरने में समर्थ हो जाते है, उस कालिका अम्बा को मैं निरन्तर स्मरण करता हूँ।

दीर्घायतोदु–वृन्त–विशाल–नेत्राम,
वेत्रायित–भ्रू–वलनोद्विलासाम्।
भीति–प्रभावामपि भी– प्रहाराम्।
कालीमुदारां मनसा श्रयेऽहम्।।14

लम्बे चौड़े और बीच में उदवृत्त (गोल) बड़ी–बड़ी आँखवाली और वेत की तरह वक्र हुई भौहों कोविलसते हुए वलवाली (यहाँ बल से कौटिल्य या टेढ़ापन समझना), भय के देने वाले प्रभाव–युक्त भी अर्थात् भय को जो मिटा देनेवाली है, उस उदार काली माता को मै मन से आश्रय करता हूँ।

निधाय कामं हृवि दक्षिणायां
पदं भजेद यः किल दक्षिणायाः।
तं. दक्षिणा–रूपत एति याऽम्बा,
तां कालिकां समस्तमाश्रयामि।।15

जिसके पादारविन्द की वक्ष–स्थल पर धारण करता हुआ शव भी प्रेत भी—मृतक भी तत्काल शिव–भाव को प्राप्त हो जाता है, उस आदि–विद्या–स्वरूपिणी शिव की मूल–भता माया अथवा शिव जगत कल्याण ही मूल प्रधान है जिसमें, ऐसी माया–रूपिणी काली का नाम की भगवती को मै अमावस की रात्री में ध्याता हूँ।

शिवा–सहस्र–ध्वनितानु–नादाम्,
सुवासिनी–पूजन–सु–प्रसादाम्।
स्मृत्या समुद्भासित–तत्त्व–वादाम्,
शुचां वसादार्थमुपैमि कालीम्।।17

जो हजारों शिवाओं (श्रृगालियों) के निनाद के अनुसार नाद करती है और जो सुवासिनी–सौभाग्य –वती युवतियों की पूजा से सुतरा प्रसन्न होने वाली है। जिसके स्मरण मात्र से ही तत्त्व–वाद समद्भासित होने लगता है, साधकको भासने लगता है, उस काली भगवती को मै शोकों किचिन्ताओं के विनाश के लिए शरण प्राप्त होता हूँ। (इस पद्य में अनुप्रास रमणीय प्रतीत होता है।)

श्यामामपि श्रीभुवनाभिराम्,
सारस्वताल्लास–पटु–प्रणामाम्।
नमतु–प्रदानीय–समस्त–कामाम,
वामां महा–काल–विमोरूपैमि।।18

जो साँवली है, तो भी शोभा से त्रिभुवन में एक ही सर्व–सुन्दरी है; जो प्रणाम–परायण पुरूष को सब कुछ दे देती है, उस महा–काल शिव की वामा सुन्दरी की मै शरण प्राप्त होता हूँ।

कृपाणमुल्लास्य समुत्थितायाम्,
सम्वेल्लित–भ्रू स्फुरितेक्षणायां।
जय–ध्वनोन्नादि सुर–स्तुतायाम,
मनो लयः स्तान्ममकालिकायाम।।19

भ्रुकुटी को सम्बेलित कर, तिरछी किए चमकते नेत्रवाली और कृपाण उल्लासित कर खड़ी होने वाली, जय–जय निनाद करते देव–गण में स्तुत होने वाली काली भगवती में मोरे मन का लय हो, वह मेरी भावना है।

समुज्वलन्तीषु चितासु मध्ये,
मदोद्धतं ताण्डवमुन्नटन्तीम्।
विष्णवादि–दैवैः कुसुमोप–वृष्ट्या–
ऽभिनन्दितां चिन्तये आदिकालीम्।।20

भ्रुकुटी को सम्बेलित कर, तिरछी किए चमकते नेत्रवाली और कृपाण उल्लासित कर खड़ी होने वाली, जय–जय निनाद करते देव–गण में स्तुत होने वाली काली भगवती में मोरे मन का लय हो, वह मेरी भावना है।

समुज्वलन्तीषु चितासु मध्ये,
मदोद्धतं ताण्डवमुन्नटन्तीम्।
विष्णवादि–दैवैः कुसुमोप–वृष्ट्या–
ऽभिनन्दितां चिन्तये आदिकालीम्।।20

सम्यक् प्रकार अर्थात खूब धग्–धग् जलती हुई होने के कारण उजली, प्रकाश–पूर्ण चिताओं के मध्य में (ऐसी अनेक चिताओं के बीच में–यह भावार्थ है) मद, से उद्धत, नृत्य करती हुई विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, वरूणादि अनेक देव–गण से पुष्पवृष्टि के द्वारा अभिननिदत हुई आदि काली भगवती का मै चिन्तन करता हूँ।

स्वायामताया गगनं विशन्तीम्,
विलम्बि–केशोत्कर–ताडिताभ्राम्।
दावानलोल्लासित–धूम–लेखा–
मिवाद्–गतां कलयामि कालीम्।।21

जो अपनी विशालता से गगन में प्रवेश करती है और जो लटकते केश–कलाप से नृत्यावस्था में फैलते–छितराते हुए बालों से बादलों को ताडित करता है दावानल से उल्लसित हुई धूप–लेखा के समान उदित हुई काली को समझ रहा हूँ–बुद्धि से स्थित कर रहा हूँ, यह भावार्थ हुआ।

सूरायुताभान् अति–दुष्ट–दूरान्,
क्रूराशयेन्द्रारि–दल–प्रहारान्।
हाला–मदोल्लास–भरानुदारान्,
दारान्पूरां जेतुरहं भजामि।। 22

दस हजार सूर्य जितनी प्रभा पुञ्जवाली, दुष्ट आशयवालों से दूर रहने वाली अर्थात् दुष्टों के लिए दुर्लभ और क्रूर मनवाले दानव–दल पर प्रहार करनेवाली तथा हाला (सूरा) मद पूर्ण उदार पुरो से जीतने वाले महेश्वर की दारा को मैं भजता हूँ।

परेत–भुमौ निशि मध्य–यामे,
बलि–प्रदानेऽपित–सीधु शुभ्रम्।
पीत्वा स्व–भक्ताय वरं ददानाम्
भद्रऽभिधानां प्रभजामि कालीम्।।23

श्मशान–भूमि में निशा–काल के मध्य प्रहर में बलि देने वाले साधक द्वारा दिया हुआ शुभ्र स्वच्छ सीधु (सुरा) पीकर निज भक्त को वर देती हुई 'भद्र' नाम–पूर्व काली–'भद्र–काली' को भजता हूँ।

स्व–साधकानां कुल–पालिकायै,
नमो नृ–मुण्डावलि–मालिकायै।
'कालाभ्रमा'–पुञ्ज–विशालिकायै,
नमो नमो दक्षिण–कालिकाये।।24

अपने साधकों के कुल पालन करने वाली काली भगवती को मेरा प्रणाम है। नर–मुण्डों की माला पहननेवाली काली भगवती को मेरा प्रणाम हैं काले बादल के से कालिका को मेरा बारम्बार प्रणाम है।

सानन्द–वृन्दारक–वन्दितायै,
पुष्पावकीर्ण–परि–पूजितायै।
जय प्रसीदेति सुरार्थितायै,
नमो नमो दक्षिण–कालिकायै।।25

आनन्दित देव–वृन्द से वन्दित हुई अर्थात् आनन्द–पूर्णदेव–गण जिसकी वन्दना करते हैं –यहभाव हुआ और देव–गण द्वारा पुष्प बरसा कर पूजी जाने वाली एवं 'जय हो, प्रसन्न होइए' इस प्रकार देवगण से प्रार्थना की हुई, दक्षिण–काला भगवती को प्रणाम है, मेरा प्रणाम है।

शमशान भमौ शव भस्मराशीन
सिन्दूरयन्त्यघ्रि तल प्रभाभिः
मान्या वदान्या भुवनैक धन्या
नगेन्द्र कन्याऽवतु कालिका माम्

श्मशान–भुमौ शव–भस्म–राशियों को अपने चरणों के तलुओं के रक्ति प्रभा–पुञ्जों से सिन्दूर की राशियाँ बनाती हुई त्रिभुवरन में एक ही धन्य, विश्व को माननीया, परम उदार नगेन्द्र हिमालय की कन्या कालिका भगवती मेरा संरक्षण करे।

स्वकीय–नीलायत–नेत्र–भासा,
पादारविन्दं पर–विन्दमानान्।
रूद्रानशेषानपि कृष्णयन्ती,
करोतु काली हदि में निवासम्।।27

अपने नीले विशाल नेत्रों की कान्ति से अपने चरण कमलों की वन्दना करने के लिए आते हुए सभी रूद्रों को कृष्ण बनाती हुई काली महा–माया मे हृदय में निवास करे।
यहाँ 'श्लेष' और 'विरोधाभास' अलङ्कार है। रूद्र ग्याहर हैं और इसने असंख्य भेद है। वे भी रूद्र ही है। जैसे 'शुक्ल–यजुर्वेद', 16 वें अध्याय में कहा है–असंख्याता सहस्राणि ये रूद्रा अधि भूम्याम् इत्यादि। ये सभी भवती महा–काली के पद पूजने आते है।

मेरे विपक्षों (शत्रुओं) को क्षण मात्र में भक्षण करती हुई और उनके हृदय का रूधिर पीति हुई तथा उनके मुण्डों को दिशाओं में नीचे फेंकती हुई, वह प्रसिद्ध भक्त वत्सला कालिका मेरे दक्षिणा (अनुकूल) रहे।

'दक्षिणा' शब्द के अर्थ है—1 सरल, 2 उदार, 3 अनुकूल दूसरे के मन को पहचान कर उसके अनुकूल व्यवहार करना।

यदङ्ग –भासा मिलितो महेशः,
कालोऽभवत् शुभ्र–शिवाङ्गभाश्च।
लयन्ति यत्र प्रभवन्ति नैव,
सा कालिकाऽम्बा लसताद् दृशोमें।।29

जिसके अङ्गों की कान्ति से मिले हुए महेश्वर शिव काले हो गए और शुभ्र श्वेत शिव जी की प्रभाएँ जहाँ जिस प्रभा में विलय हो जाती हैं, कुछ अपना वैशिष्ट्य (प्रभाव विशेष) नहीं दिखलाती हैं, वह कालिकाऽम्बा मेरे लोचनों में सदा विलास करे।

जिस किसी रङ्ग (वर्ण) में श्वेत, लाल आदि मिलते हुए दूसरे रङ्ग पृथक् रूपान्तर न ला सकें, वही वर्ण (रङ्ग) सब रङ्गों का मूल है, वही रङ्ग पर तत्त्व प्रकाश परमात्मा का है। जैसे

यस्मिन् तमसि नो सत्त्वं, पृथक् नाभासे रजः।
ताद्–रूप्यमेव भजते, तत् तेजः परमात्मनः ।।

इससे काली का वर्ण–तम रूप ही परमत्मा–तेज सिद्ध हुआ।
अतः सब देवों की मूल महा–माया काली ही है।

वे त्रि कृतं बीज–मनुं जपन्त–
स्त्वां कालि! रात्रौ हृदये स्मरन्ति।
ते भूति–भाजः स्वयमेव मात–
स्त्रिलोचनन्ति त्रिदशेश्वरन्ति।।30

हे कालि ! माता!जो साधक भक्त लोग आपके बीज मन्त्र 'क्री' को 'त्रि–कृतं'–तिगुना करके जपते है और जपते समय रात्रि को हृदय में आपका स्मरण करते है, वे साधक–जन स्वयं भूमि–धारी त्रिलोचन शिव की तरह बनते हैं तथा 'भूति' ऐश्वर्य–धारी इन्द्र की तरह देव–राज बनते हैं।

ब्रह्मादि–देवेषु धृत–प्रसादौ,
रुचेन्द्र–नीलाकालेतावसादी।
पादौ स्व–भृत्य–प्रण–पालिकायाः
भजाम्यहं दक्षिण–कालिकायाः।।31

हे कालि ! माता!जो साधक भक्त लोग आपके बीज मन्त्र 'क्री' को 'त्रि–कृतं'–तिगुना करके जपते है और जपते समय रात्रि को हृदय में आपका स्मरण करते है, वे साधक–जन स्वयं भूमि–धारी त्रिलोचन शिव की तरह बनते हैं तथा 'भूति' ऐश्वर्य–धारी इन्द्र की तरह देव–राज बनते हैं।

ब्रह्मादि–देवेषु धृत–प्रसादौ,
रुचेन्द्र–नीलाकालेतावसादी।
पादौ स्व–भृत्य–प्रण–पालिकायाः
भजाम्यहं दक्षिण–कालिकायाः।।31

ब्रह्मा आदि देवों पर जिन्होंने अपना प्रसाद धारण किया है, धर दिया, रख दिया है और जिन्होंने अपने प्रभा–जाल से महेन्द्र–मणि इन्द्र–नील रत्नों के कान्ति को देख अपनी प्रभा पर दुःख ही मानते है, यह भाव हुआ–'प्रतीप' अलङ्कार है और प्रभा–विशेष नीलिमातिऽशय व्यग्य है। ऐसे, अपने भक्तों के प्रण पालन करने वाली श्रीदक्षिण कालिका के चरणों का मै सेवन करता हूँ।

त्वमोऽहमो वाऽपि तदो यदो वा,
सतोऽसतो याऽस्ति परा प्रतिष्ठा ।
नित्यां चिदानन्द–मयीं श्रयेऽहं,
तां सम्बिदं दक्षिण कालिकाऽऽख्याम्।।32

जो 'त्वं' (तू) और 'अहम्' (मै) की तथा 'यत्' (जो) और 'तद' (वह) की तथा 'सत' और 'असत्' की परा प्रतिष्ठा है, उस नित्य चित् आनन्द–मयी दक्षिण–कालिका नामवली सम्बिद् का मैने आसरा लिया है अर्थात् मैं उसके आश्रित हूँ।

मूलं सवित्री प्रथमा गुणानाम्,
तथैव माता महदादिकानाम्।
संश्रीयते या परमेण पुंसा,
सा कालिका सम्विदुदेतु चित्ते।।33

जो सत्त्व, रजस् और तमस्–इन गुणों की पहली उत्पादिका–संसार का मूल ह वैसे ही 'महत आदि जगदुत्पादक व्यापक तत्त्वों की माता–जननी है, जिसे परम पुरुष भी आश्रयबनाते है अर्थात् जो पर–पुरुष का भी आश्रय है, वह कालिका नामवाली सम्वित् मेरे चित्त में उदित रहे।

क्रियाऽनुयोगात् किल कारकत्वम्,
यथा प्रसिद्धं प्रथमाऽऽदिकानाम्।
तथा यथा पुंस्त्वंमिताः स्त्रिस्ताम्,
कालीं चित्तं चेतसि चिन्तयेऽहम्

पुरुष बन जाती हैं–बन गई है, उस 'काली'–काल, संङ्कलन करने वाली महा–माया आद्या चित् का मै चिन्तन करता हूँ।

महाशक्ति के सम्पर्क से स्त्रियाँ ही पुरुष–रूप में प्रगट हुई हैं। इसमें प्रमाण देखिए, इसे समझिए। मार्कण्डेय पुराण, सप्तशती, प्रधानिक रहस्य में–

एवं युवयतः सद्याः, पुरूषत्वं प्रपेदिरे ।
चक्षुष्मन्तोऽनु पशयन्ति, नेतरेऽतद्–विदो जनाः।।

अर्थात् इस प्रकार युवतियाँ (स्त्रियाँ) ही तत्काल पुरूषत्व को प्राप्त हुई है, इस बात को तत्त्व –ज्ञान की आँख वाले विद्वान् ही देखते है। इसे न समझने वाले बिना ज्ञान चक्षु के (अन्धे) नहीं जानते।

इस विवेक से पुरुष–ख्याति–वाद और पुरुष–जगदादि–वाद दोनों ही मुँह की खा बैठे हैं। जगत् का निदान भगवती महामाया आद्या–शक्ति ही है। माया प्रकृति प्रसव धर्मिणी है । यह सांख्य शास्त्रकार स्पष्ट मानते हैं। पुरुष प्रसव धर्मी नही हैं। प्रसव–धर्मवाला तत्त्व ही जगत् कारण हो सकता है, अ–प्रसव धर्मवाला नहीं हो सकता। इस लिए 'माया–मूलमिदं जगत्' और 'अवकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या' ऐसा 'सप्तशती' की 'शक्रादि–स्तुति' में सभी देव –सड ने मिलकर निश्चय सिद्धान्त कहा है।

प्राणो यया स्पन्दमुपैति सोऽपि,
यस्या वशाद् याति दशमिधाश्च।
शरीर–यन्त्रस्य हि चालयित्रीम्,
तां कालिकाख्यां चित माश्रयामि।। 35

जिस महा–शक्ति आद्या प्रकृति भगवती के द्वारा प्राण (वायु) में स्पन्द, चेष्टा, हरकत होती है और वह प्राण भी जिस क्रिया–शक्ति के वश हुआ 'दस' संज्ञा पाता है। प्राण यद्यपि एक ही है, तो भी गुण क्रियाश्रय हुआ दस रूप से ख्यात हुआ है। हृदय में 'प्राण', गुदा में 'अपान', नाभि में 'समान ' कण्ठ में 'उदान', सर्व–शरीर–व्यापी 'व्यान' ये पाँच 'प्राण' मुख्य है। फिर पाँच– 'नाग', 'कर्म', 'ककल', 'देव दत्त' और 'धनञ्जय' नाम के है। ये दस प्राण जिसके जफ में बनते हैं; शरीर यन्त्र को सञ्चालन करने वाली उस कालिका नाम की चेतना शक्ति के ही मैं आसरे हूँ।

उत्ताल–ताली–तरू–तुङ्ग–देहाम,
काली शरच्चन्द्र–कलावर्तसाम्।
मासस्य कृष्णच्छदगां तृतीया–
निशां स चन्द्रामिव चिन्तर ने।।36

ताल (ताड़ वृक्ष) के समान विशाल ऊँची, लम्बी देहवाली शरत् काल की चन्द्र–कला के शिरो भूषण(अवतंस) वाली, मास की कृष्ण पक्ष की तृतीया की चन्द्र–कलावाली, काली रात के समान काली भगवती का मै चिन्तन करता हूँ। काली राज की तृतीय तिथि की रात्रि से भगवती काली की उपमा है।

नक्तं दिवा स्वीय–पदारविन्द
सन्चिकानां परि–रक्षणार्थम्।
करारविन्द–स्फुरितं विशालम्,
काली–कृपाणं कलयामि चित्ते।।37

रात और दिन अपने पद–कमल के ध्यान में लगे रहने वाले साधकों की परितः रक्षा करने क लिए जो भगवती आद्या काली के हस्त में देदीप्यमान है, उस विशाल काली कृपाण का–काली की तलवार (खड्ग) का मैं अपने चित्त में चिन्तन करता हूँ, ध्यान करता हूँ।

वामे महा कालि! तवाधरांशे,
करेऽस्ति मुण्डं मनुजस्य यस्य।
तस्योच्च–भाग्यं सुकृतैक–राशे
रेकेन वक्त्रेण किमीरयेऽहम्।।38

हे महा–कालि माँ ! आपके बाएँ नीचे के हाथ में जिस मानव का मुण्ड है, उस पुण्य राशि महान् उच्च भाग्य–शाली जन का भाग्य या पुण्य कैसा कितना है, यह मैं एक मुख से क्या कहूँ। नहीं कह सकता।

विद्युत प्रभा तीव्र तर प्रकाशम्
वामोर्ध्ये–पाणौ स्फुरितं कृपाणम्।
उदीयमानां विमलां सुधांशोः;
कलामिव श्याम–निशः स्मरामि।।39

बिजली की प्रभा के सामन तेज प्रकाशवाले, आपके बाएँ ऊपर के हाथ में चमकते हुए, आपके कृपाण की, काली निशा में उदित होती हुई चन्द्रमा की निर्मल उजली कला के समान स्मरण करता हूँ। यहाँ 'काली–कृपाण' और 'चन्द्र–कला' का उपमानोपमेयभाव है।

त्वयि श्मशानी समुदश्रितायाम,
या याः शिवास्त्वां परितो नदन्ति।
रूपान्तरराऽऽप्तास्तव योगिनीस्ता,
त्वामादि–मायां स्तुवन्तीः स्मरामि।।40

आप जब श्मशान–भूमि में विहारार्थ प्रगट होती है, तब जो–जो शिवाएँ–लोमड़ियाँ आपके चारों ओर चीखती है बोलती हैं, मैं समझता हूँ कि वे आपकी योगिनियाँ रूपान्तर धारण किए आपकी स्तुतियाँ कर रही हैं। ऐसा करती हुई उन योगिनिों को मैं आपके चारो ओर बोलती हुई स्मरण में लाता हूँ।

चिताः स्फुरद–रक्त–पिशङ्ग भासो,
ज्वलन्ति यास्त्वां परितो महेशि!
त्वामच्चितु प्राग्भव–कल्प–जातान्,
विष्णूननेकानिव चिन्तायामि।।41

आप जब श्मशान–भूमि में विहारार्थ प्रगट होती है, तब जो–जो शिवाएँ–लोमड़ियाँ आपके चारों ओर चीखती है बोलती हैं, मैं समझता हूँ कि वे आपकी योगिनियाँ रूपान्तर धारण किए आपकी स्तुतियाँ कर रही हैं। ऐसा करती हुई उन योगिनिों को मैं आपके चारो ओर बोलती हुई स्मरण में लाता हूँ।

चिताः स्फुरद–रक्त–पिशङ्ग भासो,
ज्वलन्ति यास्त्वां परितो महेशि!
त्वामच्चितु प्राग्भव–कल्प–जातान्,
विष्णूननेकानिव चिन्तायामि।।41

जलती हुई और लाल पीली तथा धूमिल कान्तिवाली जो चिताएँ आपके चारों ओर प्रकाशित होती है, मैं उनका ऐसे चिन्तन करता हूँ कि मानों वे पुराने कल्प कल्पनान्तर–जात अनेक विष्णु आपका पूजन करने को यहाँ आए हुए हैं, आपकी सेवा में लगे हुए शोभित हो रहे हैं।

चिता के प्रकाश में विष्णु पद बलात् चिताओं के रक्त, पिशङ, धूमिलादि वर्णो में पीताम्बर, स्वर्ण–मुकुटादि भूषण और विष्णु–देह–श्यामलत्व आदि व्यंग्य स्फुरित होते हैं।

मूल–त्रिकोणान्तर–बिन्दु–मध्ये
कादम्बिनीं काममपि चिद्–विलासाम्।
कृपाण–मुण्डे च वराभये च,
भुजैर्दधानां कलयामि चित्ते।।42

अब उपासना के लिए यन्त्र में पूजा पानेवाले, काली माता के आवरणस्थ देवताओं का ध्यान वर्णन, स्मरण, चिन्तन करते हैं–

मूल त्रिकोण के बीच के बिन्दु में चैतन्य में विलसित होने वाली या चेतना का विलास करने वाली, चार भुजाओं में कृपाण, मुण्ड और वर तथा अभय–मुद्रा धारण करने वाली, किसी अनिर्वाच्य कादाम्बिनी मेघ–माला का मैं चित्त में ध्यान करता हूँ। 'मेघ–माला' से काली का निगीर्ण अध्यवसान (निश्चय) है।

गुरू–त्रयं पूर्व–गत–त्रिकीणे,
सम्पूज्य नीलाम्बर–भूषणाढ्यम्।
दिव्याँश्चि सिद्धान्त मानबोधान्
सम्पूजयन् मूधनि तर्पयामि।।43

पूर्व त्रिकोण में गुरू, परम गुरू, परापर गुरु इन सब नील वेश–भूषवाले 'दिव्यौध' 'सिद्धौध' तथा 'मानवौध' को निज शिर पर पूजता हुआ, ध्याता हुआ, तर्पणा से तृप्त करता है ! कालिका में गुरु हैं ब्रह्मानन्द, पूर्ण–देव, चल–चित्त, लोचन, कुमार, क्रोधन, वरद, स्मरदीप, माया, मायावती–ये 'सिद्ध–गुरु' है। विमल, कुशल, भीम, शूर, सुधाकर, मीन, गोरक्ष, भोज देव, प्रजा–पति, मूल–देव, रन्ति–देव, विघ्नेश्वर, हुताशन, समरानन्द, सन्तोष–ये–'मानबौध' गुरू हैं।

श्यामा–रहस्यादि काली तन्त्रों में ऐसा ही क्रम प्रसिद्ध है। इन सब नामों के अन्त में 'आनन्द नाथ' जुड़ता है। त्रिकोण के ऊपर, पूर्व में रेखा में तीन पंक्तियों में उक्त तीनों गुरूओं की पूजा है। इन तीनों गुरूओं के साथ अन्त में साधक अपने गुरू, परम गुरु और परापर गुरू को भी पूजा करे।

आद्ये त्रिकोणे परिवार–मुख्याम्,
उग्रामथोग्र–प्रभिकां च दीप्ताम्।
उद्यत्–कृपाणमसिताम्बुदाभाम्,
मातर्महेशनि! विचिन्तयामि।।

हे महेश्वरी मातः ! प्रथम त्रिकोण के अन्दर उग्रा, उग्र–प्रथा और दीप्ता का पूजन कर, जो उठती कृपाण धारे हैं और काले बादल–सी कान्तिवाली है, मैं उनका चिन्तन करता हूँ।

परे त्रिकोणे तव रश्मि–मुख्याम्,
नीलां घनां च प्रबलां बलाकाम्।
देवीं कराञ्चत–करवाल–दीप्ताम्,
नीलोत्पलाभां मनसा स्मरामि।।45

पर–त्रिकोण में आपकी मुख्य रश्मि रूपा–1 नीला, 2 घना और प्रबल बल शालिनी 3 बलाका–देविों को कर में करवाल धारण किए, नील कमल–तुल्य कान्तिवाली की मन से स्मरण करता हूँ।

मध्य–त्रिकोणे तव देह–दीप्तिम,
मात्रां च मुद्रां च मितां तथैव।
श्याम–त्विषं खड्ग–धरां स्व–दक्षे,
वामे स–तर्जा परि–लोकयामि ।।46

अन्तर–त्रिकोण आपकी देह–प्रभा रूपिणी–1 मात्रा, 2 मुद्रा और 3 मिता–देवियों को श्याम–कान्ति धारे तथा अपने दाहने हाथ में खड्ग तथा वाम हाथ में तर्जनी मुद्रा धारती हुई को मैं (ध्यान द्वारा) देख रहा हूँ।

यहाँ तीन त्रिकोणवाले यन्त्र की ही आवरण देवियों का ध्यान है।

षट्–कोण–राजद् धनमेचकाङ्गी
काली–मुखा षट् तव रश्मि–देवीः।
उद्यत्–कृपणा मद–घूर्ण–नेत्राः;
स्वान्ते प्रशान्ते सुतरां स्मरामि।।46

षट्–कोण में चमकते हुए, साँवले अङ्गोवाली, काली आदि आपकी सात रश्मि–देवियों का हाथ में कृपाण धारे और मद–माते राते नयनों वाली मैं अपने शान्त हृदय में अच्छी तरह याद करता हूँ।

षऽग्र–बाह्येऽष्टः दले क्रमेण
ब्राह्यादिकाः पूज्य–तराऽष्ट–मातृः।
पूर्वादि–रोद्र्यं समुद्रक–सत्त्वा–
स्तवाङ्ग–रश्मि–प्रमुखा भजामि।।48

षट–कोण के बाहर अष्ट दलों में क्रम से–1 ब्राह्मी, 2 माहेश्वरी, 3 कौमारी, 4 वैष्णवी, 5 वाराही, 6 नारसिंही, 7 चामुण्डा और 8 अपराजिता–ये आठ मातृकाएँ हैं। पूर्वादि ईशान कोण तक ऊँचे सत्त्ववालों आपकी अङ्ग–रश्मि–देवियों की प्रमुख इन देवियों को मैं भजता हूँ।

तत्रैव पत्राग्र–विराजमानाः,
अष्टो महा–भैरव–देवताश्च।
ईडेऽसिताङ्ग–प्रमुखाः स–मोदाः,
संहार–कान्ता असि–पात्र–हस्ताः।।49

वहीं अष्ट दल के पत्रों के आगे विराजमान हुए असिताड आदि संहार भैरवान्त आठ महा–भैरव देवों को संहर्ष, खड्ग और पान–पात्र हाथ में रखे हुए देखकर स्तुति करता हैं। 1 असिताङ्ग, २ रुरु, 3 चण्ड 4 क्रोध, 5 उत्मत्त, 6 कपाली, 7 भीषा और 8 संहार –ये आठ भैरव हैं इनकी मैं स्तुति करता हूँ।

ततो महो–भूपुरगान् दिगीशा–
निन्द्राद्यनन्तमान्तमथो तदग्रे।
वज्रादिकान्यत्र–वराणि चान्ते,
काली–कृपा–लब्धि–कृते यजामि।। 50

इसके पीछे यन्त्र (चक्र–राज) के भू–पुर में विराजमान दिक् पाल देवताओं का, इन्द्र से अनन्त तक और उनके आगे उनके वज्रादिक आयुध–श्रेष्ठों का अन्त में भगवती काली की कृपा–प्राप्ति के लिए भजन करता हूँ, भजता पूजता और ध्याता हूँ।

इस प्रकार नौ आवरण वाले, तीन त्रिकोणवाले 'काली–यन्त्र' का ध्यान वर्णन हुआ है।

।। फल–श्रुति ।।

इमां कविश्री–हरिण प्रणीताम्,
पचाशिकां दक्षिण–कालिकायाः
समर्च्य कालीं पठतीह तस्मिन्,
प्रसन्नतामेति हि भद्र–काली।।51

कवि श्री हरिशास्त्रि–प्रणीत इस दक्षिणा काली की चञ्चश्चिका स्तुति' को जो मानव, काली का यथा विधि पूजन कर, पढ़ता है, उस पर श्री भगवती भद्र–काली निश्चय ही प्रसन्न होती है।

श्रीकालिकायाः स्फुरितासिकायाः,
दीव्यन् महा–काल–विलासिकायाः।
पञ्चाशिकायाः पठितुर्यमीया,
वित्रासिका यान्ति हि दूर–दूरम्।।52

चमकती हुई तलवारवाली तथा विहार–परायण महा–काल के साथ विलास करने वाली श्री करने वाली श्री कालिका भगवती की इस 'पञ्चशिका' के पढ़ने वाले पाठकों–साधकों से सभी भाँति यम–राज की त्रासनाएँ– विभीषिकाएँ दूर–दूर भाग जाता है।

विविध रूपों में उद्भावन

अर्थात् कोई भी प्राणी रूद्रहीन विष्णुहीन होने से शोचनीय नही होता शक्तिहीन होने से ही शोचनीय होता है।

बलहीन प्राणी को अपनी आत्मा का भी उपलम्भ नही हो सकता
आकाश शङ्करो देवः पृथिवी शङ्करप्रिया
जैसे–सिता द्राक्षा मधु आदि में मधुरिमा अनकी परमान्तरङ्ग स्वरुप ही है।
आनन्दाश्रित आल्हादिनी चेतनाशाश्रित संवित संदशाश्रित संन्धिनीशक्ति होती है।

वन्दे विदेहतनयापद पुण्डरीकं
कैसोरो सौरभसमाह्वत योगिचित्तम्
हन्तुं त्रितापमनिशं मुनिहंससेव्यं
सन्मानसालि परिपीत पराग पुञ्जम्

अत्याचारी रावण को भी माँ सीता ने कल्याणेर्थ प्रभुशरणागति का ही उपदेश किया है।
माँ ने अपने तप से हनुमान के लिए अग्नि को भी शान्त कर दिया ।
शीतों भव हनुमत :।
"कार्य कारूण्यमार्येणनकश्चिन्नापराध्यति"
अपराध तो सबसे होता है सज्जनों को करूणा करनी चाहिए।

मातर्मैथिली राक्षसीस्त्वयि तदैवाद्रपराधास्त्वया
रक्षन्त्या पवनात्मजाल्ल धुतरा रामस्य गोष्ठी कृता,
काकं तञ्च विभीषणं शरण मित्युक्ति क्षमौ रक्षतः सा
न सान्द्रमहागस सुखयतु क्षान्तिस्ववाकमिस्की ।।

कोई भक्त कहता है हे माता आपने सदा अपराध वाली राक्षसियों की हनुमान से रक्षा करके श्रीराम गोष्ठी छोटी कर दी क्योंकि उन्होने तो जयन्त विभीषण की रक्षा शरण आने पर की थी आपने तो शरण होने की अपेक्षा के बिना ही रक्षण कर दिया।

वह्नि उसकी दाहिका शक्ति में नित्य तादात्म्य सम्बन्ध है वैसे परमात्मा तथा उसकी शक्ति में तादात्म्य सम्बन्ध है।

भट्टारिकासि त्वं भुवनेश्वरि भोगदा
पितेव त्वत्प्रेयाज्जनि परिपूर्णागसि जने
हितस्त्रोतोवृत्त्या भवति च कदाचित कलुषधी।।
किमेतन्निर्दोषः क इह जगतीति त्वमुचितै।
रूपायैर्विस्मार्य स्वजनयसि माता तदसि न।।ः

हे मेधाङ्गी मानो विपुल आनन्द की वर्षा,दिव्य भूषण ध्वनि करती कालकान्ता महाकाल का संस्पर्श प्रमोद प्रवाह उभय उभय भावात्मा चिदानन्दस्वरूप हे तृषारूपा माँ मुझे ऐसी तृषा पिपासा अतृप्त बुभुक्षा दे वहतभी

निवृत हो जब तू पेय बनकर आजावे प्रणयलोल विलोचना नित्यनवनवायमान तेरा अङ्ग प्रत्यङ्ग, दिव्यानन्दरस के सार है पियूष वीचि से अभिषेचन करती हुई सर्वातिशायी विजय प्राप्त करती हुई जयन्ती मङ्गला काली

भक्त शिशुवत् पयः पानार्थ पाद प्रताडन करता जगदम्बा को लक्ष्य करके

सर्वेरसाश्च भावाश्च तरङ्गाइव वारिधौ
उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति यत्र स प्रेम संज्ञकः (चैतन्यचन्द्रोदय)

जिसमे सभी रस ऋङ्गार, हास्य, वात्सल्यादि। सभी भाव उन्मजित निमज्जिता हो वही रससिन्धु ही प्रेम है निरावरण माधुर्यसार सर्वस्व नीलज्ज्योति श्यामा–श्यामा रङ्ग–रञ्जते अनेन इति रंगः जिससे हृदय रंग जाय–सघनतमा कृष्णवर्णा सर्वत्र उद्व्याप्त प्रतीत होती है।

सब काला ही काला क्षण क्षण कण कण काली ही काली नेत्रों में मुण्डमालिनी, रक्तलिप्त कलेवर मानों काली और सिन्दुरारुण सुन्दरी मिलकर एकमेक हो गये।

ये मूर्तियाँ गढ़े जाने का दर्द सहकर पूज्य हो जाती है

छेदती छाती शिला की
शिला रह रह थरथराकर
चीख होंठो में दबाकर
चोट सहती जा रही है

ये मूर्तियाँ मृण्मय से चिन्मय हो उठती है दिव्य भावोदय दशा में भक्त के हृदय गुफा मे रहती शव

वाहिनी हृदयागारवासिनी
यद्यत् धियात् उरुगाय विभावयन्ति
तत्त त्वद् वपु प्रणय से सदनुग्रहाय

भक्त भगवान की भावना मयी विग्रह को बनाता है और अनुग्रह विग्रह भगवान तद् तद् रूप धारण कर भक्तवाञ्छाकल्पतरू रूप सिद्ध करते है

देहातिरिक्त आत्मिका काली

परशुराम आत्मा रूप से काली की आराधना कर

महत् शक्तिसम्पन्न हुए थे

यार की छेड़खानी का फिर गरम बाजार है।

अभ्र का एहसाश उठा
फिर घटा छायी है

तेरी याद दबे पाँव चली आयी है।
होंठो ने फिर कोई रङ्गीन गजल गाई है।

नग्मे से गर महरूम है दिल
माहौल को मत बदनाम करो

कितना जूनूनाजों हो मौसम
कबजाग जगलख्वार होते है।

भक्त गीतमय नृत्यमय, उल्लासमय जीवन व्यतीत करता है
तस्यगृहस्थाश्रम क्रीडार्थमेव भवति (सामरहस्योपत्तिषद)

कितना भी बसन्त हो कौवा कब गजल प्रेमी होता है गीत और छन्द न हो तो माहौल को गत अनुपयुक्त कहो इसी कलिकाल में श्री करपात्री जी, मधुसूदन सरस्वती, श्री आद्यशङ्कराचार्य, रामप्रसाद अगणित दिव्य आत्माएँ इसी तममयीकलि युग में

कलिः शयानो भवति
संजिहानस्तु द्वापरो
उत्तिष्ठस्त्रेतायां
कृतं सम्पद्यते चरन्
चरैवेति चरैवेति (वेद)

(सदघनरूप के प्रति) अनवधान शयनस्थ प्राणि कलियुग में है जो (सत्य) के प्रति मुकलित हुआ वही द्वापर भाव है उठकर चल पड़ा, चलते रहो चलते रहो यही कृत युग रूप सत्ययुग है

हे महामौहैकग्रासाय (मोह को ग्रसती हुई) विश्वग्रासा (विश्व ही एक कवल ग्रास है जिसका महोग्रा महा उदारा युगपत रूप से

निर्गुण तो है पिता हमारा
सगुण हमार महतारी
काको निन्दौ काको बन्दौ दोनो
पलड़ा भारी (कबीर)

मन्मनो मीनवन्नित्यं।
क्रीडत्यानन्दवारिधौ ।
सुस्नाम्तस्तेन पूतात्मा।
सम्यविज्ञानवारिणा।।

मेरा मन (अनन्त) आनन्दारूपा श्यामा वारिधी (समुद्र) में विक्रीडन कर रहा है (वारिधि स्नान से निर्मल) अतः सुस्नात पुतात्मा (हो गया हूँ) सम्यक् विज्ञान (बोधमयजल) जल से शुद्ध–निर्मला का चिन्तन ही अमल कर जाता है ज्ञान वारि से प्रच्छलित–अत्यन्तमलिनो देहो

देहीचात्यन्तनिर्मल
असोङ्गऽहमितिज्ञात्वा
शौचमेत्पचक्षते

देह अत्यन्त मलिन (दहि उपचये प्रतिक्षण क्षयिष्णु है) देही (चिति भगवती) अत्यन्त निर्मल (निष्कलङ्क) अतः चिति रूप से असङ्ग
देहो देवालयः प्रोक्तो देही देवो निरञ्जनः अर्चितः सर्वभावेन स्वानुभूत्या विराजते।।
देह देवालय में बैठी निञ्जनी देवी (उसी का सर्वतो भाव से अर्चन वन्दन कर अनुभूति के द्वारा (स्वराज्यसिहासन परविराजित है पर

आत्मनि स्वप्रकाशाग्नौ
चित्तमेकाहुति क्षिपेत्
अग्निहोत्री स विज्ञेयष्चेतरे नाम धारका :

आत्मिका निज बोधाग्नि रूप कालिका मे चित्त मात्र की आहूति (हवन) करे यही यथार्थ अग्निहोत्र हैं शेष अग्निहोत्री नामवाहक मात्र हैं।
आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं तनुमस्याः प्रचक्षते प्रलयो भोजने कालस्तृप्तिस्तेन च नासिका (गुह्यकाल्युपनिषद)
ब्रह्म से तृण तक इसका शरीर है प्रलयकाल में भोजन करती निः शेष तत्त्व कवलिनी–घ्राणेन्द्रिय से तर्पित (सुगन्धदि) होती श्यामा माँ

ज्वलतः पावकाद् यद्वत् स्फुलिङ्गा कोटि कोटिशः
निर्गत्य च विनश्यन्ति विश्वं तस्यास्त तथा प्रिये

जैसे अग्निकुण्ड से चिनगारियाँ अगणित संख्या में विच्छुरित होती है तदवदिव चिदग्नि कुण्ड से विश्व निर्गत और निलीन हो जाता है–निरन्वय नाश नही होता सा पश्यत्यत्ति वहति स्पृशति क्रीडतीच्छति श्रृणोति जिघ्रति तथा रमते विरमत्यपिवह सुसाक्षिणी है (देखती है) वहन करती, स्पर्श

क्रीडन, श्रवण, आघ्राण रमण विरत होती हुई गुह्य विज्ञान रूपा गुह्येश्वरी काली **सर्वतः श्रुतिमेत्यषा सर्वमावृत्य तिष्ठति** हर जगह पाणि, पाद अक्षि, शिर, मुख अर्थात् अनन्ता और सर्वत्र है चीटी के पग पायल बाजे वह भी श्यामा सुनती है।

सर्वेन्द्रियगुणा भासा सर्वेन्द्रियविवर्जिता
सर्वेषां प्रभुरीशानी सर्वेषां शरणं सुहृत्

सेन्द्रिय और निरिन्द्रिय सब की स्वामिनी और प्रभु (प्रकृष्टतया भवतीति प्रभु) नितरांसत्ता सम्पन्न और बिना अपेक्षा के सब प्राणियों की शरण्य है। हमको वह कुछ भी प्रतीत नही हो रहा है जो कालिका न हो

सा चैवाग्निः सा च सूर्य सा वायु सा च चन्द्रमा
सा चैव शुक्रःसा ब्रह्मा सा चापः
सा प्रजापति सा चैव स्त्री सा
च पुमान सा कुमार : कुमारिका

अग्निरूपदहन भैरवी, सूर्यरूप सर्वभक्षी कौलिकेन्द्र वायुरूप तीव्र गमन बल शीला सर्वस्पर्श परायण चन्द्रमा सर्व औषधीशपतिरूपा अङ्गसारसर्वस्ववीर्य रूपा धाता (धाट्पाने) रूपा और कुमार (नायक) कुमारिका नायिका रूप से काली ही विलसित है **विश्वस्य चैकां परिवेष्टयित्रीम्** भवविषद्रुम (संसार) को परिवेष्टित अकेले ही किये हुए है भाग्यसंदोह भगवती

घृतात् परं मण्डमिवातिसूक्ष्मं
ज्ञात्वा कालीं सर्वभूतेषु गुढ़ाम्
कल्पान्ते वै सर्वसंहारकर्त्री
ज्ञात्वा गुह्यां मुच्यते सर्वपापै :

जैसे दुग्ध में घृत अनुस्यूत है (या चावल मे मांड) वैसे ही सर्वभूतो में भूतेश्वरी सुसुक्ष्मरूप से अनुगत है और कल्पान्त में सर्वसंहारकर्त्री ऐसे जानकर (गुह्येश्वरी काली) सर्वपापविनिर्मुक्त हो जाती है।

एषैवालम्बनं श्रेष्ठं सैषैवालम्बनं परम् ।
एषैवालम्बनं ज्ञात्वां ब्रह्मलोके महीयते।।

इसका आश्रयण अचूक है
इसका आवलम्बन श्रेष्ठ और परम है (गुह्यकाल्युपनिषद्)
इसके अवलम्बन का बोध कर ब्रह्म लोक काली लोक में महिमामण्डित रहता है स्वरूप ही इष्ट देवी अपरोक्ष निकटतम हितम हैं।

प्रीतम पतियाँ तब लिखू, जब कहुहोय विदेश,।
तन में मन में नयन में वाको कहा संदेश।।

रोम रोम में रमती श्यामाँ दुर्गति से सुगति–ना कुछ से–सब कुछ यही आवलम्बन चमत्कार है

जब तक तू अर्थात तेरा व्यक्तिगत अंहकार सुरमे की तरह ज्ञानरूपी पत्थर के नीचे घिस नही जायेगा तब तू अपने प्यारे की आँख तक भी नहीं पहुँच सकेगा।

जब तक कि मोती की तरह तू तार से न छेदा जायेगा। तब तक अपने प्यारे के सुन्दर गले तक भी न पहुँच सकेगा।

जब तक तू फूल होकर टहनी से काटा न जायेगा तब तक तू अपने प्यारे के सुन्दर गले तक भी न पहुँच सकेगा।

जब तक कि प्रेम मद्य विक्रेता रूपी कुम्हार लोग तेरी मिट्टी को पान पात्र न बना लेगे तब तक तु अपने प्यारे के लाल अधरों तक भी न पहुँच सकेगा।

जब तक लेखनी की भांति तू ज्ञान के चाकू के नीचे सिर नही रखेगा तब तक अपने प्यारे की उगलियों के सिरो तक अर्थात पोरों तक न पहुँच सकेगा।

जब तक मेहदी की तरह तू (ज्ञान रूपी) पत्थर के नीचे न पिस जायगा तब तक तू अपने प्यारे के पावों के नीचे तलवों तक न पहुँच सकेगा।

शून्य ही अंक के सन्निधान से सहस्र, कोटि गुणा हो जाता है,

काँटा लगा है तो आह आह कर
निकालने वाली आ जायेगी

नहि जो दवाँ अपनी परम अवधि के बाद डेड् (Out of date) हो जाती है उसे चाट कर तुम क्या मृत्युञ्जय हो जाओगे मनगतसंताप आधि शरीरंगतसंताप व्याधि का उन्मूलन भगवती करती है निराधि (मनस्तापशून्य)

भक्ति रहित व्याकरण भी व्याधि का अधिकरण ही है अद्वैतवादी कहता है सोऽहं (वही मै हूँ) तो भक्त वैष्णव कहता है (दा जोड़कर) दासोऽहं (अर्थात्) मै भगवती क दास हूँ पुनः अद्वैतामृत वर्षी आया और (स) जोडकर सदासोऽहं, पुनः भजनानन्द चन्द्र भक्त आया (दा) जोड़कर 'दासदासेऽहम्'
दासस्य दासस्य दासदासोऽहम्

दीनता भक्तिमहरानी का सिंहासन है भगवती भक्ति से तुष्ट होती है न कि जाति, विद्या, तर्क आदि से भक्ति सम्पूर्ण विभक्ति में व्याप्त है

व्याधस्याचरणं ध्रुवस्य च वयो विद्या गजेन्द्रस्य का।
कुब्जायाः किमु नामरूपमधिकं किं तत्सुदामनोधनम् ।
वंशः को विदुरस्य यादवपतेरूग्रस्य किं पौरूषं ।
भक्त्या तुष्यति केवलं न च गुणै र्भक्तिप्रियो माधवः।।

व्याघ में क्या सदाचार था ? ध्रुव की आयु ही कितनी थी गजराज में ऐसी कौन सी विद्या था ? कुब्जा मे ऐसा सौन्दर्य कहाँ था ? सुदामा कौन धनी था ? बिदुर कहाँ उच्चकुल के थे ? यादवपति

उग्रसेन में कहाँ पुरूषार्थ था ? भगवान भक्ति प्रिय है वे केवल भक्ति से प्रसन्न होते है गुण गणो से नही मा लक्ष्मी धवः पति–लक्ष्मीपति ही माधव है

त्रिभुवन विभवहेतवेऽप्यकुण्ठ
स्मृतिरजितात्मसुरादिभिर्विमृग्यात्
न चलति भावत्पदारविन्द
ल्लवनिमिषार्धमपि यः स वैष्णववाग्रयः ।।

त्रिभुवन विभव की सम्पत्ति के लोभ से भी जिसके स्मरण में किञ्चिद् बाधा नही पड़ती और अजितात्मा देवगणों से खोजेजाने वाले भगवच्चरणारविन्दों से जिसका चित्त आधे क्षण के लिए भी चञ्चल नही होता वही भगवद्भक्तों में उत्तम है

सकल भुवन मध्ये निर्धनास्तेऽपि धन्या
निवसति हृदि येषां श्री हरेर्भक्तिरेका
हरिरपि निजलोकं सर्वथा तं विहाय
प्रविशति हृदि तेषां भक्तिसूत्रोपनद्धः

समस्त संसार में परम निर्धन होकर भी वे धन्य है जिनके हृदय में एक भगवद्भक्ति का वास है क्योंकि भगवान् हरि भी उनके भक्तिसूत्र से बंधकर अपने लोक को छोड़कर उनके हृदय में प्रवेश करते है।

निरपेक्षं मुनि शान्तं निर्वैरं समदर्शनम् ।
अनुव्रजाम्ह नित्यं पूययेऽत्यंघ्रिरेणभिः।।

जो निरपेक्ष निर्वैर समदर्शी और शान्त मुनि जन हैं उनकी पीछे पीछे सदा ही मै इसलिए फिरा करता हूँ कि उनकी चरण रज से पवित्र हो जाँऊ। कि नाम भजनम् (भजन क्या है) भजनं रसनं पुनः पुनः आस्वाद नम्

अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतन्त्र इव द्विज,
साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्त जनप्रियः

हे द्विज मै पराधीन के समान भक्तों के वश में हूँ मुझ भक्तवत्सल का चित्त मेरे साधुओं ने बाँध रखा है।

सदा मुक्तोऽपि वद्धोऽस्मि भक्तेषु स्नेहरज्जुभिः।
अजितोऽपि जितोऽहं तैरवशोऽपि वशीकृतः ।।

सदा मुक्त हुआ भी उनके द्वारा जीता जा चुका हूँ। और अवश हुआ भी उनके वश में हूँ।

पञ्चत्वं तनुरेतु भूत निवहा स्वांशान विशन्तु प्रमो
धातस्त्वां शिरसा प्रणम्य कुरु मामित्यद्य याचे पुन :

तद्वापीषु पयस्तदीयमुकुरे ज्योतिस्तयालये
ब्योम्नि ब्योम तदीयवर्त्मनि धरा तत्तालवृन्तेऽनिलम् ।

हे प्रभो! मेरा शरीर पञ्चत्व को प्राप्त हो जाय पांचो भूत अपने अपने अंशो में मिल जायं पर हे विधाताः। सिर से प्रमाण करके तुमसे बारम्बार यही प्रार्थना करता हूँ कि मेरा (अंश) जल प्यारे कृष्ण के क्रीडा सरोवर में, तेज उनके दर्पण में आकाश उनके गृहाकाश में भूमि उनके मार्ग में और वायु उनके पंख में मिल जाँय।

साधवो हृदयं मह्यं साधूना हृदयं त्वहम् ।
मदन्यत्ते न जानन्ति नाहं तेम्यो मनागपि।।

साधु लोग मेरे हृदय है मैं साधुओं का हृदय हूँ वे मेरे सिवा कुछ भी नही जानते मैं भी उनके सिवा कुछ तनिक भी नही जानता।

हे हेममालिनी–हेम्ना हेमविकारैः सुवर्णभरण मालते शोभते इति हेमामालिनी।
हेम (सुर्वण) निर्मित भूषणो से मण्डित इन्दिरा सिद्ध लक्ष्मी हे पद्मानने पद्मवत्कोमल सुगन्धि सुन्दरमाननं यस्याः साः पद्मानना

पद्मानने पद्मिनि पद्म पत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि ।
विश्वप्रिये विश्वमनोऽनुकुले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्सव।।

विश्वं प्रीणाति तर्पयति सा या विश्वप्रिया विश्व का तर्पण पोषण करने के कारण काल प्रिया काली विश्वप्रिया अरविन्दवनवासिनी सिद्धमहालक्ष्मी है।

या देवी सर्वभुतेषु पुष्टिरूपेण संस्थिता, पुष्करिणी
पुष्करं गजशुण्डाग्रं अभिषेकार्थम्
उद्युक्तं दिग्गजानां पुष्करं शुण्डाग्रे
यस्या सा पुष्करिणी

ऐरावत से भी ज्यादा सदा मदान्वित गज और उनके शुण्डादण्ड में कनक घट परिवृत है और उससे सौदर्न्यामृत संधारा,माधुर्यामृत संधारा लावण्ययामृतसंधारा, सौरस्यामृत, से महालक्ष्मी का स्नपन हो रहा है कोटि कोटि गजो के प्रणाद से प्रभात में भगवती की निद्रा विभङ्ग होती है–हरिणीवद् विशाललोचना

हे अक्षिणी तक्षिणी शत्रु भक्षिणी

माँ जीवों की गति जलप्रवाह गत बालुका जैसी है जीवनां का गति–जलधारागता बालुकायथा

इस दुनिया को दहे फानी देखा
हर चीज यहाँ की आनी जानी देखा
जो जा के न आये वो जवानी देखा
जो आ के न जाये वो बुढ़ापा देखा

आदित्यस्य गतागतैरहरहः संक्षीयते जीवितं,
व्यापारैर्बहुकार्य भारगुरूभिः कालो न विज्ञायते,
दृष्ट्वा जन्मजराविपत्ति मरणं त्रासश्च नोत्पद्यते
पीत्वा मोहमयी प्रमादमदिरामुन्मत्त भूतं जगत् ।। (भर्तृहरि) ।

सूर्य के उदय और अस्त से जीवन क्षीण हो रहा है विविध कार्यों के भार से गुरुतर प्रतीत होने वाले नाना प्रकार के व्यापारों से समय जाता मालूम ही नही पड़ता। जन्म जरा और मरण की विपत्ति को देखकर भी चित्त में भय नही होता। संसार मोहमयी प्रमादरुपी मदिरा पीकर उन्मत्त हो गया है।

जन्म दुःखं जरा दुःखं जाया दुःखं पुनः पुनः।
संसार सागरं दुःखं तस्मात् जाग्रत् जाग्रत् ।। (उद्‌बोधन)

संसार में दुःख के द्वारा जितना आँसू है उतना सागर में पानी नही है

कामः क्रोधश्च लोभश्च देहे तिष्ठन्ति तस्कराः,।
ज्ञानरत्नापहाराय तस्मात् जाग्रत जाग्रत।।

कामक्रोध लोभादि तस्कर देह में रहते है ज्ञान रत्न का अपहरण करने के लिए अतः जागते रहो जागते रहो

सुखमल्पं बहुक्लेशो विषयग्राहिणां नृणाम् ।
अनन्तं ब्रह्म निष्ठानां इति वेदान्त डिण्डिमः ।।

सुख स्वल्प और क्लेश अधिकतर विषय ग्राहियों को होता है (ऐसा) आनन्त ब्रह्म निष्ठ वेदान्त का उद्‌घोष है

माता नास्ति पिता नास्ति नास्ति बन्धु सहोदरः ।
अर्थो नास्ति गृहं नास्ति तस्मात् जागृत् जाग्रेत् ।।

दृश्य और दृश्य सम्बन्ध सब मिथ्या भूत है

आशया बध्यते लोकः कर्मणा बहुचिन्तया ।
आयुः क्षीणं न जानाति तस्माद जाग्रद् जाग्रद्।।

आशा से बद्धलोक कर्म के द्वारा बहुचिन्तावान (सफलता असफलता को लेकर प्राणी) क्षीण होती आयु का भी नही जानता अतः जागते रहो जागते रहो

नेति ने तीतिवाक्यैश्च शोषितं यत् परं पदम्, ।
निराकर्तुमशक्यरात्वाद्तदस्मीति सुखी भव ।।

न इति न इति (यह नहि, यह नही) ऐसा सर्वदृश्य का निषेध कर । बल पर सबका निषेध करता है उसका निषेध अशक्य है वही अपने को जान सुखी रहो।

जडतां वर्जयित्वेकां या शिलावदवस्थितिः,।
जाग्रन्निद्रा विनिर्मुक्ता सा स्वरूपस्थिति परा।।

एक जड़ता को छोड़कर शिलावद जाग्रद निद्रा से विनिर्मुक्त वही परमात्मिका पराअवस्था है

नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त भावमीशमात्मनः ।
भावयन् षड़िन्द्रयाणि सन्नियम्य निश्चलः।।
अस्ति वस्तु चिद्धनं जगत प्रसूति कारणम्
ननश्वरं तदुद्भवं जगत्तमोनुदं च यत् ,
तत्पदैक वाचकं सदामृतं निरञ्जनम्
चित्तवृत्तिदृकसुखं तदस्म्यहं तदस्म्यहम् ।। (सनत्सुजातीयशङ्करभाष्य)

सत्यं ज्ञानमनन्तमेकमजरं नित्योदितं शाश्वतं,
प्रत्यक् ब्रह्म रसायनं सुखघनं पूर्णं परं पावनम्,
स्वात्मज्योतिरनादि मध्यनिधनं मायाविलसैर्मुहुः,
विश्वाकारमपास्तमायाममयं वन्दे विशुद्धं पदम् ।।
(योगवशिष्ठ टीकाकार का मङ्गलाचरण)

नित्याशुद्धबृद्धा सच्चिदानन्दरूपिणी भगवती ही मै हूँ आम्नायमस्तक सुसंस्कृतवैभवोऽहम् (उपनिषत् संस्कार का वैभव मै हूँ)

अहमेव गुरोर्गुरूः (उपनिषद्)

मै ही गुरूओं का गुरू **गुरूर्मूर्तिधरां गुहयां गुहयाविज्ञानरूपिणी**–अहं वेदैरूपासितः हे सहस्ररूद्रतेजस्का वायु से ज्यादा बलशाली वेगवान, मार्तण्ड से कोटिगुणितेजवान और समुद्र से ज्यादा (कोटिगुणित) गम्भीर

बेहतर है खुदा पर्दे में नापोश रहे।
सामने आ जाय तो फिर भला किसे होस रहे ।।

जैसे करोड़ो सूर्य अकस्मात् आकाश मे आ जाये तो दुर्दर्श समुज्जवल तेज के सम्मुख उन्मुखोन्मुख व्यापार की सामर्थ्य किसमें हैं सम्यक् बोधन रूप सम्बोधन अशक्य सा है परन्तु भक्त तो गान परायण है कैवल्यनिर्वाण नलिनी

उस अनन्ता और अनादिभूतेश्वरी में किसी तरह भी गणित अनुमानादि वाचाल नही होते

बस मन को मनमोहिनी काली में लगा दो मोहित कर लेगी भक्ति में एक दुग्धा शक्ति है जो भक्त से अहङ्कार और प्रमाद को विदूरित करती रहती है

दृगबिन्दुओं से पद अभिषेचन करो
तत्प्राप्य तदेवावलोकयति तदेव श्रृणोति
तदेव भाषयति तदेव चिन्तयति
(नारदीय भक्तिसूत्र)

उड़त बैठत, खडे उताने
कहै कबीर हम उहीं ठेकाने

तदेव साध्यताम्
तदेव साध्यताम् ......

श्यामा ही अन्वेष्टव्य है मन्तव्य है श्रोतव्य है।
यो वेदानपि संन्यस्यति
केवलमविच्छिन्नानुरागं लमते।

जो वेदों को भी छोड़कर अविरल अनुराग लाभ करते है नास्ति तेषु जाति–विद्या–रूप, कुलधन क्रियादि भेद (नारद भक्ति सूत)

द्विजत्वं परित्यज्य शिवत्वं प्रजायते ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि जाति छोड़कर शिवरूप (निरूतर तन्त्रे) हो जाते है।

वेदविधाविशारद वशीकृत शारद शास्त्रार्थ पारद भगवान नारद के अनुसार सर्वद्वन्द्वातीत भक्तिरस सरोवर है।

जिस प्रकार माँ पुत्र को परदेश भेजती है जो पाथेय (रास्ते का जलपानादि) देती है वैसे ही माँ ने भी पाशेय देकर ही संसार में भेजा है।

दाँत नही था तो स्तनगत दुग्ध मिला जो क्या दाँत रहने पर अन्नादि चर्वण नही देगी सम्यक् क्रन्दन बालक **वक्राणि अलकानि यस्य** तिरछे अलको (केश) वाला बालक) का माँ नेत्र में अश्रु और स्तन

चिबुक पर पय बिन्दु लिए समक्ष आती है
वत्सं लातीति वात्सलः
तस्य भावः वात्सल्यम्

वात, पित्त मलिनता कलल सम्पृक्त बछड़े को माँ गाय चाटती है अर्थात् दोष युक्त बालक भी माँ की उपेक्षा के विषय नही बनते हैं।

दोषेऽपि प्रवृत्तित्वं वात्सल्त्वम् अस्तविवेकलेश ही रागोन्माद है

काली को काल पकड़े या काल को काली–जैसे तुम अपने बाँये हाथ से दाया हाथ पकड़ो या दाये से बायाँ दोनों हाथ एक ही व्यक्ति के है
यहाँ भेद का भेद रूप अभेद है भेदस्य भेदः अभेद : शिव + शिवा–शिवौ सर्वद्वन्द्वातीता
अभाव ज्ञान में प्रतियोगी ज्ञान हेतु अभाव ज्ञाने प्रतियोगी ज्ञानं कारणं भवति जब सूर्य में अन्धकार का भाव नही हो तो अन्धकार का अभाव भी नही
अतः आत्मिका कालिका में बन्ध और मोक्ष दोनो नही है वह सदोदित अनन्त सौख्यरूपा है।

भेदाभेदौ सपादि गलितौ पुण्यपापे विशीर्णे।
मायामोहौ क्षयमुपगतौ नष्ट संदेहवृत्ति।
शब्दातीतं त्रिगुण रहितं प्राप्य तत्वावबोधं।
निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतां को विधिः को निषेध।। (शुकाण्टक)

सर्व भेदा भेद, पुण्यपाप, माया मोह, को विगलित कर शब्दातीत त्रिगुणगुण रहित तत्व बोध को पाकर त्रिगुणरहित पथ पर विधि निषेधातीत होकर विचरण करता है अवधूतेश्वरी धूमावती का अतिवर्णाश्रमी अवधूत भक्त

श्रद्धामयी माँ–यो याच्छ्रद्धः करता है वह वही है यह पुरूष श्रद्धामय है।

यो याच्छ्रद्ध : स एव स
जिसकी जिसमे श्रद्धा है वह वही है
यो यथा यथा उपासते स तथैव भवति
जैसे जैसे उपासना करता है वेसा ही हो जाता है।

व्यापारे खिद्यते यस्तु निमेषोन्मेषयोरपि तस्य,
आलस्य धुरीणस्य सुखं नान्यस्य कस्यचित् (अव्यवक्र)

निमेष उन्मेष (नेत्रों के पलक छपकाना) उठाना भी व्यापार हलचल में जो खेद लेता है ऐसा आलसी धुरीण अग्रगण्य को ब्रह्मानन्द का अनुभव होता है ब्रह्मविदों की सुस्ती पर कर्मठो को कोटि चुस्ती न्यौछावर है

योगरतो वा भोगरतो वा
सङ्गरतो वा सङ्गविहीनः।
यस्य ब्रह्मणि रमते चित्तं
नन्दति नन्दति नन्दत्येव।।

योगरत हो या भोगपरायण, निसङ्ग हो या सङ्गपरायण जिसका मन ब्रह्म में रमण करता है वह (निश्चय रूप से) आनन्दित होता है नन्दित होता है नन्दित होता ही है

विकल्पशून्य आनन्द है
न विरक्ता धनैस्त्यक्ता ।

न विरक्ता दिगम्बरा :।
विशेषरक्ता स्वपदे ते ।
विरक्ता मता मम।।

सिंहासनं समाधिर्मे वेदान्ताः मम् वन्दिनः ।
मारितो मोहनामारिर्मम राज्यमकाण्टकम्
हे सर्वभूषण भूषार्हा

उपासना खुशबू है वासना बदबू है जहाँ वासना की तरङ्गे जहाँ निष्कम्प वायु शून्य वही अधिष्ठान भगवती का निवास है हृदयागारवासिनी

हृत् अन्तः करणं अयति गच्छतिइति हृदयम्
यतो निर्याति विषयो, यस्मिश्चैव प्रलीयते
हृदयं तद्विजानीयात् मनसः स्थितिकारणम्

जहाँ से विषय निर्गत हो और पुनः उसी में प्रलीन हो जाय
वही हृदय क्षेत्र –मानसस्थिति कारण

हृत् कमलमञ्चेडोले
करालवदनीश्यामा

भक्त का हृदय कितना विशाल होगा जहाँ विशाला भगवती रहती है मम् हृदये खेलति काली मम् हृदये खेलति काली दशहस्ता माँ काली दशमहाविद्या की क्रियाशक्ति रूप में है काली पदगत नुपूर तद् जन्य सुमधुर ध्वनि काव्य नाटकादि विश्लेषण रूपा है। नुवति गच्छति पुरं इति नुपूर निस्त्रैगुण्य त्रिलोचना आग्नेय नेत्रवाली काली

सर्वं कर्तुं समर्था
सर्वं ज्ञातुं समर्था मों श्यामा

हे मॉं तू अश्वस्थानी हो मैं खरस्थानी
हे माँ तू गरूणस्थानी हो मै परावतस्थानी

गर्भगत शिशु को पृथक श्वास भी नही लेना पड़ता माँ ही लेती है
हे मॉं मेरा नयन तेरा अयन है सहज विमल मन लागी समाधी

तमाशाए दैरो हरम देखते है
तुझे हर बहाने से हम देखते है
जहाँ तेरे नक्शे कदम देखते है
खियाबाँ खियाबाँ इरम देखते हैं

बनाके फकीरो का वेश हम गालिब
तमाशाए अहलेकरम देखते हैं।

खियाबाँ–पदचिन्ह,
इरम–स्वर्ग,

वह वस्तु ज्ञात नही होती जो तुम न हो अर्थात् दृश्य के भीतर बाहर मध्य में सच्चिदानन्दरूपिणी भगवती लबालब भरपूर है

दन्तिनि दारू विकारे
दारू तिरोभवति
सोऽपि तत्रैव जगति तथा परमात्मा
परमात्मन्यपि जगत्तिरोधत्ते

दारू (काष्ठ) की हाथी में हाथी बुद्धि हो जाती है (दारू की ही है परन्तु काष्ठ बुद्धि गायब सी रहती है)

साऽपि तत्रैव–काष्ठ वही हैं पर आकृति हाथी की बुद्धयारूढ़ होती है

वैसे ही जगदाकृति बुद्धयारूढ होती है परमसात्मा नही कदली गर्भवत् असार संसार बोध दशा में तिरोहित सा है

बोधदशा में सच्चिदानन्द परमात्मा कल्पित जगदाकृति तिरोहित हो जाती है

हे सकलसुरसंसेव्या

अतः अखण्डित धनाकार शिवा ही सद्व्योम हैं प्रणाद करती हुई जादूगर की दृष्टि में जादू कुछ नही है वह निर्धूतपाप विगलित त्रिताप होकर

निर्गच्छति जगत् जालात् पिञ्जरात् इव केसरी (श्रुति)
ज्ञानी केसरी की तरह जगदजाल से निकल जाता है

अमृत से मृत्यु की वार्त्ता असम्भव है
ज्ञानमान जहँ एकऽ नाही
देखत ब्रह्म सबही घटमाही (अरण्यकाण्ड)
स्वैरं न विगायेत् (श्रुति)

(महापुरूष) की स्वच्छन्दता की निन्दा नही करनी चाहिए।
ज्ञान हवाँ के चलने से अविद्या पताका फट जायेगा

हवाँ का क्या दोष है
क्या अँधेरा सूर्य को निगल पाया है ।

क्या अमृत मृत्यु से त्रस्त हो सकता है।
क्या, काष्ठ अग्नि को निगल पायेगा।
क्या नमक से पानी गलेगा ।

क्या भुजङ्ग को मेढ़क कभी निकल पायेगा छाया गत प्रहार से काया असंस्पृष्ट राहती है घटगत जल का क्षरण होने पर सूर्य का प्रतिबिम्ब नष्ट होता है सूर्य नही।

मार्तण्ड सम्मुख जैसे नक्षत्र मण्डल नही प्रतीत होता है वैसे ज्ञान यज्ञ के सम्मुख द्रव्य यज्ञ तप यज्ञ आदि।

हे माँ मुझ आर्तदीन की तुम छाया हो या देवी सर्वभूतेषू छाया रूपेण संस्थिता

सन्तोष रुपी श्यामा वन में कोयल की कूँ कूँ कर रहा हू ।

हवा किसे नही स्पर्श करती है यही कौल रूपा है यह शरीर जो क्लेश रूपी वृक्षों का आरण्य है जो आध्यात्मिक आधिभौतिक आधि दैविक जो त्रिधा तापों की अंगीठी है।

अहंकार का बगीचा है सर्व व्याधियों का परोसा हुआ थाल है काल के द्वारा अधूरी चखी हुई खिचड़ी है मृगजल से सींचा हुआ जंगल है।

जंगल में एक चित्र रखा है चित्र में एक कुटी है सामने एक घोड़ा खड़ा है कुछ भी न खड़ा है कुछ भी न रखने वाले के पास कुटी है यह किसका प्रतीक है ? शरीर रूपी कुटी छोड़कर भागने वाले ज्ञानी पुरुष का छोड़ भागने वाले ज्ञानी पुरुष का घोड़ा सर्वदा तैयार है।

यथा रवि : **सर्वरसान्प्रभुङ्क्ते हुताशनश्चपि हि सर्वभक्षः तथैव योगी विषयान्भुङ्क्ते न लिप्यते पुण्यपापैश्च शुद्धः।।**

सूर्य अपने रश्मियों से (अच्छे बुरे स्थल क्रम से) सभी जलों को कर्षित करता है अग्नि सर्वभक्षी है तदवदिव योगी तद् तद् विषयों के सम्पर्क भोग से पापपुण्य से संलिप्त नही होता

छूटि गइल किरिया करम
छुटि गइन तीरथ का नहाना
सगरा जगद् भया सयाना
एक मैं ही बौराना

विधि निषेधातीत ही कौलिकेन्द्रगण जो कि
कौलिनि काली के उपासक होते है

धन्योऽहं धन्योऽहं ब्रह्मानन्दो विभाति मे स्पष्ट्।
कर्तव्यं में न विद्यते किंचित्
धन्योऽहं धन्योऽहं प्राप्तव्यं सर्वमित्रं संपन्नम्।
धन्योऽहं धन्योऽहं तृप्तेर्मे कोपमा भवोल्लोके

ख्वाबीद तरन्नुम है ।
खमोश कयामत है ।

रफ्तार के शोखी में गङ्गा की मतानत है
जज्बात की बेदारी जाहिर है रडो पैसे ।
तालाब के पानी में बहता हो कमल जैसे ।।
अवधूताश्र में देवि यस्य भक्तिश्च निश्चला
तस्यतुष्टा भवेत काली किं न सिद्धयति भूतले (निर्वाणतन्त्रौ)।।

अवधूताश्रमे जिसकी प्रीति निश्चल है उससे माँ काली तुष्ट होकर अवनितल पर क्या नही प्रदान कर देती है अर्थात् सौभाग्य,कान्ति, प्रतिष्ठा और महाश्रिय प्रदान करती है अवधूतेश्वरी धूम काली

पिव काली रसं रसने
पिव काली रसं रसने
खेलति काली खोहे काली
खेलति काली घाटे काली
खेलति काली घाटे काली

वक्त्रं विस्तारितं कृत्वा अधोजिह्वा च चालयेत्।
पार्श्वस्य। मुष्टियुगलं लेलिहानेति कीर्तिता।।

जीभ निकाल कर मुख खोल दो मुट्ठी यही लोलिह्यसे उसी मुद्रा खेचरी मुद्रा इतनी अधिक प्रभावकारी है कि युवती नारी भी यदि खेचरी सिद्ध साधक को आलिंगन करें फिर भी उसका बिन्दु मात्र भी रेतपात नहीं होता शास्त्रों में गोमांसा भक्षण का उल्लेख मिलता है गो–का अर्थ है जिह्वा । तालकुहर में जिह्वा को प्रविष्ट कराना हो गोमांस भक्षण का वास्तविक अर्थ है गोमांस भक्षण करने वाले अर्थात् जिह्वा को निश्चल अवस्था में तालकुहर में रखकर ध्यानरत रहने वाले साधक ही स्हस्त्रार से क्षरित अमृत सुधा का पान करने में समर्थ है।

आराधितों यदि हरिस्तपसा ततः किम्
नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्
अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्
नान्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्

नारद को एक देववाणी का श्रवण होता है जिसमें श्री हरि की उपासना का कार्य ही सर्वोपरि कहकर उसे प्राप्त करने की प्रेरणा दी गई।

अगर इष्ट देवी सम्यक्तया संराधिता हो गई तो सभी तप आदि सार्थक है अन्यथा निरर्थक प्रतीत होता हैं।

पतिव्रता महाभागा जलदुर्गनिवासिनी अरविन्दवनवासिनी विन्ध्वासिनी समुद्रवसना सातो समुद्र सप्तरङ्गी साटिका पवर्तनस्तनमण्डला (गौरपयोधर कम्पित हारा सुमेरू हिमालयादि पर्वत उसके स्तन

मण्डल उन्ही स्तनमण्डलों से गङ्गा की धारा शतद्रु शतधा द्रवति गच्छति इति) की संधारा रो माँ के स्तनों के दुग्ध धारायें है सारे संसार आप्यायन हो रहा है नहर और विद्युत राष्ट्र को विद्योतित कर रहा है।

समुद्रवसने देवि, पर्वतस्तनमण्डले
विष्णु पत्नी नमस्तुम्यं
पादस्पर्शनक्षमस्वमे ।।

विष्णु की पालनी शक्ति भोगदा भट्टारिका महालक्ष्मी सिद्ध लक्ष्मी वैष्णवी माँ श्यामा–हे सर्वयोगसाङ्गपाङ्ग विभाविनी" अगणित अनन्तकोटि योगिनी वृन्द समाराधित किंवा चतुः षष्टि (चौसठ) योगिनी समाराधित क्रमगत चौसठ योगिनीया निम्नोक्त है

दिव्ययोगा महायोगा सिद्धयोगा महेश्वरी पिशाचनी डाकिनी च कालरात्री निशाचरी क्रींकारी रौद्रवैताली हुंकारी भुवनेश्वरी उर्ध्वकेशी विरूपाक्षी शुष्काङ्गी नरभोजनी फट्कारी वीरभद्रा च धूम्राक्षी

कलहप्रिया, रक्ताक्षी, राक्षसी घोरा विश्वरूपा भयंकरी कामाक्षी चोग्र चामुण्डा भीषणा त्रिपुरान्तका वीर कोमारिका चण्डी वाराही मुण्ड धारिणी भैरवीं हस्तिनी क्रोधदुर्मुखी प्रेतवाहिनी खट्वाङ्गदीर्घलम्बोष्ठी मालती मन्त्रयोगिनी स्रग्विनी चक्रीणी ग्राहा कंकाली भुवनेश्वरी कंटकी काटकी शुभ्रा क्रियादूती करालिनी पद्मनी शंखिनी क्षीरा ह्ययसंध्या च प्रहारिणी लक्ष्मीश्च कामुकी लोला काक दृष्टिरधोमुखी धूर्जटी मालिनी घोरा कपाली विष भोजनी चतुष्षष्टिस्समाख्याता योगिन्यो वर सिद्धदाः।।

भगवती उपसदन रुप उपासना के सांकेतित तन्त्र दृष्टि–

क्षणं ध्यात्वा मनुं जप्त्वा नत्वा गच्छेद्यथा–सुखम्।
गृध्वी वीक्ष्य महाकाली जम्बुको यम–दूतिकाम।।
कृष्ण–मार्जार–यू काकौ श्येन क्षेमङ्करी तथा ।
कुक्कुरं च नमुस्कुर्यादिभि मन्त्र पठएन नरः।।

गृध्वी को माँ काली रुपा जानो श्रृगाली को यम दूतिका और काला काक और काली बिल्ली और बाज ये सब क्षेमङ्कर–रक्षादायक है श्वान श्वनन्ति उपदिशन्ति इति श्वान यथा दत्तात्रय के साथ चारो वेद उपदेश के ब्याज से श्वान रुप में उपस्थित है अर्थात हर भूतो में चिति का अंश उसको देवत्त्व अनुदान करता है सारा विश्व काली है

हे कायकान्तिजितमेघमालिका
हे कण्ठ लम्बित कपालमालिका–घोरघोषिका
तू कालिका और तू ही तारणकारिका
तू ही वज्र वैरोचनी दुःख विमोचिनी

श्यामाभिरामा परिपूर्णकामा तू ही प्रमात्मिका और तू ही परमात्मिका तू ही पुरा (पहले) और तू ही परा

यस्योन्मेशनिमेषाभ्यां व्यक्ताव्यक्तमिदं जगत्

जिसके नेत्र का उन्मेष सृष्टि है और निमीलन प्रलय-यह व्यक्त अव्यक्त जगत् उसकी नजरे इनायत है

दशहस्तका करवालिनी काली

हरिहरविधिचवन्धा जगदानन्दकारिणी श्यामा माँ जगद्विशिष्ट और जगदातीत सकल विरूद्ध धर्माश्रय त्व गोपन और प्रकाशन युगपद रूप से समाहित कर रखती है हे दमनी दामनी सर्वजननी

नितान्त निर्मला त्वंहि
तामसीति च गीयसे।
त्वं हिंसा त्वमाहिंसा च।
त्वं काली चतुरानना। (श्री कालिकापुराण)
सत्त्वोद्रेक प्रकाशक (सत्त्वात् संजायते ज्ञानम्)

अपगतमलरूपा निर्मला तुम हो संजीहीर्षा संनहनन (रूद्रो वै क्रूरः) श्रुति तम अधिक्य से प्रलयङ्कारी तुम्ही हो तुमही हिंसा अत्याचारीयों के प्रति और तुम अहिंसा निरूपद्रवा रूपा हो माँ तुम चतुरानना रूप से भी गायी जाती हो

एका त्वं द्विविधा भूत्वा मोक्ष संसारकारिणी
यस्त्वां विचिन्तयेद् देवीं विद्याविद्यात्मिकां पराम्
तस्य भोग्यञ्च मुक्तिश्च सदा करतलेस्थिता (कालिकापुराण)
विद्या (विशेषेण द्यति खण्डयति अविद्याम्)

अज्ञान का अपनोदिका विशेषतत्त्व की द्योतिका विद्यमान सत्ता विद्यारूपा और अविद्या (निखिल कर्मानुष्ठान रूपा जो ध्यान करता हैं ऐहिक आमुष्मिक प्रेय और श्रेय हस्तामलक अहम् अहमिकया अधिगत होता हैं

हे भक्तत्राण व्यग्रचित्ते
कृष्ण भावनया शश्वत्कृष्णवर्णा सनातनी ।
ब्रह्माण्डे सकलं हर्तु शक्तानिः श्वासमात्रतः ।।
भद्रकाली जगन्माता खड्गखर्परधारिणी।
तया दुर्धर्षया सार्ध को वा युद्धं करिष्यति।। (ब्रह्मवैवर्त प्रकृति खण्डे)

पुरातनी सनातनी माँ कृष्ण रूप और कृष्णवर्णा है निःश्वास मात्र से ब्रह्माण्ड (विदीर्ण) करने में समर्थ है वह दुरत्यय (मृत्युवर्जित) दुर्धर्ष निर्निरोध है उससे रणकाण्डु की प्रतिस्पर्धा कौन कर सकता है। यमशीर्ष निकृन्तनी है **दुर्वाच्य एव महिमा तव सर्व लोके**-तेरी महिमा अकथनीय है

हे मञ्जुघोषामदप्रिया

यदि देह पृथक्कृत्य चिति विश्राम्य तिष्ठति, अधुनैव सुखी शान्तो बंध मुक्तो भविष्यसि (अष्टावक्रगीता)

यदि तुम देह आदि से विलक्षण विविक्त विवेचन कर चितिसंज्ञा न स्वरूपा आत्मिका कालिका (स्वरूप निश्चय) से विश्राम रूप अवस्थान (कर सको) इदानीं ही शान्त और सर्वबन्धन विर्निमुक्त हो जाते हो।

धीरधी कौलिकेन्द्र गणों का उल्लास विलास मय पञ्च मकार सहकृत उपासना विषयरत प्राणियों से भिन्न हैं।

हंतात्मज्ञस्य धीरस्य खेलतो भोग लीलया।
नहि संसारवाही कैर्मूढैः सह समानता ।। (अष्टवकृगीता)

आत्मिका कालिका के बोध से उल्लसित ज्ञानी किंवा सर्वाधिष्ठानतया अपने को जानने वाला आत्म ज्ञ भोग लीला क्रीड़ा करता नयन गोचर होता हुआ भी विषयी प्राणी से सर्वथा अतुलनीय रहता है इनमे साम्य आपाततः लगता है पर वस्तुतः वह आत्मिका श्यामा रूप ही है आत्मैवैषा शक्तिः काँच और मणि में द्यावा भूमि का अन्तराल है।

श्यामा षोडशवर्ष की नायिकाओं में प्रधान नायिका भी विवक्षित है

शीतकाले भवेदुष्णा उष्णकाले च शीतला ।
स्तनौ सुकठिनौ यस्याः सा श्यामा प्रकिीर्तिता।।

मायातीत महामाया महावैष्णवी शक्तिकाली ही भक्तिस्वरूपा है विपरीत परिस्थिति में एक भक्त 2 माँ से प्रातीतिक ललकार पूर्वक सम्बन्ध जोड़ता है प्रेम पत्तन

अदावत से तेरे प्यारे,
जरजर होवे तो मै जानू।
भला तुम जहर देके देखो असर होवै तो मै जानू ।।
वक्त्राणि पञ्च कुचयोः प्रतिबिम्बतानि
दृष्ट्वा दशाननसमागमनं भ्रमेण
भूयोऽपि शैलपरिवृत भयेन गाढ
मालिङ्गिता गिरिजया गिरिशा पुनान्तु ।।

माँ श्यामा का किञ्चिद्सत्ता स्फुरण साधक को उत्साहित करता है

एक नाजुक किरण छू गई इस तरह खुद व खुद प्राण के दीप जलने लगे ।
एक आवाज आई किसी ओर से हर मुसाफिर बिना पाव चलने लगे ।।

ये नूरे जहदो तायत है।
बिजली बन के गिरती है।
इसरी के काले बादल भी
रहमत की घटा बन जाते है।

आराध्या परमाः शक्तिः सर्वैरपि सुरासुरैः मातुः परतरं किंचिदधिकं भुवनत्रये
धिग् धिग् धिग् धिक् च तज्जन्म यो
न पूजयते शिवाम्
जननीं सर्वजगतः करूणारससागरम्

हे चिन्मयि। हे सदानन्दधन स्वरूपे माँ! हे निर्विशेष सविशेंष स्वरूपे माँ तुम्हीं हो श्रीकृष्ण प्राणेश्वरी रासेश्वरी नित्यनिकुञ्जेश्वरी राधारानी हो। माँ तुम्ही ब्रह्म महिषी साक्षात परब्रह्म विद्या रूपिणी हो तुम्ही प्रत्यक चैतन्य या ब्रह्मस्वरूपा भी हो। तुम्ही प्रत्येक चैतन्य या ब्रह्मस्वरूपा भी हो। माँ तुम्ही दशमहाविद्या तथा अनन्त उपविद्यास्वरूपा हो। निगमागमवन्दिते सर्वशास्त्र महातात्पर्य गोचरे भगवति आप सर्वातीत होती हुई र्स्वस्वरूपा हो सर्वस्त्रीस्वरूपा सर्वपुरूष स्वरूपा, जड़, चैतन्य चराचर स्वरूपा आप ही हो माँ साध्वी, असाध्वी, सती अ सती मां सब तुम्ही तो हो । मां तुम अच्छी तो हो! तुम केवल मेरे पापों के कारण ही दुः ख निदान प्रतीत होती हो माँ कुलटाए वेश्याएं क्या आपसे भिन्न है नही–नही माँ आपको पहचानने में भ्रम है माँ मैने किसी रूप में आप पर दोषारोपण किया हो तो भी अम्ब! क्षमा करो! मां तुम्हारे चरणारविन्द की नखमणि चन्द्रिका से हृदयान्धकार मिटता है तुम्हारे चरण पङ्कजपराग पापताप शान्त होता है माँ। विरूद्ध वली के अनुसार एक इस असफल निराश हताश अधम का भी उद्धार करो अपने अक में नही तो चरणों में बिठा लो। माँ दिशाए विदिशाएं शून्य और सन्तप्त प्रतीत हो रही है कहाँ जाँऊ क्या करूँ।

अनन्तकोटि ब्रह्माण्डात्मक प्रपञ्च की अधिष्ठान भूता सच्चिदानन्दरुप भगवती ही सम्पूर्ण रूप विश्व की सत्ता स्फूर्ति तथा सरसता प्रदान करती है विश्व प्रपञ्च उन्हीं में उत्पन्न होता है स्थित होता है लय होता है अन्त में उन्ही में विलीन होता है जैसे दर्पण में आकाशमण्डल सूर्य मण्डल नक्षत्र मण्डल भूधर सागरादि प्रपञ्च प्रतीत होता है दर्पण को स्पर्श करके देखा जाये तो वास्तव में कुछ भी नही उपलब्ध होता वैसे ही सदानन्द स्वरूप महाचित्ति भगवति में सम्पूर्ण विश्व भासित होता है जैसे दर्पण के बिना प्रतिबिम्ब का भास नही होता दर्पण के उपलम्भ में ही प्रतिबिम्ब का उपलम्भ होता है वैसे ही अखण्ड नित्य निर्विकार महाचित्ति में ही उसके अस्तित्व में ही प्रमाता प्रमेय प्रमाणादि विश्व उपलब्ध होता है भान न होने पर भाध्य के उपलम्भ की आशा ही नही की जा सकती

सम्पूर्ण प्रमेय में प्रमाण कवलित ही उपलब्ध होता है प्रमेय को विषय करने वाली अन्तः करण की वृत्ति प्रमाण कहलाती है। प्रमेय विषयक प्रमाण का आश्रय अन्तःकरण वछिन्न चैतन्य ही प्रमाता कहलाता

है। प्रमात्राश्रित प्रमेयाकार वृत्ति को ही प्रमाण कहा जाता है।

यद्यपि वह स्त्री पुमान् अथवा नपुंसक नही है सथूल, सूक्ष्म कारण त्रिशरीर रूप त्रिपुर के भीतर रहने वाली चिति ही त्रिपुर सुन्दरी है उसी मायाविशिष्ट तत्व के जैसे रामकृष्णादि अन्याय अवतार होते है। माया वा एषा नारसिंही सर्वमिदं सृजति सर्वमिदं रक्षति, सर्वमिदं सहंरति तस्मान्मायामेतां शक्ति विद्याद्य एतां मायां शक्ति वे स मृत्युजयति स पाप्मानं तरति, सोऽमृतत्वं गच्छति महती श्रियमश्नुते

"त्वं वैष्णवीशक्तिरनन्तवीर्य्या विश्वस्य बीजं
परमासि माया"
सर्वे वै देवा देवी मुपतस्थु कासि त्वं महादेवि
साब्रवीदहं ब्रह्मरुपिणी भत्तः प्रकृति
पुरुषात्मकं जगत"
"स्वात्मैव ललिता"

संसार निवृत्ति के लिए प्रपञ्चस्पुरणशून्य सर्व साक्षिणी आत्मरूपिणी पराशक्ति की ही आराधना करना चाहिए।

निर्गुणा सगुणा चेति द्विधा प्रोक्ता मनीषिभिः क्योंकि वेदान्त में माया को मिथ्या कहा गया है मिथ्या पदार्थ अधिष्ठान् में कल्पित होता है अधिष्ठान सत्ता से अतिरिक्त कल्पित की सत्ता नही हुआ करती माया में अधिष्ठान की ही सत्ता का प्रवेश रहता है अतः माया स्वरूपकी उपासना से भी सत्ता का प्रवेश रहता है अतः माया स्वरूप की उपासना से भी सत्ता स्परूप ब्रह्म की उपासना हो^गी क्योंकि ब्रह्म से पृथक होकर शक्ति नही रह सकती केवल ब्रह्म की उपासना हो नही सकती वैसे ही केवल माया की भी उपसना सम्भव नही हो सकती ।

जैसे अग्नि में होम करने पर भी अग्नि शक्ति में होम करने से अग्नि मे होंम समझा जाता है इसी तरह माया को भगवति समझा जा सकता है जो वाक्य माया को मिथ्या प्रतिपादन करता है उनमें तो केवल माया का ही ग्रहण होता है क्योंकि ब्रह्म का मिथ्यात्व नही है वह तो त्रिकालाबाध्य सत्स्वरूप अधिष्ठान है। उपास्य मायापदार्थान्तर्गत ब्रहमाशं मोक्षदशा में भी अनुस्यूत रहेगा अतः मुक्ति में उपास्य स्वरूप का त्याग भी नही होगा।

शक्त्याकार में अनुप्रविष्ट स्वयंप्रभा निर्विकल्पा सदाकार सदानन्दा संविद ही परा देवी है। भगवती विग्रह में भी भाषण दर्शन अनुकम्पादि व्यवहार देखा जाता है।

तमो वा इदमेकमग्र आसीत तत्परे तस्मातपरे जेरितं विषमत्वं

शिवेन सहितां देवीं भावयेदभुवनेश्वरीम् पात्र, मणि कृपाण दर्पणादि में शुद्धि के तारतम्य से प्रतिविम्बित प्रतिफलन में तारतम्य होता है

परतत्वप्रकाशस्तु रूद्रस्येव महत्तरः

यो न पूजयते नित्यं चण्डिकां भक्तव्त्सलाम् भस्मी
कृत्वास्य पुण्यानि निर्दहेत्तम पीश्वरी

ब्रह्मविषयक शुद्धसत्त्वान्तर्मुख वृत्ति पर प्रतिबिम्बित होकर वही अनादि ब्रह्म विद्या है शाक्त गममतानुयायियों की दृष्टि से अत्यन्त अर्न्तमुख होकर शक्तिशिवस्वरूप ही रहती है

'शक्त्यः र पावानाम् चिन्त्यज्ञानगोचरा''
प्रतिबन्धों मग्री तद्धेतुः प्रतिबन्धक :

यदि स्वरूपातिरिक्त शक्ति न माने तो प्रतिबन्ध असम्भव हो जायेगा।

असक्त अग्नि उत्पादक न होने से उस आश्रय भूत अग्नि से भी कार्योत्पत्ति नही कही जा सकती। अभाव की कारणता अस्वीकृत है। यदि अभाव को कारण माना जाय तो उसी स्फोटादि कार्यो की उत्पत्ति हो जायेगी फिर अतीन्द्रिय शक्ति की कल्पना से क्या लाभ ? एक शक्ति से दूसरी शक्ति का प्रतिबन्ध मानने से अनवस्था प्रसक्त प्राप्त होगा क्योंकि उसमें भी उक्त दूषण के परिहारार्थ शक्ति प्रतिबन्ध कहना पड़ेगा । शक्ति के बिना भी कार्य के अन्यथापि उत्पन्न हो जाने से अतीन्द्रिय शक्त की कल्पना का कोई अवकाश नही हैं

उपादानोपादेय भावरूपनियम की अनुपपत्ति भी शक्ति में प्रमाण नही कही जा सकती दुग्धादि जैसे दध्यादि का उपादान है न कि तिलादि एवञ्च तिलादी ही तैलादि का उपादान है न कि दुग्धादि ऐसा जो नियम है उसकी शक्ति को बिना स्वीकार किए आपत्ति न होने के करण शक्ति के कारण शक्ति मानना आवश्यक है क्योंकि शक्ति के बिना माने ही अनादिसिद्धि वृद्धव्यवहार से निर्णीत तत्कार्यानुकूल स्वभाव की विशेषता से ही उपादेनोपादाय नियम की सिद्धि हो जाती है यदि स्वभाव को नित्यात्मक न मान जाय तो शक्ति में भी नियम न रह सकेगा। यह शक्ति यहीं क्यों कि अन्यत्र क्यों नही इसका समाधान स्वभाव भेद के अतिरिक्त और क्या हो सकता है । अतः कहना होगा कि दोनों प्रकार की अर्थापत्तियों को उपर्युक्त रीति से शक्ति में प्रमाण नही कहा जा सकता। विमतं (अग्न्यादि) अजनकदशातो) जनक दशायामतिशयोगि कारकत्वात् कुण्ठकुठारवत् उपादि की साध्यव्यपकता होनी आवश्यक है

(व्रीहीन प्रोक्षति)

शक्तयः सर्वभावानामचिन्त्यज्ञान गोचराः
यतोऽतो ब्रह्मणास्तास्तु सर्गाद्या भावशक्त्यः
सर्वज्ञता तृप्तिरनादिबोधः स्वतन्त्रता नित्य
अचिन्त्य शक्तिश्च (अलुप्त शक्तिः)
विभोवर्विधिज्ञाः

षडाहुरङ्गानि महेश्वरस्य

स्वपक्ष साधकानुकूल प्रतिपक्ष दूषकः परमसिद्धि व्याप्ति से ही परपक्ष की अनिष्ट सिद्धि की जा सकती है। लोकप्रसिद्ध होने से सामग्रीवैकल्य को ही प्रतिबन्ध नही कहा जा सकता कोई भी लौकिक पुरुष भूमि वायु जल एवं तेज के संसर्ग से विरहित कोठी में भरे हुए बीजों को या तुरी वेमा कुर्विन्दि आदि से विरहित पेटी में रखे हुए तन्तुओं को प्रतिबद्ध नही समझता। सामग्री राहित्यमात्र को यदि प्रतिबन्ध कहा जाय तो समस्त कारणों की केवल प्रतिबन्ध में ही उपक्षीणता हो जाने से यह विशेशावधारण ही होने चाहिए अभाव को कारण न ही मानने पर कार्य के साथ अन्वय व्यतिरेक विरोध होगा यह कथन भी असगत होगा क्योंकि अन्वय व्यतिरेक कार्य प्रतिबन्ध का भाव के विषय होने से प्रतिबन्धका भाव अन्यथा सिद्ध है।

यदि कहे कि चक्षुरिन्द्रिय के न होने से वहाँ अन्ध को रूपाभाव का प्रत्यक्ष न होगा तो यह भी ठीक नही क्योंकि इन्द्रिय अभाव का ग्राहक है ही नही अतएव यह कहा जाय अन्ध को प्रतियोगी ग्राहक इन्द्रिय न होने से ही रूपाभाव की प्रतीति न होगी तथा च अभाव की एन्द्रियकत्व सिद्धि हो जाती है परन्तु यह ठीक नही फिर अभाव को असन्निहित मेरू आदि में घट एवं उसके रूपादि के अभाव की चाक्षुषता क्यों न होगी

मायान्तु प्रकृतिविद्यान्मयिन्तु महेश्वरम्
अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां वह्वी : प्रजा

सृजमाना सरूपाः

अजो ह्यको जुषमाणोऽनुशेते न जहात्येना भुक्तभोगा भजोऽन्यः

प्रकाशात्मक होने से सत्त्वगुण ही शुक्ल रङ्ग है रञ्जनात्मक होने से रजोगुण ही लोहित रङ्ग है

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्

मम् योनिर्महद ब्राह्म तस्मिन्गर्भ दधाम्यऽहम् सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ।।
सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः, तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता
दैवी ह्येषा गुणमयी मम् माया दुरत्यया
अविद्या को क्षर विद्या को अमृत कहा गया है।

क्षरन्त्वविद्यामृतं ऽ विद्याऽविद्ये ईशते यस्तु सोऽन्यः
सृष्टौ या परमा देवी प्रकृतिः सा प्रकीर्त्तिता

सर्व ब्रह्ममयं जगत
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं
नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमाया समावृतं

मै अर्थात अस्मत्पदलक्ष्य परब्रह्म योगमाया से आवृत है अहमज्ञः मामहं न जानमि त्वामहं न जानामि

यदि अज्ञान ज्ञानाभाव ही हो तब तो उसका अनुभव ही न बन सकेगा क्योंकि अभाव के ग्रहण की अपेक्षा न होगी जैसे घट व भूतल ज्ञान केबिन भूतल निष्ठ घटाभाव का ज्ञान नहीं हो सकेगा आत्मा व ज्ञानरूप अनुयोगी प्रतियोगी के ज्ञान के बिना ज्ञानाभाव का बोध न हो सकेगा।

यदि अनुयोगी प्रतियोगी का ज्ञान स्वीकार न किया जाये तो भी ज्ञानाभाव का ज्ञान नही हो सकता यदि स्वीकारकर लिया जाय तो भी ज्ञानाभाव का बोध नही हो सकता जैसे भूतल में एक भी घट होने पर घटाभाव नही कहा जा सकता वैसे भी एक ही ज्ञान रहे तो ज्ञानाभाव का अनुभव नही कहा जा सकता ज्ञानरूप से सर्ववस्तु साक्षिभास्य होती है यह निगमान्तविदो का सिद्धान्त है।

घटोज्ञातः यहाँ जैसे ज्ञान का विषय होकर साक्षी द्वारा घट भाषित होता है वैसे ही ''घटो न ज्ञायते'' यहाँ भी अज्ञान के विषयरूप से घट साक्षी रूप से भाषित होता है योगनिद्रा, जड़शक्ति अचित अज्ञान अविद्या माया प्रकृति इत्यादि शब्द ही अर्थ के बोधक है

''परास्य शक्तिविविधैव श्रूयते''

कल्पवृक्ष चिन्तामणि कामधेनु आदि से तत्त्व अभीष्ट पदार्थ की सृष्टि होने पर भी वे निर्विकार रहते है वैसे ही परमात्मा से भी विविध विश्व बनने पर भी परमेश्वर निर्विकार रहता है।

नासदासीन्नो सदासीत्तम एवासीत (न सत था न असत था किन्तु तम ही था

प्रभा में इदमंशग्रह्य होता है अदमंश ग्राहक होता है माना जाता है कि भीतर वर्तमान पदार्थों का ही वाह्य रूप में अवभास होता है।

वर्त्तमानावभासानां भावानामवभासनम्
अन्तः स्थितवातामेव घटते बहिरात्मा
आसीज्ज्ञानमयो ह्यर्थः एकमेवाविकल्पितः

रात्रि देवता दो हैं एक जीवन सम्बन्धिनी दूसरी ईश्वर सम्बन्धिनी ईश्वरी रात्रि वह है जिसमें ईश्वर का व्यवहार भी लुप्त होता है उसी को महाप्रलय कालस्वरूप कहा जाता है।

यद्यपि रात्रि द्वारा प्रकाशस्वरूपा उषा का निराकरण असम्भव मालूम पड़ता है तथापि यहाँ चिद्रूपा रात्रि ही परम प्रकाशरूप है। तदपेक्षया सन्ध्या या उषा अन्धकार रूप ही है जैसे सूर्य के प्रगट होने पर सन्ध्या जाती है वैसे ही चिच्छिक्ति के स्वीकार वृत्ति पर प्रतिबिम्बित होने पर अविद्या की आवरण शक्ति मिट जाती है। आवरण शक्ति के दग्ध बीज हो जाने पर प्रारब्ध क्षय के अनन्तर मूलाज्ञान तम् सर्वथा नष्ट हो जाता है।

त्वमसि परब्रह्म महिषी
चण्डभानुः चण्डवातः
चडि कोपे धातु से चण्ड शब्द की निष्पत्ति

''कस्य बिम्यति देवाश्च कृतरोषस्य संयुगे''
प्रसादो निष्फलो यस्य कोपोऽपि च निरर्थकः।
न तं मर्तार मिच्छन्ति षण्ढं पतिमिव प्रजाः।।

भीषास्माद्वातः पवते भीषोदेति सूर्यः
भीषा स्मादग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः (उपनिषद्)

महद्भयं बज्रमुद्यतम् (घोरान्याशिवन्या)
निर्धूतनिखिलध्वन्ते नित्यमुक्ते परात्परे
अखण्ड ब्रह्म विद्याये चित्सदानन्दरुपिणी

''क्ली'' इस काम बीज से परमानन्द स्वरुपा महाकाली विवक्षित है सर्वानुभव संवेद्य आनन्द ही परम पुरुषार्थ है ''आत्मनस्तु कामाय सर्वप्रिय भवति इस श्रुति से सिद्ध है सब कुछ आत्मा के लिए ही प्रिय है। मनुषानन्द से लेकर गन्धर्व देव गन्धर्व अजानजदेव श्रौतदेव इन्द्र बृहस्पति प्रजापति ब्रह्मान्त उत्तरोत्तर शतगुणित आनन्द जिसका बिन्दु मात्र है।

विपदादिरूप चमू को जो नष्ट करके आत्मरूप कर लेती है वही चामुण्डा ब्रह्मविद्या है।

उलूकादि दिन में अन्धे होते है रात्रि में नहीं कोकादि रात्रि में अन्धे होते है दिन में नहीं लता जल जन्तु दिन रात अन्धे ही होते है

यह सब ज्ञान सामान्य है इससे संसार के मूलभूत अज्ञान की निवृत्ति नही होती यही महामाया का प्रभाव है जिससे सर्वाधिष्ठान स्वप्रकाश परब्रह्म का बोध नही होता वही उपनिषद ज्ञाननिष्ठ वशिष्ठ भरत विश्वा मित्रादिको के भी चित्त को बलात मोहित कर लेती है।

विद्या रूपा होकर वही मुक्ति प्रदा है अविद्या रूप से ही वही संसार बन्ध का हेतु है वही भगवान शेष पर कल्पान्त में विराजमान थे उस समय कूर्मपृष्ठ पर जल में विलीन होने के कारण पृथ्वी नवनीत के समान कोमल हो गई सृष्टि काल में यह प्राणियों को किस तरह धारण कर सकेगी यह सोचकर भगवती ने विष्णु को अपनी योग निद्राशक्ति से प्रसुप्त करके अपने वामहस्त की कनिष्ठिका के नखाग्र भाग से कर्णमल निकाल कर उसी से मधु नामक दैत्य को बनाया उत्पन्न हाकर वे दोनो दैत्य पहले कीट के समान ही प्रतीत हुए पश्चात महाबलवान हो गए वरदान देकर देवी के अन्तर्हित होने पर विष्णु की नाभि से उत्पन्न कमल में उन दोनों ने ब्रह्मा को देखा उन्होंने कहा,

''हम तुम्हे मारेगे। अगर तुम जीना चाहते हो तो विष्णु को जगाओ।

यह सुनकर ब्रह्मा ने जगत्प्रसूयोगनिद्रा की अनेक स्तुतियो से प्रार्थना की ब्रह्मा ने भगवान का जागना दोनों असुरों को मोह होना माँगा माता ने विष्णु को जगा दिया विष्णु से उन दैत्यों का पाँच हजार वर्षो तक युद्ध हुआ।

महाप्रमत्त उन दैत्यों ने महामाया से मोहित होकर विष्णु से वर माँगने को कहा

विष्णु ने अपने जघन प्रदेश पर सिर रख कर उसे मार दिया उन्ही के मेद का विलेपन कर पृथ्वी का दृढ़ किया इसीलिए पृथ्वी को दृढ़ मेदिनी भी कहा जाता है।

यही योगनिन्द्रा होकर विष्णु को विश्रम देती है यही स्वाहा रूप से देवताओं को स्वधा रूप से पितरों को वषट्कार रूप से श्रौतदेवताओं को तृप्त करती है ।

ह्रस्व दीर्घ प्लुत में किवां अ, उ, म रूप में यही अक्षर रूपा भगवती विराजमान होती है विश्व तैजस प्राज्ञ आदि के रूपो में भी वही भगवती स्थित है वाच्य वाचक के अधिष्ठानरूप अर्द्धमात्रा स्वरूप से भी भगवती ही विराजमान है।

अकारश्च तथोकारो मकारश्चाक्षरत्रयम्,
एता एव त्रयो मात्रा सत्वराजसतामसोः
निर्गुणा योगिगम्याऽन्या चार्धमात्रात संस्थिता ।।

प्रथम मात्रा व्यक्त है द्वितीय मात्रा अव्यक्त है तृतीय मात्रा चिच्छक्ति है अर्द्धमात्रा परमपद है वही कूटस्थ सर्वाधिष्ठान है सर्वरूप से भगवती ही विराजमान है सन्ध्या, सावित्री तथा जगज्जननी मूल प्रकृतिरूप से ही माता की ही स्थिति है।

वही महाविद्या अर्थात् तत्त्वमस्यादि महावाक्यों से व्यक्त ब्रह्मविद्यारूपा है वही देहात्मबुद्धिरूपा माया भी है। वही ग्राम्यसुख भोगैषणारूप महामोह भी वही है।

सत्त्वादि गुणत्रय विभाविनी मूल प्रकृति वही कालरात्रि मरणरात्रि या शिवरात्री रूपा है। वही महारात्रि वही प्रलयरात्रि रूपा है। मोहरात्रि ही भगवती है। कृष्णजन्माष्टमी को अवतीर्ण होकर भगवती ही कसादि को मोहित करके कृष्ण को नन्दग्रह पहुँचाने में सहायक हुई है।

परा पश्यन्ती मध्यमा वैखरी के मध्य में परावाक् स्वरूपा वही है।

यच्च किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं कि स्तूयसे तदा।।

जो परमेश्वर महाशक्ति द्वारा ही जगत का उत्पादन पालन संहरण करता है जब स्वयं ही भगवती की योगनिद्रा के वश होते है फिर कौन भगवती के गुणों का वर्णन कर सकता है।

अनन्तानन्त शक्तियों से सम्पन्न आनन्द प्रधाना भगवती महाकाली रूप से सप्तसती के प्रथम चरित्र में वर्णित है

किसी समय वही महालक्ष्मी के रूप में प्रकट होती है असुरो के राजा महिषासुर और देवताओं का इन्द्र था महिषासुर और देवताओं का इन्द्र था महिषासुर सब देवताओं को जीतकर स्वयं इन्द्र हो गया देवता लोग पराजित होकर ब्रह्मा को लेकर शिव और विष्णु को पास गए और विस्तार से महिषासुर की विजय और देवताओं की पराजय बतलाई देवताओं की बात सुनकर मधुसूदन और शंकर ने कोप किया उनके मुख से एक महा तेज प्रगट हुआ ब्रह्मा के भी मुख से वैसा ही तेज निकला इन्द्र वरुणादि देवताओं के भी देह दिव्य तेज प्रगट हुआ वही अतुल तेज एकत्रित होकर एक स्त्री के रूप में परिणत हो गया।

माँ प्रसन्न होकर सिंहनाद करने लगी उसके घोर नाद से सम्पूर्ण नभ पूर्ण हो गया उसकी प्रतिध्वनि से सब लोग क्षुब्ध हो गये समुद्र कॉप उठे।

अपने किरीट से नमोमण्डल को खञ्चित करती हुई धनुष के टंकार से पाताल तक को क्षुब्ध करने वाली सहस्त्रों भुजाओं से दिशाओं को व्याप्त करके देवी स्थित है।

भयानक संग्राम हुआ गिरे हुए हस्ति अश्व रथ एवं असुरो से वही भूमि अगम्य हो गई। विष्णु के हृदय में महालक्ष्मी रूप से शशि मौलि के यहाँ गौरी रूप से आप ही प्रतिष्ठित है।

पर्वती के शरीर कोश निकली हुई अम्बिका लोक में कौशिकी नाम से प्रसिद्ध हुई कौशिकी के निकलने पर पार्वती कृष्ण वर्ण हो गई तभी से वह कालिका कहलाने लगी।

यो मां जयति सग्रामे यो मे दर्प व्यपोहति
यो में प्रतिबलो लोके मे भर्त्ता भविष्यति

उसने असुरों के बल सैन्य को भक्षण करना आरम्भ किया उसने बड़े-बड़े गज तुरङ्ग रथ योद्धाओं को मुँह में डालकर चबाना आरम्भ किया सर्वनाश होते देखकर चण्ड आया अनेक चक्रों से काली को आच्छादित कर दिया । देवी के मुँह में वे चक लीन हो गए। चण्ड मुण्ड दोनों को लेकर काली ने आकर कौशिकी को दे दिया कौशिकी ने चण्डमुण्ड का सिर लाने पर काली को चामुण्डा नाम दिया।

रक्तबीज गदा लेकर इन्द्रशक्ति से युद्ध करने लगा उससे महाभयकर संग्राम हुआ असंख्य रक्तबीज संसार में व्याप्त हो गया देवी ने अपनी जिह्वा भूमि पर फैला दी सब रक्त पान करने लगी अन्त में सब दैत्य क्षीणरक्त होकर मर गया।

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीय का ममापरा।

स्पष्टोच्चरित वाक् बैखरी है स्मृतिगोचर वाक मध्यमा है अर्थ की द्योतिका पथ्यन्ती है ब्रह्म ही परा वाक् है। आपके आश्रित दूसरो के आश्रय होते है।

मायारूप लक्ष्य है ब्रह्मरूप अलक्ष्य है मायाशबल ब्रह्मरूपा भगवती ही त्रिगुणा परमेश्वरी है जैसे घटादि कार्य में कारणभूत मृत्तिका व्याप्त है वैसे ही सम्पूर्ण विश्व में वह व्याप्त है हर एक पदार्थ में अस्ति, भाति प्रिय यह तीन ब्रह्म के और नाम रूप यह दो माया के रूप है।

नागलिङ्ग योनि धारण से यह सूचित किया गया है प्रकृति पुरुष और काल तीनों का अधिष्ठान परब्रह्म रूपा मै ही है।

ह्रीं बीज का अभिप्राय भी यही है।
अव्यक्तं पुरुबे ब्रह्मान् निर्गुर्णे सम्प्रलीयते

विभाग कौन प्राप्त हुआ यह बिन्दु ही अव्यक्त कहलाता है

बीज और अंकुर के बीच की उच्छूनावस्था को ही जिसमें बीज धरणि अनिल जल के सम्पर्क से क्लिन्न होकर कुछ फूलता है अव्यक्तावस्था समझना चाहिए निद्रावस्था का प्रबोधोन्मुख होना अव्यक्तावस्था है विकल्प विशेष रहित प्रबोध महतत्त्व अन्तत्व है अर्न्तमुख अव्यक्त की तुरीय संज्ञा है।

ब्रह्मादिमोहिका होने से महामाया उन सबका संख्यान और संहार करने से महाकाली सर्वविध भक्षण की इच्छावाली होने से तृष्णा योग की अधिष्ठात्री होने से तृष्णा योग की अधिष्ठात्री होने से एक वीरा महापराक्रमवती होने से तृष्णा योग की ओर्धष्ठात्री होने से एक वीरा नाम है।

ब्रह्म दृष्टि से चैतन्यरूपा सरस्वती सत्ता रूपालक्ष्मी आनन्दरूपा काली है अतः चैतन्य का अभिव्यञ्जक सत्त्व सत्ताव्यञ्जक रज आनन्द व्यंञ्जक तम है।

जैसे तामसी प्रकृति जगत का उपादान है फिर भी उसके भीतर राजस और सात्विक अन्तः करण आदि होते है। तमोलेशानुबुद्ध सत्त्वप्रधाना अविद्या में भी तमोरज आदि के तारतम्य से उत्कर्षोत्कर्ष होता है।

उपनिषदों में प्रकृति को लोहित शुक्ल कृष्ण कहा गया है उसमें रजः सत्त्व और तम यह तीन गुण है किसी भी कार्य का सम्पादना करने के लिए हलचल प्रकाश और अवष्टम्भ अर्थात् इन तीनों की अपेक्षा हुआ करती है।

त्रिगुणा तामसी महाकाली है वही हरि की योगनिद्रा है उसकी विष्णु को जगाने के लिए ब्रह्मा ने स्तुति की वह दशमुख दशभुज दशचरण और तैतीस विशाल नेत्रोवाली है शत्रुओं को उसका रूप बड़ा ही भयावना लगता है खड्ग बाण गदा शूल चक्र पाश भुशुण्डि परिघ कामुक और सद्यकृत शिर उसके हाथ मे है। इसकी विधिपूर्वक पूजा करने से साधक चराचर विश्व को स्वधीन कर लेता है। जो देवी सर्वदेव शरीरों से उत्पन्न हुई वह महालक्ष्मी है यद्यपि वह सहस्त्र भुज तथा अनन्त भुजवाली है साधक अष्टादशभुजा रूप से उसके पूजते हैं उसका मुह शिव समुद्रभूत तेज से बना है अतः श्वेत है। भुजा विष्णु के अंश से हुई है अतः वह नील है। स्तनमण्डल सौम्यांश से बने है अतः सुश्वेत है। कटि इन्द्रांश से हुई है अतः रक्त है। चरण ब्रह्मांश जन्य होने से रक्त जङ्घा उरू वरूणांश जन्य है अतः नील है।

महाकाली

महाकाली प्रलयकाल से सम्बद्ध रहती है अतएव वह कृष्णवर्ण की है वह शव पर इसलिए आरूढ़ है कि शक्तिविहीन मृत विश्व के उपर विराजमान है शत्रुसंहारक की शक्ति भयावह होती है इसलिए कालीमूर्ति भयावह है। शत्रुसंहार के बाद योद्धा का अट्टहास भीषणता के लिए होता है इसलिए महाकाली हँसती रहती है निर्बल के आक्रमण को विफल कर उसकी दुर्बलता पर हसा जाता है।

पूर्णवस्तु को चतुस्त्र कहा जाता है। पूर्णतत्त्व चार भुजा से प्रकट हुआ करता है। इसलिस माँ काली की चार भुजाएँ हैं। उसका आक्रमण आश्रयण करने वाले पर निर्भय होते है सांसारिक सुख क्षण भंगुर परमसुख भगवती है। जीवित विश्व का एवं मृत विश्व का भी आधार है मृतप्राणियों का एकमात्र सहारा है यही द्योतन करने के लिए देवी ने मुण्डमाला पहनी है।

अतस्त्वाभाराध्यां हरिहर विरञ्चिदिभिरपि
प्रणन्तु स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति

तारा की पूजा का रहस्य बुद्ध ही जानते थे तारा ही द्वितीया रूप से प्रसिद्ध है सुतारा रूप से वही जैनों में भी पूज्य है अक्षोभ्य ही वहाँ अवलोकितेश्वर रूप से प्रसिद्ध है।

क्षोभादिरहितो यस्मात पीतं हालाहलं विषम्
अतएव महेशानि अक्षोम्यः परिकीर्त्तितः
तेन सर्ध महामाया तारिणी रमते सदा

अनन्या राघवेणाहं भास्करेण यथा प्रभा चारों दिशाओं एवं उर्ध्वदिशा के अभिमुख होने से उन्हे पञ्चवक्त्र कहते हैं। तत्त्वपुरुष सद्योपजात वामदेव अघोर ईशान यही इनके प्रसिद्ध नाम है

सोमात्मक अमृत से विश्व का आप्यायन होता है इसीलिए भगवती ने अपने किरीट में चन्द्रमा को स्थान दे रखा है। शासनशक्ति का सूचक अकुशपाश आदि से है।

जब ह्रास की मात्रा विकास या आगम की मात्रा अधिक हो तभी भुवनेश्वरी का प्राकट्य होता है जब निर्गम अधिक और आगम कम हो जाता है तब छिन्नमस्ता का प्राधान्य होता है। क्षीयमान विश्व का अधिष्ठाता दक्षिणामूर्ति काल भैरव है उसकी शक्ति भैरवी है।

जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रुं-परिपीऽयन्तीम्
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्या द्विभुजां नमामि।।

मतङ्ग शिव का नाम उसकी शक्ति मातङ्गी स्वात्मा ही विश्वात्मिका ललिता है विमर्श रक्तवर्ण है उपाधिशून्य स्वात्मा महावामेश्वर है।

नामरूपात्मक जगत में सच्चिदानन्द की भावना ही अम्बा को पाद्यसर्म्पण है। भावनाओं में ब्रह्मभावना ही आचमन है सर्वत्र सत्वादिगुणों में चिदानन्दभावना ही स्नान है चिद्रूपा कामेश्वरी में वृत्त्यविषयता का चिन्तन करना ही प्रोच्छन है निरञ्जनत्व, अजरत्व अशोकत्व अमृतत्व आदि की भावना ही विविध आभूषणों का अर्पण है। स्वशरीरभावना पार्थिवप्रपञ्च में चिन्मात्रभावना धूपसमर्पण है तेज में चिन्मात्रभावना

धूपसमर्पण है तेज में चिन्मात्रभावना दीप समर्पण है अमृततत्त्वभावना नैवेद्यार्पण है । विश्व मे सच्चिदानन्दभावना ही ताम्बूल समर्पण है। वाणियों का ब्रह्म में उपसंहार ही स्तुति है वृत्तिविषय के जड़त्व का निराकरण ही आरार्तिक्य है। वृत्तियों का ब्रह्म में लय करना ही प्रणाम है।

अनन्तानन्तकार्योत्पादनानुकूल शक्ति से सम्पन्न ही परमेश्वर होता है न्यूनशक्ति सम्पन्न ईश्वर होता है।

महिमानं यदुत्कीर्त्त्य तव संहिन्यते वचः
श्रमेण तद्शक्त्या वा न गुणानामियत्तया

अधिष्ठानभूत शुद्ध बोधस्वरूप प्रकाश ही शिवतत्त्व समझा जाता है।

उस प्रकाश में जो विमर्श है वही शक्ति प्रकाश के साथ विचारात्मक शक्ति का अस्तित्व अनिवार्य है। विना प्रकाश के विमर्श नही विना विमर्श के प्रकाश भी नही रहता जहाँ तक महावाक्य जन्य परब्रह्माकार वृत्ति के उत्पन्न हो जाने पर भी स्वयं अज्ञान के मिट जाने पर स्वयं वृत्ति रूप विमर्श बना रहता है। वेन्दान्ती इस वृत्ति को स्वपरविनाशक मानते है शाक्ताद्वैती कहते है। अपने आप में ही नाश्य नाशक भाव सम्भव नही उस वृत्ति के नाश के लिए दूसरी वृत्ति की उत्पत्ति मानेगे तब तो उसके भी नाश के लिए अन्यवृत्ति माननी पड़ेगी फिर अनवस्था की प्रसक्ति होगी। अविद्या स्वयं नष्ट होने वाली है। अतः उससे भी वृत्तिरूपा विद्या का नाश नही कहा जा सकता।

विरोध न होने के कारण विद्याविद्या का सुन्दोसुन्दोपन्याय से भी परस्पर नाश्यनाशक भाव नही कहा जा सकता जैसे कनकरज जल के भीतर भी मिट्टी को नष्ट करके स्वयं नष्ट हो जाता है वैसे विद्यारूपा वृत्ति स्वातिरिक्त अविद्या तत्कार्य को नष्ट करके स्वयं भी नष्ट हो जाती है इसलिए वृत्ति रूपा विद्या से संश्लिष्ट होकर अनन्तप्रकाशस्वरूप शिव सदा विराजमान रहता है

यदि ध्वसंस्वरूप निवृत्ति मानी जाय तो भी अपने कारण में उसकी स्थिति माननी पड़ेगी घटादि का ध्वसं होने पर भी अपने कारण कपाल चूर्ण आदि कहीं न कहीं किसी रूप में उनकी स्थिति माननी ही पड़ती है। यही स्थिति लयरूपा निवृत्ति की भी है। यदि निवृत्ति को सदा सर्वदा निः स्वरूप कहें तो उसके लिए प्रयत्न नही कहा जा सकता

पञ्चम प्रकारा अविद्या निवृत्ति मानी है तथा उस रूप से भी विमर्शरूपा शक्ति का अस्तित्व रहता ही है।

श्वेतबिन्दु पुंस्त्व का रक्त बिन्दु स्त्रीत्व का परिचायक है तीनों मिलते है काम कला की उत्पत्ति होता है।

यह त्रिपुरसुंदरी अहं से व्याप्त है।

शिवसंश्लिष्ट शक्ति विश्व का बीजी है अहं प्रकाश शिव निश्चेष्ट शक्ति सक्रिय रहती है यही काली की विपरीत रति है विमर्शाशक्ति जब शिव में लीन रहती है तब उन्मनावस्था होती है उसके समान होने पर समनावस्था होती है।

व्यवहार में शक्तिमान से शक्ति का आदर अधिक है बुद्धि बिना बुद्धिमान का बल बिना बलवान का शिल्प शक्ति बिना शिल्पी का कुछ भी मूल्य नही रहत

शक्ताद्वैतदृष्टि से शक्ति शिव स्वरूप ही है।

रूद्रहीनं विष्णुहीनं न वदन्ति जनाः किलः ।
शक्तिहीनं यथा सर्वे प्रवदन्ति नराधमम् ।।

सोमधारा क्षरेद या तु ब्रह्मरन्धाद वरानन
पीत्वानन्दमयस्तां यः स एव मद्यसाधकः

हे वरानने! ब्रहमरन्ध्र अर्थात सहस्त्रार से जो अमृत की धारा निकलती है उसका पान करते जो आनन्दित होते है उन्हे ही मद्यसाधक कहते हैं। योगिराज इस मद्य अथवा कारणवारि का पान करके हमेशा भगवत नशे में मस्त रहा करते थे।

सात्विक मात्रा से द्वितीय मकार मांस भक्षण किसे कहते है इसके बारे में शास्त्र का कथन है।

मा शब्दाद्रसना ज्ञेया तदेषान रसना प्रिय
सदा यो भक्षयेदेति स एव मांस साधकः

मा शब्द से रसना और रसना और रसना का अंश है वाक्य यह रसना के लिए प्रिय है जो व्यक्ति रसना का भक्षण करते है वाक्य संयम का पालन करते है उन्हे मांस साधक कहते है गुरू के उपदेश के अनुसार तालु के मूल में जीभ के प्रवेश कराने की बात नही की जा सकती इस अवस्था में अधिक प्राण कर्म करने की इच्छा के न रहने पर बात कौन करे इसलिए जिहवा के संयम से वाक्य का संयम होता है और जिहवा के कर्मी साधक को मांस साधक कहते है।

तृतीय पंचमकार मत्स्य किसे कहते है ?

गंगा यमुनयोर्मध्ये मत्स्यौ द्वौ चरतः सदा
तौ मत्सयौ भक्षयेद यस्तु स भवेन्मत्स्य साधकः

गंगा और यमुना इन दो नदियों के बीच दो मत्स्य हमेशा विचरण करते रहते है। जो साधक उस मत्स्य का भक्षण करते है वे ही मत्स्य साधक है अर्थात् गंगा इड़ा यमुना पिंगला–इन दो नाड़ियो को भीतर जो श्वांस प्रश्वास गतिशील है वही मत्स्य है जो योगी प्राण कर्म के द्वारा प्राण को स्थिर करके श्वास प्रश्वास रूप दोनों मत्स्य का भक्षण करते अर्थात् उन्हे स्थिर कर लेते वे ही मत्स्य साधक है।

मुद्रा किसे कहते है ?

सहस्त्रारे महापदमें कर्णिका मुद्रिता चरेत
आत्मा तत्रैव देवेशि केवलं पारदोपमम्
सूर्यकोटि प्रतीकाशं चन्द्रकोटि सुशीलतम्
अतीव कमनीयंच महाकुण्डलिनीयुतम्
यस्य ज्ञानोदयस्तत्र मुद्रासाधक उच्यते

सहस्त्रदल महापदम् में कर्णिका के भीतर पारे की तरह स्वस्थ्य स्वच्छ निर्मल करोड़ों सूर्य एवं चन्द्रकी आमा से भी अधिक प्रकाशमान ज्योर्तिमय सुशीतल अत्यन्त कमनीय महाकुण्डलिनी से संयुक्त जो आत्मा वर्तमान है उसे जिन्होंने जिन योगियों ने आत्मकर्म के द्वारा इसप्रकार परमात्मा का प्रत्यक्ष दर्शन किया है। उन्हे मुद्रा साधक कहते है।

मैथुन किसे कहते है ?

मैथुनं परमं तत्वं सृष्टि स्थित्यन्त कारणम्
मैथुनाज्जायते सिद्धि ब्रह्मज्ञानं सुदुर्लमम्
रेफस्तु कंकुमाभासः कुण्डमध्ये व्यवस्थितम्
मकारश्च बिन्दुरूपो महायोनौ स्थितः प्रिये
आकार हंस मारूध्य एकताच यदा भवेत
तदा जातं महानन्द ब्रह्मज्ञानं सुदुर्लमम्
आत्मनि रमते यस्मादात्मारामस्त दो च्यते

अतएव रामनाम तारकं ब्रह्म निश्चितम्
मृत्युकाले महेशानि स्मरे द्रामाक्षरद्वयम्
सर्वकर्माण संत्यज्य स्वयं ब्रह्मामयो भवेद
इवन्तु मैथुनं तत्वं तव स्नेहात् प्रकाशितम्
आवहन सीताकार नैवेद्यमुपलेपनम्
जपनम रमणं प्रोक्तं रेतपातश्च दक्षिणा
सर्वथ त्वया गोप्यं मम् प्राणाधिक प्रिये।

मैथुनं परमं तत्वं तत्वं ज्ञानस्य कारणम्।
सर्वपूजा मयं तत्वं जपदीना फलप्रदम् ।।
षड्ङग पूजयेद्देवि सवमन्त्र प्रसीदति
आलिनं भवेन्यास चुम्बनं ध्यानमीरितम्

मैथुन तत्व सृष्टि स्थिति प्रलय का कारण है मैथुन द्वारा सिद्धि इच्छा रहित अवस्था सुदुर्लभ ज्ञान की प्राप्ति होती है नामिचक्र में स्थित कुण्ड के भीतर कङ्कु माभास आरक्त 'र' कार तेजस तत्व के साथ आकार रूप हंस अजपा रूप श्वास प्रश्वास के द्वारा प्राणकर्म के द्वारा जब आज्ञा चक्र स्थित महायोनि तथा ब्रह्मयोनि के भीतर बिन्दुस्वरूप 'म' कार का मिलन होता है। उर्ध्व में इस प्रकार की स्थिति होने पर स्थिरावस्था का उदय होता है इस अवस्था में रमण करने का नाम ही राम है यही प्रकृत राम नाम है इसका वर्णन मुह से नही किया जा सकता मैथुन साधक इस प्रकार हमेशा आत्मा में रमण करने का नाम (राम) है।

यही प्रकृति राम नाम है राम ही निश्चित रूप से तारक ब्रह्म है। हे महेशानि मृत्युकाल में यह रत रहता उचित है इसी ओर लक्ष्य करके (ओंकार आत्मा राम ओहि राम हय)।' यह आत्मा तत्व स्वरूप मैथुन तत्व ही परम तत्व है समस्त ज्ञान का कारण स्वरूप है हर प्रकार की पूजा और जप आदि का फल प्रदान करता है।

गुरू के उपदेश द्वारा इस प्रकार षड्ङग योग क्रिया द्वारा सभी मन्त्र प्रसन्न अर्थात् चेतना प्राप्त करते है न्यास अर्थात् अर्न्तमुखी प्राणायाम करके बाहर का वायु बाहर भीतर का वायु भीतर इस प्रकार को हृदय में धारण करने का नाम आलिंगन है स्थिति पद है में निशेष रूप से अथवा पूर्ण मग्न होने का नाम चुम्बन है इस प्रकार ध्यानावस्था 1728 अन्तर्मुखी उत्तम प्राणायाम द्वारा हुआ करती है 'कंवल' रूप इस कुम्भक की स्थिति में आवाहन होता है वही सीत्कार होता है जीभ के उपर की ओर बैठकर इस प्रकार साधना करते करते जिस अमृत का क्षरण होता है वही नैवेद्य है अजपा रूप जप क्रिया अर्थात् आत्मक्रिया ही रमण है रमण करते करते श्वेत वर्ण रेत पात होता है वही तृप्ति का आनन्दरूप का उदय होता है वही दक्षिणा है ब्रह्मानन्द की प्राप्ति की अवस्था है इस सात्विक मैथुन तत्व पंचमकार की साधना को महादेव ने पार्वती को बतला कर हर प्रकार से गोपन राखने को कहा।

कालिकोल्लास–7

कार्य जनन की सामर्थ्य को शक्ति कहते है।

कार्यजनन सामर्थ्यमिति शक्तिः (नागेश)
शिवस्यात्म स्वरुपेति शक्तिः
शिव की आत्मा शक्ति है। (रामाश्रय)
"आत्मा तु राधिका प्रोक्ता"
"स्वात्मैव ललिता"

उल्लास पूर्वक गमन करने वाली है।

हे माँ आप परब्रह्मस्परुप से ही सिद्ध है।
हे सरसिजाक्षी पद्मदलायताक्षी माँ,
अजातपक्षा इव मातरं खगाः
स्तन्यं यथा वत्सतरा क्षुधार्त्ताः।
प्रियं प्रियेव व्युषितं विषण्णा
मनोऽरविन्दाक्ष दिदृक्षते त्वाम्।।

जैसे पंख रहित पतंग शावक अपनी माँ को पाने के लिए व्याकुल रहते है। जैसे क्षुधार्थ वत्स माँ का दूध चाहते है। किवां परदेश गये प्रियतम से मिलने के लिए प्रेयसी जिस प्रकार विह्वल होती है हे नीलकमल साम्राज्ञी तुम्हारे संदर्शन के लिए मेरा मन वैसे ही उत्कण्ठित होता है।

श्री माँ काली का सिद्धलक्ष्मी रुप

श्वेतां श्वेतशवारुढा नृमुण्डकृतकुण्डलाम्।
पचवक्तां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रात्रिलोचन।
सिद्ध लक्ष्मी का रुप है।

धवलरुपा श्वेत (अश्व पर आरुद) (श्वेताश्वतर्–सार सर्वस्व) नृ कुण्डल से समलड़्कृतः पञ्च व (सद्योजात, ईशान, अघोर,ततपुरुष वामदेव) महारौद्री प्रत्येक मुख में तीन तीन लोचन वाली सिद्ध ल का स्वरुप है महद्ऐश्वर्य रुपा सिद्ध लक्ष्मी मा महाकाली को कहते है

माँ मेरे दारिद्र का दहन करो, मुझ शिशु की क्रन्दन पर दौडती माँ सारी कला क्रन्दन में है बालक का

करुणा कल्लोलमयी काली

अथातो काली जिज्ञासा
कर्त्तव्या कामादित्यक्त्व
जात्युनुच्छेदन सर्वं सर्वात्मकम् (योगियो)

प्रत्येक वस्तु के अन्य जाति वस्तु के साथ तादात्मय रहता है अंश में सर्वांश और सर्वांश में अंश है

मङ्गलाचरण में काली सर्वदेवात्मक होने से प्रगल्भा जयन्ती मङ्गला का अनुस्मरण विघ्नव्यूहोत्सारण समर्था काली ही है।

ब्रह्म विष्णुः शिवा गौरी लक्ष्मीगणपति रविः।
पूजिता सकलादेवा यः काली पूजयेतं सदा।।

आदिम महामेघ रुपा आद्या काली। (बृहदनारदीयपुराणे)

काली पादप्रसादेन समवेल्लोकपालकः।। (निर्वाणतंन्त्रे)

शाक्ता एव द्विजाः सर्वे न शैवा न च वैष्णवा।
उपासन्ते यतो देवी गायत्री परमाक्षरी।। (निवार्ण तन्त्रे)

सा कालिकाऽहं निजबोधरुपा

सन्देहात् पामरोयाति रौरवं पितृभिःसह (निवार्ण तन्त्रे)

न चक्राङ्का न पद्माङ्का न ब्रजाङ्का यतः प्रजा।
लिङ्गङ्का च भगाङ्का तस्माद माहेश्वरी प्रजा।।

चक्र पद्म बज्र विष्णु ब्रह्म इन्द्र का चिन्ह नही
लिङ्ग और भग अतेव सृष्टि माहेश्वरी है।

महाकालीमहारुद्रश्चणकाकाररुपकः। (निर्वाण तन्त्रे)

चलच्चिते वसेच्छक्तिः स्थिरचित्ते वसेच्छिवः (निर्वाण तंन्त्रे)

ऐ क्रोद्धज्वाला भासुरुपिणी हे क्रोधाधिप

भुवनेश्वरीं बिना ईशः किञ्चित कर्तुं न शक्यते (निवार्ण तंन्त्रे)

कण्ठसंयुक्तमुण्डालि महाकाली नमोऽस्तुते

क्लौं काली क्लौं काली क्लौं काली वरप्रदा।
क्लौंकाली क्लौंकाली क्लौं काली केवला।। (शाक्त प्रमोद)

'देवता मुनिभिः प्रोक्ता महाकाली पुरातनी'

अपरिछिन्नानन्ततेजोराशिमयी
श्यामलमहोयप्रकाशपुञ्जिका
अनन्त कोटि योगिनी वृन्दसमाराधिता
नित्यनिरवधिकातिशयानन्दमयात्मसम्रा
ज्य सम्पदामिमानशालिनी कालिका

शक्तिज्ञानं बिना देवी मुक्तिर्हास्याय कल्पते

एकांशेन भवेद् ब्रह्म एकांशेन जनार्दन।
एकांशेन भवेद् शम्भुः कालिकायाः सुलोचन।।

इच्छा तु विष्णवे दत्ता क्रियाशक्तिस्तु ब्रह्मणे।
मह्यं दत्त्वा ज्ञानशक्तिः सर्वशक्तिस्वरुपिणी।। (योगिनी तंत्र)

काली दिगम्बरी देवी जगन्मोहनकारिणी (योगिनी तंत्र)

त्वं वैः अहम् अहं वै त्वम् (ऐंतरेयोपनिषद)

त्वं वै भगवेदेवते अहमास्मि
अहं वै भगवेदेवते त्वमसि

व्यतिहार निर्देश के द्वारा

कालकामिनी निज भक्तान्र्तगत और भक्त निज आराध्य सारसर्वस्व के अन्तर्गत सरोवर में संम्प्लुतोयक अधि प्रमोदार्णव में।

दक्षिणास्यां दिशि स्थाने संस्थितश्च रवेः सुतः

काली नाम्ना पलायेत भीतियुक्तः समन्ततः
ततः सा दक्षिणानाम्ना त्रिषु लोकेषु गीयते।।

पुरुषो दक्षिणः प्रोक्तो
वामा शक्तिर्निगद्यते

ककारं धर्मदं देवि ईकार चार्थदायकम्
रकारं कामदं कान्ते मकारं मोक्षदायकम् (तोऽलतन्त्रे)

सर्वविघ्नहरं देवि ककारं तोयरुपकम् ।
सर्वपापाहारं रेफं तस्माद बहिर्न चान्यथा।।

ककारं ब्रह्मरुपं च मकारं विष्णुरुपकम् ।
रेफः संहाररुपत्वाच्छिवरुपो न चान्यथा।। (डामर तन्त्रे)

ऐ ताम्रोष्ठी

कालकान्ता की उपास्यरुपता आत्मरुपता
और सर्वरुपता के अवगम से कृतार्थता सुनिशिचित है

अत्ता चराचर गहणात् (ब्रह्म सूत्र) आत्मा
चर अचर समग्र विश्व का भोक्ता
भक्षयिता आत्मिका शक्ति ही है
कलयति भक्षयति

अशेष तत्वकवलिनी ही अत्ता पद वाच्या है

हे कोटिमार्तण्डविग्रहा

कामबीजे ककारलकारयो र्योगः
क्रीं किंवा क्लीं कामबीजम्
ककाररुपकल्याणी सर्वार्थप्रापकम्
क्लीमोङ्कर च एकत्वं पठ्यते ब्रह्म वादिभिः (कृष्णोपनिषद)

ऐं इति वाग्भवबीजम्
सर्वार्थावद्योतकम्

कः प्रजापति
मुखे सूर्योऽपि कः स्मृतः
हृद्यन्तर्ज्योति नीलज्ज्योति

घूम्र भैरव्यः ई

रति–ई कार कामः ककारः
इन्द्र–लकार वह्नि–र
वर्गाद्यः–क क्रोधीश–क
ब्रह्मा–क

तपस्वी चित्त तल्पस्था
चित्ताम्बुज पर
संसरुढ चिति

दो चित्त वृत्ति य अधिकतत् तद्चित्त वृत्ति या अधिक तत् तदचित्त वृत्ति अन्तर्गत अनुस्यूत सविदानन्द विवर्धनी चिति

इन्देलोचने लः स्यात्
इत्येकाक्षरनिघण्टु
लोचनवाचित्वाल्लकारस्व
ज्ञानमर्थः
अनुस्वार–चन्द्र बिन्दु
या तु बिन्दुमयी रेखा सैवाद्याशक्ति–रीरिता
बिन्दुमयी रेखा ही आद्याशक्ति है ।

शब्दार्थ प्रकाशक वेदादिशास्त्राध्ययननस्मरण प्रयोजनक बुद्धिव्यापनलहरी युक्ताया

स्वप्रकाश संविदा अनिष्ट निवारण भोग भोग्या दिप्राप्त्याधिक्य कीर्तिजाल प्रयोगकगुणसन्तति रचयित्री सर्वतत्त्व सर्वकलाधिष्ठात्री विश्वोत्पत्तिस्थितिसंहृतिजनक सर्वैर्योपेतनिरतिशयानन्दानुभव प्रकाशिका निरतिशयानान्दात्मक दहराकाश स्यपरमात्मा स्वरूपपिणी स्वप्रकाशा चिच्छक्तिः (श्री करपात्र भाष्य)

नमः सर्वस्वरूपिण्यै जगद्धत्र्यै नमो नमः
आद्यायै कालिकायै ते कर्त्र्यै हर्त्र्यै नमो नमः

क्र–कन्यते प्रकाश्यते अनेन इति कं
प्रकाशकत्वं ककारस्यार्थः

ईयते अधीयतेऽने नेति ऐ बुद्धि
अ + ई – ऐ
अध्ययनकरणं बुद्धि
ई–ईयते व्याप्नोति इति ई
प्रकाश विमर्श सामरस्यतादात्म यापन्न ब्रह्मैवार्थ बोध्यः
कलयति गणयति सा काली
काम्यन्ते स्रकचन्दन वनितादिविषय भोगा अनेनेति 'क'
काम्यते इति कम्
स्रक् चन्दनवनितादिकम्
हेन्यतेऽनेनेति हं शौर्यम्
शौर्य धनस्रकचन्दनवनितादिप्राव्यतिशयस्य कीर्तेश्च निर्माण
सम्यक् कलयति इति सकला काली हरति निखिलं जगदिति हृ
सर्व जगत्संहत्री ह्रीं
ई दीप्तौ दीप्त्यर्थक ई
परोक्षप्रिया हि देवा
दिखावा पसन्द नही है देवो को
कन्यन्ते प्रकाशयन्ते शब्दार्थजालानि
अनेनेति क

कनयतीति वा क
कद्दीव्तौ इति स्मरणात्
ईयते स्मर्यते अधीयते वा सर्वा
वेद शास्तादिकला अनेनेति ए

शब्दार्थ जालावभासिनी वेदादिशास्त्राध्ययन स्मरण प्रयोजिका बुद्धि लहरी–ल
ईयते प्रकाश्यते कीर्तिजालं दिगन्तेषु
अनेनेति ईः गुणसन्ततिः इदन्ति सर्वेषां नियन्तृत्वे वर्तते इति ई
वज्रहस्ता होकर निर्निरोध प्रशासन करती है
निग्रह शक्ति
चतुः षष्टिकलाभिर्वा सहिता सकला
सम्यङ्कलयतीति सकला आन्दयति वा

हरती विहरति इति ह्रीः

धातू नामने कार्थत्वात्

ई–इत्यनेन हृत्पुण्डरीक दहराकाशस्थ
दीपशिखामध्ये स्थितो बोधात्मक
प्रकाशस्वरूप परमात्मैव विवक्षितः

फूल गुल शम्मो कमर सारे हि थे ।
पर तुम मुझे भाये बहुत ।।
कुछ और हि आलम है तुम्हारा
हर बार अजब रूप है हर बार अजब रंग है।।

इतरो से काली की मोहकता अजबरङ्ग
ज्योतिषामपि ज्योतिर्निर्दृश्यदृक् स्वरूपो
महान प्रकाशः शिवः।

अर्थ–तद्विज्ञाने जाते सर्वं विज्ञात भवति तस्मिन् दृष्टे सर्व वधितं भवति

अर्थ–तस्य नैसर्गिकी स्फुरता विमर्श रूपा शक्ति तद्योगादेव विश्वोत्पत्ति स्थितिलय लीलत्वं शिवस्य

अर्थ–स जयति महान प्रकाशो यस्मिन दृष्टे न दृष्यते किमपि कथमिव तस्मिन् विज्ञाते सर्व विज्ञातमुच्यते वेदे

नैसर्गिकी स्फुरत्ता विमर्शरूपाऽस्य वर्तते शक्तिः (वरिण्स्यारहस्ये)

तद्विज्ञानार्थमेव चतुर्दश विद्या स्थानानि। तेष्वपिसार भूता वेदाः तेष्वपि गायत्री

काल परमाणुर्लव उच्यते
लकारः पृथ्वीस्वरूपः
हकारः रुद्ररूपः
रेफोरूद्राणी रूपः

शिवस्याभ्यन्तरेशक्तिः
शक्तेरभ्यन्तरः शिवः।
अन्तरं नैव जानीयाच्चन्द्रचन्द्रिकयोरिव।। (श्री गोरख)

हे रम्यगाढ़नीलवर्णे श्यामाँ
बिन्दुना मुखम्

बिन्दुद्वयेनकुचौ
सपरार्द्धेनयोनि

बाह्येन्द्रियव्यवहाररूप जगरावस्था
कामयत इति कः परं ब्रह्म
सोऽकामयत्
कं ब्रह्मोतिश्रुतेः

जगत्सिसृक्षावान परमेश्वरस्तत्पदार्थः कामेश्वरः कामइत्युच्यते, सर्वजगतसिसृक्षावन कामेश्वरः जगत्कारणरूपा क्रीं स्वरूपा कमेश्वरी काली

एकारस्य त्रिकोणत्वाद्योनिरित्यर्थः

तदेव प्राणिप्रसवकारणम्

पूञ्प्राणिप्रसवे इति धातुस्मरणात्

सर्वसम्भजनीयत्वात् वरेण्यम्
सर्वप्राणी परमप्रेमास्पदम्

ककारस्य वरेण्यमित्यस्य च

ईयते योगिभिः सर्वान्तर्यामितय ई
हे सर्वान्तर्यामिनि

ल इति–पृथ्वीबीजस्य ससागरं सभूधरं
भूमण्डमर्थ–भूमण्डलमित्यपि
पञ्चभूतोपलक्षणम्
इयं पृथिवी सर्वेषां भूतानां मधु अस्यै पृथिव्यै
सर्वाणि भूतानि मधु

तदपि च मृदघट इतिवत् परमात्म समाधिकरण्येन भूमण्डलोपलक्षितपञ्च भूतात्मना परिणतं परमात्मेतत्वमेव 'ल' इत्यस्यार्थ

ह्रीं–हृदयागारवासिनी हृल्लेखा तां माति बोधयिति ह्रीम् परमात्मतत्वाव भासिनी

गुणत्रयातीता निगुर्णब्रह्मस्वरूप राजराजेश्वरी
रजसः परं परोरजसे रजोऽतीतं निर्मलं निर्गुणमिति यावत्
सर्वचैतन्यरूपां तामाद्यां विद्याञ्च धीमहि (देवीभागवत)

आद्यायाः ब्रह्मरूपत्वम् प्रतिपादितम्
आदौ भवः आद्या भगवती
वाराणसी महाक्षेत्रं कालीरूपं परात्परम् (योगिनीतन्त्र)

आशा, दया, सहनशीलता (शीलतालायों) करुणा, क्षमा, बुद्धि, तुष्टि, ममता आस्था ये सब माँ वाचक ही शब्द है

उत्पादनेच्छाविशिष्टः स्वीयामुत्पादनशक्तिः भर्यामवलोक्य स्वार्धाङ्गिन्यां स्वयमन्तः प्रविशति शुक्ररूपेण 'आत्मा वै पुत्र नामासि इति श्रुतेः

ततस्तस्य शुक्रस्यान्तः शोणितबिन्दु रूपेण मार्या प्रविशति।

तेन च स बिन्दु रूच्छूनो भवति

अकारहकारयोर्मध्ये सर्ववर्णपाठः सितशोण बिन्दुयुगल कामेश्वरी रूपं दिव्यमिथुनम्

परमेश्वर : स्वागभूताखिलप्रपञ्चविलयात्मक विम र्शशक्ति मनुप्रविश्य बिन्दुभावं मन्यते

ततो विमर्श शक्तिरपिस्वान्तर्गत प्रकाश मयं बिन्दुमनुप्रविशति तस्माद् बिन्दोर्नादात्मिका समस्तत्त्व गर्भिणी प्रकाशस्वरूपपरमेश्वरस्य दर्पण स्वरूप विमर्श सम्बन्धे जाते महाबिन्दु पूर्णाऽहमित्येवंरूपः परमेश्रः प्रकाशते

लकारस्तु गन्ध बोधक

पङ्क्तिपावनपङ्क्तिप्रभाकर ब्राह्मण कमलनालकेतन्तु रेशे से भी पतली विसतन्तु तनीयसी विद्युत्पुञ्जप्रख्या कृशाङ्गी कृीङ्काररूपा काली

यस्यनाम महद्यशः

औत्पत्तिक नैसर्गिक मातृ भक्ति प्रवृत्ति भगवती को पञ्च देवोपासना में प्राधान्य माना गया है। विमलयशवितान रूप तेरा नाम ऐक पालकामिनि

या काली परमा विद्या ब्रह्मरूपा सनातनी।
कामाख्या सैव देवेशी सर्वसिद्धि प्रदायिनी।। (योगिनी तन्त्र)

माँ काली और कामख्यान रूपा
कामाख्या एक ही तत्त्व है
अक्षराणां अकारोऽस्मि (गीता)

अञ्जनाद्रिनिमा (अञ्जनमयपर्वतकारा) जम्बुफलो का पर्वताकार समुदाय

ओं क्षुत्क्षामा कोटराक्षी मसिमलिनमुखी मुक्तकेशी रूदन्ती
नाहं तृप्ता वदन्ती जगदखिलमिदं ग्रासमेंक करोमि
हस्ताभ्यां धारयन्ती ज्वलदनलशिखा सन्निभं पाशयुग्मम

दन्तै र्जम्बूफलाभः परिहरतु भयं
पातु मां भद्रकाली

आधारभूतं भूतानान्नादीनां च कारणम् अन्नादेतस्ततो जीवः कारण त्वालत्णरितम् अन्नाद्रेस्ततो जीव

त्रिकोणरूपिणी शक्तिर्विन्दुरुप पर शिवः अविना भाव सम्बन्धं तस्तमाद् बिन्दुत्रिकोणयो काल्याः पञ्चदशविद्या नित्याः तासां नामानि काली, कपालिनी कुल्ला,कुरुकुल्ला, विरोधीनि विप्रचिता तथा चोग्रा उग्रप्रभा, दीप्ता, नीला, धना बलाका, मात्रा, मुद्रा, मिता इति ये काली की पन्द्रह नित्याये है

त्रिकोणं पञ्चक चष्टकमलं भूपुरान्वितम् ।
मुण्डपक्तिं च ज्वालां कालीयन्त्रं सुसिद्धिदम्।।

पांच त्रिकोण में पन्द्रह नित्यायें पञ्चादश पन्द्रह कोणो में रहती है ब्राह्मी,नारायणी, माहेश्वरी, चामुण्डा, कौमारी अपारिजता, वाराही, नारसिंहिं अष्ट कमलपत्र पर विराजमान है माधव, रूद्र, विनायक शौरा ये चार कोण

दशभिर्वदनैर्युक्तात्रित्रिचक्षुर्विराजितैः
दश मुख, दशहस्त, दशपाद
33 त्रयतिशत नेत्र

इन्द्र यम वरूण कुबेर ये चार दिशाओं में (कालीयन्त्र के) रहते है
देवेन्ददानवेन्द्र वन्द्य पादारविन्द अस्याः उपासकाश्चैव ब्रह्माविष्णु शिवादयः

सर्व वन्द्या
काशीशवरदायिनि
लङ्केशरिपुरक्षणी
माँ काली का शब्द कुसुमभ्यर्चन
उत्तमा मानसी पूजा
बाह्य पूजा कनीयसी

काकरूपां कलातीतां कालिकां दाक्षिणां भजे (महाकालसंहिता)

का–शिवा
कः–शिव
तयोअलिङ्गनमः काकः
शिव शिवा सामरस्यहि
काकरूपाकाली है
आदिम मेघ या काल मेघ रूपा माँ काली

कालिमन्त्रं जपेद यो हि कालिपुत्रो न संसयः माँ श्यामा मन्त्र का जप करने वाला उनका पुत्र ही है।

आशंसन्ति हि पितरोनराणां पुण्यकर्मणाम् ।
कदास्माकं कुले पुत्रः कालीमन्त्रमुपाश्रयेत ।। (योगिनी तन्त्रे)
निर्मासदेहे (प्रचण्डघोरदावानलवासिनि)

बृहद्रवा कोटि–कोटि कण्ठो से तुम रणाङ्गण में प्रणाद करती हो
तुम उपरवा–उप उपरि ग्राव्णां रवः शब्दो यत्र ते उपरवा

हेमहापिङ्गलजदाभारे हे विकटरस ना कराले
हे भूतबेतालः सहचरिणी

हे लेलिहानरसना भयानके

पदविन्यास त्रासितसकल पाताले हयग्रीवेश्वरि चतुर्वेदमयि महारूद्रकुणपाधिरूढ़े

चण्डाट्टहासिनी जगदग्रसनकारिणी

ऐ माँ तू महदैश्वर्य अभिमानशालिनि है। गौरवेण गौरी तेरा हि नि सीमा गौरव है बित्तायनी है
वित्तार्थ निर्धनं पुरुशमयसीति वित्तायिनी भवसि
निर्धन भक्तो को धनदा धनकाली धन देती है त्वं तृप्तायनी स्मृतिमात्रेण तप्तानां
पुरूषाणां तापोपशात्यर्प प्राप्नोषि ज्वलदनलवदनायै
ऐ विद्युतकटाक्षे ऐ प्रज्वल ज्वलनलोचने
घोरतर दशन चर्वित ब्रह्माण्डे
चामुण्डायोगिनीडाकिनी शाकिनी भैरवी मात्रगणमध्ये

आगतं पचवक्त्रतुगतं च गिरिजानने
सम्मतं वासुदेवस्य तस्मादागमुच्येते ।।

पञ्चवक्ता अमलेन्दु शेखर शिव) से निर्गत हुआ और गिरिजा के निरावरण कर्ण रन्ध्रो में गया और वासुदेव से अनुमोदित यह (असमन्तात् अर्थ गमयति इति) नानानिगमागमानुगामी तुलसी दास भी माँ को राम कथा रूप मानते हैं 'राम कथा कालिका कराला'' (तुलसी)

परमशिवपर्यङ्कनिवासिनि

हरति एक अघ असुर जालिका तुलसीदासप्रभुकृपां कालिका
नवकोटि भैरवी चामुण्डाशतकोटिपरिवृत

भरतोपास्या
रामोपास्या

ध्यायेद् देवी प्रभावोत्थ प्रोच्छलदरक्तकारिधिम् उतुङ्गोतुङ्ग कल्लोल प्रपूरितदिगन्तरम्
त्त्र द्वीपं रक्तमासपूरित रक्तवालुकम् नवकोटि चामुण्डाकोटिभैरववेष्टितम् तन्मध्ये मण्डलं ध्यायेद योजनायुतविस्तृत भौरवी कोटिघटितं प्रकार तत्र चिन्तयेत्

एक श्मशानं तन्मध्ये शतयोजन विस्तृतम
योगिनीकोटिविहित कर तालिका चेष्टितम्

पञ्चमहाप्रेता उपरि समासीना
ब्रह्मा विष्णुश्च रूद्रक्ष ईश्वरश्च सदाशिवः।
एते पञ्चमहाप्रेता स्थिता सिंहासनादधः।।

क–सर्वविषहर कल्याणाद
आ–आकर्षणात्मक सर्वगत
ई–वाक्प्रसादकर निर्मल
ल–विश्वंभर भासुर (अक्षमालिकोपनिषद्)
ह–सर्ववाङमय निर्मल
ऊ–उच्चाटनकर दुः सह
र–दाहकर विकृत
(अक्षमालिकोपनिषद्)

निर्लज्जा हास्हीना च निद्रालू बहुमाक्षिका,
इयंसा डाकिनी प्रोक्ता मृत्युयोगे, प्रशस्यते (योगिनीतन्त्र)

चस्न्तीं च हसन्ती च डाकिनीषष्टि कोटिभिः (महाकाल सहिता)

सारं तु योगिभिः पीतं तक्रं विबन्ति पण्डिताः,
उच्छिष्टै सर्वशास्त्राणि सर्वविधामुखेमुखे
योगी सार को पीता है पाण्डित (निर्वाण तन्त्रे)

तक्र (माठा) पीता है जूठा विद्या मुख मुख मे जान पड़ती है

ईयते प्रकाश्यतेकीर्तिजाल दिगन्तेषु अनेनेति ई

ईरयरि प्रेरयति इति ई
मोदनात् सर्वदेवानाम्
द्रावणात् पापसन्ततेः

मुद्रा

सभी देवताओं का मोदन द्रवण (पिधलाना) मुद्रा का कार्य है।

'सहजविमलमनलग समाधि'

'म'–विद्वेशविमोहन कर
सर्वेषां मनः शिवेन प्रेरितं नियमेनवै
पशुपतिसाक्षीं
पशुपतिपराधीन ह्दया
चिति चैत्य
द्रष्टा दृश्य

ज्ञेय या इदङ्कारास्पद प्रतीति रूप चैत्य चिति में निलीन हो जाती है कालकी वक्रगति स्तब्ध निरत हो जाती है काली मे

देहतद्धर्मतत्कर्मतदवस्थादिळभ्यो निर्गतो
ममता बन्धो यस्य सः निर्ममः

न मम् इति नमः
क्रीं कपालिन्यै नमः
अवधूताश्रमे देवियस्य भक्तिश्च निश्चला ।
तस्थ तुष्टा भवेत् काली किं न सिद्धयति भूतले। (निर्वाणतन्त्रे)
अवघूतं समालोक्य शम्भूं ज्ञात्वा तु पूजयेत् (निर्वाणतन्त्रे)
सकलजगदानन्दकर्त्री काली

क्षुद्रपिडाण्ड रुप में शरीर में खेलती श्यामा विराट ब्रह्मण्ड रुप में खेलती कालकामिनि "न निजं निजवद्भात्यान्तः करण जृम्भणात्"

अन्तः करणनाशेन सविन्मात्र स्थितः शिवः
चिज्जऽनांतु यो द्रष्ट्री साशिवा एव ज्ञानविग्रहा
आनात्माकार वृत्ति का भक्षण करती अत्ता रुपा आत्मिका काली
विश्वतश्चक्षु–शताक्षी देवि
चीटी के पग पायल बाजे वह भी श्यामा देखती सुनती है
ब्रह्मैव काली संज्ञकम्
ब्रह्म ही श्री काली संज्ञक है
नित्यनिरन्तरकाली निष्ठया
निर्मुलितानात्मतादात्म्यग्रन्थिर्येन

रुद्र हीनं विष्णु हीनं
न वदन्ति जनास्तथा।
शक्ति हीनं यथा सर्वे
प्रवदन्ति नराधमम् ।।

विन्ध्य–दीप्त प्रकाशित मणि द्वीप
शास्त्रो में सुमेरु सहस्रार का अवद्योतक
विन्ध्य–हृदयागार
कुलपर्वत–मूलाधार चक्र
अग्नि देव का बीज मन्त्र रं है
काली कराली च मनोजवा चसुलोहिता च सुधूम्रवर्णा
स्फुर्लिङ्गिनी विश्वरुपी च देवी लेलायमाना इतिसप्तजिह्वाः (मुण्डकोपनिषद)

ये अग्नि की सात जिह्वाऐं है

देहस्थ वैश्वानरसंज्ञक पुरुष रुप अग्नि की पाँच ज्ञानेन्द्रिय मन तथा बुद्धि ये सप्तविषय सेवन संस्थान रुप जिह्वाऐ है

घ्राण रसना नेत्र, वाक् श्रोत मन और बुद्धि ये वैश्वानर की सप्त जिह्वाऐं है।

घेय (सूंधनेयोग्य) रस्य (पेय पीने योग्य) दृश्य (देखने योग्य) स्पृश्य (छूनेयोग्य) श्रव्य (श्रवणीय) मन्तव्य (मनन करने योग्य) बोद्धव्य (जानने योग्य) ये वैश्वानर की समिधाए है

अग्नि वैश्वानरो मध्ये सप्तधा दीव्यतेऽन्तरा
घ्राणं जिह्व च चक्षुश्च त्वक् च श्रोत्रं च पञ्चम्,
मनो बुद्धिश्च सत्तैता जिह्वा वैश्वानरर्चिषः (महाभारत)

विश्ववान् नृणाति नयतीति वैश्वनरः स एव

वैश्वानर–विश्व का नयन नीयते, ले चलना या सबका उपकारक होने से विश्वेषां नराणामुपकारको वा तदुपलक्षित ज्वालाजालमाला कालिका विवक्षित है

ऐ 'व्योमचारिणि' रति परिपक्व होकर प्रेम बनता है शशि भास्कर आदि नही रहते चिद् गगन में 'प्रलीनशशि भास्कर' 'चिद्व्योम्' किंवा सद्व्योग आनन्दव्योम रूपा तुम्ही हो यह प्रत्यक्ष भूताकाश जड़ उत्पात् विनाश संत्रस्त है सा शिवा परमाज्ञेयां शिवाभिन्नशिवङ्करी (सूत संहिता)

विमर्श का तात्पयार्थ स्फूर्ति, उल्लास विमर्शान्तिगत जो वेद्यांश है वह प्रकाश वेदकांश से अभिन्न सिद्ध होता है शिवाद्वैत तथा शाक्ताद्वैत के अनुसार जगत् ब्रह्म की स्वातंत्र्यात्मिका शक्ति का विजृम्भण रूप है जगत् चिति का विलासविजृम्भण है।

चैतन्यमयी पराशक्ति रूपा श्यामाँ ही चैत्यविवर्ज्ति चिति है काल की निखिल चमत्कृति कालीपदाभिधा है। महाकाली की विलास समुल्लासरूपा स्वातंत्र्यशक्ति के उपवृहंण से लोकोत्तर चमत्कार स्वाभाविक है।

हरति एकअघ असुरजालिका, तुलसी दास प्रभु कृपा कालिका, आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किंचिदपि चिन्तयेत् आत्मिकाकाली संस्थान में समस्त चिन्तन धार के अवगुण्ठित कर निश्चिन्त रहे

भक्तत्राण व्यग्रचित्ते

मा भैर्मा भैः स्वभक्तेषु जलपन्तीं घोरनिस्वनै, ययूं किमिच्छथ बूथ ददामीति प्रभाषिणीम्

मातृपितृ शतादऽपि हितैषणी करूणासान्द्रे भगवती भावभव्योद भावापन्न भक्तो को कहती है–घोर प्रणाद पूर्वक, मत डरो मत डरो, तुम सब क्या चाहते है। 'ददामि' देऊगी ऐसा समाश्वासन देती है

शिवा (शिवयति इतिः शिवः पुं योगो टाप–शिवा

देव–पुंयोगे डीप–देवी

अथाह वै श्मशवः शानं शयनं शवानां शयनं श्मशानं तदधिष्ठानो महाकालस्तत्पर्यङ्क समासीनां विश्व व्यापकरूपिणीं कालीं कालदिसंत्रासात् कालीं चतुर्युगाधिष्ठात्रीं स्वस्मिन् भाव्य (षोडोपनिषद्)

शम शवः इति, शानं शयनमुच्यते, शवानां शयनं श्मशानमुच्यते

शवशयनस्थल विशेष श्मशान पद वाच्य है उसका अधिष्ठान (अधि तिष्ठन्ति सर्वे यस्मिन्) स्वामी महाकाल उनके पर्यङ्क में समासीन विश्वव्यापक रूपिणी काली

कालीदि को संत्रस्त करने के कारण काली, 'कालस्य कलनात् काली'',

काल का भी संख्यान, कलन, क्षेपण आदि काली का कार्य है

सेयं षट्कला परा परात्परा परात्परातीता चित्परा चित्परात्परा चित्परात्परातीता (षोडोपनिषद्)

बिना शक्तिं न मोक्षो न ज्ञानं न सत्यं न धर्मो न तपो न हरिर्न हरो न विरिञ्चि (श्री चक्रोपनिषद्)

सर्वाः सुप्ताः भूता :

असिताङ्गी जागर्ति

कालसंकलनात् काली । सहेलं सलीलं वा स्मरणाद्वरदानैषु चतुरा । तेनेयं दक्षिणा पराशक्तिर्विविध सर्गाद्या भावशक्तयः शक्तयः सर्व भावा नामाचिन्त्यज्ञा नगोचराः

परास्य शक्तिविविधैव श्रूयते

स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रिया च

य एकोऽवर्णो बहुधा शक्तियोगात् सहस्राधिक श्रुतिस्मृतियों से गीयमान शक्ति काली माँ

सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासित्वं महादेवी, साब्रवीदहं ब्रह्मरूपिणी मत्तः प्रकृति पुरूषात्मक जगत्

(देव्यथर्वशिर)

सभी देवता देवी के पास एकत्र होकर

कासित्वं महादेवी–तुम कौन हो महादेवी

प्रत्युत्तर मै ब्रह्मस्वरूप हूँ मुझसे हि यह प्रकृति पुरूषात्मक जगत् संजात है।

महाकालस्य कलनात् त्वमाद्या कालिकापरा

कालसंकलनात् काली सर्वोशांमादिरूपिणी

कालत्वादादिभूतत्वादाद्या कालीतिगीयते

ऐ महाकल्पान्तनर्त्तकी उदयार्क समानाक्षी

क्रोधेनारूणाक्षी,

फेरूरूपं हि घृत्वा सा स्वयमायाति कालिका (महाकाल संहिता)

आगमाब्धि मणि भूता राजराजेश्वरी महात्रिपुरसुन्दरी सरातिसार तत्त्वामृत स्वरूपा है परन्तु ऐ कमेश्वर सर्वस्व रूपा कामेश्वरी काली तू तो उसकी भी कारण भूता हो।

सारात्सारं देवि सर्वेषां षोडशीमता,

तस्यापि कारणं देवि कालिका जगदम्बिका

सब की सारत्रिपुरा और उसकी भी कारण भूता कालिका है।

हे आनन्दमुदितोल्लासलीलान्दोलित लोचने तू तो एकधा द्विधा बहुधा होकर विलसित होती हैं।

संख्याविधानाऽर्थधा 'धा' संख्या का विधायक हैं महाकालसंहिता में तू तो नवध होकर विभक्त है कालीस्वरूप प्रकार प्रदर्शन प्रसङ्गे ''काली नव विधा प्रोक्ता सर्वतन्त्रेषुगोपिता'' एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्

(ब्रह्म बिनदूपोनिष)

आद्यादक्षिणा काली च भद्रकाली तथा परा

अन्या श्मशानकाली च कालकाली चतुर्थिका

पञ्चमी गुह्यकाली च पूर्वया कथितामया

षष्ठी कामकलाकाली सप्तमी धनकालि का

अष्टमी सिद्धि काली च नवमी चण्ड कालिका

(महाकाल संहिता कामकलाखण्ड)

उपरोक्तानुसार नवधा काली क्रमशः और भी भेदोपभेद तू संज्ञा धारण करती हो

उग्रकाली रौद्रकाली ततो बेताल काल्यापि संहारकाली तदनु भीमकाली ततः परम धूमकाली मुण्डकाली नादकाल्यनु कथ्यते। ततो महारात्रिकाली नग्नकाल्यनु कथ्यते

ततो दुर्जयकाली च पुनर्मन्थानकालिका कल्पान्तकाली रूधिरकाली कङ्काल काल्यपि

सन्त्रास काली–––––––––––

इत्यादि। विविधं नाम रूपं भवतीति विभुरूपा आद्या दक्षिणा काली आदौ भवः इति आद्या (टाप्)

कामस्तदग्रे समवर्तत् अग्रे कामैव समवर्त ऋगवेद सृष्टिबीज भूता क्रीङ्कार कामेश्वरी में कामेश्वर का समकर्षण ही दिव्य काम है मखस्य दक्षिणा पत्नी दक्षिणा यज्ञ की पत्नी है यज्ञ की प्रपूरिका है पतनात्

त्रायते इति पत्नी क्रिया, कारक और कर्त्ता एक काल में एक देश में अर्थात् समानाधिकरण्य होकर समाहार करे यज्ञ हो यज्ञ कर्त्ता, अपेक्षित द्रव्य इनके समीकरण से अभीप्सित वारिवर्षण रूप फल भी नयनगोचर हों अनुकूलता ही दाक्षिण्य है क्रिया शक्तिरुपाही दाक्षिण्य है क्रिया शक्ति रूपा रौद्री निखिल कर्मदोग्धी निखिल कर्मफल दोहन रूपा ही रौद्री काली कारक शिव है क्रिया शिवा है अखण्डाअच्छेदनीया शक्ति ही काली है तुम माँ दक्षिणा रूपा तथा क्षण भर में वाम रूपा हो जाती हो। अभीष्टाभिमुखी एक तानता ही दक्षिणाधिकार है। श्री गुरुशक्ति की दक्षिण मूर्ति इष्ट शक्ति की दक्षिणाकालिका स्वच्छन्द अभ्युदय दक्षिणाकृपा ही है।

दक्षिणा–According to Phythin or Patter

अनुलोमावृतिर्दक्षणा–आवृत्ति के अनुलोमा होने पर दक्षिणा संज्ञा उसे प्राप्त होती है।

बीज अङ्कुर नाल, प्ररोहक्रमेण वृक्ष पत्र पुण्य ये अनुलोमा वृत्तिका वितान है हे अनुलोमा हे अनुकूला दक्षिणा वामा विलोमा की संज्ञा है विपरीत साधन उसे उलट कर सीधा वामा करती है ग्रंथि परम्परा का मोचन लक्ष्याभिमुखी निर्निरोध संधारा ही दक्षिण्य है समस्त व्यापार अपने मूलनाभि में आये धारा दक्षिण्य है। विरुद्ध वामा शक्ति है। राधा धारा विरूद्ध वामा शक्ति है।

अनुलोम धारा है विलोमा राधा है वीर हि वामा का समाश्रयण करते है वीरसाधक को गुणातीत नैर्गुण्य का सन्धान वामा कराती है।

विलोमा में बिन्दुविलय को अर्धमात्रा पर्यन्त ले जाने के लिए वामा ही स्तुल्य है। स्वराट आत्मराट हो गये वामा में वीर साधन **वननीयानि सम्भजनीयानिशोभनानि पुण्य फलानि इति वामः**

सुन्दर फलो का नायक भोग्य स्रगचन्दनवनितादि का संवहन कत्री वामिनी सभी प्रकाश पुञ्जो की नेत्री भामिनी एष उ एव वामिनीरेष हि सर्वाणि वामानि नयति

एष उ एव भामिनीरेष हि सर्वेषु लोकेषु भाति (छान्दोग्योपनिषद)

तू हि वामिनी तू हि भामिनी है तू ही सव्यदक्षिण सेविता है उभयमार्ग से ईड्य है दक्षिणशब्द स्यापि दक्ष एवार्थः प्रवृद्धः शक्तः शीधकारी च दक्षः बढ़ा चढ़ा शक्तिमान तथा शीध्र कार्य काने वाला ये तीन दक्ष होतो है दक्षते गच्छति हिनस्तीति वा दक्षिणः दक्षगतिहिंसनयोः दक्षिणा काली चतुर्दिक प्रधावन करती है गच्छति अप्रतिहत गमनशीला दुष्ट दलन पूर्वक हिनस्तीति दुष्टदलनशीला तू ही प्रवृद्धाः उत्कर्षोपेत महाबला तू ही त्वरिता शीघ्रकारी दक्षिणा काली है **दक्षिर्णा ज्ञान सन्देशः** ज्ञान का सन्देश ही दक्षिणा है (भागवती) ज्ञान का सन्देश ही दक्षिणा है

विभाति चान्द्रेण इति विभावरी चन्द्रामृतप्रकाशन रूप ज्योत्स्यना से अवभासित विभावरी निशीथनी काली

द्वन्दातीताश्रुतिकमलिनि स्वच्छ माध्वीक धारा–**उपनिषदमाधुर्यरूप प्रवाह**

सर्वशीतोष्ण राग द्वेषादि उत्कर्षा पकर्ष रूप द्वौ द्वौ द्वन्द्व विवर्जित प्रशान्त श्रुति कमलिनि

तं तु औपनिषदं पुरुषं पृच्छामः उपनिषत्सु प्रसिद्धा–उपनिषद मे प्रसिद्ध भगवती श्रुति कमलिनि (वेदाम्बुधिसुधा रूपा) श्रुतिसारसर्वस्व सौरम्यसमन्वित कमलिनि मलिन मन बुद्धि अगोचरा शुद्ध मन बुद्धि अधिगम्या हो जाती है। **दृश्यते त्वग्रयया बुद्धया** अग्रया का अर्थ उत्कृष्टा बुद्धि मन नयनगोचरी है ये व्योम चारिणीकाली पचशून्ये स्थिता तारा सर्वान्ते कालिका स्थिता (महाकाल संहिता)

तारणी रामरूपा तारा माँ पञ्चशून्ये' पञ्चप्रपञ्चोपशम रूपा और कालिका सर्वातोऽधिका सर्वान्ते स्थिता है।

सर्वसर्वात्मकम्–सब चीजों में सब जात्यनुच्छेदेन सर्व सर्वात्मकम् जातिका उच्छेद नही होता काली में ब्रह्मा, विष्णु, शङ्कर, रवि गणपति सभी पर्यवसित है किन्तु स्वरूपगत वैचित्र्य वैशिष्ट् निर्निरोध बना रहता है

ब्रह्मा, विष्णु शिवा गौरी लक्ष्मीर्गणपति रविः।
पूजिता सकला देवा य कालीं–पूजयेत् सदा।।

जो माँ काली की सपर्या करता है मानो उसने ब्रह्मा,विष्णु, शिव, गौरी गणपति रवि सब की पूजा कर लिया

एष ह्येव सर्वे देवा (बृहदन्नादरी पुराण)
यह आत्मिका काली सर्वदेव रूपा है (बृह11416)
को देवः यः मनः साक्षी
जो मन आदि दृश्य चैत्यवर्ग की सुसाक्षिणी है वही देवी है
अवाङ् मनसगोचरम्
वाक् च मनश्च वाङ्मनसे तयोः गोचरः
न वाङ्मनसगोचरः इति
अवाङ्' मनस गोचरा काली
वाणी और मन के द्वारा अमानगा अगम्या अमा उल्लास रूपिणी है
य तो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह
नैव वाचा न मनसा प्राप्तु शक्यो न चक्षुषा (तै०)

अविकलरूपप्रतिपादन दुष्कर है तेरा चकित्तभमिधत्ते श्रुतिरऽपि श्रुति भी अतद् व्यावृत्ति पूर्वक ही तेरा सन्धान कराती है

पूर्व कौलो के यहाँ आनन्द भैरव और आनन्द भैरवी रूप शिव–शिवा का प्रचलित यामल, युगन्द्ध, युगल रूप है

कलावती लीलावती

कला–कं ब्रह्म लीयते आच्छा द्यते यया सा कला
कला–कं ब्रह्म लीयते आच्छा द्यते यया सा कला
निर्गुण निराकार निर्विशेश ब्रह्म जिस से आवृत सा हो जाता है वह 'कला'
ली द्रवीकरणे–दुत भावं लातीति लीला
सम्यङ्क्लयति इति सकला कं सुखं लातीति कला तया सहिता सा सकला

कं ब्रह्म खं ब्रह्म (छन्दोग्य)
अपरिगणितानन्ददात्री
निर्बाधानन्ददात्री
निरवधिकानन्ददात्री सकला काली
संराजवन्तं समूहवन्तं
सकलं कलासहितम् (उपनिषद्)

सराजित विराजित है समूहवान पतन्तु भुवि पर्णवत् और कलावती रूप से कलावान माँ तू है

स्वं आत्मानं धारयति इति स्वधा
आत्माकार अखण्डस्निग्ध वृत्ति रूपा स्वधा रूपा है।

दुर्गाशप्तसती के अनुसार पार्वती से कौशिकी नाम की देवी निर्गत हुई और पार्वती काली रूप से हो गई

यहाँ अनन्त से अनन्त ही निकला और अनन्त ही अवशेष रहा
सर्व परिच्छेदय शून्य विकलेवर कैवल्य रूपा काली अवशेष रही।

राज सत्ता समन्वित को ही राजा कहते है राज्य हीन को राजा भूतपूर्व कहते है दाहक सत्ता समन्वित अग्नि होती है दाहकत्व हीन को भस्म कहते है।
इसी प्रकार 'ई' हीन शिव शव संज्ञक ही है

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुम्।
न चेदेवं देवो ने खलु कुशलः स्पन्दितुमापि।। (आनन्द लहरी)

शक्ति उपेत शिव समर्थ है और अपेत विलग होकर स्पन्दन हिलने तक में असमर्थ है।
शिवं दूतयति दूतं करोति इतिशिव दूती
दूति–अनात्माकार वृत्ति को प्रशान्त करने के लिए शिव को प्रेषित करती है

शं करेयस्य स वा शङ्करः
तस्य स्त्री शाङ्करी

चित्ते कृपा समर निष्ठुरता च दृष्टा मन में दया समर के निष्करुणा रूपा है

यं यं काम ये तं तमुग्रं कृणोमि
तं ब्रह्माणं तमृषि तं सुमेधाम (देवीसूक्त)

चिति स्वतन्त्रता विश्व सिद्धि हेतु
चयनं चितिः
चितिः प्रत्यक् चैतन्यम्

चिति रूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत्

माति बोधयति गर्भोऽस्यामिति माता
मान्यते इति माता (जिसको माना जाय)
मान् पूजायाम्
आराधनीया महाशक्ति माता
माति परिच्छिन्नति इति माता
सर्व द्रष्टी (देखने वाली)

ब्रह्म का मातृत्व है क्योकि ब्रह्म से ही प्राण, मन, सब इन्द्रिया उत्पन्न हुई

एतस्माज्तजायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च
यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते
ब्रह्म ही माँ काली है
मन्त्रणा सेतुः प्रणव एवास्ति
कालिकायाः महासेतु क्रीं है
श्री कालिका माँ का प्रणव मिलाने वाला सेतु क्रीं है
मन्त्र कुल्लुका

जपात पूर्वं मन्त्रकुल्लुकया शिरसिन्यासं विधाय जपकरणे सिद्धिर्भवति

काल्याः कुल्लुका तु
ॐ क्रीं हूं स्त्री ह्रीं फट्
शवरूपमहादेव ह्रदयोपरि संस्थिताम्

कालिकायै विद्यमहे श्मशानवासि ।
न्यै धीमहि तन्नो घोरा प्रचोदयात्।। (काली गायत्री)

मै काली को जानता हूँ श्मशानवासिनी का ध्यान करता हूँ वह हमे घोरा सत्यर्मर्ग पर नोदित प्रेरित करे ।

कुरुकुल्लाह यह देवी विमर्शमय रक्ताम
सरोवर में निवास करती है
कुरुविन्द तरणि निलयां
कुला चलस्पर्धि कुचनमन्मध्यमा
कुङ्कुमविलिप्तगात्री कुरुकुल्लां
मनसि कुर्म हे सततम ।।

मै उन कुरुकुल्ला का ध्यान करता हूँ जो माणिक्य अथवा कुरुविन्द में रहती है जिनकी कटि उनके वक्षो के भार से झुकी है कुङ्कुम संलिप्त वदन है

कुरुविन्द रत्नों से बनी नौका पर निवास करती है। गद्यपद्यमयीं वाणीं तर्कव्याकरणात्मिकाम् अनधीत गतां विद्या देहि दक्षिणा कालिके।।

अपठित पठित हो जाय और पठित अधीत विद्याऐं सुपठित हो जाय

सर्व विद्याऐ सुपठित हो जाय
सर्व विद्या कालिकायां संस्थिता एवं पार्वती

शिवमुखपद्यविर्निगत वाक्य ऐ पार्वती समस्त विद्या कालिका में संस्थित है

"विद्या समस्ता स्तवदेवी भेदा
विद्यते या सा विद्या (दुर्गासप्तशती)
विशेषेण अज्ञानं द्यति सा विद्या
दक्षिणांशात् तु पुरुषो

वामांशात् प्रकृतिः परा पुरुष रूपा दक्षिणा अर्थात् ब्रह्मस्वरूपिणी है

शिवोऽपि शवतां याति कुण्डलिन्या (शिव का पञ्चकृत्य (उत्पादन, पालन) विवर्जिता संहरण निग्रह अनुग्रह शिवाऽधीन है (देवी भागवत शक्त्य बिना शिवे सूक्ष्मे नाम धाम न विद्यते।

कर्षणात् कृष्णा काली
चिन्मय परमाकाश शिव है
शिवः सर्वपदातीतः
शिवा मुक्ति समाख्याता
शिवा गण–शिवाः फेरवः सन्त्यस्या गणत्वेन
हे कलनादनिनादिनी
श्रुतिश्च द्विविधा–वैदिकी तान्त्रिकी च
स्तुत्य और स्तुति दोनो
अस्मान्तात् धारयतीति आधारः

उसका अग्नि ही मुख है।
तस्या अग्निरेव मुखम् श्रुति

लक् वेदने से लङ्का शब्द बना आत्माऽनात्म वेदन स्थल लङ्का है
अर्थ और शब्द में वाच्य वाचक सम्बन्ध है अर्थ और ज्ञान में विषय विषयी सम्बन्ध है

मातृका' शब्द का अर्थ माँ।
शब्द ब्रह्मणि निष्णातः परब्रह्मणाधि–गच्छति
कौलो धर्म : परम गहनो योगिनमव्य गम्यः

सहस्रार या कौल तत्व अन्तिम स्थल सातवी भूमिका ज्ञानीयों की कौलाचार, ज्ञानाचार, अवधूताचार इन शब्दो में एकार्थ रूप वाचकत्व स्पष्ट मान्य है
काया काली खोह है इसमें बैठी भद्रदा

भद्रकाली है
भातीति –भ
ददातीति–द
रातिइति–र
इति भ्रद–भद्रदा भद्र काली
रातुर्दाने परायणम् रा दाने"

काया कलकत्ता है हृदय गुफा में दक्षिणा काली कलयति जानति इतिकाली
सदाजनानां हृदि सन्निविष्टा

कारण बिना कार्य नही होते कारण का अन्वेषण सहस्रारस्थ रसेन्दुगलिता मृताधारा रूप में कौलिक को करना चाहिएं

दुष्टा प्रकृति (धुमाँवती का एक नाम दुष्टा भी है दुष्टो की दुष्टता अपनोदन रूप यह स्वरूप। कौलिक के लिए सन्तुष्टा हो कर अधिगत होती है

सिंहो बलि–द्विरदशूकर मास भोजी
सम्वत्सरेण रतिमेति किलैक वारम्
पारावतः कणशिलाखर मात्र भोजी
कामी भवदनुदिनम् वद कोऽत्र हेतुः

सिंह गजमांस शूकरादि भक्षण करने पर भी संवत्सर में एक बार काम परायण होता है कबूतर पत्थर कण खाता हुआ निरन्तरं भोगांकांक्षी बना रहता है क्य हेतु है ?

वं अमृतबीजम्
अमगतिवृद्धयादौ–यह धातु भ्वदिगण परस्मैपद है
वं अमृतं आमयति प्रापयति सः इति वामः
(वामौ वल्गुप्रतीपौद्वौ) इत्यमरः

वामःसुन्दरः
सुन्दरौश्चासौ देवः
वामदेव

शिव ही वामचारी विपरीताचारी गृहस्थ होकर निवृत्ति परायण विकट श्मश्यानवास व्यसनी है श्यशान में गश्त मारते है। उनका वेष भूषा रहन सहन

नोद्वोगश्चितभस्मिना
न च सुखं गौरीस्तनाडलिङ्गात्
नाशौचं कपालदामललुलनात्
शौचं न गङ्गाजलात्
भीतिर्नास्ति भुजङ्ग पुङ्गव वशात्
प्रीतिर्न चन्द्रामृतात्।

श्मशान भस्म से उन्हे कोई उद्वेग या विभिषिका नही गौरी वक्षोजविक्रीऽन में कोई सौख्यानु भूति नही है कपाल माला से स्रवति रक्त उनके अपवित्र नही करते तथा सुरसरि धार उनको अमलन नही करता भुजङ्गराज राज फणीन्द्रो से कोई भय नही और अमत संश्रवण चन्द्र से कोई स्नेह नही ऐसे वामेश्वर शिव है वामः सुन्दरः रूपवान चासौ

देवः वाम देवः

वामो विपरीतः विपरीत वेष भूषादि
युक्तः चासौ देवः
अमङ्गल्यं शीले तव भवतु नामैवमखिलमतथापि स्मर्तृणां वरद। परमं मङ्गलमस्ति
(विद्याहमविद्याहम) विद्या अविद्या मै ही हूँ सदासच्चाहयर्जुन विरुद्ध धर्माश्रयत्व ही वामत्व है विद्यारूपा, अविद्या रूपा
सद् असद्, जीवन, मृत्यु रूपा भगवती ही है।

अहं अखिलंजगत्
सर्व देवीमयम् (देवी भागवत)
सर्वकालीमयं रे
सर्वकालीमयंरे
सर्वरूपमयीकाली, सर्वकालीमयं जगत्

तुम्हीं तुष्टि–तोषणं तुष्टिर्वा सन्तुष्टि रुपा
तुम्हीं दया–दयते रक्षति अनयादयारूपा

तुम्हीं लक्ष्मीरुपा–लक्षयति ज्ञापयति पश्यति इति लक्ष्मी रूपा लक्षदर्शनाङ्कनयोः द्रष्ट्री या ब्रह्मविद्या विज्ञापनशील लक्ष्मी

तुम्ही अन्तरिन्द्रिय निग्रह रूपा विषयोप
रति–शमनं शान्ति रूपा हो

तेरा आश्रित–आसमन्तात् श्रितः लग्नः तल्लग्नता कालिकापादम्बुज समाश्रयण

कु पुत्रे सत्पुत्रे नही भवति मातु विषमता
गर्भधारण पोषाभ्यां तेनमातागरीयसी (देवीमहिम्ना)
ऐ कामकेलितरङ्गिणी काली
हे निरवशेष ध्वंसिनी
कालीं परमकल्याणीं तां नत्वा
विधिकेशवौ (योगिनी तन्त्रे)
हे अट्टहासेश्वरी
सर्वभूत छ्यंकरी सर्वभूत
क्षेमङ्करी।
ऋच्यन्ते स्तूयन्ते या आभिरिति ऋचः
ऋचस्तुतौ माँ ऋचारूप है।
प्रसन्न वदने–प्रकर्षेण सन्ना सद्गमने
+ क्त + टाप
सन्ना वागता व अवस्थिता

हे महाकल्पान्तनर्तकी
प्रलयाब्धिसमग्ना प्रलयब्धि विहारिणी

महेश्वर महाकल्पताण्डवसाक्षिणी प्रलयकालीन माहेश्वर लास्य साक्षिणी
हे व्यालालङ्कार भूषिते।

डिम्बं डिम्बं सुडिम्बं पच पच सहसा झम्य झम्य प्रझम्यं।
नृत्यन्त्याः शब्दवाद्यैः स्त्रजमुरसि शिर शेखरं तार्क्ष्यं पक्षैः
पूर्ण रक्तासवानां यममहिष महाश्रृङ्गमादाय पाणौ
पायाद्वो वन्धमानः प्रलयमुदितया भरवैः काल रात्र्या।।

उनके वक्ष पर माला तथा शिर पर आभूषणों के रूप में गरूण के पंख है रक्तवर्ण के वारुणी के मद में विह्वल तथा हाथों में यमराज के महिष का सींग है गान की लय और ताल पर डिम्बं डिम्बं सुडिम्बं पच, पच, झम, झम, प्रझम आदि ध्वनियों पर नृत्य चल रहा है प्रार्थना है आपके स्वामी भैरव जो अपनी अर्द्धांगिनी कालरात्रि के साथ प्रलय के समय आनन्दित हैं वे आपकी रक्षा करें।

यत्रास्ति भोगो न तु तत्र मोक्षो
यत्रास्ति मोक्षो न तु तत्र भोगः

(रूद्रयामल)

श्री सुन्दरी साधकपुङ्गवानां भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एवं

कल्पान्तक्रूरकेलिः क्रतुकदनकरः कुन्दकर्पूरकान्ति
क्रीडन्कैलासकूटे कलितकुमुदिनी कामुकः कान्तकायः
कङ्काल क्रीडनोत्कः कलितकलकलः कालकाली कलत्र।
कालिन्दी कालकण्ठः कलयतु कुशलं कोऽपि कपालिकः कौ ः।।

कल्पान्त ही जिनकी दुर्ललित लीला है दक्ष यज्ञ विध्वंसक है जिनकी शरीर की कुन्द कर्पूर की सी कान्ति है, जो कैलास पर्वत के शिखर पर क्रीड़ा कर रहे है चन्द्रकला को धारण करने वाले कान्तिमय शरीर धारी है कंङ्कालों से क्रीड़ा करने में उत्सुक है कलकल ध्वनि करने वाले काल रूप काली कान्त है कालिन्दी (यमुना) के समान जिनका श्यामल कण्ठ है वे कोई कपालमालाधारी कपालिक इस पृथ्वी तल पर हमारी कुशल करे

छवि–छिनति असारं इति छवि
आत्मनि ईष्ट देवता ध्यानम्
एवं देह मये पीठे चिन्तयेदिष्टदेवताम्
अहं च ललिता देवी राधिकाया च गीयते
अहं च वासुदेवाखो नित्यं कामकलात्मकः
सत्यं योषित् स्वरूपोऽहं योषिच्चाहं सनातनी
अहं च ललिता देवी पुरुपा कृष्णविग्रहा
आवयोरन्तरं नास्ति सत्यं सत्यं हि नारद

(पद्मपुराणपाताल खण्ड)

कदाचिद् ललिता देवीं पुरुपाकृष्ण विग्रहा
लोकसम्मोनार्थाय स्वरूपं विभ्रती परा
कदाचितदाद्याश्री काली सैव तारास्ति पार्वती
कदाचिदाद्याश्री तारा पुंरूपा राम विग्रह।

(शक्तिसंगमतन्त्रे)
(मुण्डमालायाम तन्त्रे)

कृष्णरूपाकालिका स्याद्रामरूपा चतारिणी
बगला कूर्ममूर्तिः स्यान्मीनो धुमावती भवेत्

छिन्नमस्ता नृसिंह स्याद्वराहश्चैव भैरवी
सुन्दरी जमदग्न्यः स्याद्वमनो भुवनेश्वरी
कमला बुद्धरूपास्यान्मातङ्गी कल्किरूपिणी
स्वयं भगवती काली कृष्णस्तु भगवान स्वयम्

स्वयं भगवान्कृष्णः काली रूपो अभवद्वज्रे।।

कृष्ण रूपा काली और राम रूपा तारा माँ कूर्मावतार पीताम्बरा बगला का और मीनावतार माँ धूमावती का है नृसिंह अवतार छिन्न मस्तका माँ का है 'वराहावतार' भैरवी का है, परशुरामावतार माँ त्रिपुर सुन्दरी का है वामन भुवनेश्वरी का अवतार है बुद्धावतार माँ कमला का है और कल्कि अवतार मातङ्गी माँ स्वयं भगवान कृष्ण काली रूप ही है

स्त्रीणां त्रैलोक्यजातानां कामोन्मादैकहेतवे
वंशीधर कृष्णदेहं द्वापरे संचकार ह

(महाकालसंहिता)

काली ही तीनो लोको के प्रमादाओ के कामोन्माद के प्रशमन हेतु द्वापर में वंशीधर कृष्ण रूप में अवतरित हुई

एकैव शक्तिः परमेश्वरस्य
भिन्ना चतुर्धा विनियोगकाले
भोगे भवानी पुरूषे च विष्णु
कोपे च काली समरे च दुर्गा

(इत्यागमिकोपदेशत्)

परमेश्वर की अन्तरङ्गा आत्मिका शक्ति अपेक्षित प्रकार विनियोग (खर्च) में चतुर्धा रूप से भोग प्रसङ्ग से भोगदा भट्टारिका भवानी, पुरुषकार में तुम विष्णु हो क्रोध के समय काली और समर भूमि में तुम दुर्जनहन्त्री दुर्गा हो

हे अशरणोद्धरण प्रवणे
हे नतार्पितसद्गते – नतेभ्यः
प्रणतेभ्योऽर्पिता दत्ता सद्गति = सद + गति
स्वसायुज्यरुपा

जो तुमको नतानन होता है नमन करता है उसे स्वस्वरूप संधान सायुज्यादि सद्गति परिवेषण करती हो

हे शर्वरूपा–श्रृणाति हिनास्ति
कालाग्नि रूद्ररूपेण प्रलये

महाप्रलय मे कालाग्निरूद्ररुपा हो
कर संहनन करती हो

संसारवृत्त विघटन परायाणा होकर महाप्रलय कर देती है।

हे सोमवती सोमेश्वरी–'ऊँ' ओम ही सोमात्मिक सोम और सोम ही ओम है। पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः (भागवत)

मै रसमय चन्द्रमा होकर समस्त औषधियो को परिपुष्ट करता हूँ

चन्द्रार्धकृतशेखरम्
तारानायकशेखराम्

हे अर्द्धेन्दु मौले, तरुणेन्दु मौले हे मौलिस्थेन्दुशेखरे, उदितेन्दुशेखरे, उदिन्तेन्दुशेखरे नागायज्ञोपवीताङ्गी

चन्द्र को शिरो भूषण रूप से अभ्युपगम अङ्गीकृत करती हो अभासमुल्लास रूपा हो परन्तु चन्द्र को अमा के आश्चर्य जनक संयोग को सम्पादन करती हो मानो तुम औषधीषमणे

औषधी–"औषति दोषान् धत्ते गुणान्

दोषो का दाह पूर्वक गुणों का पोषण यही औषधित्व है

सोम चन्द्रमा के सदृश अमृत है
सूते अमृतमिति

इन्दुः चन्द्रमा, सोम इन्द्रादिदेवतातर्पक है **चन्द्रमा वै सोमो देवानां अन्नम्**

चन्द्रमा वै सोमः

समस्त वनस्पतियों में सोमवती लीलावती कलावती काली को अभिहित है शाकम्भरी हरहराती लहलहाती पर्जन्य पत्नी शांक विभर्ति

शाकम्भरी
धनिया कहै पियाज से
लहसुनवचन हमार
सोवा मेथी पालकी
गाजर कर्म हमार (योगीराज)

धन्नो नायिका अपने प्रियतम् प्याज पियाजी) से कहती है ले सुनले ले हमार वचन–पालकी में सो गयी थी–गाजर कर्म हमार–हमारे घोर कर्म परम्परा भस्म ज्ञानाग्निा भस्म हो गई यो शाकम्भरी देवी है। सोमक्षरण रूपा है

स्वयं कला–कलन, गणन करती है और आप है अकलिता अगणिता

अप्रमेया अनवगह्या हो
नर्म्रियतेऽनेन इति अमृतम्
हे अमृतरूपा द्राति रसमिति द्राक्षा

काला अङ्गूर जो रस दे कमनीया कामदा काली प्रतीत होती है

कृष्णरसगोलकरूपा काली
हे पन्नग भीमहारे
हे त्रिधाम नयने–त्रीणि धामानि
सूर्यन्दुवहिन्रुपेण नयनेषु
सूर्य–उत्पादकत्व
सोम, इन्दु–पालकत्व
अग्नि–संजिहीर्षा
सुनोति यः स सोम–सोम का सवनकर्ता

सूयते यः स सोम–जिसको निचोड़ा जाता है कर्म
सूनोति येन सः सोम–जिससे निचोड़ते है करण

सूनोति यस्मिन् सः सोमः
जिसमें निचोड़ते है अधिकरण

सोमेनापग्निष्टोमयागवत् जैसे अग्निष्टोम मे याग सोम से होता है

कर्त्ता, कर्म, करण, अधिकरण अर्थ सें सोम व्युत्पत्ति व्याकरण विवेक दृक् गोचर है

सहस्रारस्थ शिव–शिवा आलिङ्गन जनित दिव्य रसेन्दुगलितामृत आसव हि "कारण" मकार विवक्षित है

पित्वा पित्वा पुनः पित्वा
यावत् पतति भूतले ।
उत्थाय च पुनः पीत्वा
पुनर्जन्म न विद्यते।।

आलय लय पर्यन्त रसालय का गल
विलाघः संयोगानुकूल व्यापार पान करों

तोयस्थं लवणं यथा

जल में लवण खण्डवत् विगलित देहात्म भाव

बर्फ कं गाँव में गलने लगें
मोम की तरह पिघलने लगें

देवी पादाम्भोज युगार्चकानां
(भोगश्च) मोक्षश्च करस्थ एवं

देवी कपालकामिनि पादम्बुज सलग्न चित्त भोग और मोक्ष हस्तामल कवत् अधिगत करता है
यन्मधुना जुहोति महतीमेव तद्देवतां प्रीणातीति
जो मधु से हवन करता है वह देवता को प्रिय हो जाता है

सा काली द्विविधा प्रोक्ता

श्यामा रक्ता प्रभेदतः।
श्यामा तु दक्षिणा काली रक्ता सुन्दरीमता ।।

श्यामा दक्षिणा काली, रक्ता सुन्दरीमता सन्दुरी यही दो विभाग निर्विभागचिति के काली की सौम्यतम रूप रक्त काली कुङ्कुम विलिप्तगात्री सिन्दुरारुण विग्रहा त्रिपुर सुन्दरी राजराजेश्वरी .

सोमोद्भवः सौम्यः
सौम्यतमा त्रिपुरा
विकरालतमा आद्या काली

सुकृत पुण्यात्माओं के कल्याणार्थ अरुपा अगणिता अमानगा निराकार कल्याणी नाम रूप का परिग्रह करती है ।

अनादि काल से जीव काल की आवर्त वक्र गति में निपतित है अपने अच्युत स्वरूप से विच्युत होकर काल संधारा घर्षित जीव कालसंकर्षणी काली का आश्रय लेता है

जैसे वीरान में चुपके से बहार आ जाये
जैसे सेंहराओं में हल्के से चले वादे नशी
जैसे बिमार को वेवजह करार आ जाये ।
ये समाश्वासन तेरे शरणागतो को मिलता है

बद्ध जीवो को भोग प्रकृतवीर कौलिको के योगमय भोग से सर्वथा भिन्न है कौलिक के भोग करण–करणेश्वरी देवी संतृप्ति लाभ कर चिदाकाश रूप शिव के संश्लिष्ट अन्तर्मुख हो जाती है कौलिको की रोज शिवरात्री और अमावस्या है

उत्सवाः सर्वकालेषु (देवीगीता)
उमड़ा जब दरिया उल्फत का
तो चारो तरफ आजादी है
हर रात नई एक शादी है
हर रोज मुबारक वादी है
पीता हूँ जाम हरदम
नाचूँ मुदाम धम् धम्

दिन रात है तरन्नुम शाहे राम बेगम
आनन्द का उद्रेक है।

संहार चक्रं आत्मिका अनलरूपा काली में दृश्य संदग्ध हो जाता है

अहमिदं दग्धवान् (श्रुति)

इदङ्कारास्पद जगत कफन की तरह दहन और दफन हो जाता है ।
आत्मस्वरूप अग्नि कुण्ड मे हेयोपादेय समस्त प्रेमयो का दाह हो जाता है

दग्धेन्ध नमिवानलम्

श्रृङ्गार रूपा अङ्गाररूप अशेषा अवशिष्ट रहती है।

अहं अखिलं जगत्
अहं वेदैरूपासित

मै वेदों के द्वारा उपास्य हूँ ऐसा निजानन्द निजविनोदारण्य में निमग्न हो जाता है।
परासंविदा रूपा काली के अधीन भैरव पञ्चकृत्य सम्पादन करते है

तान्त्रिक आचार्यगण शिव और शिवा का अभेद मानते है शिव ही परमा चरमा शक्ति है शक्ति ही परम शिवेन्द्र है

उभय–उभय रूप परस्पराऽत्मा हो दोनो दोनो है परस्पर सामरस्य, युगल यामल, युगनद्ध उमया आलिङ्गतं–उमा के द्वारा उमाधव परिवेष्टित सम्परिष्वक्त है।

सृष्टि के मूल में बिन्दु है परम स्वातन्त्र्य से जब स्पन्दन जब बिन्दु का स्पर्श करता है तब बिन्दु रेखा रूप में परिणत हो जाता है सब से ह्रस्व रेखा दो बिन्दुओं से गठित है इसकी परवर्ती सृष्टि बिन्दु से नही होती तीन रेखाओं से त्रिकोण उत्पन्न होता है वह सृष्टि बिन्दु से नहीं होती तीन रेखाओं से त्रिकोण उत्पन्न होता है वह सृष्टि का मूल योनि का आश्रय लिए बिना शरीर उत्पन्न नही होता।

महामातृका विश्व जननी है। मातृका मूल में एक तथा अभिन्न है यह अक्षर ब्रह्म की क्षरात्मक

- **कमलान्य विकाशीनि तारकाश्च सुभास्वराः।**
- **यावदुन्निद्रितौ स्यातां तावद्भातु विभावरी।।**

जब तक प्रिया प्रियतम उन्निद्रित न हो जाए तब तक कमल अविकसित हो रहे तारे चमकते रहे और विभावरी बना रहे।

स्वरूपा भूता शक्ति है

तान्त्रिक भाषा में शिव तथा शक्ति का समरसात्मक भाव है सामरस्य नित्य है उस स्थान में काल नही क्योंकि काल परिमाण का साधक है यह अतीत अनागत वर्तमान रूप में हम लोगों के सम्मुख

उपस्थित होता है तान्त्रिक गण इसे महाकाल कहते है अहं से इदं रुप भासमान होने पर वह सृष्टि के रूप में वर्णित होने के योग्य है।

पुरुष चिद्रूप या प्रकाशरूप है लेकिन प्रकृति त्रिगुणात्मिका है यह त्रिगुण मिथ्या नही है सत्य है पुरुष अपरिणामी है प्रकृति नित्य परिणाम शील है किसी का कहना है कालाद गुणव्यतिकरः

साख्यमत में परिणाम का कोई बाध्य हेतु नहीं है स्वभाव ही उसका एक मात्र कारण है स्वतः परिणाम से सृष्टि नही होती है लेकिन विसदृश परिणाम के फलस्वरूप सृष्टि का उदय होता है विसदृश परिणाम के धर्म लक्षण तथा अवस्था तीन विभाग होते है प्रकृत के प्रथम परिणाम को धर्म परिणाम धर्म के प्रथम परिणाम को लक्षण परिणाम के बाद का अवस्था परिणाम है

ग्राहक भूमि में अहंकार है। चाहे वह ऐश्वरिक हो अथवा जैव लेकिन पूर्ण अहं ग्राहक पद का वाच्य नही है ग्राहक ग्रहण तथा ग्राह्य ये त्रिपुटी नही है इस अहं के सम्मुख तटस्थ रूप में दृष्य नही भासता । अहं रूप में तादात्म ग्राहक ग्रहण तथा ग्राहय ये त्रिपुटी के अन्तर्गत है इस अहं के सम्मुख तटस्थ रूप से दृश्य नही भासता अहं निर्वाण महासमुद्र में डूब जायेगा माँ की स्नेहमयी क्रोड में उपविष्ट होकर पूर्ण में प्रविष्ट होकर आत्म लाभ की कोई आवश्यकता नही होती

माँ का आश्रय करते हुए उन्ही के सहारे पिता के निकट उपस्थित होना था प्रक्रिया कोई भी क्यों न हो पहले आत्मशक्ति का जागरण अर्थात् कुण्डलिनी का चैतन्य होना विशेष आवश्यक है।

शक्ति के कोड मे आरुढ होकर शक्ति धारा में बहते हुए महासमुद्र में विलीन हो जाता है। शक्ति जब शिव धाम में साधक को पहुचा देती है वही शक्ति जीव को शिवभाव में परिणत करती है

माया के राज्य में एक मात्र अनूभूति है जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति वारम्बार इसी की अनुवृत्ति होती रहती है यही काल का आर्वत है इस आवर्त गति के साथ प्राण या अपान व श्वास प्रश्वास की सूक्ष्म गतियाँ मिली रहती है जो माया के राज्य में रहकर माया के उर्ध्व में कमी भी संञ्चरित होती है माया का राज्य काल के अधीन है माया के उर्ध्वदेश में भी काल पहला जो काल है आर्वत गति सम्पन्न है माया के उर्ध्व में सरलगति सम्पन्न है लेकिन सरल गति की प्राप्ति गुरु कृपा के बिना नही होती है।

इसके फलस्वरुप वक्र गति का अन्त हो जाता है सरल गति का स्फुट आभास होता है आज्ञा चक्र तक पहुचने पर समग्र विश्व उसी बिन्दु में आकर समाप्त हो जाता दुर्गा सप्तसती में जिसे अर्द्धमात्रारुप में वर्णन किया है उसे ही तंन्त्र ग्रन्थो में विन्दुरुप में वर्णित किया गया है यह अर्द्धमात्र काल की अर्द्धमात्रा नही है यह कहना ही बहुत है उस बिन्दु से ही सरल मार्ग का प्रारम्भ हुआ अर्द्धमात्रा का रहस्य यह है की विन्दु की प्राप्ति एकाग्रता का परिणाम है काल के कुटिल मार्ग में भौतिक तथा कल्पना का राज्य विद्यमान है।

बिन्दु के क्षोभ से वह जैसे एक ओर शुद्ध देह इन्द्रिय भोग के विषय तथा तथा भुवन रुप में परिणत होता है सिद्धान्ती शैवो के मतानुसार शिव शक्ति चिद्रूपिणी लेकिन विन्दु चित्तस्वरुप नही है वह शुद्ध माधारुपी है शिव की परिग्रहशक्ति अचित तत्व है यह शक्ति समवायनी नाम से प्रसिद्ध है जो शिव के

साथ अभिन्न रुप से विद्यमान है इसका नामान्तर है उपादान शक्ति। बिन्दु का उपादान जड़ है इसलिए शिव में इच्छा का स्वरुप शक्ति के आघात बिन्दु से क्षोभ होता है क्षोम होने के बाद इच्छा नुरुप आकार धारण करता है।

महामाया की क्रिया से शुद्ध जगत उत्पन्न होता है जिसका नाम है नामान्तर बैन्दव जगत शिव शक्ति का सामरस्य निर्विकार है इसमे न ह्रास है न वृद्धि न आदि है न अन्त शिव शक्ति का जो समरस्य है वही परम बिन्दु है इसी का परिभाषिक नाम है सूर्य, उसी का नामान्तर है कामाख्या रवि। पूर्ण रूप बिन्दु सूर्य रूप में उर्ध्व की ओर मध्यस्थान में रहता है।

मुर्ख बिन्दु कृत्वा कुचयुग मध्स्तरस्य तदधो
हर्राद्ध ध्यायेद यो हरमहिषि ते मन्मथ कलाम्

हार्द्धकला की सृष्टि शिवशक्ति सामरस्य मूलक है पशु अवस्था में आत्मा की इच्छा ज्ञान तथा क्रिया शक्ति पारछिन्न रहती है इस प्रकार की आत्मा आणवमलविशिष्ट है

पश्वाचार शब्द संयम आदि नाना विधि निषेधों के अनुष्ठान मूलक धर्माचरण को समझता है। विभाववीर साधक के लिए पञ्चतत्व का व्यवहार केवल मानस पूजा के अन्तर्गत है

दक्षिणाचार का अर्थ–शिवो भूत्वा यजेत पराम् साधक स्वयं शिव भाव ग्रहण कर शक्ति की उपासना करें । तब वामा भूत्वा यजेत पराम, इस प्रकार नियम का अनुसरण किया जाता है शिव रूप से शक्ति की उपासना अथवा शक्ति रूप से शक्ति की उपासना इन दोनो ही स्थलों अनुकल्पहीन पञ्चतत्व द्वारा अर्थात् प्रकृति शक्ति की उपासना की जाती है। अन्तः पूजा में कुण्डलिनी शक्ति को पञ्चतत्व का अर्पण करना पड़ता है

बङ्गदेश मिथिला तथा केरल में गुह्मकाली, हंसकाली, श्मशानकाली, दक्षिणाकाली कामकलाकाली, गुह्मकाली आदि के उपासना क्रम प्रचलित है ठीक उसी प्रकार सृष्टि काली स्थिति रक्तकाली मृत्युकाली चण्डोग्रकाली कालसंङ्किर्षिणी काली आदि का वर्णन अभिनव गुप्त पाद तन्त्रालोक में की है

कालिदास रचित चिद्‌गगन चन्द्रिका अभिनव गुप्त ने तन्त्रसार में काली शब्द की व्युत्पत्ति का निर्देश करते हुए प्रकाश स्वरुप परमेश्वर पराशक्ति रूप विमर्श को ही लक्ष्य किया है उसकी उर्मि, हृदय, सार, स्पन्द, विभूति तृषिका काली कार्षिणी चण्डी, वाणी आदि शब्दों से अभिहित किया है

क्षेपाज ज्ञानाच्च काली कलनवशतया

कालसंकर्षिणी का चरम लक्ष्य है क्रम का अतिक्रम करते हुए अक्रमस्वरूप में जीव को प्रतिष्ठित करना।

महाकाल तथा महाकाली शक्ति रुपिणी आद्या शक्ति साक्षात्कार होता है हमने कौलिक साधना का दृष्टि का अनुसरण करके जिस महाकाल भैरव की चर्चा पहले की है उसी के साथ अभिन्न रूप से विद्यमान हे महाकाली

कामकलारूपात्मकव्यकन विभाव्य मूलेधारतः कुण्डिलिनी परमशक्ति ध्यात्वा चन्द्रामृतेन संप्लाव्य

अधादी कामकलारूपात्मकव्यकन विभाव्य मूलेधारतः कुण्डिलिनी परमशवित ध्यात्वा चन्द्रामृतेन संप्लाव्य

कर कच्छपिकया पुष्पं गृहीत्वा सुषुम्णया

बाह्यहृदयाष्टादलरक्त पदममध्ये ध्यायेनं

कामकला विलास

मुखं बिन्दुवदाकारं तदधः कुचयुग्मकम् सर्वविद्यामृतापूर्ण सर्ववाग्विभव प्रदम्

यह कामकला समस्त चराचर में जागृत हैं वह त्रयीमयी है साम उसका मुख है ऋक् तथा यजुः उनका स्तन द्वय है अर्थव हार्द्धकला रूप है उनका तुरीयरूप साक्षात् ब्रह्म है पुनश्च वही कली निः शेषतत्त्व ग्रासस्वरूपिणी है

जो शक्ति क्रमशः काल को स्वाधिकार से अपसारित करती है उसी का नाम कालसंकर्षिणी है

वह अपने स्वातन्त्रय बल से सदृशपरिणाम को भी विसदृश परिणाम मे परिवर्तित करता है।

वागूपता चेतुत्कामेदवत्बोधस्य शाश्वती

न प्रकाशः प्रकाशेत सा हि प्रत्यवमर्शिनी

ज्ञान अथवा बोध की एक शाश्वत

अथवा नित्य सिद्ध वागरूपता है

ज्ञान या प्रकाश स्वयं प्रकाश है प्रकाश स्वरूप में यदि वाग्रूपता नही होती तो वह स्वरुपत : प्रकाश होते हुए भी प्रकाशमान नही होता, क्योकि मातृका के अन्तर्लीन हो जाने पर प्रकाश प्रकाश ही रह जाता है लेकिन वह अपने को प्रकाश रूप में पहचान नहीं सकता केवल इतना ही नहीं इस शक्ति का आश्रय करती हुई समग्र सत्ता प्रकाशमान होती है।

कला पादमात्रा समाहारात् पाद और मात्रा दोनो का समाहार से कला

कलनी शक्ति जैसे बीज में अङ्कुरोत्पादनी शक्ति शक्य समाहार (Potency) का कार्यजनन सामर्थ्य ही शक्यता है

पादमात्रा फल

पाद में पद्यमानता और मात्रा में मीय मानता है शक्य को व्यक्त और व्यक्त को शक्य में लाना कभी योगमाया कभी योगनिद्रा तत्त्ववियोग दशा में संयोग कराने की शक्ति योगमाया है योगमायामुपाश्रितः

(भागवत) 'क' व्यञ्जन धौरेय है सुख-स्रग चन्दन वनितादि, धृत, दुग्ध,

'ल' है कलत्व एव फलत्व, आ-व्याप्ति-काष्ठा

उल्लसिततत्त्व आनन्द की लीला है विश्व के व्यवहार का मूल है वह स्वतः अमूला

मूलेमूलाभावात् अमूलं मूलम्

मूल का कोई मूल नही वह स्वतः अमूला सर्व आधारा होती हुई स्वयं निराधारा है भगवती

साम्यावस्था में जो सूर्य है वैषम्य दशा में अग्नि और चन्द्र, अग्नि

भगवतः शक्ति भगवच्छक्ति

भगवान की शक्ति	षष्ठी तत्पुरुष
भगवति शक्ति	भगवच्छक्ति सत्तमी तत्पुरुष
भगवान में शक्ति	

पुलिङ्ग सर्वमीशानं स्त्रीलिङ्ग भगवत्युमा

(रुद्रहृदयोपनिषद)

पुलिङ्ग रुप ईशन शिव और स्त्री लिङ्गरूप सर्वस्त्री रूपा कलाकदम्बञ्जरी काली है

भगवान की शक्ति षष्ठि सम्बन्ध पर भगवान और उसकी शक्ति का दो तत्व है द्वैत है

अथवा सत्तमी के आधार पर भगवान में जितना कर्तृत्वादि सामर्थ्य है वह भगवती है या मधु में मिठास कि तरह शिव में शिवा है, अगर शिव अचिन्त्य अनन्त अमृत संप्लु तोदक अब्धि है तो उस अचिन्त्य अनन्त संप्लुतोदक अब्धि के माधर्यु सारर्स्वस्व की अधिष्ठात्री भगवती कामेश्वरी काली है

रुद्रः सूर्य उमा छाया तस्मै तस्यै नमो नमः

रुद्रः दिवा उमा रात्रि तस्मै तस्यै नमो नमः

रुद्रो यज्ञः उमा वेदिस्तम्मै तस्यै नमो नमः

रुद्रो वह्नि रुमा स्वाहा तस्मै तस्यै नमो नमः

रुद्रो वृक्ष उमा वल्ली तम्मै तस्यै नमो नमः

रुद्रो गन्धः उमा पुष्प तम्मै तस्यै नमो नमः

रुद्रो लिङ्ग उमा पीठ तम्मै तस्यै नमो नमः

ऐसा अमेद रूप से संश्लिष्ट शिव शिवा

अगर शिव दुग्ध है तो गोराङ्गी गौरी दुग्ध की धवलिमा है।

काली में उसके कान्त काल और काल प्रियतम में प्रियतमा कामदा काली भरपूर हैं।

सामरस्यं हि सायुज्यं वदन्ति ब्रह्मवादिनः उभय का (काल काली) समरस हो जाना सामरस्य किंवा सायुज्य है

कौलिकेन्द्र में आध्यात्म पथ की सभी संधाराए समाहित है

शाक्त, शैव, गाणपत्य, सौर्य, वैष्णव, आवान्तर धाराऐ भी परस्पर परिच्छेदन करती हुई कौल चौराहा (केन्द्र बिन्दु) पर आकार समाहार करती है।

आनन्द निखिल का हृत है और उल्लसित लीला अखिल का हृदय है

• हृददेश स्थापित क्रीं का कीला उसके ढीला होते होते हो गई 'लीला' हृदय में

ली द्रवीकरणम्
ला आदाने
लयनलाती इतिलीला

द्रवता का आधायाक लीला लीलावती कलावती काली

विलसित तत्वमानन्दस्य योगमाया
आनन्दानुरोधी विलासनी

योगमाया है वियोगे योगसामर्थ्य योगमायोति तांबिदु वियोग में भी योग तत्त्व से जो करा दे वह योगमाया आनन्द तरलता मधु की तरह या घृत की तरह हिमखण्ड की तरह आतप से द्रुत होकर दौड़ता है।

और कभी जड़िमा जल का बर्फ बन जाना यही लीला में कीला होता है चिरचञ्चलता किस अचञ्चल रसतम् की ओर अभिसार है

विश्वं चञ्चल्यते (बारं बारं चलति)
चिचलिषति (चलितुमिच्छति)

चलना चाहता है यह जगत् जङ्गम जगत

मानो रसाविष्ट होने के लिए नलिनी की ओर अलिनी चली जाजायमान (बारं बारं जायमाने) जगत का आधार अजायमाना अजा भगवती है

आनन्द कला कुण्डलिनी रूपा होकर अशोक वन' में बन्दिनी (साक्षात् आनन्द संवित्) या ह्लादिनी संविदा होकर भी) निद्रिता है वे प्रसुप्ता भुजगाकार शोकरहिता

शक्ति क्रीडाजगत्सर्वम्

आनन्दरूपा भगवती सर्वाऽनुस्यूता है

यां सीतेव्यभिजानासि
येयं तिष्ठति तव गृहे ।
कालरात्रीति तां विद्धि सर्वलङ्कोविनाशिनी ।। (बाल्मीकी रामायण)

रावण का मान हनन पूर्वक हनुमान बोले जिसको तू सीता जानता है जो तेरे घर मे उपस्थित है उसको सर्वलङ्का विनाशिनी निशीथिनी कालरात्री काली जानों सीता ही काली है यह बात अद्भुत रामायण में स्पष्ट है

सीता ही काली है यह बात अदभूत रामायण में स्पष्ट है

ननर्त जानकी देवी महकाली घोररवा (आध्यात्मा रामायण)

सहस्र बाहु से स्वपति का परा भव देख सीता क्रोध में बार–बार नाची काली मुण्डमालिनी नयनगोचर हुई राम को भूतले हलाग्रे समुत्पन्ना (सीतोपनिषद)

लाङ्गलपद्धति सम्भूता भूमि विदारिणी रक्तजा सीता

सूयते इति सीता (उत्पादन कर्त्री)

षूङ प्राणिगर्भविमोचने

सयति इति सीता–जो ऐश्वर्य युक्त हे सु प्रसवैश्वर्ययोः

स्यति नश्यति इति सीता

कालरात्री की तरह सांजीहिर्षा करती (षोऽन्त कर्मणि) है

सुवति इति (पू प्रेरणे) सबको तत्त्वोत्प्रेरण करती है वह सीता

सीनोति इति सीता (बाधँने वाली)

प्रणय रशना से बद्ध करती है वही सीता पिञ् बन्धने पृषोदषदित्वात्

सीतेन आगते इति सीता हलाग्र से उत्पन्न सीता

सीता पुरुस्कॉरस्ते परिगीता महर्षिभिः ऐ सुभगे सीते तुम पुरस्कार स्वरूप हो ऐसा महर्षियों ने कहा ह

इच्छाधिकमापि समर्था वितरणे
"नताङ्गी मातङ्गी रूचिर गति भङ्गी भगवती।"

गजवत् गमनशीला मातङ्गी रूचिर (सौ० नहरी आद्यशङ्कर)

इच्छा से अधिक स्वभक्तो को इष्ट वितरण में समर्थ हो
मार्तमैथिलि राक्षसीस्त्वयि तदैवाद्री पराधास्त्वया
रक्षन्त्या पवनात्मजाल्लघुतरा रामस्य गोष्ठी कृता
काकं तञ्च विभीषणं शरणमित्युक्ति क्षमौः रक्षतः

सा नः सान्द्रमहागसः सुखयतु क्षान्तिस्तवास्मिकी

अर्थ–कोई भक्त कहता है हे माता आपने सदा अपराध वाली राक्षसियों की हनुमान से रक्षा करके श्रीराम गोष्ठी छोटी कर दी, क्योंकि उन्होंने तो जयन्त और विभीषण की रक्षा शरणागत होने पर की थी। आपने शरण होने की अपेक्षा बिना ही उनका रक्षण किया

आप दयाऽर्णवस्वरुपा है
नादाभ्यन्तर ज्योति :
ज्योतिरभ्यन्तर रसः

सकलतत्त्वगर्भिणी नाद में ज्योति और ज्योति में रस है

रूद्रो नर उमा नारी तस्मै तस्यै नमो नमः
रूद्रो ब्रह्मा उमा वाणी तस्मै तस्यै नमो नमः

रूद्रो विष्णुरुमा लक्ष्मी तस्मै तस्यै नमो नमः
रूद्रो सूर्य उमा छाया तस्मै तस्यै नमो नमः

भवस्य पत्नी भवानी
भव शिव की पत्नी भवानी

माता भवानी जनको भवानी
बन्धुर्भवानी भगनी भवानी

गोत्रं भवानी स्वकुलं भवानी
बिना भवानी नहि कञ्चिदरित

सब सम्बन्ध भवानी मय हो गया या देवी सर्व भूतेषु बुद्धि रुपेण संस्थिता

माँ तुम बुद्धि हो बोधन अनुकूल व्यापार हो बोधेन ईद्धा (ईन्धिदीप्तौ बोध से संदिप्त वही बुद्धिरूपा हो

सकलनरनारी धी गुहासु प्रदीपः
सकल नर नारी की बुद्धि रूप गुहा में तुम प्रदीपरूपा

विचारात्तीक्षणता मेत्य धी : पश्यति परं पदम।
दीर्घ संसाररोगस्य विचारो हि महौसधम् ।।

विचार से सूक्ष्म होकर बुद्धि परम पद को देखती है संसार रूपी लम्बा रोग की चिकित्सा विचार ही है

न पातालं न च विवरं गिरिणांनैवान्धकारं कुक्षयो नोदधीनाम् ।
गुहां यस्यां निहितं ब्रह्म शाश्रतं बुद्धिवृत्तिमविशिष्टां कवयो वेदयन्ते ।।

न पाताल में विवरोमे न घनाडन्धकार में न समुद्र की खाड़ी में शाश्वत ब्रह्म काली जिस गुहा में रहती है वह अवशिष्टा बुद्धिवृत्ति रूप गुहा में रहती है चित्ताम्बुज पर संसरुढ समुदीर्ण काली चित्त रूपी पलङ्ग पर क्षूलती श्यामाँ

"हृत् कमल मञ्चे डोले करालबदनी श्यामा"

काल अगर शब्द है तो काली अर्थ है काल यदि पुष्प है तो काली सुगन्ध काल अगर वीणा है तो काली झंङ्कार है

ऐ मुक्ताविद्रुममाणिक्यहाराढयस्तन मण्डला
कुलमार्गे च या निन्दा सा निन्दा तव कालिके

कुल शक्ति काली ही है पृथ्वीव्यां लातीति (महाकाल संहित) कुल मार्ग की निन्दा माँ काल कान्ता काली की ही निन्दा है अर्थात निन्दा प्रलाप और स्वल्पज्ञता का प्रकाशन मात्र है

अयं हि कौलिकः पन्था सर्वेषां मुकुटायते

सभी पन्थो का मूर्धन्य शिर अवतंस है

कौलिकान् कुलमार्गञ्च कुलद्रव्यं कुलाङगना
ये द्विषन्ति जुगुप्सन्ते ये निन्दन्ति हसन्ति ये
येऽसूयन्ते च शङ्कन्ते मिथ्येति प्रवदन्तिये
ते–डाकिनीमुखे यान्तु सदारसुत बान्धवा ।।

कौलिको की कुल मार्ग की कुलद्रव्य की कुलाङ्गाना की) इन से जो द्वेष करता है जुगुप्सा निन्दा करता है हास्य लेता है मिथ्या दोष लगाता है शङ्का करता है वे सब के सब डाकिनी हास्हीना निष्करूणा के मुख में जाकर विदीर्ण हो जाते है

मौने मौनी गुणिनि गुणवान
पण्डिते पण्डितश्च
दीने दीन सुखिनी सुखवान्
भोगिनि प्राप्त भोग
मुर्खे मुर्खो युवातिषु युवा वाग्मिनि
प्रौढ़ वाग्मी धन्यः कोऽपि त्रिभुवन
जयी योऽवधूतेऽवधूतः

(शिवानन्दलहरी)

शक्ति ही शक्तिमान महाभाव का जीवन है

कौलिकेन्द्र अवधूत मौनीयों में मौन गुणियो में गुणवान पण्डितो में पण्डित दीनो में दीन, सुखवानो में सुखवान, भोगियों में प्रप्त भोगवान, मूर्खो में मूर्ख, युवतियों में युवा वाकदूत वाचालों में प्रौढ़वक्ता कोई त्रिभुवन जयी जो अवध्धूनोति वाह्य प्रकृति विकारान इति अवधूतः
जो बाह्य (बाह्यत् बेकार) प्रकृति गत विकारो से विगत है धूञ् कम्पने

कूलं प्राप्ता कौलाः

अर्थात् भवसागर संतरण पूर्वक तट पर स्थित जो है वही कौल है सबसे

कु भूमि वाचक है तद्पदोपलक्षित भू देवी कुं समस्तऐश्वर्य सुख सहितं लाति आददाति आ इत्यानीय दृदाति

जो समस्त ऐश्वर्य लाकर दे वह कुलमार्ग है

अन्तः शाक्ताः बहिः शैवाः
सभाया वैष्णवामता।
नाना रूप धरा कौला विचरन्ति महीतले।।

क्वचिच्छैवैसार्ध
क्वचिदपि च शाक्तै

सहवसन कदा विर्ष्णोभक्तै :
क्वाचिदपि च सौरैः सह वसन।। (शिवानन्द लहरी)

अर्न्तदशा शाक्त की है उपरिष्टात् शैव लगता है सभा में वैष्णव अर्थात् नाना रूप धर कर कौल धरती पर विहरण करता है कभी शैवो के साथ, कभी शाक्तो के सङ्ग कभी विष्णु भक्तो के सङ्ग कभी सौर्यो के सङ्ग ब्रह्मविद् कौल विहरण करता है।

कुत्सित का विनाश करता कौल पथ

कुल शक्तिरिति प्रोक्तं अकुलं शिवमुच्यत
कुलेऽकुलस्य सम्बन्धः कौल इत्यमिधीयते
कुत्सितं लुनत्तीति कुलः

कुल शक्ति और अकुल (सहस्रारस्थ) शिव और कुल शिवा अकुल शिव दोनो में विहरण करने वाला कौल है ।

हलां पिव दीक्षित् मन्दिरेषू
सुप्तो निशायां गणिका गृहेषू।
गृहे–गृहे चर्वण चर्बयन्तं
विराजते कौलिक चक्रवर्ती।।

बुद्धिमान विष को अमृत बना लेते है और बुद्धिहीन अमृत को भी विष बना लेते है ऐसा वैद्य बना लेते है ऐसा वैद्य बाम साधक है सखियाँ को मल्ल चन्द्रोदय बना लेते है।

निरञ्जनी, धुन्ध तेरी दरवार मनमारै अजराझरै
श्वपचोपिकुलज्ञानी ब्राह्मणादतिरिच्यते
कुल धर्म मनो यस्य स्वधर्मश्च व्यवस्थितः
यत्र कुत्र मृतो देवि दिव्यो वा वीरपुङ्गवः

भोगो योगायते साक्षत् पातकं सुकृतायते।
मोक्षायते च संसारः कुल धर्म कुलेश्वरी।।
अपेयमपि पेयं स्याद् भक्ष्यं भक्ष्यमेव च ।
अगम्यमपि गम्यं स्यात् कौलिकानां कुलेश्वरी ।। (कुलार्णव)

चाण्डाल कुल ज्ञानी है अगर तो
ब्राह्मण से उत्कृष्ट है
कुल धर्मानुयायी कही शरीर छोड़े
नित्य काली सन्निधान प्राप्त होता है
भोग भी भगवद भोग रूप योग हो गया
संसार नन्दन वन हो गया।

सर्वेभ्यश्चोत्तमा वेदा वेदेभ्यो वैष्णवं परम् ।
वैष्णवादुत्तमं शैवं शैवाद्दक्षिणमुत्तमम्।।

दक्षिणादुत्तम वामं वामाद् सिद्धान्तमुत्तमम् ।
सिद्धान्तादुत्तमं कौलं कौलात् परतरं न हि।। (कुलार्णव तन्त्रे)

सबसे उत्तमवेद है वेदो से वैष्णव उत्तम है और वैष्णव से शैव उन्नीत दशा में है शैव से दक्षिण और दक्षिण से ब्राम औ वाम् से सिद्धान्त मार्ग उत्कर्षोपेत है और सर्वानपेक्षथ्य

कौलात् परतरं नहि
कौल मार्ग से उत्कृष्ट कोई मार्ग नही

चाहे काढ़ लो दोनो नयन मेरे
तुम्हारी ओर अपलक देखना तब भी न छोड़ूगा

तुम्हारे पाँव की आहट इसी सुख सुनूगाँ
श्रवण के द्वारा चाहे बन्द कर दों

चरण भी छीन ले यदि, तुम्हारी ओर यूँ ही रात
दिन चलता रहूगा

कथा अपनी तुम्हारे सामने कहना न छोड़ूगाँ ।
भले ही काट लो तुम जीभ

मुझको मूक कर दो
भुजाए तोड़कर मेरी भले निर्भुज बना दो

तुम्हे आलिङ्गनों के पाश में बाधे रहूँगा

हृदय यदि छीन लोगे, उठेगी धड़कने कुछ और तीव्र होकर मानस में ।

जलाकर आग यदि मस्तिष्क को छार कर दोगे
रुधिर की वीथियों पर मै तुम्हे ढोता फिरुगा

हे माँ मै तुम्हे छोड़ने की कल्पना नही कर सकते

आगतं पञ्चवक्त्रात्तु गतं च गिरिजानने।
सम्मतं वासुदेवस्य तस्माद् आगमुच्यते।।

आगमश्चैवं वेदस्च द्वौ बाहू मम् शङ्कर।
ताम्यामेव धृतं सर्व जगत् स्थावर जङ्गमम।।

(महाभारत)

हे भुवन भैरवी तेरे प्रेम में भक्त रमि–रमि धावैं।
हे कोटि आदित्य तेजस्का सर्वं अत्तीतिऽदितेर अदित्वं

आदित्यरूप कौलिनी काली
निः शेषतत्व कवलपनी रूपा ही है।

रुवन्ती शिवाभिर्वहनती कपालं
जयन्ती सुरारीन् वधन्ती प्रसन्ना
नटन्ती पतन्ती चलन्ती हसन्ती
त्वमेका परब्रह्मरूपेण शिक्षा।।

हे माँ अब शिवामूर्ति से भीषण शब्द करने वाली हो तथा कपाल को धारण करने वाली हो। आप देव शत्रुओ का वध करने वाली सदैव प्रसन्न वदना और ब्रह्मस्वरूपिणी हो

मैथुनेन महायोगी ममतुल्योन संशय
सहस्रारोपरि बिन्दौ कुण्डल्या मेलनं शिवे
मैथुनं परमं दिव्यं यतीनां परिकीर्तितम्

वस्तुतः सर्वत्र शिवशक्ति संयोग ही सृष्टि में हेतु है शीत और उष्ण सोम और अग्नि रुप में आविर्भाव शुक्र रुप शिव और शोणित रुपा शिवा यही आत्मसात सार सर्वस्व कामकला रुप है। अग्नि सोमात्मकं जगत

मुखं बिन्दु कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तद अघो
हरार्द्ध ध्यायेद यो हरमहिषि ते मन्मथ कलाम

व्याख्या मुख बिन्दु (करके) कुचयुगल (दो बिन्दु) हकारार्ध रुपा योनि का ध्यान हे राम जी! शुद्ध चिदाकाश मैने तेरे लिए कहा है वही यह रुद्र रुप है वही नृत्य करता है जिसका नाम कल्पान्त कहता है वही रुद्र एवं भैरव है।

प्रलय के अनन्तर काली कैसे भासी चेतनधन है परम निर्मल है शान्तरुप है शिव तत्व भी उसी को कहते है वही शिव तत्व रुद्र आकार को धारण किए हुए दृष्टि आया है दूसरा कुछ नही है केवल परम चिदाकाश है

सर्व सिद्धान्त की समता यही है कि निर्विकल्प होना उसी निर्विकल्प समाधि में स्थित होना। सब क्रियाए होती रहे अपने में कुछ न देखना जैसे नट स्वांग ले आता है उसके अनुसार विचरता है निश्चय उसका आदि ही वपु में होता है शिव चिन्मात्र है अमल है विद्या अविद्या के कार्य से रहित शान्त है वही शिव भैरव है उसके चमत्कार का नाम चित्शक्ति है उसी का नाम काली है उसमें आत्मा में शिव में काली में भेद नही करता है

जैसे पवन और स्पन्द में भेद कुछ नही अग्नि और उष्णता में भेद कुछ नही काली तो परमात्मा की क्रिया शक्ति है।

जितनी द्वैत कलना है कारण कार्य रुप सब चित् शक्ति में स्थित है। जब यह निष्पन्द होती है शिव पद तत्व में निर्वाण हो जाती है कारण कार्य रुप भ्रम सब मिट जाता है केवल आकाशवत् शेष रहता है वह शुद्ध अद्वैत अचैत्य चिन्मात्र सदा अपने भाव में स्थित है

उसकी क्रिया शक्ति स्पन्दरुप है इसकी संज्ञा है

जैसे वड़वाग्नि समुद्र को सुखाती ऐसे ही जगत को सुखाती है और सिद्धि आश्रय लेकर आराधना करते है जयन्ती है अर्थात जिसकी सदैव जय है चंडिका है जिसको क्रोध से जगत प्रलय होता है भयभीत होता है वीर्य है अर्थात जो अनन्त वीर्य का भंडार दुर्गा है जिसका रुप दुर्गम्य है विजया है सब जगत को जीत रही है।

जब शिव से अलग होती है तब अंग बहुत हो जाते थे जब शिव की ओर आती तो सृष्टि रुप अंग थोड़े हो जाते है जब शिव रुप हो जाती थी आत्मा की काली शक्ति की क्रिया का वर्णन सुनाया है।

क्रिया शक्ति आत्मा में आत्मा कुछ भेद नही जैसे आकाश और शून्यता में भेद कुछ नही क्योकि आकाश का अंग शून्यता है अवयवी ओर अवयव में कुछ भेद नही अग्नि का रुप उष्णता है उसी का नाम काली है जो कृष्ण रुप है। जैसे आकाश उर्ध्व को श्याम भासता है ऐसे ही यह आकाश वपु है आकाश निराकार श्यामा भासती है आकाश की नाई उसका वपु है इसलिए इसका नाम कृष्ण वपु है। जब वह स्वरुप की ओर आती है तब जगत का नाश करती है स्पन्दशक्ति जब तक शिवसे अलग है तब तक जगत को रचती है जहाँ यह है वहाँ जगत है जहाँ सूर्य की किरणे है वहाँ जलाभास होता है

हे कोकिल निक्वाण कोमलालापे!

तुमने जो काली के अंग की सृष्टि देखी वह आत्मा में सत्य है अथवा असत्य है यह काली शक्ति आत्मा की क्रिया शक्ति है जिसका संकल्प शुद्ध होता उसके मनोराज्य की सृष्टि देशकाल मे प्रत्यक्ष होती है

जब तक यह काली क्रिया शर्वित शिव से व्यतिरेक होती है तब तक नाना प्रकार से जगत रचती है क्षोभ को प्राप्त होती है जब शिव की ओर आती है उसकी प्रकृति संज्ञा नही रहती अद्वैत तत्व में अद्वैत रुप रहती है।

जितने जीव है सब शिव रुप है इनके चित्त के फुरन ही काली रुप है उसमें दो प्रकार के शब्द होते है विद्या और अविद्या रुप पड़े निकलते है। अथवा चित्शक्ति बाहिर फुरती है। भ्रम का अन्त नही होता जब चित्तशक्ति उलट कर अधिष्ठान को देखती है परम शांति को प्राप्त होता है आत्मा और चित संवित में भेद कुछ नही रहता। जानना नँ जानना दोनो नही रहते जब इच्छा शक्ति शिव की ओर नही देखती तब तक नाना प्रकार का नृत्य करती है जगत को रचती है तब तक शिव को देखती है तब तक इसका नृत्य विरस हो जाता सब इसके अंग विरस हो जाते है इस काली का जो आकार था वह अप्रमाण था मापा नही जा सकता था शिव की ओर देखने में सूक्ष्म हो गया पहले पर्वत समान था निकट आई तो ग्रास के समान हो गया जगन्माता इसका नाम है वह अनामय है निर्विकार है परम शान्त रुप भाव से रहित है।

जयगङ्गाराम जय चण्डीवाम
जयगङ्गाराम जय चण्डीवाम

उत्तमा मानसी पूजा ब्राह्यपूजा कनीयसी मानस आराधन उत्कृष्ट होता है ब्रह्मण्डोद्भव द्रब्याणि चर्व्य चोष्यादिकानि च फलं पुष्पं यथा गन्धं वस्त्रलङ्कार भूषितं तत्सर्वं मनसा देयं कालिकायै पुनः पुनः

(निरुत्तरतन्त्रे)

ब्रह्मण्डौत्पन्न द्रव्य एवं चर्व्य चोष्यादि (चबाने वाले चूसने वाले) भक्ष्य पदार्थ फल पुष्प गन्ध वस्त्र अलंकार आदि भूषणो को मन ही मन कालिका माँ को प्रदान करे

पेयं जलनिधेर्मान द्रव्यं च गिरिमानतः
यत्नेनैव प्रपद्यात्तु कालकायैः पुनः पुनः (निरुत्तरतन्त्रे)

समुद्र के परिमाण का पानीय(पेय दूध दधि घृत मद्यादि) पर्वत परिमाण का फल चर्व्य चणक बदामादि) यत्न पूर्वक कालिका को प्रदान करे।

कालिका विषयिणि भजनान्दचन्द्र

मातृ मुखे पितृमुखं दत्त्वा जपेत काली सनातनीम् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो निर्वाण पदवीं ब्रजेत्।।

माँ कालिका के दिब्य मुखाम्बुज पर महाकाल का दिब्य मुख का परिचिन्तन

योनिश्च जनिका माता लिङ्गश्च जनकः पिता
विभाव्य पितरौ भावं उभयोः परिचिन्तनम्
लिङ्गरुपो महाकालो योनि रुपा च कालिका
कलापूजां बिना देवि सर्व निष्फलतां ब्रजेत
जन्मान्तरं सहस्रेषु काली नैव प्रसीदति
अमा स्यन्निर्गुणे सापि अनिरुद्धसरस्वती
सगुणा सुरगर्भे च महाकालनिरुपिणी

अमा नामक शक्ति निर्गुण है अमा शक्ति ही अनिरुद्धासरस्वती स्वरुपा भी है सगुण शक्ति महाकाल की निरुपणकारिणी है अतः महाकाल के स्वरुप का निरुपण काली के द्वारा होता है जब तरुणेन्दु शिव स्वयं शक्ति की ओर उन्मुख होते है तब वे शक्ति बन जाते है और जब तरुणेन्दु शक्ति शिव की ओर उन्मुख होती है तब वह शिव बन जाती है

शिव का शक्ति की ओर उन्मुखता सृष्टि है
शक्ति का शिवोन्मुखता प्रलय द्योतक है।
त्वं वा अहमस्मि भगवो देवतेऽहं वै त्वमसि
मै तूमहूँ तुम ही मै हो अभेद उपास्य उपासक का (एतरेय)
कालीरूपमात्मानं विभावयेत
अपने को काली रूप में भावन करो (कालिकोपनिषद)
मै ही मुण्डमालिनी हूँ
सा कालिकाऽहं निजबोधरूपा
वह कालिका मै हूँ जो निजबोध वैभवरूपा है
एवं देहमय पीठे चिन्तयेदिष्ट देवताम्
एवं देहमय पीठ में जगदम्बिका का परिभावन करो
तत्र को मोह कः शोक एकत्वमनुपश्यतः
एकत्व संधान अवस्था शोक मोह रहित विशद अशोक है

बृहदारण्यक में कहाँ–

अन्योऽसावन्योऽहमस्मीति न स वेद यथा पशुरेव देवनाम्

जो देवताओ की इस समझ से उपासना करता है वह देवता (उपास्य) है मै (उपासक) हूँ वह बिल्कुल कुछ भी नही जानता वरन् वह उपासक उपास्य (देवताओ) के पशु के समान है भगवान शंकर ने लिखा है

अन्योऽसावहमन्योऽस्मीत्यतुपास्ते योऽन्यदेवताम् न स वेद नरो ब्रह्म स देवनां यथा षशु

अर्थ–मै और हूँ यह और है यह खयाल करके जो (अपने से भिन्न) देवता की उपासना करता है वह देवताओ` के लिए बिल्कुल पशु समान है

यावद्धियते सा दीक्षा
यदश्नातितद्धविः

यत्पिबति तदस्य सोमपानं यद्रमते तदुपसदो यत्संचरत्युपविशत्युतिष्ठतै च प्रवर्ग्यो यन्मुखं तदाहवनीयो याव्याहृतिर्यदस्य विज्ञानं तज्जुहोति (महानारायणोपनिषद्)

धैर्य धारण ही दीक्षा है जो भोजन करता है वह हवि है जो वह पीता है वही सोमपान है जो क्रीडा करता है वही उपसद (नजदीक होना) परिष्वङ्ग है चलना बैठना खड़ा होना वही प्रवर्ग्य है मुख ही हवन योग्य अग्नि जो व्याहृति है वही आहुति है विज्ञान ही हवन है परासपर्या यही है (सामवेद)

यथेह क्षुधिता बाला मातारं पर्युपासते
जैसे भूखा बालक माँ को भजता हैं

फिर तो सभी मातृवत् पोषक उपहारदायक हो जाते है (वृहदायरण्यक)
सर्वाण्येनं भूतान्यभिक्षरन्ति
सभी भूत उसको नतानन होते हैं
सर्वाऽस्मै देवा बलिमाहन्ति (तैतरीय)
सारे देवता उसको बलि लाते है
कामान्नी–कामतोऽन्नमस्येत
इच्छामात्र से अन्न पाना
कामरूपी–कामातो रूपाण्यस्येति
अभिलषित रूपो की प्राप्ति इच्छा मात्र से होने लगती है (श्रुति)
सोऽश्नुते सर्वान्कामान् ब्रह्मणा सः विपश्चिता
विद्वान ब्रह्म के साथ सभी कामनाओं का भोक्ता होता है
एतदेवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत्
इस अक्षरा क्षररहिता को जानने पर जो चाहता है वही समुपस्थित हो जाता है। (कौषीतक)
सर्वेषां भूतानां भूर्धा भवति

मूर्धन्य धामग होता है ब्रह्मविद यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा देवा ओकासि चक्रिरे (नृसिंहतापनीयोपनि) जिसमें इन्द्र वरुण, मित्र, अर्यमा देवतादि अपना घर बना के रहते है वही माँ महामाया है काली माँ की गोद पर शहनशाही करता उसका भक्त मानो अनन्तता की गोद पा गया हो।

त्वमसि मम भूषणं त्वमसिममजीवनं त्वमसिममजलधिख्नम

तुम्ही सब कुछ हो

माँ सूर्य को बारह महीने तेज देती हो मुफ्त में हमको आठोपहर निजानन्द देने में क्या कङ्गालरूपा हो जाती हो

आँखे लगा के तुझसे न पलके हिलायेगे
देखेगे खेल हम तुम्हे आगे नचायेगे

नयनन अन्तर आव तू
नयन झाँपि मैं लेव

ना मै देखौ और को
ना तेहि देखन देव

लोचन मग रामहि उरयानी
दीन्हे पलक कपाट सयानी

माँ छोटे बच्चे को आम्रफल खेलने को देती है बच्चा दस्तूर के मुवाफिक हाँथ से पकड़कर मुँहके पास ले जाता है और लगता है चूसने। चूसते चूसते आखिर वह फल फूट पड़ा बच्चे के हाथ पर मुँह पर कपड़े पर रस ही रस फैल गया। अब तो न कपड़े याद है न माँ याद है न हाँथ मुँह का होश है रस रूप हो रहा है इसी तरह श्रुति माता पिता का दिया हुआ यह पका हुआ महावाक्य रूपी अमर फल एकान्त अन्तः करण के साथ दुहराते आखिर फूट पड़ता है परमानन्द समाधि आ जाती है

असकृदुपदेशाच्च–बार बार आवर्तन न

उपदेष न धर्मनिष्ठोऽस्मि न चात्मेवेदी न भक्तिमास्त्वच्चरणारविन्दे
अकिचञ्नोऽनन्यगतिः शरण्य तव पाद मूलं शरण प्रपद्ये

मै धर्मनिष्ठ नही हूँ मुझसे बुरे बुरे काम पाप होते है मै आत्मज्ञानी नही हूँ अज्ञान के अन्धकार में फंस गया हूँ आपके चरणों में मेरी सच्ची भक्ति नही है मै अंकिचन हूँ मेरे पास कुछ भी नही है

निरासकस्यापि न तावदुत्सहे महेश
हातु तव पादपंकजम्।

रुषो निरस्तोऽपि शिशुः स्तन्धयो
न जातु मातुश्चरणौ जिहासति।।

तुम चाहे हमे जितना दुत्कारो अपनी गोद से उठाकर अलग रख दो या फेक ही दे मै तुम्हारे आँचल की छाया कभी छोड़ने वाला नही हूँ मेरे मन में यह कभी आवेगा ही नही मै तुम्हे छोड़कर कही जाऊँ।

वह सिजदा भी क्या
जिसमें होश हो सिर उठाने का
इबादत और बकदरे होश तौहिने इबादत है ।।
सजग हो कि चलना भी है तो वह सिजदा
क्या पूजा को बदनाम करना है

श्रेयान्द्रव्यामयाद्यज्ञाज्जान यज्ञः परंतप
सर्व कर्माखिले पार्थ ज्ञाने परिसमाव्यते

हे परतप अर्जुन–द्रव्यमययज्ञ से ज्ञान यज्ञ ही महत्वपूर्ण है द्रव्य मय यज्ञ मे राजस तामस का सञ्चार भी हो जाता है ज्ञान यज्ञ निर्दोष है

शाकानामयुतम्–दस हजार प्रकार की सब्जी ही माँ को अर्पण करो
यद्यत्पश्यति चक्षुर्भ्यां तत्तदात्मोति भावयेत्
नेत्र जहाँ जहाँ जाय आत्मिका कालिका का परिभावन

सा काली, सा काली
सर्वत्र सर्वदा काली नयनगोचर हो
यद्यच्छूणोत कर्णाभ्यां ततदात्मेति भावयेत्
सारे श्रवणीय शब्द कालिका का नूपुरोच्चारण
र–रूनझुन रूनझुन परिभावन

लभते नासया यद्यत्तत्तदात्मेति भावयेत् जितना भी घ्राण सुगन्ध ग्रहण करता है वो सब गन्धवती सुगन्धि पुष्टिव र्धनात्मिका काली परिभावन करे

जिह्वा यद्रसं ह्यति तत्तदात्मेति भावयेत्
जिह्वा के द्वारा निखिल रस्य में आत्मा रूप रसवन्ती रसमूर्ति काली ही हैं
जैसे कृष्ण रसगोलक में श्यामा रसांश का परिभावन करे
त्वचा यच्चस्पृशोद्योगी तत्तदात्मोति भावयेत्

स्पृश्य मात्र में त्वचा के द्वारा वहीं मसृणसंस्पर्शऽमृत कुसुमकोमला का भावन करे
समस्त संसार आत्मा का संकल्प होने से आत्मास्वरूप है स्थायी उपहित चिति रसघनमूर्ति हैं

सर्वग्रासोस्म्यह
सर्वप्रेमास्पद्येऽस्मयह

सर्वसमापिका ग्रासिका कालिका मै ही हूँ निरतिशय प्रेम की आस्पदा कालिका मै ही हूँ

ऐसी अहंग्रहो उपासना
येऽर्चयन्ति पराशक्तिं विधिनाऽविधिनापि
न ते संसारिणो नूनं मुक्ता एव न संशयः

जो पराशक्ति (रक्तपा रुधिर रक्ताङ्गी रक्तखप्पर हस्तिनी कालिका का) का विधि या अविधि पूर्वक भी अर्चन बन्दन करता है वह सचमुच पामर संसारी जीव नही है।

मार्तण्ड मण्डलनिभो जगदम्बयोऽयम्
भक्तया मया मणिमयो मुकुरोऽर्पितस्ते
पूर्णेन्दुबिम्ब रूचिरं वदनं स्वकीय
मस्मिन विलोकय विलोल विलोचनेन

सूर्यमण्डल से भी ज्यादा चमकीला स्वच्छ मणिमय दर्पण (माँ को भक्त देता है) शतचन्द्रानन मुख को लोल लोचन से देखो

निधेहि पादपङ्कजे कनकघुङ्घुरुं अम्बिके
तेरे पाद पङ्कज में (मै) कनक
घुङ्घुरु समर्पित करता हूँ।

अथ बहुमणिमिश्रै मौक्ति कैस्त्वां विकीर्य,
त्रिभुवन कमनीयैः पूजयित्वा च वस्त्रेः,
मिलित विविध मुक्तां द्रिव्यमाणिक्य युक्तां
जननि कनक वृष्टिं दक्षिणां तेऽर्पयामि ।।

मणि मिश्रित मौक्तिक और त्रिभुवन कमनीय दिव्य साटिका (धोती) से माँ को पिरवेष्टि करो मुक्तामाणिक्य मिश्रित कनक वृष्टि दक्षिणा में सप्तसमुद्र को मधु बनाकर पृथ्वी को पात्र बनाकर माँ को मधुसमर्पण करो

भगवति : तव केशान् कङ्कटतैर्माज्र्ययित्वा भगवती तुम्हारे बालों को कंघी से सम्हाल रहा हूँ
झटिति कनकसूत्रेजूटमावेष्यामि बाल गुम्फन कनक सूत्रो से करूगा

हे विमलभूषणोद्भासिनी
दृष्टया कृतार्थीकुरु
कृपादृष्टि की वृष्टि कृतार्थता
का आबंटन करती है
प्रमत्त वारुणी रसैर्विघूणमान लोचना

कर्मकाण्डोपासका रसिका नन्दमार्ग न जानन्ति (सामरहस्योपनिषद्)
कर्मजड़ लोग रसिकेन्द्रो के मार्ग का कुछ भी ज्ञान नही रखते

हजारो अल्फाज जो मिलके बयाँ न कर सके
वो बयान है तेरे नजरो की बेबयानी में
बेबयानं सब ब्रयान होता है
नासा कनकमुक्ता योजिता संराजते नितराम्
अतिरति भोक्त्री, सर्वसम्भोग भवना

भव्य–भावोदय सम्पन्न कोलेन्द्रो का गृह परिग्रह रूप ग्रहस्थाश्रम क्रीडार्थ ही होता है
तेषा गृहाश्रमः केवलं क्रीडार्थमेव भवति (रमहस्योप निषद्)

कर्मजड़ा कर्मकाण्डोपासकाः
सदा कौलिको भवेद, कुलाचाराद सर्वसिद्धिश्वरो भवेत (श्रुति)

पृथ्वीव्यां यत्र सुरतानन्द भोगास्तद्धोगा विर्भावान्तयामिने नमो नम (समारहस्योपनिषद्)
धरणि मण्डल पर जितना सुष्ठु रता–सुरत रमण रस है उसका अन्तर्यामी प्रशासक भगवान कृष्ण है कृष्ण रूपा कृष्णा

कृष्ण : कृष्णा = कृष्णौ
यस्यस्मरणादेव रसाविष्ट चित्तो भवेत् (सामरहस्योपनिषद्)
जिसका संस्मरण रसोद्रेक लाता है
रस रसाक्रान्त हो जाता है

कुं कुं कुञ्ज विहारिणे नमो नमः
अतिरति विहारिणे नमो नमः (सामरहस्योपनिषद्)
ते कामक्रोधादयस्तदर्थे प्रयुज्यमाना : साधन रूपा भवन्ति (सामरहस्योपनिषद्)

भगवदर्थ काम, क्रोध भगवत्प्राप्ति भूत साधन हो जाते है
रागादय : कामक्रोधादयो गुणा साधन रूपा भवन्ति (सामरहस्योपनिषद्)

तू मुझे बता तू क्या था मेरे बयां से पहले
मीरा न होती तो गोपाल कुछ पहले दरिद्र होते।

तेरी थी तो क्या हकीकत थी मेरे गुमा से पहले
ये चमन चमन नही था तेरे बागवॉ से पहले
तेरा जिक्र तक नही था मेरी दास्ता से पहले
मेरे शोकए बन्दगी से बने दैर और हरम
तेरी सजदागाह कहाँ था मेरी आस्ता से पहले
सब तेरा नाम तेरी हस्ती तेरी असल तेरी
सूरत ये लफ्जमानी

इस तरह भक्त बालक भगवती से खीझता है अभोग से अवहेलना पूर्वक पापादि नाष वहेलया करती है अनाभोगेन वलेशादिपापान् (अवधूती) धुनोतीत्येवधूती धुनोतीत्येवधूती चन्द्र शुद्ध होकर आलि नाम प्राप्त करता है। सूर्य शुद्ध होकर काली (कालि) नाम से ख्यात होता है। आलि व कालि का संयोग ही वज्र सत्व की अधिष्ठान भूमि है। द्विकल्प तन्त्र है आलि

आलि कालि समायोगः
वज्र सतवस्य विष्टरम्

यह काली निज अनुरागियों की आली (सखी) हैं।
सखायाम इच्छति सा सखी (महाकाल) की इच्छा करती है अत सखी है।

ऐ आली काली माँ
त्वत्ता मत्ता च चिन्मयम्

तुम्हारा होने का भाव और (श्रुति)
हमारा होना दोनो चिन्मय है

अतः शरीरे निहितो गुहायामज एको नित्यो
यस्याँ पृथ्वी शरीरं यः पृथ्वी मन्तरे संचरन्
यं पृथिवी न वेद (सुबलोपनिषद्)

शरीर के आभ्यन्तर गुहा में एक नित्य अज (न जायत इति अज (टाप्) अजा निहित है–पृथ्वी उसका शरीर है वह पृथ्वी के अन्दर संचरणशील है और वह पृथ्वी का ज्ञाता है पर पृथ्वी उसे नही जानती है

यस्याप : शरीरं योऽपोन्तरे संचरन यं आपो न विदुः

आप् (जल) उसका शरीर है वह (पयस्वती) जल में विहरण करती है परन्तु उस जलवती को जल नही जानता

यस्य मृत्यु शरीरं यो मृत्युमन्तरे संचरन यं मृर्त्युन वेद

मृत्यु उसका शरीर है वह मृत्यु के अन्दर संचार करती है उस मृत्युञ्जय को मृत्यु नही जानती है और वह मृत्यु को जानता है

एकाकी जीर्णकामो हस्तिनि सिंहे दशे मसके नकुले सर्प राक्षससगन्धर्वे मृत्यु रूपाणी विदित्वा

न विभेति कुतश्चनेति वृक्षमिव
तिष्ठासेत् छिद्यमानोऽपि

अकेला जीर्णकामना वाला योगी हाथी में सिंह में सर्प में मसक, नेवला सर्प, राक्षस गन्धर्व इनको मृत्यु रूप जानकर–भयभीत नही होना चाहिए वृक्ष की तरह (जैसे कोई कुल्हाड़ी लेकर काटने जाता है पर वृक्ष पूर्व) स्थिर रहें

न कुपित हो न कम्पित

(श्री काली सुध धारा)

जले शीतलत्वं शुचौ दाहकत्वं विधौ निर्मलत्वं रबौ ताप कर्त्वं

जल में शैत्य शीतला माँ है अग्नि में दाहक त्व दहन भैरवी है चन्द्र में निर्मल्व भगवती ही है रवि में तपन रुद्राणी है

सर्वेषामेव गन्धानां पृथिवी हृदयम् सभी प्रकार के गन्ध का हृदय रहत् अन्तः करणं अयति गच्छति इति हृदयम) पृथ्वी है

सर्वेषां रसानामापो हृदयम्
सभी रसो का हृदय जल है

यस्मात् जातं सर्वम् इति ज
जिससे सब पैदा हो वह 'ज'

लीयते यस्मिन्–'ल'
जिसमें सब लीन हो वह 'ल' जल

सर्वेषां रूपानां तेजो हृदयम्
सारे रुपों का अयन तेज है

सर्वेषां स्पर्शनां वायुर्हदयम्
सभी स्पर्शका वायु हृदय है

सर्वेषां शब्दानामाकाश हृदयम्
सभी शब्दो का हृदय आकाश है (सुबालोपनिषद्)

एक पञ्चाशत् (51) मुण्डो की माला 51 शब्दो की माला अथवा समस्त पीठों (एकपञ्चाशत्) (इक्यावन) को पहनकर सर्वपीठमयी हो गयी काली

शब्दब्रह्म निवास भूत वदने बैखरी श्रुति गोचरा–व्यवहार गोचर बिखरती बैखरी विश्व विग्रह रूपा है गजगा अग्रगा उग्रगा शक्ति

बैखरी श्रुति गोचर
हृदिस्थिता मध्यमा गेया
पश्यन्ती नाभि संस्थिता
परावाक् मूल चक्रस्था।

हृदय से मध्यमा वाणी नाभि में पश्यन्ति
और मूलाधार में परावाक् ब्रह्मस्वरूपिणी

महीं मूलाधारें कमपि मणि पुरेहुत वहम्
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि
मनोऽपि भ्रू–मध्ये सकलमपि भित्वा कुल पथ
सहस्रारे पद्मे सहरहसि पत्याविहरसि

मूलाधारस्थित भूतत्त्व, मणिपुर स्थित जल, स्वधिष्ठान मध्य अग्नि को हृदय में मरुत को, उसके ऊपर गगन विशुद्ध चक्र, भृकुटि मध्य मन को उद्भेद कर ब्रह्म रन्ध्र में एकान्त रूप से स्व पति के सङ्ग विहार करती हुई

इडा भागीरथी गङ्गा पिङ्गला यमुना नदी
तर्योमध्यगता नाड़ी सुषुम्णाख्या सरस्वती

त्रिवेणी संगमो यत्र तीर्थराज स उच्यते तत्र स्नानं प्रकुर्वीत सर्व पापै प्रमुच्यते (ज्ञानसंकीलनयन्त्रे)
. इडा भागीरथी गङ्गा पिङ्गला यमुना नदी उनके मध्य में सुषुम्णा नाम सरस्वती अदृश्या का है वही त्रिवेणी सङ्गम है मुक्त त्रिवेणी मूलाधार पर और युक्त त्रिवेणी आज्ञाचक्र पर) वहाँ स्नान से सर्वपाप धौत हो जाता है

सुषुम्ना इड़ा पिङ्गला गान्धारी हस्तिजिह्वा पूषा यशस्विनी अलम्बुषा शुमा और कौशिकी–ये कन्दसमुद्भूता प्रमुख
दस नाड़िया हैं।

महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृति।
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी।।

वह महाविद्या होने के कारण नित्य भासमान है महामाया होने से कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुं समर्थ महा मेधा होने से सर्वविध अनन्त सस्कारों की रवनिभूत है महास्मृति होने से तत्तसंस्कार द्वारा सर्व विध ईक्षण कर सकती है ब्रह्मा को व्यामोह कर महामाया है

आसुरी होकर अभक्तो को भय देती है

चित्तं दूरे परित्यज्य योऽसि सोऽसि स्थिरो भव (योगवासिष्ठ)

चित्त तत् तत् विषयक छोड़कर चिति जो चित्त विकल्पों में अनुस्यूत है वही अपना रूप है

(कालिकोपनिषद्)

काली रूपमात्मानं विभावयेत्

अपने को मुण्डमालिनी कपालकामिनी जानो

नियति–नियम्यते अनया वा नियच्छति

इति वा–प्राचीन कर्म जन्य फलोत्पत्ति का बोध है गुण क्रम का उच्छेद करने वाली काली काल करने वाली काली है उसको अघटित घटना पटीयसी कहते हैं वह सृष्टि कूहुक कुसालनी हैं। चण्ड और मुण्ड असुर द्वय दृप्त वृत्ति से धर्म का उल्लंघन होता है मुण्ड मथना पद का यही अर्थ है–'मुण्ड मुडि खण्डने' अर्थात खण्डाकार वृत्ति का विलोड़न करने वाली अर्थात् भयंकर असार पदार्थ को फेंककर खण्डाकार या द्वैत वृत्ति को छानबीन कर दूर हटाने वाली

शिरोमणि माला विभूषणा पद से ऐसा बोध है भगवती शिर श्री असुर उणादि अर्थात श्रेष्ठ गुणों की माला पापं पुण्यं पशुं हत्वा ज्ञान खण्डेन शाम्मवि

ज्ञानरूपी असि से

प्रच्छन्नासिलता च कोश कुहरे

द्वैतभ्रम छेदिनी

(ज्ञातृ, ज्ञान, ज्ञेय) यही त्रैलोक्य है

त्रिशुलं तेन त्रैलोक्यम्

गृहीतं कर कोट रे (योगवशिष्ठ)

त्रिशुल त्रिपुटी भयोच्छेदक है।

विभूषिता है तन्त्र शास्त्र में इस लक्षणा से शब्द ब्रह्म विभूषणा (विज्ञापिता) पर ब्रह्म का बोध है क्योंकि इस पचास दाने की माला की एक एक दाना मुण्ड अर्थात कटा सिर एक एक मातृका वर्णन का द्योतक है।

शब्दब्रह्म निवास भूत वदने तन्त्र और तान्त्रिक की निन्दा से भैरवादि मांसादि चर्वण रूप दण्ड देते है।

तन्त्रं च तन्त्रवक्तारं निन्दन्ति

तान्त्रिकीं क्रियाम्।

ये जना भैरवास्तेषां मांसास्थि चर्व णोद्यता:।।"

अश्नुते व्याप्नोति शीघ्रमिति आशु:"

व्याप्त होकर रहे वही आशु

कही मूढ़ कही रूढ़ अवधूत

तन्यते विस्तार्यते ज्ञानमनेन इति तन्त्रम्

माता च पार्वती देवी

पिता देवो महेश्वर:

भ्रातरो भैरवा सर्वे

स्व भवनं भुवनत्रयम (तन्त्र तत्त्व)

नायमात्मा बलहीनेन लभ्य:

(मुण्डकोपनिषद्)

मत्रि गुप्तपरिभाषणे मन्त्रयते घत्रि अयं खलु साधकानां सर्व कार्य साधयति

साघकेष्ट देवतां प्रत्यक्षतां नयति सिद्धि च प्रयच्छति

मन्त्रस्य वाच्यं देवता (उत्तर)

यथा देवं तथा मन्त्रे यथा मन्त्रे तथा गुरौ ।

यथा गुरौ तथा स्वात्मन्येवं भक्तिक्रम स्मृत:।।

मीमांसादर्शन देवता को मन्त्रात्मक मानते है।

मन्त्र पुंदेवत्य है और विद्या स्त्री देवत्या है।

सारे विश्व में जिसका निजभाव प्रस्फुटित हो गया

आद्या विद्या गदा वेद्या

मनश्चक्रं निगद्यते

सनातनी–सनेत्यव्ययम्

नित्यार्थकम्

माया–मय् गतौ

"मयते गच्छति प्रकटयति जगति"

विश्व में गुण रूप में अपने को प्रगट करती है

गुणत्रयरूपा सांख्य सम्मत भूता हो।

गौरी गौराङ्ग देहत्वाद् भवदेहानुषङ्गिणी

त्रिकाल साक्षिणी भूत, भविष्य, वर्त मानद्रष्ट्री त्रिनयना

स्तनों के पतन स्थल में काशिका पीठ वहाँ अकार की उत्पत्ति हुई

जपनगिरा कौछगिरि पीठ हुआ इकार की

अपिहित (ढकना)

अपावृत (खोलना)

क–जहाँ माँ का मस्तक गिरा

वहा श्री पीठ हुआ और ककार का प्रादुर्भाव हुआ

वामनेत्र के पतन स्थान रौद्र पर्वत

वह महत्पीठ हुआ ई की उत्पत्ति हुई

जिह्वाग्र पतन स्थल रौद्र पर्वत वह महत्पीठ हुई जपात् सिद्धितंत्र

काली पीठ

विप्राणां ज्ञानतो ज्यैष्ठयम् (म०)

दंष्ट्रा–दश–ष्ट्रन–टाप

इसी कारण मुख कराल दिखता

दष्ट्र–वाच्यार्थ–लम्बदात

अविद्यासंजालको कुतरती है

उद् गृहणाति इति उग्रः

सृजन

उद्ग्राह्यत–धारण पालन

उद्गृह्यते–प्रलय

स्वाहा–वह्निसुन्दरी

सगोद्भवः सौम्यः

गुदा के पृष्ठ भाग में कन्दमध्यस्थ मूर्धापर्यंत पदमसूत्रसदृश्य वीणादण्डतुल्य ऋजुविद्युदवर्णा सुषुम्ना है सुषुम्ना के वाम भाग में वामना सापुटपर्यन्त इड़ा नामक चन्द्रनाड़ी है सुषम्ना के दक्षिण भाग में दक्षिण नासापुटपर्यन्त पिङ्गला नामक सूर्यनाडी है चन्द्र और सूर्य काल के धारक है सुषम्ना कालभोक्त्री है पिङ्गला के पृष्ठभाग में स्थित दक्षिण श्रोत्र और नेत्रपर्यन्त पूषा है गान्धारी और सरस्वती के मध्य पादाङ्गुष्ठसे याम्य (दक्षिण) कर्णान्त यशस्विनी है। पायुमूल से नीचे और श्रोत्रपर्यन्त अलम्बुषा है कन्द से पादाङ्गुष्ठ पर्यन्त कौशिकी है। सुषुम्ना के शिव देवता है। इडा के हरि (विष्णु) देवता है पिङ्गला के ब्रह्मा देवता है सरस्वती के विराट देवता है पूषा के स्वंय पूषा ही देवता हैं अलम्बुषा के जलाधिपति वरुण देवता है वरुणा के वायु देवता है यशस्विनी के सूर्य देवता है गान्धारी के चन्द्र देवता है शंखिनी के चन्द्र देवता हे पयस्विनी के प्रजापति देवता है विश्वोदरी के अग्नि देवता है मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत विशुद्ध आज्ञा ये छह चक्र है। गुदा में आधार चक्र हैं

लिङ्ग में स्वाधिष्ठान चक्र है

नाभिदेश में मणिपूर चक्र है

हृदय में अनाहत चक्र है।

कण्ठमूल में विशुद्धि चक्र है।

मस्तक में आज्ञाचक्र है।

प्रथम गुदा स्थान आधार चक्र है चतुर्दलकमल त्रिरावृत आधार में ब्रह्मचक्र है जो कि सर्वकामप्रद है स्व का अर्थ प्राण है प्राणाश्रय होने से स्वाधिष्ठान नाम है मेढ्रको ही स्वाधिष्ठान कहते है।

स्वशब्देन भवेत्प्राणः स्वाधिष्ठान तदा श्रयम्

स्वाधिष्ठानं ततश्चक्रं मेढ्रमेव निगद्यते।।

तृतीय मणिवत् प्रकाशयुक्त तन्तु से जहाँ शरीर वायु से पूरित होता है वह द्वादशार मणिपूर नामक महाचक्र कहा जाता है।

षष्ठ आज्ञा नामक द्विदल चक्र को योगशिखोप–निषदादि के अनुसार भ्रूमध्य में माना गया है। योगशिखोपनिषत के अनुसार जीवेश्वर की अभिव्यक्ति स्थान का नाम पीठ है। शरीर शिवालय है यह चतुष्पीठ और चतुराम्नाय से दीप्त है।

मूलाधार में कुण्डलिनी नामक परा शक्ति है वायु वहिन बिन्दु नाम हंस मन का यह उद्गम स्थल है। सर्वकामफलप्रद होने से इसे प्रथम कामरुप पीठ माना गया है हृदयस्थित अनाहत चक्र को द्वितीय पुण्ड्गिर्यारण्य पीठ माना है। विशुद्ध चक्र को तृतीय जालन्धर नामक पीठ माना गया है आज्ञा नामक चक्र को चतुर्थ उड्याणारण्य महापीठ माना गया है।

चतुर्दलं स्यादाधार स्वाधिष्ठानं च षड्दलम ।।

नाभौदशरलं पद्म हृदये द्वादशारकम्।।

षोडसारं विशुद्धाख्यं भ्रूमध्ये द्विदलं तथा।।

सहस्रदल संख्यातं ब्रह्मरन्ध्रे महापथि।।

(मुण्डकोपनिषद)

(योगचूडामणियोपनिषत्)

मूलाधार पर चार दलकमल का और स्वाधिष्ठान षड्दलकमल, मणिपुर दशदल कमल, अनाहत हृदय पर द्वादश दल कमल विशुद्ध षोडषदलकमल आज्ञा चक्रद्विदल इस तरह इक्यावन वर्ण टंकित होगे सहस्र (1000) दल कमल ब्रह्म रन्ध्र जहाँ अव्यवहित प्रिया प्रियतम का अङ्ग सङ्ग रुप परिष्णङ्ग हो रहा है।

पञ्च चक्र मूलाधार से विशुद्ध चक्र कण्ठ पर्यन्त पञ्च भूत (पृथ्वी, तेज, जल, वायु,आकाश) के अवबोधक है।

अतिशय रुप से आवर्तन (संसार में आना-जाना धनचक्कर ही चक्र है)

चक्रम्। चित्शक्ति रक्त काली त्रिपुरसुन्दरी आदि स्त्री रुप से

अतिशयेन पुनः पुनः करोतिइति चक्रम्। चित्शक्ति रक्त काली त्रिपुरसुन्दरी आदि स्त्री रुप से आत्मा परमात्मा शिव विष्णु रामादि रुप से पुरुष और ब्रह्म आदि रुप से नंपुसक

त्वं कुमार उतवा कुमारी त्वन जीर्णो दण्डेन वञ्चसि। जातो भवति विश्वतोमुखः

नैव स्त्री न पुमानेष न चैवायं नपुंसकः। यद्यच्छरीरमादत्ते

तत्तदद्भवति पुरुषः

तत्वतः चिति परमाचरमा है वह न स्त्री है न पुरुष और न नपुंसक ही है जिस–जिस शरीर को ग्रहण करती है वही हो जाती है।

स्थूल, सूक्ष्म, कारण इन शरीरत्रय में साक्षी रुप से मिहिरारुणविग्रहरक्त काली सुन्दरी ही है।

वही विश्वगर्मा विश्वोदरी विश्वप्रपञ्चो त्पदिनी है।

अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूना चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानां

तां मा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रा भूर्यावेशयन्तीम् (ऋ.सं.)

मै सर्वजगद् ईश्वरी स्वामिनी और उपासकानां धनप्रापयित्री धनदा धन गर्विता धन कालिका स्व नक्तो को वसु, द्रधनआदि प्रदान करती है।

योगक्षेम वहाम्यहंम्

चिकितुषी–सर्वज्ञोपजातम् स्वात्मतया साक्षात्कृतवती संविद्रुपाज्ञान काली

यज्ञियानां यज्ञार्हणां पूज्यनां प्रथमा मुख्या पूज्यों में सर्वाग्रगण्य धौरेय भूमिस्थात्रां भूरिभावेन बहुभावेन बहुत प्रकार से प्रपञ्चात्मा रुप से विलसित (प्रपञ्चात्मनाऽवतिष्ठमाना) भूरि भूरीणि बहूनि भूतजातानि आवेशयन्ती जीवभावेन आत्मानं प्रवेशयन्ती=तत्सृष्ट्वा तदनुप्राविशत्=बहुतो में प्रवेश कर सत्ता और स्फूर्ति देती हुई माँ व्यदधुः देवा विदधति कुर्वन्ति यद्यत् कुर्वन्ति तत्सर्व मामेव कुर्वन्ति मया सो अन्नमति योविपश्यति य प्राणिति यइश्रणोत्युक्तम्

अमन्तो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवते वदामि

भोक्तृत्व शक्ति जो अन्नादि चर्वण में अपेक्षित है वह भगवती से ही यः अन्नमति सः भोक्तृशक्तिरुपया मया एव अन्नमत्ति (मेरे द्वारा ही खाता है)

यः विपश्यति आलोकयति यश्च प्राणिति निःश्वासोच्छ्वासरुपं व्यापारं करोति यश्च उक्त श्रृणोति सादीप तत्तशक्तिरुप या मयैव तत्तद्व्यापारं करोति।

(हम सब का देखना,श्वास, प्रश्वास उक्त कहा हुआ का सुनना भगवती कहती है यह सब मेरे ही शक्त्यश के व्यापार है)

अमन्तवो–अमन्यमाना अजानतः उपक्षियन्ति उपक्षीणा भवन्ति

अर्थात–इन हलचल में ई–कामकला रुप अन्तर्यामिनी की शक्ति नही प्रस्फुरित होती तो वह अज्ञ मारा जायेगा उपक्षीण सत्ताक होगा।

श्रुधि–वक्ष्यमाणं श्रृणु=अभीष्ट विवक्षित सुनो

श्रद्धिवं श्रद्धिःश्रद्धा तथा युक्तम्

(अर्थात श्रद्धा उपेत युक्त)

श्रतं कल्याणं धारयति इति श्रद्धा

कल्याण विधारक श्रद्धा होती हैं

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः

यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि त ब्रह्मांण तमृषिं तं सुमेधाम्

अहं स्वयमेवं इदं वस्तु ब्रह्मात्मकं वदामि तदेतद् देवेभिः इन्द्रादिभिः देवैरयि मानुषेभिः जुष्टम् ईद्रऽवस्तुस्वरुपाहं

अर्थात् सर्व विदित का विज्ञापन कर

यं कामये–रिक्षितुंमहं वाग्छामि जिसका रक्षण चाहती है।

तं तं (उस, उस को) उग्रं कृणोमि सर्वेभ्योऽधिकम् करोमि

सबसे प्रगल्भ और समुन्नत करती हूँ

तमेव ब्रह्मामं–स्रष्टारं करोमि स्रष्टा ब्रह्मा का भी निर्माण भगवती सापेक्ष है।

तमेव ऋसिमतीन्द्रियार्थ दर्शिनं करोमि

तथा शोभन प्रज्ञा भी प्रदान करती है।

ऋषि का ज्ञान

ध्राणतः शब्दं श्रुणवन्ति पृष्टतः रुपाणि पश्यन्ति अर्थात ध्राण से शब्द सुनता है और पीठ (पृष्ठ) भाग से रुप नयनगोचर करता है अतः आसाधारण क्षमता ऋगतौ

गतिर्गमनं गतिर्ज्ञानम्

गतिर्प्राप्तिः गतिर्मोक्षः

अहं रुद्राय धनुरा तनोमि

ब्रह्मद्विषे शखे हन्तवाड

अहं जनाय् समदं क्रणोम्यहं द्यावापृथ्वी आ विवेश

पुरा त्रिपुरविजय के समय

रुदाय रुद्रस्य षष्ठ्यर्थे चतुर्थी

महादेवस्य–महादेव के धनुष को

धनुचापं अहम आतनोमि

अर्थात बाण को चाप को फैलाया अर्थात मारने के लिए संधान किया।

ब्राह्मण से द्वेष करने वाले को मारा

ब्रह्मद्विषे ब्राह्मणाक्षां द्वेष्टारं

शरुं हिंसकं त्रिपुरवासिन असुरं

हन्तवे हन्तुं हिंसितुम

हन्तो (तुमर्थे सेसेन् (पा० सू०)

इति तवैप्रत्यय !

उ पादपूरणार्थ

अहं जनाय भक्तजनार्थं समदं मधु कैटभ महिषासुर शुंभ निशुंभादि

शत्रुभि : सग्रामं कृणोभि

भक्तों की आशा माँ है कितनी मार्मिक उक्ति

बाणसेरान् की सिंह हेरान कि ध्यान धरे प्रभु को जपति हो

कि कहु सेवक कष्ट परे तँह अष्ट भुजाबल दै लड़ती हो

सिंह चढ़े देवी छत्र विराजत
लाल ध्वजा रण में फिरती हो

रात्रौ चेन्मदिराक्रान्त मानसं देवकीसुतम्

रासगोष्ठी परिज्ञातं गोपी मण्डल मध्यगम् (गौतमी तन्त्रम्)

कृष्ण का कौलत्व प्रपञ्चित है
गौतमी तन्त्र के उपरोक्त श्लोक में

सुराघट सहस्त्रेण माँस भूतौदनेन च

यक्ष्ये त्वां प्रीयतां (देवि) गङ्गे पुरी पुनरुपा गता वा० रा० आयोध्याकाण्ड 189

कालिकोल्लास–8

गगनविहारिणी

अकाशस्तल्लिगत्

विद्यास्वरूपा महाशक्ति

महानिर्गुण की अधिष्ठात्री शक्ति होने के कारण ही इनकी उपमा अन्धकार से दी जाती है महासगुण होकर वे सुन्दरी कहलाती है महानिर्गुण होकर काली तत्त्वतः सब एक है भेद केवल प्रतीतिमात्र का है कादि और हादि विधाओं के रूप में भी एक ही श्री विद्या क्रमशः काली के प्रारम्भ होकर उपास्या होती है एक को संहार क्रम तो दूसरे को सृष्टिक्रम नाम दिया जाता है।

वृहन्नीलतन्त्र में कहा गया है कि रक्त और कृष्ण भेद से काली ही दो रूपों में अधिष्ठित है कृष्णा का नाम दक्षिणा है तो रक्तवर्णा का नाम सुन्दरी है।

विद्याहि द्विविधा प्रोक्ता
कृष्णा रक्ता प्रभेदतः
कृष्णा तु दक्षिणा प्रोक्त रक्ता
तु सुन्दरीमता

उपासन के भेद से दोनों में द्वैत है पर तत्व दृष्टि से अद्वैत है वास्तव में काली और भुवनेश्वरी दोनों मूल प्रकृति के अव्यक्त और व्यक्त रूप है।

वभूव वऽवारुपस्तापयामास मेदिनीम

वडवा के रूप में होकर सम्पूर्ण पृथ्वी को जलाने लगी।
"कामे विनष्टे पत्न्या किं विद्यते ते प्रयोजनम्"
काम के नष्ट हो जाने पर पत्नी का क्या
प्रयोजन काम का नाश करना योगियों का धर्म है

मै गिरिराज हिमवान के घर में जन्म लेकर पुनः आपको पतिरूप में प्राप्त करने के लिए आपके समीप आयी हूँ जो जिस भाव से भक्तिपूर्वक मेरी प्रार्थना करता है। मैं उसी भाव से उसके मनोरथ पूर्ण करती हूँ शम्भो! मै वही सती हूँ दक्ष के महायज्ञ में आपको मै वही काली भीमा त्रैलोक्यरूपिणी हूँ।

यदि में प्राणतुल्यासि सती त्वं चारू लोचना।
तदा यथा महामेघ प्रभा सा भीमरूपिणी ।।

वभूव दक्षयज्ञस्य विनाशाय दिगम्बरी ।
काली तथा स्वरूपेण चात्मान दर्शयरव माम्

जिस प्रकार प्रजापति दक्ष के महायज्ञ के नाश के लिए महामेघ के समान भयंकर रुपिणी दिगम्बरा काली के रूप में प्रकट हुई थी उसी रूप में आ जाइए।

गिरिराज पुत्री पूर्व की भांति चिकने काजल के समान कान्तिवाली साक्षात् काली रूप से प्रकट हो गई। वे दिगम्बरा थीं उनके शरीर से रक्त टपक रहा था उनके भयानक आँखो से उनके वक्ष स्थल पर पुष्ट उन्नत उरोज शोभा पा रहे थें पैरों तक लटके हुए लम्बे केश पाश सें उनका स्वरूप भयानक प्रतीत हो रहा था लपलपाती हुई जीभ और उनके चमकते दांत नखों से उसी प्रकार सुशोभित हो रही थे। घुटनों तक लटकती हुई अत्यन्त विशाल चञ्चल मुण्डमाला उसी प्रकार सुशोभित हो रहे थे मानो महा मेघ घोर घनघोर घटा छायी हो चार लम्बी भुजाओं से ज्योर्तिमयी सुशोभित हो रही थी नाना वर्णो के रत्नों से सुशोभित उनका मस्तक था ।

दिगम्बरी क्षरद्रक्ता भीमायत विलोचना।
पीनोन्नत कुचद्वन्द्व चारु शोभित वक्षसा।।

गलदपादंशलम्बि केश पुञ्जभयानका ।
ललजिह्वाज्वलदन्त नखै रूप शोभिता।।

उद्यच्छ शाङ्क निचयैर्मेघपड.क्तिरिवाम्बरे ।
आजानुलम्बि मुण्डालिमालयाति विशालया।।

अगर हम भक्त हो जाए तो दुनियाँ भगवान हो जायगी (आत्मराट मनोजानन्द)

''राजमाना महामेघ पक्ति श्रञ्घलया यथा''

चिरं त्वद्विरहेणेदं निर्दग्धं ह्रदयं मम् ।
त्वमन्तर्यामिनी शक्तिर्ह्रदस्था महेश्वरी ।।

आराध्य त्वत्पदाम्भोजं घृत्वा ह्रदय पङ्कजे ।
त्वद्विच्छेद समुतप्तम् ह्रत्करोमि सुशीलतम् ।।

इत्युक्त्वा स महादेवो योगं परममास्थितः।
शयिवस्तपदाम्भोज दधार ह्रदये तदा।।

ध्यानानन्देन निष्पन्दशवरूपहरः स्थितः।
तथा व्याघूर्णमानने त्रस्ता ददर्श परमादरः।।

अंशतः पुरतः स्थित्वा पञ्चवक्त्रः कृताञ्जलिः
सहस्त्रनामभिः कालीं तुष्टाव परमेश्वरीम्।।

रोमाञ्चित शरीरसे प्रसन्नात्मा भगवान शंकर ने उन्हे देखकर भक्तिपूर्वक भदगद् वाणी में ऐसा कहा बहुत दिनों तक आपसे अलग रहने के कारण यह मेरा ह्रदय विरह से दग्ध हो गया आप महेश्वरी मेरे ह्रदय में रहने वाली अन्तर्यामिनी शक्ति है। आपके चरण कमलो को मैं अपने ह्रदय कमल में रखकर उनकी अराधना करके आपके विरह से सन्तप्त ह्रदय को पुनः शीतल करुँगा।।

परम योग में स्थित हुए भगवान शिव ऐसा कहकर भूमि पर लेट गए उनके चरण कमल को ह्रदय पर धारण कर लिया ध्यान के आनन्द में मग्न शिव चेष्टाशून्य होकर शव रूप में स्थित परम आदरपूर्वक घूर्णित नेत्रों से उन्हें देखने लगे पुनः शंकर अपने एक अंश से पञ्चवक्त्र रूप में सामने स्थित होकर हाँथ जोड़कर सहस्त्रनाम द्वारा काली की स्तुति करने लगे।

उन्नतस्तनी उन्मत्तनयना अत्युग्रदन्ता उत्तुङ्गस्थलालया उल्लासिनी उल्लास चित्ता उत्फुल्ल नयनोज्वला उत्फुल्ल कमलारूढा

विष्णु परम अह्लाददायिनीनारायण
विमोहिनी रामचन्द्रस्वरूपिणी
लकेश्वर विनाशिनी दिव्यमाल
धरा दिव्या दिव्यगन्धानुलेपना
विश्वमूर्तिर्विश्वधरा विश्वेशपरिपालिनी
विश्ववनिता विश्वमाता विचक्षणा
दुष्टतापिनी जनभक्षण तत्परा

महाकाली चण्डवक्त्रा चण्डमुण्ड विनाशिनी प्रेतभूमि कृतालया दिव्यवस्त्र परीधाना दिव्यस्थान निवासिनी

रूधिरासव भक्षिणी रणनृत्य परायण
निरातङ्काऽमलप्रभा।
सर्वोपरिपरायणा
क्षणात्मिका क्षीणतनुः क्षीणाङ्गी क्षीणमध्यमा

चन्द्रानना चन्द्रकान्तिश्चन्द्रार्धाङ्कितमस्तका
गरीयसी गुरूरता गुह्ययस्थान निवासिनी गलज्जटा गलत्केशा गलद्रुधिरचर्चिता
अत्यन्त विभवारूपा महाविभवरूपिणी
शब्द ब्रह्मस्वरूपा च शब्दयोनि परात्परा

धन्वनी धनदायिनी
रुद्राणीरुद्रवनिता रूद्रैकादशरूपिणी

रक्तदन्ता रक्तजिह्वा रक्तभक्षण तत्परा
रक्तप्रिया रक्ततुष्टा रक्तपानसुतत्परा

सर्वप्रणताअशुभनाशिनी
कृष्णपक्षप्रपूज्या च प्रेतपक्षसमर्पिता

धूमावती वियन्मूर्तिः विंद्युन्मालाविलासिनी।
पारिजात वनावासा पारिजातवनप्रिया।।

अष्टहस्ता दशभुजा चाष्टादशभुजान्विता।
चर्तुदश भुजाऽसख्य भुजवल्ली विराजिता।।

कपालम्बित विग्रह ।।
सर्वयोषित्स्वरूपा

द्वादशार्कस्वरूपा च सहस्त्रार्कसमप्रभा।
विन्ध्यस्था विन्ध्यनिलया विन्ध्यपर्वतवासिनी।।

कामालसित चार्वङ्गी कटाक्ष क्षेपमोहिनी
नीलकण्ठमनोरमा

अक्षोभ्यपत्नी संक्षोभनाशिनी ते नमो नमः

यत्र यत्र तवेदं हि कालीरूपं मनोहरम्।
आविर्भवति तत्रैव शिवरूपस्य मे हृदि।।

संस्थातव्यं त्वया लोके ख्याता च शववाहना।
भविष्यसि महाकाली प्रसीद जगदम्बिके।।

जहाँ जहाँ आपका यह सुन्दर काली रूप स्थापित हमे वहीं मेरे हृदय पर भी कल्याणकी उस रूप के स्थापना हो जगदम्बिके आप इस संसार में शववाहना महाकाली के नाम से विख्यात होंगी

उपासना शब्द में उप + आस + युच (अन) ये तीन अंश है इनमें 'उप' उपसर्ग आस धातु और भाव अर्थ में (युच) अन प्रत्यय है। उपासनम् उपासना अर्थात् शास्त्र विधि के अनुसार उपास्य देव के प्रति

पारिजातवनं रम्यमुत्तरे परिकीर्तितम्।
प्रफुल्लंकुसमाकीर्णं चित्रभ्रमर संकुलम्।।

वसन्तः सर्वदा तत्र वायुर्वाति शनैः शनैः।
विचित्रपक्षिरूपेण ब्रह्माविष्णुमुखाः सुराः ।।

रमणीय पारिजातवन प्रसिद्ध है उन वन में सदा सर्वदा वसन्त छाया रहता है मन्द मन्द हवा बहती रहती है वहाँ ब्रह्मा विष्णु आदि प्रमुख देवता विचित्र पक्षियों का रूप धारणा कर महाकली के चरित्र का गुणगान करते रहते हैं।

गायन्ति चरितं काल्यास्त स्मिन्मधुरनिः स्वनै।
पूर्वस्थं मुंनिशार्दूल रम्यं चारूतरं सरः।
स्वर्णपङ्कज कल्हार कुमदैरति शोभितम्।।
गुञ्जित भ्रमर श्रेणी पक्षवात प्रकम्पितै
चम्पकाशोकपुष्पश्च कूलं तस्य मनोहरम्

गुञ्जार करते हुए भ्रमरसमुदाय के पंखो से प्रवाहित वायु से हिलते हुए चम्पक तथा अशोक पुष्पों से उस सरोवर का तट अत्यन्त मनोहर प्रतीत होता है वह सरोवर विविध वर्णों की मणियों से निर्मित सोपानो से चारो ओर मण्डित है।

वदन्त्येनेक तत्त्वज्ञाः काली विद्या परात्परा।
या सैव कृष्णरूपेण क्षिता ववातरत्स्वयम्।।

अनेक तत्वज्ञानी लोग कहते हैं जो परात्पर विद्या स्वरूपिणी काली हैं उन्होंने स्वयं पृथ्वी पर श्रीकृष्ण रूप में अवतार ग्रहण किया।

यदि मे त्वं प्रसन्नासि तदा पुंस्त्वमवाप्नुहि।
कुत्रचित्पृथ्वीपृष्ठे यास्येऽहं स्त्रीस्वरूपताम्।।

यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो पृथ्वीतल पर कही भी पुरुषरूप से अवतीर्ण होइए और मै स्त्री रूप से अवतीर्ण होऊँगा।

भगवती कालीं ने वसुदेव के घर में देवकी के गर्भ से श्री कृष्ण रूप से पृथ्वी पर अवतार लिया यह सब आप मुझे विस्तार पूर्वक बताइए जगन्नाथ आप दयालु तथा सर्वज्ञ है

पुंरुपेण महादेव वसुदेवगृहे प्रभो
कृष्णाडेहं मप्रिथार्य स्त्री भव त्वं हि त्रिलोचन।।

पुंरुपेण जगद्धात्रि प्राप्तायां कृष्णतां त्वयि।
वृषभानोः सुता राधास्वरूपाहं स्वयं शिवे।।

मूतयोऽष्टौ तथा मर्त्ये भविष्यन्त्युतयोषित :

जगत का पालन करने वाली शिवे आपके पुरुष रूप से श्री कृष्ण रूप से श्री कृष्ण के रूप में प्राप्त होने पर स्वयं मैं आपकी प्राण सदृश वृशभानु पुत्री राधा रूप में होकर आपके साथ विहार करूँगा साथ ही मेरी आठ मुर्तिया भी सुन्दर नेत्रोवाली रुक्मिणी, सत्यभामा आदि पटरानियों के रूप में मृर्त्यु लोक अवतरित होंगी।

विजया और जया नामक मेरी दोनों सखियों श्रीदाम और वसुदाम नाम से पुरुषरुप में प्रतिष्ठित होगी।

तस्माद्बभूव सा कृष्णः श्यामों नवघनद्युतिः

उसी कारण वे नवीन मेघ की आमा से युक्त श्याम वर्ण वाले श्री कृष्ण के रूप में अवतीर्ण हुई

किंतु भद्रकाली या मुर्तिघन नद्युतिः वसुदेव गृहे ब्रह्मन् पुरूपेण भविष्यति

नवीन मेघ की आभावाली मेरी जो भद्रकाली मूर्ति है वह वसुदेव के घर में पुरुष रूप में जन्म लेगी

जामातुर्द्वेषतः पापं जायते हि सुदारुणम

दामाद के प्रति द्वेषभावना रखने से घोर पाप उत्पन्न होता है।

अमानि तो नैव गच्छेत्कदाचिच्छ शुरालयम्।
मन्त्रामस्मरणादेव निन्दन्ते मामहर्निशम् ।।
गन्तु पितृगृहे कन्या नाहवानं समपेक्षते।
तस्मात्पितृ गृहे नूनं गमिश्याम्यनुमन्यताम्।।

किसी दूसरे स्थान पर जाने के लिए निमंत्रण की अवश्यकता होती है पिता के घर जाने के लिए कन्या को आमन्त्रण की कोई अपेक्षा नही होती है।

सम्प्रार्थ्य मामनुप्राप्य पत्नी भावेन शंकरः।
अधिक्षिप्यत्यद्य तस्मात्प्रभावं दर्शयाम्यहम्।।

शम्भुः समीक्ष्य तां देवी क्रोधविस्फुरिताधराम्

दक्षपुत्री सती क्षणभर के लिए सोचने लगी कि इन शंकर ने पहले तो मुझे पत्नी रूप में पाप्त करने हेतु प्रार्थना की थी मुझे पा लेने के बाद ये मेरा अपमान कर रहे है इसलिए मै इन्हे अपना प्रभाव दिखाती हूँ। तदन्तर। शिव ने क्रोध से फडफडाते हुए ओठों वाली कालाग्नि के समान नेत्रों वाली उस भगवती सती को देखकर अपने नेत्र बन्द कर लिए।

एवं समादाय वपुर्भयानकं।
जाज्वल्यमानं निजतेजसा सती।।
कृत्वाट्टहासं सहसा महास्वनं।
सोत्तिष्ठमाना विरराज तत्पुरः।।
तं धावमानं गिरिशं विलोक्य वै
दक्षायणी वारयितु पुनः पुनः
चकार मा भैरिति शब्द मुच्चैकः
साट्टाट्टहासं सुमहाभयानकम्
निशम्य तद्वाक्यमतीव सम्भया
तस्थौ न शम्भुः क्षणमप्यमुत्र वै
दिगन्तमागन्तुमतीववेगतः
सम्भ्य धावद्भयह्विलस्तदा।।

उन शिव को दोड़ते हुए देखकर वे दक्षपुत्री सती उन्हे रोकने के लिए उँचे स्वरो में डरों मत डरों मत इन शब्दों का बार बार उच्चारण करते हुए अत्यन्त भयानक अट्टहास कर रही थी शब्दों के सुनकर वे अत्यन्त डर के मारे वहाँ एक क्षण भी नही रूके वे उस समय भय से व्याकुल होकर दिशाओं में दूर तक जाने के लिए तेजी से भागे इस प्रकार अपने स्वामी को भयाक्रान्त देखकर दयामयी भगवती सती उन्हे रोकने की इच्छा से क्षण भर में अपने दश श्रेष्ठ विग्रह को धारण करके सभी दिशाओं में उनके समक्ष स्थित हो गई।

न प्राप्य शम्भुर्हि भयोज्झितां दिशं।
तत्रैव संमुदित चक्षुरास्थित।।
उन्मील्य नेत्राणि ददर्श तां पुरः।
श्यामां लसत्पङ्कजसंन्निभाननाम्।।
हसन्मुखीं पीनपयोधर द्वयां।।
दिगम्बरां भीमाविशाल लोचनाम्।
विमुक्तकेशीं रविकोटि सन्निभा।।
चतुर्भुजां दक्षिण सम्मुख स्थिताम्।।

जब किसी भी दिशा को भयमुक्त न पाकर वे भगवान शिव अपनी आखें बन्द करके वही ठहर ग
और इसके बाद जब उन्होनें अपनी आँखे खोली तब कमल के समान सुन्दर मुखवाली, हासयुक्त मु
मण्डल वाली दो उन्नत उरोजो वाली, दिगम्बर भयानक तथा विशाल नेत्रो वाली, खुले हुए केशों वाली
करोड़ों सूर्यों के समान तेज धारण करने वाली, चार भुजाओं से युक्त दक्षिण दिशा की ओर मुख करके
श्यामा भगवती काली को अपने सामने स्थित देखा इस प्रकार उन भगवान शिव बोले श्यामवर्ण वाली
आप कौन है मेरी प्राण प्रिया सती कहाँ चली गई।

विधवा का रूप धारण किए हुए जो देवी आपके अग्निकोण में जो विराजमान है वे महाविद्या
स्वरूपिणी महेश्वरी धूमावती है अपके नैत्रर्टत्यकोण में ये जो देवी भगवती हैं वे त्रिपुरसुन्दरी हैं आपके
वायव्यकोण में जो देवी है मातङ्गकन्या है आपके ईशान कोण में है। महाविद्यारूपिणी षोडसी है मैं तो
भयंकर रूप वाली भैरवी हूँ।

"आगमश्चैव वेदश्च द्वौ बाहू मम शंकर,।
ताभ्यामेव धृतं सर्व जगत्स्थावर जङ्गमम्।।

आगम तथा वेद ये दोनो ही मेरी भुजाएं है। जो मूर्ख इन दोनों का मोहवश कभी भी उल्लंघन
करता है वह मेरे हाँथ च्युत अधः पतित हो जाता है इसमें सन्देह नही।

आसां ये साधकास्ते तु समायां वैष्णवा मताः।
मय्यर्पितान्तःकरणा भवेयुः सुसमाहिताः ।।

इति तस्यावचः श्रुत्वा भीतमीत : इव स्थितः।
प्रोवाच वचनं शम्भुः काली भीम विलोचनाम् ।।

अजानता मया मेहाद्यदुक्तं क्षन्तुमर्हति

त्वमाद्या परमा विद्या सर्वभूतेष्व वस्थिता।
स्वतन्त्रा परमा शक्तिः कस्ते विधिनिषेधकः।।

यच्चोक्तं पतिमावेन मया ते हयप्रियं वचः।
तत्क्षमस्व महेशानि यथारूचि कुरुष्व च ।।

मै अज्ञानवश आपको न जानते हुए जो कहा है उसे क्षमा करें आप आद्या है परा विद्या है सभी
प्राणियों में विराजमान है आप स्वतन्त्र रहने वाली परमा शक्ति है अतः कोई भी कार्य करने या न करने
के लिए आपको आदेश देने वाला कौन है ? शिवे।

प्रमथानाह भगवान रथमानयतोत्तमम् ।
युतं चायुत सिंहेन रत्न जालविराजितम्।।

दस हजार सिंहो से युक्त तथा रत्नजालों से सुशोभित उत्तम रथ ले आओ।

युग के अन्त में प्रलय के समान सम्पूर्ण जगत को भयभीत करने वाली वे भीम रूपिणी भगवती
काली उस रथ में स्थित होकर सुमेरू पर्वत के शिखर आरूढ़ उत्तम मेघमाला की भाँति सुशोभित हो
रही है कोपाविष्ट काली को देखने सभी प्राणी भागने लगे सूर्य भी भयभीत होकर पृथ्वी पर गिरने लगे
सागर विक्षुब्ध हो गए सभी दिशाएं व्याकुल हो उठी महान वेग से वायु बहने लगी घोर अमंङ्गल का
संकेत देने वाले सैकड़ो उल्कापिंड सूर्यमण्डल का भेदन कर पृथ्वी तल पर गिरने लगे इस प्रकार वह
रथ अगले क्षण दक्षप्रजापति के घर पहुँचा तब उस भगवती सती को देखकर दक्ष के घर में स्थित सभी
लोग भयभीत हो उठे।

माँ में ताकत कहाँ कि बच्चे को परेशान करें

न मया सम्परित्यक्तस्त्वं कादाचिन्महेश्वर।
तवैव ह्रदयास्थानं महाकाली पराश्रयः ।।

तस्मात्त्वं हि महाकालो जगत्संहारकारकः।
त्वं प्रभुत्वाभिमानेन किंचिन्मामुक्तवानसि ।।

महेश्वर। मैने आपका परित्याग कभी नही किया आप ही मुझ काली के ह्रदय स्थान और परम
आश्रय है

कदाचिद्वाहस्ते च कदाचित्स्कन्धदेश के ।
कदाचिद्वक्षसि प्रीत्या परिनृत्यन् सदाशिवः।।

चारो ओर नाचते हुए शिव जी सती से छाया शरीर को कभी सिर पर कभी दायें हाँथ में कभी
कन्धे पर कभी प्रेमपूर्वक वक्षस्थल पर धारण करते हुए अपने चरण प्रहार से पृथ्वी को कम्पित करते हुए
नृत्य करने लगे चन्द्रलोक में स्थित चन्द्रमा उनके ललाट पर तिलक के समान सुशोभित हाने लगा
नक्षत्रमण्डल देदीव्यमान जटाओं में गुथ गया सूर्य लोक में स्थित भगवान भास्कर उनके कष्ठाभरण बन
गए महामुने कच्छप और शेषनाग उनके चरणाधातो से पीड़ित होकर धरणी छोड़कर उद्यत हो गए।

न चिन्तयति लोकानां विपत्ति समुपस्थिताम्,।
कथं शान्तो भवेद्देवो जगत्संहार कारकः।।

विघूर्णित नेत्रों वाले सर्व समर्थ शिव जी तो आनन्द से मतवाले होकर सृष्टि पर आई इस विपत्ति का विचार नही कर रहे वे जगत्संहारक शिव रूद्र कैसे शान्त होंगे।

तत्र जपत्वा महादेवी साक्षात्पश्यति मानवः,

वहाँ जप करने वाले मनुष्य को महादेवी साक्षाद् दर्शन देती है। तथा ब्रह्म हत्यादि महापापो से भी प्राणी मुक्त हो जाते है।

"त्यज नृत्यं लयप्रदम्"—प्रलयकारी नृत्य बन्द करें
न ममाज्ञा बिना कोऽपि समायातु कदाचन
तया विहर भाणोऽसो दशवर्ष सहस्त्रकम्
समास्थिता महादेवं विमोह्य निजमायया

मेरी आज्ञा के बिना यहां कोई नही आएगा इस प्रकार सती के साथ विहार करते शिव को दस हजार वर्ष बीत गए।

अरूपा सा महादेवी लीलया देहधारिणी
तयैतत्सृज्यते विश्वतयैय परिपाल्यते।।

पूर्णा तां प्रकृतिं लब्धुं पत्नी भावेन संयतः।
तपसाराधितु भक्त्या समारेभे महेश्वरः।।

यदन्तः स्थानि भूतानि यतः सर्व प्रवर्तते।
यदाह तत्परं तत्वं साक्षाद्भगवती स्वयम् ।।

सभी प्राणी जिसके भीतर स्थित है जिनसे सम्पूर्ण जगत प्रकट होता है जिन्हे परम तत्व कहा गया है वे साक्षाद् स्वयं भगवती है।

सत्यवती पुत्र व्यास
दिब्यालंकार भूषाढ्या दिव्यगन्धानुलेपनाम्।
सिंह पृष्ठे समारूढं कदाचिच्छववाहनाम्।।

वे सिंह की पीठ पर विराजमान थी कभी कभी शव पर सवार भी दिखाई दे रही थी।

कदाचिद्विष्णुरूपा च वामे च कमलालया
राधया सहिताकस्मात्कदाचित्कृष्णरूपिणी।
वामाङ्गधिगता वाणी कदाचिद्ब्रह्मरूपिणी
कदाच्छिवरूपा च गौरी वामाङ्गसंस्थिता ।।

एवं सर्वमयी देवी कृत्वा रूपाण्यनेक धा ।
व्यासस्य संशयच्छेदं चकार ब्रह्मरूपिणी।।

वे कभी विष्णुरुप में होकर उनके वाम भाग में लक्ष्मी का रूप धारण करके विराजमान दिखाई

शबनम की बूँदे कब तक
सूरज नही जब तक

अगस्त जैसी प्यास चाहिए—कथामृत के लिए
पियो रे पियाला काली रस का

विपत्ति में अन्याश्रय में न जाकर भगवदाश्रय ले

किसी भक्त को ज्वर था दवाँ खा रहे थे शिष्यों ने कहाँ भगवान से कहे 2 पैसे की टैबलेट के लिए भगवान से कहै।

देहाऽशक्ति गोहाऽशक्ति
बादल मुझपर अभिषेक करते है
पक्षी मेरा ही गीत गाते है हवाँ पंखा झालती है
हम भगवान के राजकुमार (रामतीर्थ)

अनासक्त परमासक्त प्रतीत होता है।

भगवतः शक्ति भगवच्छक्तिः
षष्ठी तत्पुरूष
भगवती भगवान की शक्ति है

भगवति शक्ति भागवच्छक्तिः
सप्तमी तत्पुरूष
भगवान में जो शक्ति है
भगवाती चसौ शक्तिश्च भगवच्छक्तिः कर्मधारय

शक्तिरूपिणी देवी भगवती
षड्गुणैश्वर्यादि से विभूषित है

भगवच्छक्ति
समानाधिकरण तत्पुरूष को कर्मधारय कहते है।

साक्षाद विद्यैव सा न ततो भिन्ना जगन्माता।
अस्याः स्वाभिन्नत्वं श्रीविद्याया रहस्यार्थः।।

महानिर्गुण की अधिष्ठात्री शक्ति होने के कारण ही इनकी उपमा अन्धकार से दी जाती है महासगुण होकर वे सुन्दरी कहलाती है महानिर्गुण होकर काली भेद केवल प्रतीतिमात्र का है 'कादि और हादि" विद्याओं के रूप में एक ही श्री विद्या क्रमशः काली से प्रारम्भ होकर उपास्या होती है एक को संहार क्रम दूसरे की सृष्टि क्रम नाम दिया जाता है।

वृहनीलतन्त्र में कहा गया है रक्त और कृष्ण भेद से काली ही दो रूपों में अधिष्ठित है कृष्णा का नाम दक्षिणा रक्तवर्णा का नाम सुन्दरी उपासना की दृष्टि से दोनों में द्वैत है तत्वदृष्टि से अद्वैत है काली व भुवनेश्वरी दोनों मूल प्रकृति के अव्यक्त और व्यक्त रूप है।

वास्तव में काली को ही नीलरूपा होने से तारा कहा गया है वही मोक्ष देने वाली तारने वाली है अनायास ही वे वाक् प्रदान करने वाली है इसलिए नील सरस्वती है।

ब्रह्मा की स्तुति में महाविद्या है। अ से लेकर क्ष तक पचास मातृकाएं है इनके भीतर स्थित शक्तियों का साक्षात्कार शक्ति उपासना है।

साधना के द्वारा पूर्ण शिशुत्व का उदय हो जाता है तब भगवती का श्री विग्रह साधक के सामने प्रकट होता है।

काली की साधना यद्यपि दीक्षागम्य है तथापि अन्यन्य शरणागति के द्वारा उनकी कृपा किसी को भी प्राप्त हो सकती है।

देवीभागवत में काशी में एकमात्र विशालाक्षी पीठ होने का उल्लेख प्राप्त होता है

"अन्नपूर्णा विशालाक्षी स्मयमानमुखाम्बजा"

प्रतिमास शुक्ल तृतीया को विशालाक्षी का दर्शन किया जाता है। ये गौरववर्ण की हैं वे सदा षोडसवर्षीया दिखलाई देता है।

अलंकृत भगवती रक्त वर्ण का वस्त्र धारण करती है मुण्डों की माला पहने रहती हैं दो भुजाओं वाली अम्बिका अपने एक हाथ में खडग दूसरे में खप्पर धारण करती है जिस स्थान में देवी का योनि मण्डल गिरा था वह स्थान तीर्थों का चूडामणि हैं।

तीर्थचूडामणिस्तंत्र यत्र योनिः पपात ह।
तीरे ब्रहानन्दाख्य महायोग स्थलं हि तत्।। (वृहर्द्धमपुराण)

नीलाचल पर्वत पर देवी का योनि मण्डल गिर कर नीलवर्ण का प्रस्तर रूप हो गया।

ततः समभवद्देवी देवक्याः परमः पुमानः।
अष्टम्यामर्धरात्रि तु रोहिण्यामसिते वृषे।।

तत्पश्चात भादों मास में कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि रोहिणी नक्षत्र वृषलग्न में अर्द्धरात्रि की वेला में भगवती ने देवकी के गर्भ से परमपुरूष के रूप में जन्म लिया।

अहमाद्या परा विद्या जगत्संहारकारिणी।
देवकार्यस्य सिद्धयर्थ त्वत्तो जातस्मि साम्प्रतम्।।
देवक्यैवं निगदितः कृष्णः कमललोचनः ।
सहसा सम्भूतकृष्णा भीमास्या शववाहना।।
चतुर्भजा त्रिनयना जिह्वाललन भीषणा।
गलदायत केशौघाच्छन्न पृष्ठा किरीटिनी।।
तदाभवन्मुने सापि वनमाला मनोरमा।
मुण्डालिरचिता माला लम्बमानातिशोमना।।
तथा दृष्ट्वा तु तं बालं कालीरूपं भयानकम्।
देवकी चाहयत्तत्र वसुदेवं त्वरान्विता।।

श्री महादेव जी बोले ! देवकी के ऐसा कहते ही कमल के समान नेत्रवाले श्री कृष्ण तत्काल शव पर आरूढ़ भयानक मुखवाली भगवती काली के स्वरूप में प्रकट हो गए उनकी चार भुजाएं तीन नेत्र एक लपलपाती हुई भीषण जिह्वा थी उनके लहराते हुए लम्बे केशपाश से उनकी पीठ ढकी हुई थी सुन्दर किरीट धारण कर रखा था मुझ इस समय चित्ताकर्षक वनमाला भी मुण्ड समूहों से बनी हुई अत्यन्त सुन्दर तथा लम्बी माला के रूप में हो गई।

कश्यप अदिति का देवकी, वसुदेव के रूप में जन्म
नमस्ते कृष्णरूपिण्यै मायापुरूष रूपिणी।

आप सूक्ष्मा प्रकृति है आप निराकार होते हुए भी मेरे पुत्र रूप में प्रकट हुई।

ततः संत्यज्य तद्रूप सौम्यं सा भीमरूपिणी ।
वदन्ती मुञ्च मुञ्चेति प्राणांस्तत्याज राक्षसी।।
तस्या वक्षसि कृष्णस्तु सहसा कालिका परा।
कृत्वा विरेजे भीमास्या मुण्डमाला विराजिता।।

श्री कृष्ण उनके वक्षस्थल पर अचानक भयानक मुखवाली मुण्डमाला से सुशोभित दूसरी कालिका देवी के रूप में विराजित होने लगे। भगवती कालिका ने कहा राक्षसी पूतना के शरीर से हटकर क्षणार्ध मे श्यामवर्ण के बालकृष्ण का रूप धारण किया। (आस्य)

कदाचिद्राधिका शम्भुश्चारूपञ्चूमुखाम्बुजः।
कृष्णो भूत्वा स्वयं गौरी चके विरहण मुने।

कभी राधिका जी कमल सदृश पाँचमुखवाले भगवान शिव का सुन्दर रूप धारण कर लेती थी स्वयं श्री कृष्ण गौरी के रूप में होकर उनके साथ विहार करने लगते है।

राधा जगाम चार्वङ्गी तासामग्रे व्यवस्थिता।
साक्षाच्छम्भुः पुमान्पूर्णो राधास्त्री रूपमाश्रितः।।

सुन्दरी सुन्दर अंगो वाली राधा जो स्त्री रूप में साक्षात् पूर्ण ब्रह्म शिव जी थे उनके आगे वहाँ पहुँच गयी।

बाहुभ्यां बाहुमाकृष्य राधायाः कमलेक्षणः।
वक्त्रेण धदृयन्वक्त्रं भदयंश्चस्तनौ करैः।।

त्वमेका सर्वलोकानां सृष्टिस्थित्यन्ताकरिणी
कराल वदने कालि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते।

देवि त्वत्पद पकजं हृदि धृतं तनैव दत्तैन वै।
जित्वा मृत्युमशेषलोकमभयदं तत्कालकूटं बलात्।

आप सम्पूर्ण जगत की माता हम त्रिदेव भी आपके पुत्र है आपके गुण गणो को करोणों मुखों से दीर्घ काल तक कहने में समर्थ नही हूँ।

सीता मन्दोदरी गर्भे सम्भूता चारुरूपिणी
क्षेत्रजा तनयाप्यस्य रावणस्य रघूतम् ।।

रघूत्तम् मनोहररूपिणी सीता मन्दोंदरी के गर्भ से उत्पन्न हुई थी इस प्रकार वह रावण की क्षेत्रजा पुत्री भी थी। काम के वशीभूत होकर रमण की इच्छा वाला रावण लोमपूर्वक उन्ही सीता का अपहरण करके लंङ्का ले आया तभी लङ्का नष्ट हो गयी।

उत्पन्नाः पुरूषास्त्रयस्तव सुता ब्रह्मेष नारायण
जानीमो महिमामेव नहि ते प्राचीनमत्यद्भुतम् ।।

सिद्धि करे स्फ्रे स्फ्रे स्वाहारुपिणी स्वधारूपे विमलमुखे चन्द्रमुखे कोलाहलमुखे शर्वे प्रसीद।

त्वं माता जगतां त्रयो ह्यापि सुता कारूण्य दृष्टया कृपा
ममास्तु प्रविधाय पाहि जगतां धात्रि प्रसीदम्बिके

एकोऽहं विष्णुः कः परो वा शिवाख्यो देवा मन्ये स्तोतु मीशा भवामः । त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं च वौषट त्ववं चोङ्कारस्त्वं च लज्जादिबीजं त्वं च स्त्री त्वं च पुमान सर्वरूपा त्वां नमामि बोधये न प्रसीद।।

सूर्य संसार को प्रकाश देते है शेषनाग और कच्छप में पृथ्वी धारण करने की शक्ति है अग्नि में प्रज्वालन शक्ति, और पवन में गतिशील करने की शक्ति है तात्पर्य यह है कि सभी में जो शक्ति विराजमान है वह आद्याशक्ति के कारण ही है। सभी देवता अपने कार्य में तभी सफल होते है जब आद्याशक्ति उनकी सहायता करती है।

'निराकाराच साकारा सैव नानाभिधा स्मृता''

भगवती सती का नेपाल से गुहयभाग गिरा था जो गुहयेश्वरी देवी नाम से प्रसिद्ध है यही पर चन्द्र घण्टा योगिनी सिद्धेश्वर महादेव का प्रार्दुभाव हुआ

शम्भुस्तु जन्म सम्प्राप्य वृषभानुगृहे ततः
स्त्रीरूप लीलयाऽस्थाय राधेत्याख्यायामुपागमत्

भगवान शिव वृषभानु के घर में अपनी लीला से स्त्री रूप में जन्म लेकर राधा नाम से प्रसिद्ध हुए।

एक साथ भगवती ब्रह्मा सरस्वती
राधा कृष्ण शिव पार्वती सब है।

कदाचिद्विष्णु रूपा च वामे च कमलालया
राधया सहिता कमस्मात्कदाचित्कृष्णरूपिणी

वामाङ्गधिगता वाणी कदाचिद् ब्रह्मरूपिणी
कादाचिच्छिवरूपा च गौरी वामाङ्गसंस्थिता।

एवं सर्वमयी देवी कृत्वा रूपाण्य ने कधा
व्यासस्य संशयच्छेदं चकार ब्रह्म रूपिणी।।

शक्तिपीठ देवी भागवत

कभी राधा सहित कृष्ण के रूप में हो जाती थी कभी स्वयं ब्रह्मा का रूप धारण करके उनके वामभाग में सरस्वती के रूप में दृष्टिगत होती थी कभी शिव का रूप धारण करके उनके वामभाग में गौरी रूप में स्थित हो जाती थी इस प्रकार उन सर्व व्यापिनी ब्रह्मस्वरूपिणी भगवती ने अनेक प्रकार से रूप धारण कर व्यास जी का संशय दूर किया।

स्वपाद तलसंलग्नं पङ्कजं समदर्शयत।
मुनिस्तस्य सहस्त्रेषु दलेषु पारमाक्षरम्।।

तदन्तर भगवती ने उनकी अभिलाषा जानकर उन्हें अपने चरणतल में स्थित कमल के दर्शन कराये मुनि व्यास जी ने उस कमल के हजार दलों में परमाक्षर स्वरूप महाभागवत नामक पुराण को देखा।

००००•००००

कालिकोल्लास-9

श्री काली योगवाशिष्ठ की दृष्टि से

माँ काली

द्रां द्रात्तात्रेयायनमः

निगीर्ण जगदगस्थं कृत्वा तृप्तिमुपागता,
परिनृत्यति साम्रत्ता जगज्जीर्णाहि चातकी।।

निज अङ्ग में स्थित जीर्ण जगदरूपी सर्प को निगलकर तृप्ति को प्राप्त वह मत्त मोरनी की भाँति नृत्य करती है।

छायेवपरिनिर्याति नर्त्तनानुविधायिनी
सूर्येष्वविद्यमानेषु महातमसि चांबरे
स्थिताकथमियंछाया भवेदितिमर्तिमम्

रूद्र कें नृत्य का अनुसरण करती हुई छाया उनके शरीर से निकली, सूर्य के न रहने पर महा अन्धकारमय आकाश मे यह छाया कैसे स्थित है ऐसी आशंका मेरी बुद्धि मे हुई ।

सास्थितापरिनृत्यंतीविस्तीर्णाश्री त्रिलोचना
रूद्रोन्मुख काली का नर्त्तन
कृष्णाकृशाशिरालांगीजर्जरा वितताकृति
ज्वाला कुलानलालोल वनसं भार शेखरा
चञ्चलवन के पुष्पपल्लव आदि शिरोभूषण से युक्त थी

श्री वशिष्ठ जी चिरकाल तक उर्ध्व अधोगमन से देखा

मयादृष्टं प्रयत्नेन चिरोर्ध्वाधोगमागमैः

आमूलात्त्सूत्रवलिताकटंकावनामिव स्थली

शिर से लेके पादपर्यन्त सब अङ्ग नाड़ियों के जाल से ऐसे गुथे थे जैसे कण्टको की भूमि

विश्वरूपमयार्कादि शिरः कमलजालकैः
कृतमालामलालोकवातह्मियांचला

और नानावर्ण के सूर्य आदि देव–दानव के शिररूपी कमलो की माला धारण किये हुए पवन से प्रदीप्त अग्निमय चञ्चल वस्त्रांचलधारिणी

शुष्कतुंबीलताष्ठीला दीर्घा
लोलासितस्तनी

दंतेन्दुमालाविमला विमलोद्योतपाततः
तमोर्णवोर्द्ध लेखव वृत्तावर्त्त विवर्त्तिनी

दन्तरूपी चन्द्रमाला से निर्मल दाँतो की किरणों के पतन से वृद्धि को प्राप्त अन्धकाररूपी समुद्र की आवर्त युक्त चञ्चल लेखा के समान।

वृहत्तरंगोर्ध्व भुजाश्यामलोल्लास शालिनी

महातरंगरूपी भुजाओ की शयामा लता से शोभायमान तथा नृत्य रूप आवर्त्त सहित प्रलयकाल के समुद्र के तरंगों की माला के तुल्य भासती

एकार्णवो र्मिमालेव नृत्तावृत्ति विवर्तिनी

छणमेक भुजाकाराक्षणंबहुभुजाकुला
अंनतोग्र भुजाक्षिप्त जगन्नर्तनमण्डपा
क्षिप्रमेकमुखाकारा क्षिप्रं बहुमुखाकृतिः
अनंतोग्रमुखीक्षिप्रं निर्मुखीचापि च क्षणम्

एकपादान्विताक्षिप्रं
क्षिप्रंपादशतन्विता

क्षणंचानं तपादाढ्या निष्पादाकारिणी क्षणम्
कालरात्रिरियसेति
काली भगवती सेयमिति निर्णीत सज्जना
भगभीषणवायसी
भगनाम के काक से शोभित थी

नृत्यद्भुजलता पुष्पैर्नखशुभ्रा भ्रमंडलैः
पूर्णचंद्रशतानीव भ्रमयंती नमस्तले

नृत्य में भ्रमणशील भुजलतारूपी पुष्पो से युक्त नखों की निर्मल प्रभारूपी मेघमण्डल से आकाश तल में सौकड़ो चन्द्र मण्डल को पार्श्व भ्रमणगतिवत भगवती भासित होती है

तमालतालतः स्थूलां भुवदग्ध महावनैः

जंघासमूह से यह भगवती भस्मीभूत तमालादि के महावन से स्थूल भूमि का अनुकरण करती थी।

उद्यंतेमेरवोयेन तेन निश्वासवायुना

भगवती के श्वास से मेरू आदि पर्वत उड़ते है

आदर्शमडलान्यगेत्रीणिलोकांत राणि च
चिद्रूपमहादर्पण रूप शरीर में
तैलोक्य स्फुरित होता है
कर्णयोर्हिमवन्मेरूप्यकांचन मुद्रिके

हिमालय तथा सुमेरू उनके कान की बाली थे

ब्रह्माण्डघुंघुमैर्माला महतीकटि मेखला
घुं घुं रव पूर्ण ब्रह्माण्डो से उनकी कर्धनी थी

सज कुलाचलाः शृंगवन पत्तन गुच्छका
जरत् पुरवनद्वीप ग्रामपेलवपल्लवा
हिमालय तथा सुमेरू

शेखर वनं तथा नगर गुच्छासहित तथा जीर्ण ग्राम वनद्वीप तथा नगरादिरूप कोमल पल्लवों से शोभित सप्त कुल पर्वत गले की माला थी ।

तस्याअंगेषु दृष्टानिपुराणि नगराणि च
ऋतश्ववत्रयोलोकामासाहोरात्र मालिकाः

भगतवी के अग में नगर ग्राम ऋतु मास रात्रि दिन तथा तीना लोकी की माला मैने देखी

मुक्तालतादि नद्यः कालिन्दीत्रिपथादिकाः

कालिन्दी तथा गङ्गा आदि नदियाँ उनके गले में मुक्ताहार थे

धर्माधर्मावुभौ कर्णभूषणे चान्यकर्णयोः

धर्म अधर्म पूर्वोक्त कर्णो के सिवाय उनके अन्य कर्णो के भूषण थे

स्तनास्तस्यास्तुचत्वारः स्रवद्धर्मपयोलवाः
वेदाः सकलशास्त्रार्थ चतुः संस्थान चूचुकाः

सकल शास्त्रार्थरूपदुग्ध पूर्ण ऋगादि चारो वेद धर्मरूपी दुग्ध स्रवते हुए चारो स्तन थे।

साननृत्यति तत्सर्वसशैलवनकाननम्
जगन्नृत्यातिनानात्ममृत्वा पुनरुपागतम्

काली नृत्य उपरत हो गई परन्तु पुनर्जन्म पाके पर्वते वन आदि सहित सब जगत नाचता है

तज्जगन्नर्त्तनं चारूतद्देहादर्श संस्थितम

उनके शरीर रूपी दर्पण में जगद के उत्तम नृत्य को देखा

मशकव्यूहवद्वव्याधूतामर दानवम्

मच्छरों के तुल्य देव और दानव को भ्रमण कराने वाला नृत्य मैने देखा

आयुरारोग्यमैश्वर्यं बलं पुष्टि महद्यशः।
कवित्वं भक्ति मुक्तिं च कालिका पाद पूजनात्।। (काली तन्त्र)

आयु रोगनिराकरण ऐश्वर्य बल पुष्टि महदयश कवित्व भक्ति मुक्ति श्री काली के पादपूजन से प्राप्त होती है।

हनुमाश्चैव विघ्नेशो मघवा भार्वस्तथा
गङ्गा श्रीः सूर्य चन्दौ च रावणो यक्षनायक
वायुर्गणेशोऽथ गुरूः शुक्रो भूमिश्च राघव
पह्लादः शुकदेवश्च क्षेत्रपालस्तथैव च
एतेऽप्येको नविंशका
श्री काल्या देवा उपासकाः।।

श्री हुनमान विघ्नेश इन्द्र, भृगु, गङ्गा, लक्ष्मी, सूर्य, चन्द्र, रावण, कुबेर, वायु, गणेश वृहस्पति शुक्र भूमि श्रीराम प्रह्लद, शुकदेव क्षेत्रपाल ये उन्नीस महासत्ता काली को भजते है उपासक है श्री काली के

द्वीपाब्धयोंत्रवलयः पार्श्वकाः सर्वपर्वताः
प्राणापानावलीदोलाः पवनस्कंध शालिका :

द्वीप समुद्र नाड़ियों की पंक्ति सब पर्वत और इधर–उधर वायु का बहना उनके श्वास का झूला था दोला

तत्र भूतलमाकाश्माकाश मपि भूतलम्

जिस नृत्य में भूतल आकाश और आकाश भूतल हो गया

लुंठत्यमरगोहानि
वलितेदेहदर्पणे

इन्द्रादि देव शिरोमणियां के नगर उनके लास्य में लुढ़क जाते है।

मेरवः पर्णवद्वयूढामलयाः पल्लव इव
हिमाद्रियोहिमकणा इव

हिमालय हिम कण की तरह दिखाई पड रहा है।

अब्धिर्नृत्यति पर्वते
गिरिरपिप्रोच्चैर्नभ:

समुद्र पर्वत पर और पर्वत नभ में उनके नर्त्तनावेग में नृत्य कर रहे है

क्षणनंगुष्ठमात्रे वक्षणमाकाश पूरिणी

क्षण में अनुतर अगुंष्ठ मात्र छण में महती महीयान आकाशाद् भूयसी है

कल्पान्तवात व्याधूतावन मालेव नृत्यति

प्रलय के अन्त में बहती भयङ्कर वायु रूपा श्री कालीका वन समुदाय की तरह नृत्य कर रही है

पीडनंसर्वभूतानां
क्रीडनंप्रलयार्थिनाम
क्षोभणं जलराशिणाम्
चूर्णीकरणमद्रीमाण्

नमातिसप्तद्वीपायां भुवितस्यांगमेक कम्

मांसमयपर्वत ऐसा हो गया कि उसका एक अंगभी सप्तद्वीपवती पृथ्वी में नही समाता

बद्धाखट्वांगशृंगेकपिलमुरूजटामंडलं पद्मयोने
कृत्वादैत्योतमांगैः स्रजमुरसिशिरः शेखरं तार्क्ष्य पक्षै
यां देवी भुक्त विश्वापिबति जगदिं साद्रिभूपीठ
भूतं सा देवी निष्कलंका कलिता तनुलतापातु न पालनीयान्

जो देवी कल्पान्त में ब्रह्माजी के कपिलजटा मंडल को खट्वा के शङ्ग से बाँधकर दैत्यों के मुडो की माला गले में धारण कर तथा गरूड पक्षों से शिरका शृंगार करके सब संसार का ग्रास करके पर्वतादि सहित समस्त भूमिपीठ का पान करती है इस प्रकार ब्रह्माण्ड का संहार करके भी नित्य पाप रहित शुद्ध चिद्रूप रहती और केवल भक्तों के लिए शरीर धारण करती है वह देवी अवश्यपालनीय हम लोगो की रक्षा करें।

प्रेतवृंदैरनुगतामातृमंडल ललिता

प्रेत समूहो से अनुगत मातृगणो से लालिता

किरंतीकीर्णदिग्दाहै दृष्टिपातैर्दिवाकराम्

दिशाओं में दाह विकीर्ण करने वाले दृष्टिपातो से सूर्य समूह को बिखेरती हुई

दंतकान्ति इन्दु
दंतकांतींदुविद्योतदुग्धस्नपित
दिङ्.मुखा

चन्द्रप्रभा तुल्य दाँतो की दीप्ति सब दिशाओं को दुग्ध से स्नान कराती हुई
सार्ध स्वपरिवारेणशीघ्र माहियतामिति देवता भगवती से बोले
मृतक शरीर का परिवारसहित भोग लगावे ।

प्राणेनाकृष्यमाणं तद्रक्तं भगवती मुखे
आविशत्सांध्य मेघौघइव मेरोर्गुहान्तरम्

वायु से आकृप्यमाण वह उस शव का रक्त भगवती के मुख में प्रविष्ट हुआ जैसे संध्याकाल के मेघसमूह मेंरु गुहा में।

तावद्रक्तंयापीतं प्राणाकृष्टं नभः स्थया
यावच्छुष्कासतीतृप्तापीना साचांडिकास्थिता
ततोबभूव सारक्त परिपीन शरीरिणी

आकाश में स्थित भगवती ने प्राण से आकृष्ट उस रक्त को यहाँ तक पिया क्रिया भागवती शुष्क से स्थूल हो गयी

लम्बोदरा भगवती विशमाहिविभूषणा
हिमवाद्विध्य शैलादि प्रमाणस्थय चलावृतम् मदिरार्णवः
पिबंत्यद्यापि तानी व मदिरांमदि रार्णवात्
रवेनृत्यंतिच प भूतानि सहयोगेश्वरीगणैः

भगवती के गण अब भी उस समुद्र के मद्य को पीते है और आकाश मे योगीश्वरी के साथ नृत्य भी करते है

न थी उम्मीद दरिया–ए–सहादत तैर निकलेगे
खुदा को आबरू रखनी थी बेड़ा पार होना था।

जिन्हे है इश्क सादिक से वे कब फरियाद करते है
लबों पर मुहर–ए–खामोशी दिलों में याद करते है

हर फनकार ने अपने ही फन से जाना मुझको
नेक ने नेक बद ने बद माना मुझको

क्या पेश करूँ तुझको–ए–जलवाए–जानाना
जान का नजराना या ईमान का नजराना
कुछ नही सूझता जब प्यास की सिद्दत से मुझे
झलक उठता है मेरी रूह में मीना तेरा

लक्ष्यालक्ष्य गतिं त्यक्त्वा यस्तिष्ठेकेवलात्मना
शिव एव स्वयं साक्षादयं ब्रह्मविदुत्तम्

सन साधौ धीर शास्त्रयोः मान्ये सत्ये विद्यमाने
त्यागएव हि सर्वेषाम मोक्ष साधनमुत्तमम् ने

क्वीचच्छिष्टाः क्वीचद्भ्रष्टाः
क्वचिद भूत पिशाचवत्
नाना रूप धरा योगी विचरन्ति महीतले ।।

माँ काली

यह तत्व सांख्य योगियो की जड़ प्रकृति नही है
न वैशेषिको का परमाणु है।
न वेदान्तियों की माया है
बल्कि ब्रह्म है। काली
स्वाध्यायान्मा प्रमदः
प्राणपानगती रूदध्वा प्राणायाम परायण :
योगीराज
कोऽहं इत्यनविष्यताम्
मै कौन हूँ–इसको खोजो
श्री हनुमान जी ने राम से कहाँ

देहबुद्धया दासोऽहं जीवबुद्धया त्वदंशकः।
वस्तुतस्तु त्वमेवहं इति में निश्चिता मति ।।

देहदृष्टि से मैं (आपका) दास जीव दृष्टि से मै आपका अंश तत्वतः मै तुम ही हूँ

देहात्माधीवत ब्रह्मात्म धीः दाढ्र्येहिकृतकृत्यता
यदातदाऽयं म्रियतां मुक्तोऽसौ नात्र संशयः

जैसे देह में आत्म बुद्धि है वैसे ब्रह्म में स्थित हो (दृढ़ रूप से) तो कृतकृत्यता है जब कभी मरे वह मुक्त है

अन्नादानं विसर्गाभ्यां ईषत् नास्ति क्रियामुने

अन्नग्रहण और (मल) विसर्जन के अतिरिक्त थोडा भी क्रिया मुनि के पास नही है।

त्रितय रहितं क्वापि च पुनः
योगी कभी त्रिगुण रहित रहता है

अचलत्वं चापेक्ष

उपासना में स्थिरता अपेक्षित है

वेदान्तसारसर्वस्वं ज्ञानविज्ञानमेव च
अहमात्मा निराकारः सर्वव्यापी स्वभावतः

स्वस्य शान्तिं न जानाति परस्य च करोति किम्

अपनी शन्ति (आत्मा) न जान कर दूसरे का क्या उपकार करेगा।

यो वै सर्वात्मको देवः निष्कलहः गगनोपमः।
स्वमाव निर्मलः शुद्ध सएवाऽहं न संशय।।

अस्तीति निश्चयेन यश्चनास्तीति वस्तुनि
बुद्धेरेव गुणावेतौ न तु नित्यस्वस्तुनः
ब्रह्म है नही है यह बुद्धिगुण है

आत्मा बुद्धि (सत्त्व, रज, तम से परे) है

विचरतुमतिरेषा निर्विकल्पे समाधौ
कुचकलशयुगे वा कृष्णसारेक्षणानाम्
चरतु जडमत वा सज्जनानां मतेवा
मतिकृति गुणदोषं मां विमु न स्पृशान्ति (श्री शंङ्कराचार्य)

(मेरी) बुद्धि चाहे निर्विकल्प समाधि में टहरे चाहे मृग नयनी के कुच युगल पर (टहले) जड़ मुर्खो के साथ रहे चाहे सज्जनो के साथ बुद्धि कृत गुण दोष मुझ व्यापक आत्मा को नही छूते

देहाभिमानात् यत् पापं न तद् गोवध कोटिभि :
प्रायश्चितात् भवेत् शुद्धि नृणां गोबध कारिणाम्

देहाभिमान से जो पाप होता है वहा करोड़ो गोवध से भी नही होता गोवध करने वाले का प्रायश्चित होता है पर देहाभिमानी का नहीं

मनझुक गया तो सब झुक गया

जिह्वा जिसको छू वह जूठा हो जाता है जिह्वा परमात्मा को नही छू पाती वह निर्जुठ है

(श्री रामकृष्ण परमहंस)

वैदग्ध्यसिन्धुरनुरागरसैक सिन्धु
र्वात्सल्यसिन्धु सान्द्रकृपैक सिन्धु
लावण्यसिन्धुरमृतच्छवि रूप सिन्धुः
श्रीराधिका स्फुरतु मे हृदिकेलिसिन्धु

ब्रह्मानन्दैकवादा कतिचन भगवद्वन्दनानन्दमत्ताः केचिद्विविन्दसख्याद्यनुपमपरमानन्द मन्ये स्वदन्तो श्रीराधाकिङ्करीणां त्वखिलसुखचमत्कार सारैकसीमा तत्पादाम्भर्जिराजन्नरवमणि विल सजज्जययोतिरेकच्छ यपि

अहो भुवनमोहन मधुरमाधवीमण्डपे मघूत्ववसमुत्सुकं किमपि नीलपीतच्छवि विदग्धमिथुनं मिथो द्रढतरानुरागोल्लास, मदं मदयते कदा चिरातर मदीयं मनः

कानिन्दीकूलकल्पद्रुमतलनिलय प्रोल्लसत्केलिकन्दा
वृन्दाटव्यां सदैव प्रकटतरहरहो वल्लवीभाव भव्या
भक्तानां हृत्सरोजेमधुररससुधास्यान्दि पादारविन्दा
सान्द्रानन्दाकृतिर्नः स्फुरतु नवनवप्रेमलक्ष्मी रमन्दा

चकोरस्ते वक्त्रामृतकिरणविम्बे मधुकर
स्तव श्री पादाब्जे जघनपुलिने खञ्जनवरः
स्फुरन्मीनो जातस्त्वयि रससरस्यां मधुपतेः
सुखाटव्यां राधे त्वयि च हरिणस्तस्य नयनम्

शुद्धप्रेम विलासवैभवनिधिः कैशोरशोमा निधि
वैदग्धीमधुराङ्ग भङ्गिम निधिर्लावण्य सम्पन्निधि
श्री राधा जयतान महारसनिधिः कन्दर्प लीलानिधि
सौन्दर्यैकसुधा निधिर्मधुपतेः सर्वस्वभूतो निधि

लावण्यसार रससार सुखैकसारे
कारूण्यसारमधुरच्छविरूप सारे
वैदग्धसार रतिकेलि विलास सारे
राधामिधे मम् मनोऽखिलसारसारे

प्रेमाल्लासैक सीमा परमरस चमत्कार वैचित्र्यसीमा
सौन्दर्यस्यैक सीमा किमापि नववयोरूप लावण्य सीमा
लीलामाधुर्य सीमा निज्जनपर मौदार्य वात्सल्य सीमा
श्रीराधा सौख्यसीमा जयति रतिकला केलि माधुर्य सीमा

प्रियां दयितसयुक्तां दयितं प्रिययायुतम्

राधया सहिता अकस्मात् कृष्ण रूपिणी
राधा रूप और कृष्ण रूप माँ काली का ही विलास है।

कालो राघवरुपेण जातो दाशरथालये
काली सीताभिधानेन जाताजनक नन्दिनी (आध्यात्म रामायण)

श्री महाकाल राघव रूप से दशरथ
आलय मे तथा महाकाली
सीतानाम से जनक पुत्री
रूप से अवतीर्ण होते है।

ఖఖ•ఆ೮ఆ

कालिकोल्लास–10 (I)

श्री काली विजहार महायुधि

विशालाक्षी–काशी
कामान् अञ्चति – प्राप्नोति
कामाक्षी–काञ्चीपुर
मीनाक्षी–मदुरई में
विकलेवर कैवल्य निर्वाण नलिनी

सदसदनुग्रहनिग्रह गृहीतमुनिविग्रहो भगवान ।
सर्वासामुपनिषदा दुर्वासा जयति देशिकः प्रथमः।।

माधाव सुखहेतोस्त्वं धावतां न सुखं सखे।
सुखरुपे निजेरुपे सुखं तिष्ठ सुखी भव।।

सिद्धिश्रीस्साधकानां प्रसरति पुरतो यत्पादाराधकानाम् ।
निर्विघ्नं यत्प्रसादादुदयति सहसा सापि निःश्रेयसश्रीः,
त्रैगुण्या तत्त्रिमूर्तिनिरुपाधिकरुणाश्चर्य माधुर्यधुया,
तुर्या सा कपि कुर्यात्सपदि मम मनः शुद्धि बुद्धि प्रसिद्धिम् ।।

"सर्वमात्मानमेवाद्वितीयं पश्यतः"

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृपटश्च मानवः
आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते (गीता)

न विरक्ता धनैस्यक्ता न विरक्ता दिगम्बरा
विशेषरक्ताः स्वपदे ते विरक्ता मतामम्

श्रीमति गतिरसि जगदम्ब जय जय देवि शिवे
हरिमवबोधयसि च हरसि विधि खेदम्
जनयसि मधुकैटममति भेदम्

वहसि महोदय सकल महोमयरुपम्
शमयिसि महिषमहासुर भूपम्
रचयति परिदर्शितनिजशक्ति विलासम्
रक्तबीजदनुतनुजनिरासम् ।

"तेरे इश्क मे मेरी जा फ़ना हो जायें"
ज्वलितशिवागुण चरितपवित्रम्
मसृणधुसृणतिलकानललोचन रुचिर चिरायत भालौ
मुकुटघटितमणिविकटजटा मय मुकुटनटनत्फणिपाणौ,
"सुदशन चन्द्रिकया जगदन्तरतिमिर चयन्ति रयन्तौ।।
"चन्दनचर्चित भूतिविभूषित गरुऽवृषध्वज वाहौ"
चरणशिरस्स्र वदमरनदी जलशमित जगत्त्रय तापौ
विलसदुरः स्थललम्बिमनोरममणिफणिहार कलापौ
वदति दिगम्बरता वसु–वैभवमपि भसितं किल भोगम्
"मेरा कुल घन काली कुल देवता काली है"
न भवति भयमण्वपि तिमिरं किमु विसरति विलसति दीपे
तदुरसि पतितं शितशत धारम् कुलिशम मृदनुकृत मणिहारम्
निरवधिवारिधितोयम्

"कपट से भगवती पटक मारती है"
शिवमहसा मुख भास मनोरमनुपमरुचि मुखरुपम्
"यम रसने बहुता रमसेन समाकलितेव भुजङ्गी"
त्रिभुवनमातुरुदारवपुः
"असुरजनाम्बुपिपासुविकरित वदनललच्चलजिह्वम्
हिमगिरिमिव गहनगुहोदर विवलदरुणयुगजिह्वम्"
भवति यथा विधया नयनातिथिरियममला जगदम्बा
"निश्वसितेन ससर्जज गणा"

भुजयुगयन्त्रनियन्त्रणनिश्चलमसुरमुदायुधहस्तम्
परशु भुशुण्डिशरासन तोमरमुसलगदायुध हस्तम्
तोषयतिस्म परो नटनेन मदस्खलितेन सुदृष्टिम्
"नटनी नटनप्रीता नाट्यकर्म विवर्धनि"
घण्टानिनद भरैरभि भूतम्! कमपि निपातयतिस्म विधूतम्
मृत्युरिवासुरमतिपरिणद्धम्
जयति शिवा–सदनुग्रहशीला
शश्वदियं रक्षति विश्वं विश्वमयी
"खुरखुरपासे धरती को खोदता हुआ"
कुलिशकठोरनटत्खुरताडित भूतल धूतनदेशम्
अन्धकताम्र विखण्डन चण्डा
दुर्धर दुर्मुखहरशरदण्डा
चतिकपलायितरविरथवाहनमुद्धतघर्घरघोषम्
"कृतघनविभ्रमसम्भृतसौरभ
पेशल केश निवेश भृते"
दीपशतानि समर्पयतिस्म च रवि–शशि पावक चारुदृशे
तिलकभृते तिलकुसुमनसेऽतुल करुणोदय कोमल मन से

आम्नायमस्तक निज वैभवानन्द

उपनिषीदति प्राप्नोति ब्रह्मत्म भावो अनया निजात्माचन्द्र उपनिषद–जिससे ब्रह्मत्म भाव प्राप्त किया जाय

उपनिषदरुणकिरीट निवेशित
हीरकरुचिशुचिनखरुचिरम्
पारमवाप न वेदगणस्तव महिमनि परमदुरुहे
निर्विच्या तव महिमा
गौरी गिरिशगृहेऽसि गदाभृत उरसि रमा कमनीया
परिवलते भवती करुणामयी कलितजगत्रयरक्षा
धनुरसि शूल गदादि वरायुधपाणि रनुक्षण नव्या
गायतु नस्सततं रसना जनमङ्गल भवदभिधानम्

भुक्ति विमुक्ति महोदयदा भुवि केवलमेव हि देवि
अमलकमलदलमदविमोचन लोचन
समुदितविशेचनशतसमधि करोचना
गौरिमगरिमतिरिसकृत कनकरोचना
तस्यै परस्यै
सच्चिन्मयतनुरनुमपम–वैभव–रचित जगत्त्रयरक्षा
अनुगत–सकल समीहित साधन दुर्गतिदारणदक्षा
अरुण सितासित–सदय विलोकनयनत्रय कृत शोभा
स्मित मधुराधर पल्लव मुख धृत शारद शीत महोभा
उरसि विराजित शारद तारक 'तारतरामलहारा'
गण्डललित मणिकुण्डल दिनमणिमण्डल सारा
अतिशय निर्मल 'कोमलमरकतमणि' पटली सुकुमारी
शशिकलिका तिलकाकलितालिका फलकानित्य कुमारी
लब्धनिराकृतरिपु–निजपदमनुपदतत्परमामौ
जल धररोधविनिर्गत–सुप्रभ हिमकर दिवस कराभौ
स्मितवदनं सदयं सुभगद्युति मम् रुपं परमन्तौ
वरदम पारमुदारतरं शुचि दृगविषयी–कृतवन्तौ21
अविरास तमोमयं वपुरञ्जनाचल चारु
विभ्रती सुचतुर्भुज विधिचित्तचिन्तितकारु 22
बोधितेन विबोधितेन च लब्धदेह सुखेन
पञ्च वर्ष सहस्त्र बद्ध नियुद्ध केलि रसेन
अपगत दुर्धनदोषमनाविल–समुदयदुऽगण पुण्यम्
सहज समुदभव दनु गुण निजगुण–दर्शित बहुनै पुण्यम्
"भगवती प्रमेयबलमेव मुख्यम् न प्रमाणबलम्"
चन्दनचर्चितभूतिविभूषित गरुण वृषध्वजवाहौ
भालविराजित बालकला निधि अहि वलया धृत्त शूला

वृषभरथा शिवशक्तिरसि स्मृति शुचि मनसा मनुकूला

सुललितपद विनिवेष पवित्रित चन्द्र कचित्रमयूरा

त्वमसि षडानन शक्तिरुदञ्चितशक्तिकरा रणशूरा

"दक्षिणा ज्ञान संदेशः"

ज्ञान का संदेह ही दक्षिणा है

"दृश्य दृश्य जगत जो भासे सब आतम की लहरी मनुवाँ छनने दे अब गहरी अम्बा चरण [illegible] भरचल भृगमृदुगामी

चण्डिम दोषमपास समीरण–ईशापद युग नामी

"अचला–कुसुमित विटपिलता वलिविपुल पुलकसमाना"

चमन फैजे कुदरत से तेरे हरा है बहारे गुलिस्ता में जलवा तेरा है।

"त्वयि प्रसन्ने किमिहापरैनः त्वयि अप्रसन्ने किमिहा परैर्न"

"ब्रह्म रुपतया ब्रह्म केवलं प्रतिभासते

जगदरुपतया त्येतद् ब्रह्मैव प्रति भासते।।

सन्यासी कागेरुआ कपड़ा विष्णु लिङ्ग है कमण्डल ब्रह्मा का चिन्ह है भस्म शंङ्कर जी का

सन्यासी त्रिदेव की जङ्गममूर्ति है

प्रसरदलात महायुध भाषा सपदि निरासित या ऽनल भाषा

"दुर्गा दुर्गतिदारणदक्षा"

तुण्डवितुन्नं दशनविनुन्नं वाराही रणवीरा

निनदनिपतित मसुरं शायितमधितन्नृसिंह शरीरा

एक वीरा ह्रास–रास उसके रास का ह्रास नही

"वीगतिव्याप्ति प्रजन कान्त्यसन रवादनेषु" के रसे स्थिति करोति कथा"

ब्राह्ममी धीरा मन्त्रितनीरा हृतिहत पौरुषमानम्

अनुपथ मेषातनुत विशेषादि सुरबलं बलमानम्

"क्लीं इति कामबीजं सर्वार्थप्रापकम्"

"ऐं इति वाग्भवबीजं सर्वार्थविद्योतकम्"

वज्रपाणि शब्देन लकार एवोद्घृतः इन्द्रे लोचने लः स्यात्

खरतरनखरकरालकरानन दलनम् केसर केशा

नरहरिरुपवती नृहरेरपि शक्तिरसङ्ग निवेशा

दुर्जनदारणदारुणरुपा

"मुखे सूर्येऽपि कः स्मृतः हः कोपे वरुणे चन्द्रे ।।

"श्रीयते सेव्यते परशिवेनापिया साश्री"

"श्रयति शक्तिरुपेण शिवमिति श्रीः"श्रीयते सर्वैर्गुणैरिति वा

चण्डमुण्ड धरणोचत्त मनुगतसुखर वितरण दक्षम्

एकतरं दधती करमऽगुलिशूल विरुग्नविपक्षम्

श्रीमति सर्वेश्वर्य सर्वमाधुर्यतदधिष्ठान बोधकम्

"यावद विचार दहनेन समूल दाहम्, दग्धान जर्जर लतेव बलादविद्या शाखा प्रतानगहनानितावद नानविधानि सुख दुख वनानि सूते"

"अमृतश्चैव मृत्युश्च सदासच्चाहमर्जुन।।

उन्नतफण भरमणिगणनिर्भर वरफण धर विकरालम्

चित्रविचित्रं दधती नवखटवावयव मरालम्

चिरपरिचितया सुरपतिशक्त्या

जयति रणभुवि यो मामसि शररचनेन

अपनयति सपदि यो मम् दमनेन

कुरु निजमुखमिदमनुपवितततम्

पिव निभृतमिदमसृगमृतमुचितम

निपतति न भुवि यथा रुधिरकणा

वितनु तथा सकलसदवनचणा (चणा घूमना)

कटुदशनकटकटध्वनिमुखरम्

चर्वय तदुदितमसुरप्रकरणम्

क्षुधमपनय किमपि शिथिलयतृषम्

नन्दय शरणगतदैवतवृषम्

कलयतु कलया चलमणिवलया सुरवर पुर बालिका
तव पदरजसा मुदिता मनसा शिरसि दधतु लालनम् (शिर लोटना)

दारुण–दानवपटल विखण्डिका, खलखण्डिका
त्रिभुवन सर्जन पालन संहति–हेतुरुदयति हि चण्डिका
"स्मर्त्तव्याः परयाप्रीता।।
तव गुणबद्धह्नदा मयि तेन हि दूदता विनिवेशिता
निजगाद सोऽमलमण्डिकाम कोमन वचनं चण्डिकाम्
आखण्डल मुख दैवत मण्डल दण्डन भण्डन चण्डम्
सपदि विभेद चयाललिता कृतिरसुर धराधिप मण्डम्
भवदनर रबलशक्तिरपाकृत सर्वसुपर्व्वललामा
तृणमिव वह्नि रुचा निरदाहि यथा महिषासुर नामा
"सन्मुख होय जीव मोहि जबही
जन्म कोटि अघ नासौ तबही ।।
ब्रह्मणो विद्या ब्रह्मविद्या–ब्रह्म की विद्या ब्रह्म विद्या
"मनसैवानुद्रष्टय" को संस्कृत मन से ही ब्रह्मत्मसाक्षात्कार करो
असदपि सदिव यया विहितं जगद खिलमिदं गुणवत्या
यत् सन्नि धौ चुम्बकलोह बद्धि

सारा असद् जगद् तद्सापेक्ष सद्हो रहा है निरस जगद् तद् सापेक्ष सरस हो रहा है

निरानन्द जगद् सानन्द हो रहा है।
जगन्मण्डल नर्त्तनागार है अनस्तमितसंरम्भभविरत प्रयत्न
अप्रतिबद्धक्रियाशक्ति
निरवधि वस्तु न किमपि भुवोऽवधिरुद धिरमुष्य धरित्री
अनवधिरुप गुणतिशाया कथाकृतिरत्र भवित्री

अल्पे सुखं नास्ति सार्वाधिक यद्यदधियादुरगाय विभावयन्ति तद् तद् वपु यद्यदवपुविभावयन्ति प्रणयग्नेसदनुग्रहाय

क्या पृथ्वी(मृत्तिका)से घट आकृति जन्य होती है इससे धरित्री की व्यापकता में क्या बट्टा ?

प्रतिवपुरुच्छलदच्छतमच्छवि लहरिकृताम् वृष्टम्।
क्वचन न केनचिद्दभुतिभीदृश रुपमिह श्रुतदृष्टम्।।

सुनयनरञ्जित चलितश्रुतीपथ–मण्डल कुन्तलमुक्ता
हिमगिरिशिरसि तपसि धृत रतिरिह रतिरव मदन वियुक्ता

हृदयांचल ही बिन्ध्याचल है गहनगुहोदरखोह काली खोह गुफा और में सिंहनी काली रहती है। अतिरतिमोक्त्री अस्ति शिरीषकुसुम सुकुमारी

त्रिवलिनदीतरणा तत कोमल लोभलतैकपदीका
निजरुचि कनक गिरिकृत हिमगिरी रप–हृतसकल हृषीका
सर्वत आनन लोचन मस्तक कर चरणश्रुति नासे
सर्वतः पाणि पादञ्त सर्वतोअक्षिशिरो मुखम्
स्वमुजकनकलतिका नवपल्लवविभ्रदागुणशस्ते
क्वचिदपि वलयति कन्दुकमम्बा वदनकमललसदल ककदम्बा
शुम्भनिशुम्भ पराजित भञ्जित-परिगञ्जित पद माना
पाशमपाशित वैरिदुराशयमेक भुजेन दधाना
कज्जलशैलतटीव तलद्रुम वलयितवल्लिविताना
जलदधटेव विसारि सचापल चापलता न बक्पाली
असुरजनग्रसनव्यसन प्रसरद्रसना दशनाली।
शशधरशकलशिखण्डिनि ए
अथ पार्वणेन्दु सदृशेन पार्वतीवदनेन तद्भयतमोविनिघ्नती
पूर्णेन्दु षोडशेन्दुकलापूर्णा पूर्णिमा राका
विश्वलयस्थितिसृष्टि विधयिनी पालय दोष निवृते
कुङकुम रागविलिप्त भिवामल कनक द्रव जटितं वा
रुचि भिरुपादधती हरिदम्बुदमरुणतराधर विम्बा
असुरबलद्रुमदाहिनि करुणामृतरसवाहिनी
तव भजनमन्तरा जननि!किमनन्तरामपहरति गतागतखेदम्
उदीयमानेन्दुनिभं प्रकोपान्मुखं मसीरागमुवाह देव्याः
त्वमसि सुमुखी मुदा भजति सुमुखी सदा करशुक शिशुबोधनदिब्या
असिमलुनादिषु शातातरमसम ताडितवाहन केसरिशिरसम्

आष्टदिगुद्यत चन्द्रकाविमलम् नमइव चर्मविभेद चविपुलम् (चन्द्रक–चन्द्रइव)

अभयवरसम्मुखी भजति भृशमुन्मुखी (बार बार) त्वमसि सखी युगहित भव्या

आली या काली

विविधमहाम्बुधिवासिनि सर्वकलाविदधासि (कला मञ्जरि कलावती)

त्वमसि किल कलिका रुचिविजित कलिकालदलन विधिशक्ता

तेजोमण्डलदुर्धर्षा भ्रामरी चित्रकान्ति भृत चित्रानुलेपना देवी चित्राभरण भूषिता

चित्रभ्रमरपाणिः सार महामारीति गीयते

भ्रामरी देवि की कान्ति विचित्र अनेक रङ्ग की है वे अपने तेजोमण्डल के कारण दुर्धर्ष दिखाई देती है उनका अङ्गराग भी अनेकरङ्ग का है चित्र विचित्र आभूषणो से उपेत है चित्र भ्रमर पाणि और महामारि आदि नामो से उनकी महिमा का ज्ञान किया जाता है।

ज्वल दनल चारिणीमुदयद सिधारिणी मविलम्बित कृत वरदानाम्

"सर्वरुपमयी देवि सर्व देविमयं जगत

अतोऽहं विश्वरुपां तां नमामि परमेश्वरीम्"

समुचित शुचितक्रिया समुदित रुचिश्रिया विक्रियारहित गुणवत्या

भीमाकृतिरथ पिशुन निशाचर भक्षणमत्र करिष्ये

"दशनैर्मथितान्यऽपि"

भीमापि नीलवर्णा सा दष्ट्रादशन भासुरा

विशाललोचना नारी वृत्तपीनपयोधरा

हसरुति स्तुतिमातनुते सारिदावलिरत्र लसन्ती

वमन्ती कल्पकालाग्निं चर्वयन्ती दिते–सुतान्

हसन्ती चाहदृहासेन नृत्यन्ती व्योममण्डले

गच्छन्ती वातवेगेन चरन्ती पितृकानने

दैत्यवक्षःपातनोत्थरुधिरोक्षितविग्रहा

वस्तु किमस्ती तदत्र जगत्त्रय

जननि न यद्भवसि त्वम्

"न विद्मस्तत्तत्वं वयमिह तु

यत्त्वं न भवसि"

दर्शित गलित कलङ्क कलानिधि

मण्डलकोटिविडम्बा

ब्यलसदविस्मित सहजशुचिस्मित

सहजशुचिस्मितज्योत्सनासे स्नापित वदनरुचा जगदम्बा

आनन्दव्योमसान्द्र शशिकला

वदनसुधानिधि सरस सुधा की तरह कोटि कोटि

चन्द्रसमुद्रमन्थन से निर्गत समप्रममञ्जुमुखमयङ्क

ऊनरुप से ऊन कम्बलरुप से भी ऊन ही है

नासारसन श्रुतिनयनत्वच करुणाधिष्ठिति शीला

त्वमसि जगन्मयी जगदवलम्बन परमा ते चितिलीला

हरिरेव जगद् जगदेव हरि

र्हरितो जगतो नहि भिन्नतनु

इति यस्य मतिः परमार्थगतिः

सनरो भवसागर मुत्तरति

ब्रह्मरुपतया ब्रह्मकेवलं प्रतिभासते

जगतरुपतया त्येतद् ब्रह्मैव प्रतिमासते (मधुसूदन)

सौन्दर्य सारविजित जगल्लावण्यपुञ्जि का

सृक्कद्वन्द्व स्रवद्रक्त धाराविच्छुरिताननाम्

मातृरुप मवलम्ब्य जगन्नु जनयसि रक्षसि नित्या

भ्रान्तिरसि भ्रमयस्य पचेतनमिव चेतनमपि गत्या

न श्रमलेशमवाप शिवा परमपि प्रहरन्त्य त्रिधीरम्

प्रति वपुरुपचय कारण मनुदिन मसि पुष्टि स्पृहणीया

हृदयसमुत्सवसमुदाय साधनमसि तुष्टिर्महनीया

विहरन्तं युधि बहुविधगत्या

मुण्डमपातयदस्यमिहत्या

चण्डशिरस्व करेण दधाना

मुण्डमपि स्फुरतिस्म समाना

श्रद्धा कान्तिरसि प्रथितामुवि लक्ष्मीरस्य विकल्पा

वृत्तिरसि त्रिगुणा धृतिरप्यसि भवसि स्मृति रनुकल्पा

क्षुधा रानी कालहु ते बड़ी!साझे खिआइ पिआइ विदाकिये

सबेरे दुआरे खड़ी ! क्षुधा रानी कालहु ते बड़ी

छाया क्षुदसि च शक्तिरुदञ्चसि तृष्णा दुःसहासारा

गगन तमालक मञ्जरिजालक तारक तार विलासम्

नक्षत्रमण्डल से आकीर्ण व्याप्त नीलाकाश

हरिमाया भवती विदिता भवविस्तारण बहुमुद्रा

चेतना च भवती भयहारिणी देविबुद्धि रपि निद्रा

"ये सारी अदायें भाव भङ्गिमाऐ उसी की है"

आत्मभार्या परिरम्भण आत्मरति

प्रतिपद जिष्णुजगज्जननीवरयुद्ध नियुद्धविलासम्

रति रण धीरा अतिरति भोक्त्री

सुभगरति रुपा काली वायु प्रकम्पित कन्दर्प की पताका की तरह

मुद्गरखण्डन रुषितनिरायुध दानव नायकमुख्या

वैष्णवमस्त्रमभिक्षिपतिस्म च सारतरं जगदम्बा

प्रविततमायतया विहितायुत बाहुमुदीरितचक्रम्

पिहित सहस्रकरं सहसावलि नन्दनदशगुण पौरुष वक्रम

वलित ललिततरशूल महाकरमविरलमदमुपयन्तम्

कृतघनविभ्रमसम्भृतसौरभ पेशलकेशनिवेश भृते

अलिकुलमाला सुकुङ्कुलपरागछुरित

सम्भ्रम चञ्चल 'कुन्तले' मधुकर

तस्य केशेषु जीमूते (श्रुति) पटलमनाकलयन्तम्

परशुसमुद्यत बाहुमुपेतम्

मोहियतिस्म शरेण रणेतम्

प्रसरदलातमहायुध भासा

सपदि निरासितयाऽनल भासा

नृत्यप्रसारित पादाघातपरिवर्तितभूवलय

चतुर्दश भुवन सेवित पादपद्मे

हे महाकाल्पान्त नर्तकी–

जब भी छाती है मयकदे पे घटा

तेरे बालो की याद आती है

"मै वह जुल्फ सान परवर जिसे खौफ है हवा का

मै वह काकुलेपरेशां जो सँवर गयी हवा से"

"पानी ना बरसना इन्द्र के टङ्की की पानी खत्म हो गये

शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना

गम्भीरनाभिस्त्रिवली विभूषित तनूदरी

सुकर्कश समोत्तुङ्गवृतपीन धनस्तनी

मुष्टिं शिलीमुखापूर्ण कमलं कमलालया

पुष्पपल्लवमूलादिफलाढयं शाकसञ्चयम्

काम्यानन्तर सैर्युक्तं क्षुत्तृण्यमृत्यु भयापहम्

अचलाकुसुमित विटपिलतावली विपुल पुलक लसमाना

अरुद्धस्पन्दरुपा अप्रतिबद्धक्रियाशक्ति

रक्त चण्डिका विद्याविद्योतित अन्तःकरण

समुद्यत्सहस्रांशु कोटि विडम्बाई देह प्रभारुण्यपूरोदये

असुरगणस्खलदविरल शोणितकुङ्कुमरागेतरङ्गे

दृश्यउदर का आनन्द जिसका विप्रुश कण मात्र है सारा ज्ञान जिसका महाज्ञान भट्टे की चिंगारी विस्फुलिङ्ग मात्र है पञ्चकोश अन्नमय प्राणमय ज्ञान विज्ञानमय आन्दमय कोश मे द्वैत भ्रम छेदनी तलवार अज्ञानान्धकार का अपनोदक

वेदान्तमौंग का अरुण सूर्य सुन्दरी ब्रह्मरुपा है

विश्वानन्दतुषार सिन्धुरखिलज्ञानस्फुर्लिगानलः

प्रच्छन्नासिलता च कोशकुहरे द्वैतभ्रमच्छेदिनी

मोहध्वान्तविमाकरःपरिलसन्वेदान्त सीमन्तिनी

मैलिस्थानमणिः सदा विजये संविन्मयः पूरुषः

मौन सल्लीन मानस ही सन्यास है(श्री गंगाधरेन्द्र सरस्वती स्वराज्य सिद्धि)

संन्यासं किं ? मौनं

मौनं किं ? पक्षपातराहित्यम्

बाल्यं कि ? आत्मज्ञान बलेन अविद्यादितिरिस्करणं बाल्यम्

64 कलाओ के सहित भगवती सकला है

चतुःपष्टि कलाभिवा सहिता सकला

सम्यङ्कलयतीति सकला

हरतीति ह्रीः संहृति शक्ति

हृञ् हरणे संहारक शक्ति

मणिमयमुकुट मरीचिविमोषिततिग्ममरीचिमरीचिम्

दिशि दिशि दर्शित जलदविवर्जित विमलसुरायुध वीचिम्

ज्ञाने प्रयासमुदस्पास्य नमन्त एव जीवन्ति सन्मुखरितां भवदीयवार्त्ताम् ।

स्थाने स्थिताः श्रुतिगतां तनुवाङ्मनोर्भिये

प्रायशोऽजिताजितोऽत्यसितै स्त्रिलोक्याम् ज्योतिषामपि

"विन्द्वादिनवानां संहतिर्नाद उच्यते"

"बिन्दोरपि व्यञ्जनत्वादर्धमात्रैव"

एकमात्रो भवेद्धस्वः द्विमात्रो दीर्घ उच्यते।

त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनन्त्व र्धमात्रकम् ।।

बिन्दु 1/2 मात्रा अर्धचन्द 1/4 मात्रा रोधिनी 1/8 मात्रा काल परमाणुर्लव उच्यते

षट्पञ्चाशत उत्तर शत्द्वयलवैरेका मात्रा

नलिनीपत्र संहृत्याः सुक्ष्मसूच्यभिववेघ ने ।

दले दले तु यः कालः स कालो लव संज्ञितः ।।

रेफो रुद्राणी रुपः

बिन्दुना मुखम्

बिन्दुनाद्वयेन कुचौ

सपरार्द्धेन योनिः

वाह्ययेन्द्रिरः व्यवहाररुपा जागरावस्था

वाह्ययेन्द्रियानपेक्षान्तः करणव्यवहाररुपास्वप्नावस्था

षुसुम्नानाड़ी मूला धारादब्रह्मरन्ध्रं व्याप्नोति

कामयत इति कः परंब्रह्म

कं ब्रह्मेति श्रुतेः!कृमेरौणादिकोङ

जगत्सिसृक्षावान परमेश्वरस्तत्पदार्थः काम इत्युच्यते

एकारस्य त्रिकोणत्वाद्योनिरित्यर्थः

तदेव प्राणिप्रसवकारणम्

त्रिकोणाशक्तिरेकारेण महाभगेन प्रसूते

ईयते योगिभिः सर्वान्तर्यामितयेति ई धत्त इति धी

दिशो द्रुमादीन् सरित्समुद्रांश्च हरे शरीरं यत्किञ्च भूतं प्रणमेदनन्यः

ल इति पृथ्वीबीजस्य ससागरं समूधरं भूमण्डलमर्थः

भूमण्डलमित्यपि पञ्च भूतोपलक्षणम्

तदपि च मृदघट इतिवत् परमात्मसामान

धिकरण्येन भूमण्डललोप लक्षित पञ्च

भूतात्माना परिणतं परमात्मतत्त्वमेव

ल इत्यस्यार्थः

महत्त्वात मही

हीं–ह्रींम इति हकारस्य हृदयमर्थः

तत्र हृदये ई गतौ इट गतौ धातौः

ई इत्यस्य वासोऽर्थः

ह्रीं हृदयागारवासिनी हल्लेखां

तां माति बोधयति इति ह्रीम्

निगुर्णस्वरुप राजराजेश्वरी

रजसः परं परोरजसे

रजोऽतीतं निर्मलम्

जगत्कारणस्वरुप कामेश्वरी (देवी भागवते)

सर्वचैतन्यरुपां तामाद्यां विद्याञ्च धीमहि

आद्यायाः श्री विद्यायाः एव ब्रह्म रुपत्वं प्रतिपादतयते

वागर्थविव सम्पृक्तौ

शब्दं श्रोत्रद्वारैव गृह्यति

अर्थन्तु कञ्चन च चछुरादिद्वारेति विशेषः

पटः स्फुरति

घटः स्फुरति

यहाँ प्रकाश का स्फुरण विमर्श ही है

ज्योतिषामपि ज्योतिर्निर्दृश्यदृकस्वरुपो महान्

प्रकाशः शिवः। तद्विज्ञाने जाते सर्वं

विज्ञातं भवति। तस्मिन दृष्टे सर्वं बाधितं भवति

तस्य नैसर्गिकी स्फुरत्ता विमर्शरुपा शक्तिः तद्योगादेव विश्वोत्पत्तिस्थितिलयलील त्वं तदुक्तं वरिवस्यारहस्ये

स जयति महान प्रकाशो यस्मिन दृष्टे न दृश्यते किमपि

कथमिव तस्मिन ज्ञाते सर्वं विज्ञातमुच्यते वेदे

नैसर्गिकी स्फुरत्ता विमर्शरुपाऽस्य वर्तते शक्तिः

तद्विज्ञानेर्थमेव चतुर्दश विद्यास्थानानि

तेष्वपि सारभूता वेदाः

ककारः सर्ववर्णाग्रयः प्रकाशः परमः शिवः

तथा कश्चित पुरुषः

उतपादनेच्छाविशिष्टः स्वीयामुत्पादनशक्ति भर्यामवलोक्य स्वार्धाङ्गिन्यां स्वयं अन्तः प्रविशति शुक्ररुपेण–आत्मा वै पुत्रनामासि इतिश्रुतेः स्वभिन्नत्वात् स्थूलतर भेदाक्रान्त नामेदमानम् ततस्तस्य शुक्रस्यान्तः शोणितबिन्दुरुपेण भार्या प्रविशति तेन च स बिन्दुरुच्छूना भवति।

स एष वटोदुम्बरादि बीजस्थानीयः

तस्मादङ्कुरविशेषाद्द्रयुत्त्पति क्रमेण

कालान्त्तरे पुत्रद्युत्पत्ति

शुक्रबिन्दु भावामयते

स्फुटशिवशक्ति शामरस्यनामा कामो कामो रविरग्नि सोमात्मक इत्यादि शब्दैर्व्यवह्रियते

अकारहकारयोर्मध्ये सर्ववर्ण पाठः

त्वं वा अहम्

अहं वै त्वम् (ऐतरेयोपनिषद)

तत्र प्रकाशस्वभावस्य तु परमशिवरवेः किरण समूहः विस्फुरणशक्तिरुप विशदे विमर्शदर्पण प्रतिफलति यथा लोके सूर्याभिमुखस्थितदर्पण तले सूर्यकिरणप्रतिफलनान्तरं निकटगते कुड्ये सूर्यकिरणप्रतिहत तेजो बिन्दुः प्रत्यक्ष प्रपद्यते तथैव प्रकाशस्वरुपपरमेश्वरस्य दर्पणस्वरुप विमर्श

सम्बन्धे जाते महा बिन्दुः पुर्णोऽहमिवत्येवं रुपः परमेश्वरः प्रकाशते

सितशोणबिन्दु युगलकामेश्वरी रुपं दिब्य मिथुनम् तदेव वागर्थसृष्टिहेतु

परमेश्वरः स्वाङ्गभूताखिलप्रपञ्चविलयात्मक विमर्शशक्तिमनुप्रविश्य बिन्दु भाव मन्यते

ततो विमर्शशक्तिरपि स्वान्तर्गप्रकाशमंय

बिन्दुमनु प्रविशति ततश्च बिन्दुरुत्पन्नो

भवति तस्माद बिन्दोर्नादात्मिका

समस्ततत्त्वगार्भिणी जीवरुपा

बालाग्रवत्सूक्ष्मरुपिणी भवति

विमर्शो रक्तबिन्दुरुपतां प्रकाशः शुक्ल बिन्दुरुपता भजति

उमयोर्भेलने मिश्ररुपं सर्वतेजोमयं परमात्मास्वरुपं भवति

अपरिछिन्नानन्ततेजोराशिमयी अनन्तकोटि
योगिनीवृन्द समाराधिता नित्यानिरवधिका
तिश्यानन्दमयात्मसाम्राज्य सम्पदभिमान शालिनी

निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरात्रि दुरत्यया
महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा
रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा
रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्त के शति भीषणा
रक्त तीक्ष्णनखा रक्तदशना रक्तदन्ति का
पति नारीवानुरक्ता देवि भक्तं भजज्जनम्

वसुधेव विशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी
दीर्घो लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ

कर्कशावतिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयोनिधी
भक्तान सम्पाययेद्देवी सर्वकाम दुघौ स्तनौ

खडगं पात्रं च मुसलं लाङ्गल च विभर्ति सा
आख्याता रक्त चामुण्डा देवि योगेश्वरीति च
महीं मूलाधारे कमपिमणि पुरेहुत ब्रह्म्
स्थितं स्वाधिष्ठानेहृदि मरुतमाकाशमुपरि
मनोऽपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्वा कुलपथम्
सहासारे पद्मे सहरहस्ति पत्या विहरसि
हकाराद्व्योम सम्भूत ककरात्त प्रभञ्जनः
रेफादग्निः सकाराच्च जलतत्वस्य सम्भवः
लकारत्पृथिवी जाता तस्माद्विश्वमयी च सा
लकारस्तु गन्धबोधकः
मुलालबालकुहरादुल्लसिता भवानी निर्मिद्य षट्
सरसिजानी तडितं लतेव
विसतन्तु तनीयसी विद्युत्पुञ्जप्रख्या मूलधारस्थ

पद्म कर्णिकास्थ श्रृगांर रुपा त्रिकोणादुपरि बिन्दुरुपं
ज्योतिर्लिङ्ग भावेष्टय सार्धत्रिवलया कारेणा घोमुखी
समुपविष्टा योगमर्य्यादया योगिभिरुर्ध्वमुख
तयोत्याप्ते। सा चोत्थिता मूलाधारानाहताज्ञा
चक्रेषु बहिन सूर्य सोममण्डलानि भित्वा ब्योग्नि
ललाटोर्ध्वप्रदेशे विद्यमानस्य चिच्छ शिवमण्डलस्या
द्यो मुख सहस्त्रारकर्णिका रुपस्य मध्ये स्थितयाऽकुल
कुण्डलिन्या सङ्गम्य ततोऽमृत पूरं स्त्रावयित्वा
डाकिन्या दिभण्डलान्याप्लावन्यती स्वयमपि तत्पान
मता भूत्वा पुनस्तेनैव सुषुम्नाभार्गेण परावृत्य
स्वस्थाने सुखं स्वपिति सर्व मेतद्योगम्यम् (ककाररुपा कल्याणी)

ईयते अधीयतेऽनेनेति ए बुद्धिः
इङ अध्ययने इति धातुरधिपूर्वोऽपि
प्रकृत आर्षत्वाद तद्विभोकः क्विपि कृते
कित्वेऽपि गुणः अध्ययनं करणं बुद्धि।

हन्यतेऽनेनेति हं शौर्यम्
सीयते सूयते इति वा सं द्रब्यम्
काम्यते इति कम्

स्त्रक्चन्दनवनितादिकम् तथा च शौर्यधनस्त्रकचन्दन वनितादि प्राप्त्य ति शयस्य कीर्तेश्च निर्माणमिति द्वितीय कूटार्थः। हरति निखिलं जगदिति ही सर्वजगत संहत्री। ई दीप्तौ इति दीप्त्यर्थक ईकारश्च तत्र प्रश्लिष्टः सृष्टि स्थिति दीप्ति कर्तृत्वं तदर्थः। ह्र कारेकारयोः कर्मधारये यणि ह्रीं उपलक्षण विधया हरति सर्व विषयी करोतीति ह्र। तत्र ईयते प्रकाशते इति ह्रीं निर्माणर्थकः मकारः "कन्यन्ते प्रकाश्यन्ते शब्दार्थजालानि अनेनेति कनयतीति वा क।" कद्दीप्तौ इति स्मरणात् आर्षत्वात प्रगृह्यत्वेन प्रकृतिभावः। ईयते स्मर्यते अधीयते वा सर्वा वेदशास्त्रादिकला अनेनेति ए। इक्स्मरणे इङ अध्ययने इत्यस्मादौणादिके विचि। शब्दार्थ जालावभासिनी वेदादिशास्त्रध्ययनस्मरण प्रयोजिका बुद्धि। ईयते ब्याप्नोतीति ई।

परोक्षप्रिया हि देवाः
सर्वप्रकाशक बुद्धिव्यापिनी लहरी ल ह्रीत्याधि क्यमर्थः।

हन्य ते तापत्रयमनेनेति ह्रः

सीयन्ते उपभुज्यन्ते सर्वधन कनकवाहन भूम्यादि सम्पत्प्रचया अनेनेति सः हीयते प्राप्यते इति ह्रः ईयते प्रकाश्यते कीर्तिजालं दिगन्तेषु अनेनेति ईः

हरति विहरति इति ह्रीं

ई इत्यनेन हृत्पुण्डरीकदहराकाशस्थदीप शिखा मध्ये स्थितौ बोधात्मक प्रकाशस्वरुपा परमात्मैव

विवक्षितः

तस्या शिखायाः मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः

इष्यते अत्यन्ताभीष्टत्वेन विरिञ्च्यादिचेतन वर्गैरिति ई।

स्वप्रकाशपरमानन्दकरुपिणित्यपि।

सर्वस्य मन्त्रस्यामर्थः–शब्दार्थ प्रकाशकवेदादि शास्त्राध्ययनस्मरण प्रयोजक बुद्धिव्यापन

लहरीयुक्ता स्वप्रकासंविदा अनिष्ट निवारण भोग भोग्यादिप्राप्त्याधिक्य कीर्ति जाल प्रयोग गुण सन्ततिरचयित्री सर्वतत्त्वसर्वकलाधिष्ठात्री विश्वोत्पात्तिस्थित संहति जनक सर्वैश्वर्योपेतनिरति शयानन्दाभुव प्रकाशिका निरतिशयानन्दात्मक दहराकाशस्य परमात्म स्वरुपिणी स्वप्रकाशा चिच्छति।(श्री श्री करपात्र भाष्य)

शाक्ताद्वैतमतेऽनन्तस्य विश्वस्याधिष्ठान भूतः शुद्धबोधस्वरुपः प्रकाश एव शिव तत्त्वभितिवीक्रियते ! तस्मिन प्रकाशे यो हि विमर्शः स एव शक्तिरिति ख्यायते

प्रकाशं बिना विमर्श विमर्शं बिना प्रकाशश्च जावतिष्ठते

वेदान्तिनां मते विमर्श विनात्यनन्तो निर्विकल्पः प्रकाशोऽवतिष्ठते परन्तु शाक्तौद्वैतीनां दृष्ट्या तु विमर्शः सर्वदाऽवतिष्ठते किञ्चान्यत् सत्यामपि महावाक्यजन्यायं परब्रह्मकारवृत्तौ आवरकेऽज्ञाने निवृत्तेऽपि स्वयंवृत्ति रुपो विमर्शस्तिष्ठत्येव वृत्तिरुपया विद्यया संश्लिष्टः एवानन्त प्रकाशस्वरुपः शिव सदा विराजते विमर्श रुपायाः प्रकाशशक्तेः प्रवेशेन बिन्दोरुत्पत्ति र्भवति

द्वयोरे की भावः एवार्धनारीश्वरतां भजते अनयोः परस्परासक्तिरेव कामः श्वेतबिन्दु पुंस्त्वस्य रक्तबिन्दुश्च स्त्रीत्वस्य परिचायकौ द्वैयोर्मलने कामकलाय उत्पत्तिः 'अ' इति शिवस्य प्रतीकतां

ह इति शक्तेः

इयं त्रिपुर सुन्दरी अहमित्यनेन व्याप्ता।

नाम रुपात्मक जगत में सच्चिदानन्द की भावना ही अम्बा को पाद्यसमर्पण है। भावनाओ में ब्रह्म भावना ही आचमन है। सर्वत्र सत्वादिगुणो में चिदानन्द भावना ही स्नान है।चिद्रुपा कामेश्वरी में वृत्यविषयता का चिन्तन करना ही प्रोञ्छन है। निरञ्जनत्व अजरत्व अशोकत्व अमृतत्व आदि की भावना ही विविध आभूषणो का अर्पण है।स्वशरीर घटक पार्थिव प्रपञ्च में चिन्मात्र भावना करना पुष्पसमर्पण है वायु की चिन्मात्र भावना करना धूपसमर्पण है तेज में चिन्मात्रत्व की भावनादीप समर्पण है अमृतत्व की

भावना नैवेद्यार्पण है विश्व में सच्चिदानन्द भावना ही ताम्बूल समर्पण है वाणियो का ब्रह्म में उपसंहार ही स्तुति है।वृत्तिविषय के जड़त्व का निराकरण ही आरार्त्तिक्य है।वृत्तियों को ब्रह्म में लय करना ही प्रणाम है।

मामनादृत्य यत्पुण्यं पापं.स्यात् प्रतिभाषितः

मन्निमित्तं चरेत पापं पुण्य भवति शाम्भवी (कुलार्णवतन्त्रे)

देवतार्थं द्विजार्थं वा हत्वा पापैर्नलिप्यते

हर्षणाद् हृषीकम्

अज्ञप्रबोधनादन्यत्

कार्यमस्ये न विद्यते

जाग्रत सपन सुषूपतितुरिया

ये सब आतम देव की पुरिया

कुमारयन्ति खेलन्ति इति कुमारा

ई–माया तस्यांशेते सः ईशः

प्रलयकालानलज्वालाजटालचिति मध्यसंस्थे

कल्पन्तरङ्गनृत्यमाहानाटिनी

प्रलयसमयकोट्यर्कदुर्निक्ष्ये

बहिन्स्फुलिङ्गपिङ्गलाक्षि

द्वीपिचर्मावृताङ्गि

श्मशान धावन विमुक्तकेशि

रक्तार्णवद्वीपप्रज्वलत्पावक शिखा तश्चारिणि

शववक्त्रा

दशवक्त्रा

ब्रह्मण्डनिष्पेषिणि

प्रचण्डतरदावानलज्वलितवक्त्रे

एकवक्त्रा

निर्विकारस्थ चिदानन्द घनरुपायै

नित्योदितवैभवे अयुतवक्त्रा

चण्डाट्टहासिनि विंशतिवक्त्रा

नीलनागासने षोडषवक्त्रा

महाडाकिन्यै निपीतबालनरुधिरायै

महाभोगभासुरे दुष्टदराभिप्रायभञ्जिनि

कपालकामिनी

कपालमालिनी कोटचामुण्डामध्म चारिणि

पदविन्यासत्रासितसकलपाताले

रक्ताम्बरे रक्तस्रगनुलेपने

वातवेगनेजायिनि

रिङ्गण–स्खलन

विकटाम्बा

श्रद्धाम्बा

विजयाम्बा

अम्बा

चण्डिकाम्बा

स्वाहाम्बा

लेलिः हानरसनामयानके घोरतरदशन चर्बिते

भगवती के विविध मुखों का दर्शन

दशमुखवक्त्राय नमः

चण्डकापालिन्यै नमः

महाकालिकायै नमः

मकरवक्त्रायै नमः

गरुणवक्त्रायै नमः

नरवक्त्रायै नमः

ॠक्षवक्त्रायै नमः

कपि वक्त्रायै नमः

फेरु वक्त्रायै नमः

द्वीपि (गज) वक्त्राय नमः

सिंहवक्त्रायै नम

तुरगवक्त्रायै नम

हे यममुखी यमहस्ते परमप्रचण्डयोगेश्वरी

कालविध्वंसिनी काली

जगदुन्मूलिनि कल्पान्त कारिणी

त्रिशूलझङ्कारिणी शिवा

चिताङ्गारहारिणी मृतचेलावृतशरीरे

कालिकोल्लास–10 (II)

मीयते सेव्यते प्राप्यते योगीन्द्र मुनीन्द्रै वेदैश्च सा मा

जो योगीन्द्र मुनीन्द्र तथा वेदो क द्वारा सेव्य है या

जिसका प्रत्यायपन होता है वही माँ है

सृष्टेरादौ त्वमेकासीत् तमोरूपमगोचरम्

(महानिर्वाण तन्त्र)

सृष्टि के आदि में अगोचर तमो रूप तुम्ही थी (अर्थात काली ही थी)

सभ्याः सदर्थ कलयन्ति काव्ये

दिशन्ति दोषान् पिशुना प्रयत्नै

मधूनि पुष्पे मधुपाः पिबन्ति

कुर्वन्ति कीटाः किलवृन्त भेदम्

सभ्य लोग सदर्थ का काव्य में प्रतिसन्धान करते है चुगुलखोर लोग दोष ही देखते है "प्रीयते विश्वमातु" विश्व माता के प्रेम के लिए

मधुप पुष्प में मधुरमधुपान करता है

कीट लोग पुष्पनाल ही काटते है।

"चहुँ दिसि कीचड़ पानी, जो आता सो फँसता है, बवरा गाँव अनोखी बस्ती कोऊ हसँता कोऊ रोता"

हे संसारपङ्क निर्मग्न समुद्धरणपण्डिते

संसार भी आवर्तन परायण चक्र ही है सोलह अरे चक्र में होते है चक्र को अरि भी कहते है चक्र में अरा का प्राधान्य है पंचकर्मेन्द्रियों पञ्चज्ञानेन्द्रियों मन एक रूप, रस शब्द, स्पर्श, गन्ध से तन्मात्राऐं यही अतिशय पुनः पुनः चक्र संसार इसमें निपतित जीव का समुद्धरण भगवती कपालमालिनी कपालकामिनी करती है तुम्ही विपक्षास्त्रो से रक्षण करती है।

कवच बनकर

कं देहं वञ्चति विपक्षास्त्राणि

वञ्चयित्वा रक्षतरीति कवचः

प्रत्येक परपक्षप्रहार से देह की रक्षा करती हो

देह भी (दहिउपचये) प्रत्येक पल सड़ रहा है श्वश्रृगालमक्ष्य शरीर को शास्त्रों में पारक्य कहा गया है

परस्य इदं पारक्यम्
अर्थात् परकीय दूसरे का

माता पिता से उत्पन्न पत्नी से गृहीत पुत्रादि से स्वसम्बन्ध ग्रस्त भस्म, कीट, विट से रूप से अवशेष ये सारे शक्ति धर गृहस्थ है

गृही रमेशश्च गृही महेशः
गृही दिनेशश्च गृही गणेशः
सुराश्च यक्षा मनुजाश्च दैत्या
ऋषि प्रधाना अपि ये गृहस्था (दौर्वासस्यमस्य सवादी)

विष्णु जी गृहस्थ ही है शिव जी गृहस्थ ही है सूर्य भगवान गृहस्थ ही है सूर्य भगवान गृहस्थ ही है गणेश जी गृहस्थ ही है इतना ही नही देव यक्ष, मनुष्य राक्षस जो श्रेष्ठ ऋषि है वे सभी गृहस्थ ही तो है।

अतः शक्ति समाश्रयण सभी को अभीष्ट है विकलेवर कैवल्य निर्वाण नलिनी काली काशी में

विशालाक्षी (कामान् अञ्चति)
प्राप्नोति–कामनाप्रपूरक–काञ्चि में
कामाक्षी–मदुरई में मीनाक्षी

जैसे स्थल वैश्चित्रय से एक ही स्वाती बूँद गोकर्ण में गोरोचन, गजकर्ण में गजमुक्ता सीपी में मोती, कदली मे कर्पूर बास में वंश रोचन रूप से व्यञ्जित होता हैं तदवदिव एक ही भगवती तत्व भिन्न–भिन्न स्थल तारतम्य से तारतम्योपेत होता है

चण्डिका जयति जगदम्बिका भयतिमिर चन्द्रिका
जयति–सर्वोत्कर्षेण वर्तते
भयतिमिर पर चन्द्रज्योत्स्ना विकीर्ण कर

दिति (दैत्यमाता) दनुज की मारणशीला तथा श्मशान में संरचरणशीला, महाघोररावा (भयङ्कर प्रणाद करने वाली भैरवी योगिनी डाकिनी के साहचर्य में रहने वाली त्रिशूलझङ्कार से युक्त ही कालकान्ता रहती है सदाशिव रूप प्रेत पर संसरूढ़ भोगेच्छा कल्पलतिका दुःख शोकौघ कर्तन करती रहती है निखल रिपुदल का कर्त्तन उसका स्वभाव है अपवर्ग रस का दोहन करने वाली

कङ्कण लम्बायमान हस्तारविन्द में वलयित चन्दन चुम्बित पूर्ण चतुरस्र चार भुजाऐं "कङ्कण लम्बित चन्दन चुम्बित चतुरचतुर्भुजरम्या चार भुजा चारों दिशाओं में निर्निरोघ पराक्रम माँ का है

हे पापौघहारिणी आपदुद्धारिणी
पाप प्रवाह अपमृत्युवारिणी
कर्मरेखानाशकर्त्री, कर्मरेखाविनोदिनी

सद्‌गुणों के सागर की वृद्धि करने वाली पाप ताप तिमिर हरण करने वाली विकट दीर्घ दश परायण दंष्ट्रों से ब्रह्माण्ड कपाल को विचूर्णित कर देती है।

नर मांस रूधिर परिपूरित कपाल–पर्वत के शिखर पर रक्त पान करती है–

"पर्वताग्रे समाश्रित्य रक्तपानं करिष्यति"

अमृतसारगर्भिणी चन्द्रखण्डाकित भाल भस्म रेखांकित लसन्मस्तक प्रलयाम्बुद के बादलों का अवभासिका वही है

"कुपितोदयचण्डम्' दलयसि चण्डशिरोऽपि च मुण्डम्"

चण्ड–मुण्ड असुरद्वय का संहनन कालिका करती है कर तालिका से त्रिभुवन को संत्रास देती हुई जिसके नृत्यप्रसार से जगन्मण्डल नर्त्तनागार हो जाता है मानो देव लोक की नटी दोनों पैरो में घूँघर निबद्ध कर नर्तन का अवर्तन करने लगी

"छिप्रं एक भुजाकारं, छिप्रं बहुभुजाकृति
छिप्रं एक पादाढ्यं छिप्रं पादशतान्विताम्" (कालिका पुराण)

क्षण भर में अनन्त हस्ति, पाद
क्षण भर में निर्भुजी निष्पाद हो जाती है

सर्वतः प्राणि पाद शिरो अक्षि, मुख हो जाती है।

सर्वत आनन लोचन मस्तक कर चरण मानो त्रिभुवन को आकीर्ण कर लेती है पादाघात् से क्षोणी का वलय विकल हो जाता है लोकपालों के किरीट (मुकुटाग्र) भाग से सेवित पाद पीठ है मानो चतुर्दश भुवन सेवित, पाद पीठ जो सकल कुप्रयोग का प्रमर्दन करते रहते है।

शिवा श्रृगाली मुक्तिदायिनी के चरित्र चन्द्रिका से काली लोक मुखारित रहता हैं

"विलसन्नूपुरां देवी ग्रथितै शवपञ्जरै" (महाकालसंहिता)

शव पञ्जरों का नूपुर भगवती के पादाङ्गुलि में संग्रथित है।

मरालीमन्दगमिनी हंसिगतिविडम्बिनी के गमन समय में नूपुरो (सत्व अंश अस्थि) का क्वणन वेदोच्चार है।

सुजन के भयराज्य में कैरवी (सफेद कमलिनी)
बनकर माँ ही दमकती है।

"काली रूपं परित्यज्य लक्ष्मीरूपेण पार्वती" (महाकालसंहिता)

पार्वती काली स्वरूप को छोड़कर लक्ष्मी रूप स्थित हो गई शिवाशिरोमणि

कालिका के निवास परिसर में परिगत वितत शतकोटि शिवाऐं (फेरू) दुष्टों का दमन करती रहती है।

ऐन्द्री नयन सहस्र धारण करती है अवर्षण से लोक में विहर्षण हो गया अनावृष्टि से त्रिभुवन दग्ध हो गया जीवन घर्षणमय हर्षणविहीन हो गया शोक हत लोक फिर तब माँ शतनयना होकर भूमि जनसम्मर्द दाह का अपनोदन करती है वही शताक्षी कहलाती है।

मण्डितमुण्ड महामणिमाला नीलगगन पर नक्षत्र राशि विराजमान हो जैसे असुरबलद्रुम को दाह करती है

दारूण दानववृक्ष का उन्मूलन उनका क्रीडन है षडानन की उदञ्चित शक्ति रणशूरा माँ है असुर रूधिर आस्वादन परायण रसना यमरसना अरिवर्ग कदम्ब को चाट जाती,

'मामनादृत्य त्पुण्यं पापंस्यात् प्रतिमासितः
मन्निमितं चरेतपापं पुण्यं भवति शाम्भवी'

भगवती कहती है कि मेरा अनादर करके जो पुण्य है। वह दवा यज्ञवत निष्फल है और मेरे प्रीत्यर्थ (बलि मद्यादि) पाप पुण्य सफल महायज्ञ हो जाते है।

विषमपिअमृतायते

पीयूषपाणी का हाथ लगते ही दूषणभूषण हो जाते है

एकपञ्चाशतमुण्डो की विकट शिरुली नादिनी उदग्र शक्ति कालिका

"दन्तैर्दन्तान् ताडयित्वा कुर्यात् कटकटा रवम्" (महाकालसंहिता)

दाँत से दाँत को पीसती हुई रण भूमि को कट कट रण ध्वनि से प्रपूरित कर देती है।

अनन्तानन्तशक्ति (शक्लृशक्तौ) उपेत काली रभसतर वलात् शत्रुओं के निः शेष रक्त का पान करती है दुन्दुभि नाद से अम्बुनिधि समुद्र समुच्छलित हो जाता है।

कोपाग्नि में वीरपानमदशाली धूमरेखा की तरह रणचण्डिक प्रतीत होती है।

रणे चले द्रुतगतिगजगरा विहरन्तं युद्धि बहुविधिगत्या

नानाविधि से स्वाङ्गो का परिचालन रणपण्डित कालिका करती है

नृत्यन्तं पुरतोऽपनीय मधुरं माध्वीक मद्यं महा
कालं वीक्ष्य विकासिताननवरामाद्यं भजे कालिकाम् (बृहन्नस्वच्छन्द तन्त्र)

नर्तन परायण सम्मुख (महाकाल के) माध्वीक महामद्य का पान कर काल को देखकर प्रफुल्लित मुखाम्बुज कालिका को हम भजते है।

कादिकाली महाशक्तिः हादिस्त्रिपुरसुन्दरी
कादित्वाद ब्रह्मरूपतत्वं हादित्वाच्छिवरूपता

कंकारः सर्ववर्णाश्रयः प्रकाशः परमः शिवः (वहन्नस्वछन्दतन्त्रे) 'क' है आदि में जिसके क आर्दियस्य असौ क सर्व वर्णाग्रण्य प्रकाश रूप है कादि।

कादि ब्रह्मरूपाकाली–ककाररूपाकल्यणी 'ह' है आदि में जिसके ह आदिर्यस्य अस्त्री हादि

हादि शिवरूपा त्रिपुरसुन्दरी है शत्रु का समग्रदम्भ दलन करती हुई लाखो चक्रों को निगल जाती है जैसे मेघराशि में सूर्य गायब हो जाय

शक्ति शरादि वरायुध जाल को मृणालनाल की तरह चवर्ण कर जाती है गजवत् स्व करो से चण्ड आदि का शिर धारण करती है समुद्रशक्ति तथा भुजवनों तथा सिंह के प्रणाद से जगदण्ड प्रकम्पित हो जाता है ब्रह्माणी ब्रह्मा के भवन वाणी वीणा (कच्छपी) वादन करती हुई तुरीय नाद करती है

जाग्रत स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीया ये आत्मा काली देवी की पुरियाँ है

कौमारी देवी कुमायन्ति खेलन्ति इति कुमाराः

विक्रीडन परायण कौमारी देवी कन्या कुमारी

"चमुभक्षणे धातु से चामुण्डा"

कोटिचामुण्डा–कोटिचामुण्डा के मध्य कालिका विहरण करती है चलन हसन षष्टि कोटि डाकिनी के सङ्ग कालकान्ता का होता है ।

हसन्तीं च चरन्ती च डाकिनी षष्टिकोटिभिः (महाकालसंहिता)

विहरन्ती तत्र तत्र शैले शैले माहेश्वरी पर्वत पर परिचक्रमण करती कालिका ब्राह्मी धीरा मन्त्रित नीर से अरिवर्ग का पौरूष हर लेती है।

ब्राह्मी धीरा मन्त्रित नीर से अरिवर्ग का पौरूष हर लेती है।

ब्रह्माणी नियुक्त मराल रूप विमान पर अधिरूढ मन्द गमनशीला है अवारित प्रसरा स्मृति रूपा चिति चिति स्मृत्याम्"

वीगतिव्याप्ति प्रजन कान्त्यासन रवादनेषु इस धातु के इतने अर्थ हैं।

एक वीरा विविधं ईरयति प्रेरयति इति वीरा

विविध प्रकार से प्रेरण जो करे वही एक वीरा व्याप्त प्रजनन कान्ति, आसन खाने अर्थ में एक वीरा कालिका को लक्ष्मी ने कहा वह जगन्मयी जगदाकृति जगदातीता जगदाश्रया रूप से अवस्थित है वह कोटि कोकिल कलकण्ठी से भी सुमधुर अमृत मधु द्रव मधुतर ध्वनि करती है कोकिल निक्वाण कोमला लाप को तिस्कृत करती है अपनी ध्वनि से।

(महाकालसंहिता)

करे उन्माद मुरली

कालिका के–उनके हस्तारविन्द में उन्माद मुरली है,

स्त्रीणां त्रैलोक्य जातानां कामोन्मादैकहेतवे
वंशीधर कृष्णदेहं द्वापरे सञ्चकार ह। (महाकालसंहिता)

कालिका द्वापर में वंशीधर ब्रजराजकिशोर बन गई–त्रैलोक्य के स्त्रीयों के कामोन्माद प्रशमन के लिए अतः वंशनाद कर त्रिभुवन को नादामृत में निमज्जित कर देती है

उन्माद मुरली का वादन कर त्रिभुवन को उन्मादित करती कालप्राण असुर नाथा कालिका असुर गजो को आज ही तृण पर्ण की तरह मार डाँलूगी ऐसी प्रतिज्ञा है जिनकी अनात्मवृत्ति ही असुर है आत्म वृत्ति सुर है शोभन ब्रह्म में रमण से ही है असुर जनो के रक्त पानार्थ उनकी रसना सदैव लपलपाती रहती है यम रसना उनकी है यम घण्टा भी उनके व्यक्तित्त्व में समीकृत है विबुध देवगण हर्ष वर्षा में मग्न हो जाते है जब भवानी रणयज्ञ करती है असुर ही हवि द्रव्य है यही यज्ञ की एकमात्र विधि है मानो ज्ञानाग्नि जो प्रलयाग्नि से भी तिग्म है उसमें अनात्म वृत्ति रूपा असुरो का हवन हो रहा है

यह चिदग्निकुण्डसम्भूताकालिका है चिद्ज्वला चिद्विलास ज्योति की ज्याति दशशत भानु की भानु अमृतमय भानु कृशानु सब उसी महा अनल्पज्योति के विस्फुर्लिङ्ग है

यदादित्यगतं तेजः, यच्चन्द्रमासि यच्चाग्नौ

अग्नि में चन्द्र में ज्योत्स्ना आतप में तपन कार्लिका से है। समुन्नत फणीन्द्रो (तक्षक वासुकि आदि) के फणमणि से ज्वाजल्यमान वपु उस पर विविध वैचित्र्योपेत नर पञ्जर क्या अद्‌भुत रस अद्‌भुतानन्दलोभियों के लिए मृत्युप्रकाश भीति और आनन्द का समन्वय इनके विग्रह में है।

अमृतश्च मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन (गीता)

सद असद अमृत मृत्यु सब मै हूँ वर अभय अमृत देता है। रूपा असि छिन्न शिरमृत्यु रूपा दोनों काली में समीकृत है।

साँप हो के डसँती है और ओझा हो के झाढ देती है अनुग्रह निग्रह उसका विग्रह है दुष्ट निर्दुष्ट सापेक्ष निजभुज दण्डो से जो त्रिभुवन रक्षण सक्षण प्रराक्रम पुञ्ज है चण्डको निपातित कर मुण्ड को विपाटित करती हो।

अशेष दुरासद दुरित दुरीहदर्मद पर विराम लगा देती है आपके पाद धूलि कण लेकर विधाता जगद का निर्माण कर देता है।

तव पदमेव पर पदमस्ति

आपका पादपीठ ही अच्युद पद है कनका चल पर्वत को विजय करते में मेरू ने श्रृङ्गतटोल्लासी वक्षोज है निजहुङ्कार मात्र से धूम्रलोचन को निरस्त निराकृत करती हो।

हे त्रिभुवनपोषिणी शङ्करतोषिणि
कल्मषमोषिणी रम्यकपर्दिनी

शिखर शिरोमणितुङ्ग हिमालयश्रृङ्ग
के मध्य तुम्हारा निवास स्थान बताते है

महाकाल ह्रदय सिंहासनाधीश्वरी महाकाली है

कालस्वामिनी कालनाथा, कालाकान्ता आदि नाम धारण करती है कामेश्वरप्राण नाड़ी है। सुजनों के भय राशि पर कैरवी (सफेद कमलिनी) भय अपनोदन करती हुई भैरवी

वही निरञ्जना निरीहा निस्तारङ्ग निराकारा हो जाती है भाल पर बालकलानिधि (चन्द्र) अहि सर्प वलयित त्रिशूल माहेश्वरी धारण करती है। दीपशिखा के तुल्य वदन विघुत गौरी का वदनसुधानिध परमपीयूसनिधि सरस सुधा की तरह है निखिल तिमिर राशि पुञ्जित हो गया वपु अञ्जन कर मन्दराचल पर्वत की भाँति य प्रलयाम्बुदो से सर्वाङ्ग का निर्माण करती है।

"अतिशय कोमल निर्मल मरकत मणि पटली सुकुमारी" भद्रकाली है धरणि धारा पर्वत उनका अधिप हिमालय उनकी पुत्री रूप से कला कदम्बमञ्जरी पार्वती के पदपल्लव की सपर्या से शोक मोह का उन्मूलन होता है उनके नितम्ब बिम्ब कन्दर्प के सिंहासन हैं उन विपुलनितम्बो के फलक तक लम्बाय मान कटि किङ्किणि झम् झम् का कलनाद हो रहा है मानो हंस पंक्ति उनके गति माधुर्यधुर्य का अनुशंसा के ब्याज से मञ्जुल सिञ्जान्ह (पायल) युगलदिव्य चरणों में परिलक्षित होता है यही अनुगत सकल समीहित सिद्धि का एक स्थान है उदग्र से उदग्र वीर योद्धाओं को एक वीरा एक कालिका मार चुकी है कृपाधारा सुधा धारा अमृत सलिल धारा वसुधा सुधा तरङ्गिणी भगवती मुण्डमालिनी प्रवृद्धरोष उससे अरूण किंशुक सदृश नेत्र मानो उदीयमान सूर्य ही नेत्र हो तरूण तरणि किरणरूपा नेत्र है

कमल विलोचन विषम विलोचन (नेत्रत्रय) और अभेद विमल विलोचन अर्थात एकान्त ब्रह्मदृष्टि जिसको पूरा देख दिया वही ईश्वर जिसको कम देखा वही जीव हो गया

अरूणिमा–रज है उससे पालन करती है भक्तो का अभीष्ट अभिलाषाओं का सम्पूरण करती है सित असित और अरूणिमा गर्भित सदय विलोकन भक्तों पर करके निहाल कर देती है।

कैफियत अपने चश्मेसि यह मस्त की न पूछ
सूफ़ी तमाम देखके मैख्वार हो गये।

तेरे नेत्रों की मादकता ऐसी है कि सुधीधीर भी पियक्कण हो गये।

सूर्य शशाङ्क अग्नि यही नयन त्रय है

श्रीमति हो, वित्त हो, हरि को अवबोध कराती हो अर्थात प्रजागर करती हो तथा विधि (ब्रह्मा) के खेद का अपनोदन करती हो और मधु कैटभ को विभ्रमित कर देती है

मणि फणिहार लम्बायमान उरस्थल पर विलसित हो रहा है

अणुमात्र भय भी रह नही सकता अभया के सम्राज्य में, त्रिभुवनमाता का उदार चरित्र, निःश्वास मात्र से गणों का उत्पादन करती है

परा नटन और मदस्खलित दृष्टि त्रिभुवन विमोहन मुद्रा–नटनी नटन प्रीता नाट्य कर्म का विवर्धन करने वाली वेदगण भी आपका पार नही पाते ऐसी दुर्वाच्य महामहिम वैभव है आम्नायमस्तक उपनिषद्रूपा है आपका भजन हि अर्न्तदाह का प्रशमन कर सकता है पार्वणेन्दु राका चन्द्रवत् वदन आभा भक्तों के तन भय का निवर्तन करती है।

पिशुन निशाचर का भीमा भक्षण करती है भीमा नीलवर्णा भासुर दष्ट्रा दशन विशाललोचना वृत्तपीन पयोधरा हंस रूति स्तुति विस्तार कर रहे है सरिद समुदाय परस्पर विलासित है भ्रामरी देवी की कान्ति विचित्र अनके रङ्ग की है वे अपने तेजोमण्डल के कारण दुर्घर्ष प्रतीत होती है उनका अङ्गराग भी अनेक रङ्ग का है चित्र विचित्र आभूषणों से उपेत है चित्र भ्रमर पाणि और महामारी आदि नामो से उनकी महिमा का गान किया जाता है अपगत दूषण विविध विभूषण से अलङ्कृत है श्यामा शूल असि और नरपञ्जरो से विचित्र आडम्बर करती है तुण्ड वितुन्न दर्शन छोटे प्रोह शक्ति वरण ओर आरोहण दण्डनाथा वार्ताली वाराही शक्ति है कहती है असुरो से तुम्हारा रूधिर मांस पलल की जो अविराम राशि है उनसे हमारी शृंगाली फेरूगण संतर्पित होगे मणिमयकुण्डल किङ्किणि कङ्कण आदि झाकृंति निनादित कर रहे है हमारी श्रवणपुरी आपके लीलावण्या मृत से आप्त व्याप्त हो जाय हमारा मन मधुप आपके पदपरिचय रस में निमज्जित हो जाय कर धृत कपालिका गलित कचपालिका सचमुच तुम कालिका हो, कालिकाल दलन शक्ता हो वहु विधि नाम निकेत विलास बिन्ध्य शिखर आपका निवास संस्थान है तुम्हारे अरूण अधर पर जो मृदु है वह यावक (अधर यावक–लिपिस्टिक लगाता हूँ ।

असुर जनो के ग्रसन का व्यसन फैलता रसना और दशन पंक्ति–तुम्ही काल उपमर्दनी कालिका हो

भक्त मनोरथ पूरण कल्पलता काली है प्रणाद से मानो नभ को ही विदारित करती है वेग से भूमि को सकम्प कर देती है।

चण्डकपालिन्यै नमः–चन्डकपालिनी को प्रणाम है।
महाकालिकायै नमः– कालिका के लिए नमन है ।।

मकरवक्त्र (घड़ियाल मुख) गरूणमुख, नरमुख, ऋक्षकामुख, कपिमुख, फेरूमुख, गजमुख, सिंहमुख अश्वमुख ये दशमुख काली के है दशमुखी परम योद्धाओं के निरस्त करने में शिवागणों को कोई अतिरिक्त आयास या श्रम नही करना पड़ता है

सत् चिन्मय वपु अनुपम वैभव मानो जगत्रय रक्षार्थ गठित है सकल समीहित साधन से अनुगत दुर्गति दारणदक्ष सुरगण शक्ति समूहमयी और महिषासुर पर दक्षता से शासन करने वाली कोटि कोटि चन्द्रमण्डल जिसके मुखमण्डल पर न्योछावर है उसी पर विस्मय पूर्ण हास्य अद्भूत सौम्य का उद्भव करता है।

जो परा प्रीति से स्मर्तव्या है दारूणदानव पटल की विखण्डित का कालिका है असद जगद भी जिसके द्वारा सद् प्रतीत होता है अचिद जड़ जगत जिसके द्वारा सचेत हो रहा है निरानन्द जगद सानन्द हो रहा है अरूद्ध स्पन्दरूपा जैसे चुम्बक के सम्पर्क से अयस्कान्त (लौह में) स्फुरण गेचर होता है अनस्त जो अस्त न हो ऐसा यत्न अर्थात् अप्रतिबद्ध क्रिया शक्ति ही कालिका है निरवधिक कुछ नही जगत में और अनवधि गुणरूप अतिशया आकृति श्यामा माँ का क्या पृथ्वी (मृत्तिका) से घट आकृति जन्य होती है इससे धरित्री का व्यापकता में क्या हानि अतः भक्त जैसी जैसी भावना करता है भगवती वैसी–वैसी बन जाती है।

शिरीषकुसुम की तरह सुकुमारी पञ्चवर्ष सहस्र रामा रमण लम्पटा शिव सङ्गम में व्यासङ्ग व्यसन करती है अतिरति भोक्त्री स्वभुज कनक लतिका से गाढ समालिङ्गन करती है सुभग रति रूप रणधीरा वायु द्वारा प्रकम्पित कन्दर्प की पताका की भाँति कालिका प्रतीत होती है। भव विस्तारण के लिए बह मुद्रा धारण करती है ये सारी अदाऐं भाव भङ्गिमाऐं उसी की है

घन बादलों का भ्रम उसके सौरभ सम्पन्न केशों में होता है या उसके मुखपङ्कज मकरन्द लोभ से भ्रमर मण्डली अलकावली के व्याज से विराजमान है सम्भ्रम चञ्चल कुन्तल मानो भ्रमर समुदाय नट नागिनी की सॉवली सपेलियों ने———आध विधुबिम्ब में विलास विधिठानी है।

कच विलोकि अलिअवलि लजाहि

जब भी छाती है मयकदे पे घटा
तेरे बालों की याद आती है

मैं वह जुल्फ सा न परवर जिसे खौफ है हवाँ का।
मै वह काकुले परेशाँ जो सँवर गयी हवाँ से ।।

अस्त व्यस्त माँ के कुन्तल राशि अकृत्रिम सुन्दरता के बोधक है वह प्रसाधित केश राशि नहीकी वायु वेग से बिखर जाये अपितु वायु वेग से विखरे केश राशि सुसज्जित हो जाते है। अचला पृथ्वी कुसुमित विटप लतावली विपुल रोमाञ्चोदगति पुलक से विलसित शाकम्भरी देवी है

दृश्य उदर का आनन्द जिसका विप्रुश कण मात्र है सारा ज्ञान जिसे महाज्ञान भट्टे की चिनगारी विस्फुर्लिङ्ग मात्र है पञ्चकोश अन्नमय प्राणमय मय विज्ञानमाय आननदमाय कोश में द्वैत भ्रम छेदिनी

तलवार अज्ञानान्धकार का अपनोदक वेदान्त भाग का अरूणसूर्य सुन्दरी ब्रह्म रूपा है चतुःषष्टि (64) कलाओं के सहित सकला कालवती काली है सम्यङ्क कलन ही काली है हरण संहृति शक्ति ह्रीं है हरतीत ह्रीं–हृग् हरणे नव बिन्दुओं की संहित नाद कहलाता है बिन्दु अर्धमात्रा होने से व्यञ्जन है

एकमात्रो भवेदध्रस्वः द्विमात्रो दीर्घ उच्यते।
त्रिमात्रस्तु ब्लुतोज्ञेयो व्यञ्जनन्त्वर्ध मात्रम् ।।

एक मात्रिक ह्रस्व द्विमात्रिक दीर्घ त्रिमात्रिक ब्लुता और व्यञ्जन अर्धमात्रिक होता है
बिन्दु 1/2 मात्रा अर्धचन्द्र 1/4 मात्रा रोधिनी 1/8 मात्रा
काल का परमाणु लव कहा जाता है 706 लवो का एक मात्रा

नलिनीपत्रसंहत्याः सूक्ष्मसूंच्य भिवेघने ।
दले दले तु यः कालः स कालः लव संज्ञकः ।।

कमल पत्रो के कदम्ब को सूच्या (सूई) से छेदन करने पर एक पत्र छेदन काल को लव कहते है
बिन्दु मुख दो बिन्दु कुचद्वय सपरार्द्धन योनिः
ब्राह्येन्द्रिय व्यवहार रूपा जागराण अवस्था

वाह्येन्द्रिया न पेक्षान्तः करण व्यवहार रूपा स्वप्नावस्था अन्तः करण निलीना अवस्था सुषुप्ति सर्वावस्था अन्वयी कालिका ही है

एक त्रिकोण होने से योनि प्राणि प्रसव कारण है योगियो के द्वारा इड्य होने से 'इ' वर्ण है

ह्रीं ह्रदयागारवासिनी हल्लेखां
तां माति बोधयति इति ह्रींम्

सर्व आधार भूता भगवती का ह्रदय मे जो विबोध कराये वही ह्रींम है
रज से दूर जगत्कारणस्वरूपा कामेश्वरी ही 'क' है

कामयत् इति कम्

क ब्रह्म है ऐसी श्रुति छादोग्य की है
पट स्फुरण पटः स्फुरति घटः स्फुरति घट का स्फुरण

यहाँ प्रकाश शिव का स्फुरण शक्ति विमर्श ही है ज्योतियों की महाज्योति निर्दृश्य दृकस्वरूप शिव है उनके ज्ञात होते ही सब विज्ञान हो जाता है क्योकि वही सर्वोपादान है उसके बोध से सब बाधित हो जाता है उसकी नैसर्गिकी स्वाभाविकी स्फुरता ही विमर्शरूपा भगवती है, उसी के योग से विश्वोत्पति, स्थिति लय सम्पादन होता है उसी के विज्ञानार्थ चतुर्दश विद्यास्थान है को पुरूष उत्पादनेच्छा विशिष्ट स्वकीय उत्पादन शक्ति भार्या को देखकर स्वार्धाङ्गी में स्वयं अन्त प्रवेश करता है शुक्ररूपेण

आत्मा वै पुत्र नामासि

फिर उस शुक्र के अर्न्तगत शोणित बिन्दु रूप से भार्या प्रवेश करती है वही बिन्दु उच्छून अवस्था आती है वट वक्ष स्थानीय उसी से अङ्कुरोदगम तदवत् पुत्रादि की समुत्पत्ति होती है स्फुट शिवशक्ति की समरस्य ही काम है अग्नि और सोम एकीकृत होकर रवि त्वं वा अहम अहं वैत्वम् (ऐतरेयोपनिषद)

तुम हम है हम (निश्चित) तुम है अभेद निर्देश तादात्म्यापादन यही है प्रकाश स्वभाव परमशिव रवि उनकी किरण समूह विस्फुरण शक्ति रूपा विशद विमर्श दर्पण में प्रतिफलित होता है
सित शोण बिन्दु युगल कामेश्वरी रूप दिव्य मिथुन है

परमेश्वर स्वाङ्गभूत अखिलप्रपञ्च विलयात्मक विमर्श शक्ति में अनुप्रवेश कर बिन्दुभावापन्न हो जाते है ऐसे विमर्श शक्ति स्वान्तर्गत प्रकाश भय बिन्दु में प्रवेश कर पुनः बिन्दु से बिन्दु तत्वगर्भिणी नाद का उदभव विमर्श रक्त बिन्दूरूपा प्रकाश शुक्ल बिन्दुरूपा उमयमिलन सर्वतेजोमय

परमात्मा हो जाता है अपरिछिन्न अनन्त तेजे राशिमयी अनन्त कोटि योगिनी वृन्दसमा राधित नित्यनिरवाधिक अतिशय आनन्दत्मक साम्राज्य सम्पद अभिमानशालिनी भगवती कालिका है।

मही मूलधारे कमपि मणि पुरेहुत वहम्
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृडि मस्तमाकाशमुपरि
मनोऽपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्त्वा कुलपथम्
सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसि

(मलविसर्जन द्वारके ऊपर) में पृथ्वी तत्त्व (नाभिप्रान्त) मणिपुर में जल तत्त्व स्वाधिष्ठान (शिश्न के पार्श्व) अग्नि तत्त्व हृदय (अनाहत चक्र) मरूत वायु तत्त्व भ्रूमध्य आज्ञाचक्र पाला आकाश तत्त्व भ्रूमध्य आज्ञाचक्र मन तत्त्व का (इन पञ्चतत्त्व से उत्तीर्ण मन का भेदन कर सहस्रदल कमलस्थ स्व प्रियतम के सग एकान्त विहार करती कुण्डलिनी शक्ति

मुलालबाल कुहरादुल्लसिता भवानी
निर्भिद्य सरसिजानी तडित लतेव

मुलाआधार (आलबाल थाला) से उल्लसित प्रजागर होकर षट चक्रों का उपमर्दन तडितलता की भाँति भवानी करती है।

विसतन्तु से भी तनीयसी (मृणालतन्तु विद्युतपुञ्ज सदृशदमक मूलाधारस्य पद्मकर्णिका श्रृंगार रूपा त्रिकोण से ऊपर बिन्दुरूपी ज्योतिर्लिङ्ग को आवेष्टित कर सार्धत्रिवलयाकार अधोमुखी उपविष्ट योगमर्यादा के द्वारा योगी के द्वारा उर्ध्वमुख उत्थापित की जाती है मूलाधार अनाहत चक्र में तथा आज्ञा चक्र में अग्नि

सूर्य सोम मण्डल उद्भेदित कर ललाट के उर्ध्व प्रदेश चिदशिवमडस्था अधो मुख सहस्रार कीर्ण का रूप के मध्य स्थित अकुल कुण्डलिनी का मिलन कर पुनः अमृत पुर में स्नपन कर डाकिनी आदि मण्डलो का आप्यायन स्वयं अमृतपानमता पुनः सुषुम्ना मार्ग से लौटकर स्व स्थान में सुखपूर्वक शयंन यह सब स्वाध्यान योगगम्य है

(ईयते अधीयते अनेनेति ए) बुद्धिः

जिसके द्वार पठन पाठन हो वही 'ए' बुद्धिरूपासंस्थिता सरस्वती ''हन्यते अनेन इति हम जिसके द्वारा हनन हो वह शौर्य हम है।

हरति निखिल जगदिति हृ

सर्वजगत् संहर्त्री

शब्दार्थ जलप्रकाशिका''क' है कन्यते प्रकाशयन्ते शब्दार्थ जालानि ईयते स्मर्यते अधीयते वा सर्वा वेदशास्त्रादिकला स्मरण किया जाता है पढ़ा जाता है सकल वेदशास्त्रादि वही 'ए' अ + इ = ए त्रिकोण होने से ऋग यजु सामरूप योनि जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति योनि सत्वरज तम योनि

ईयते व्याप्नोति इति 'इ' जो व्याप्त कर ले सब दृश्य व्याप्य हो 'ई' व्यापक काम कला माँ का वाम नेत्र 'ई' हे सर्व प्रकाशक बुद्धि व्यापिनी लहरी 'ल' है वज्रपणि हन्यते तापत्रयमनेनेति हः ईयते प्रकाष्यते कीर्ति जालं दिगन्तेषु

अनेनेति 'ई' दिग्दिगन्त में जिससे किर्तिजाल फैले ई इत्यनेन हृत्पुण्डरीक दहरा काशस्यदीप शिखा मध्ये स्थितौ बोधात्मक प्रकाशस्वरूप परमात्मैव विवक्षितः

ई–इसके द्वारा हृदय पुण्डरीक दहराकाश दीप शिखा के मध्य स्थित बोध प्रकाश रूप चिति भागवती विवक्षित है

अत्यन्त अभीष्ट रूप से ब्रह्मा विरिञ्चि आदि जिसकी कामना करते है वही 'इ' है

इष्यते अत्यन्तभिष्टत्त्वेन विरिञ्च्यादि चेतनवर्गैरिति स्वप्रकाश परमानन्द स्वरूपिणी राजराजेश्वरी ...ी कालिका शाक्ताद्वैत मत में विश्व अधिष्ठानभूत शुद्धबोधिस्वरूप प्रकाश ही शिव तत्त्व है उस ...काश में जो विमर्श है वही भगवती तत्त्व है प्रकाश बिना विमर्श और विमर्श बिना प्रकाश नही रहते उभय शक्तिमान शक्ति संश्लिष्ट है

वेदान्त मत में विमर्श के बिना अनन्त निर्विकल्पक प्रकाश रहता है परन्तु शाक्ताद्वैत मत में विमर्श अनिवार्यतः रहता है।

अन्य महानुभाव महावाक्य जन्य पर ब्रह्माकार वृत्ति पर आवरक अज्ञान निवृत्त होने पर स्वयं वृत्ति रूप आवरक अज्ञान निवृत्त होने पर स्वयं वृत्ति रूप विमर्श रहता है वृत्ति रूपा विद्या से अनन्त प्रकाश शिव सम्पृक्त रहता है विमर्श रूपा प्रकाश शक्ति के प्रवेश से बिन्दु की उत्पत्ति होती है दोनों का एकीकरण अर्धनारीश्वरता है इनका परस्परासक्ति ही काम है श्वेत बिन्दु शिव रक्त बिन्दु शिवा 'अ'

शिव + 'ह' शिवा

यह त्रिपुर सुन्दरी अहं इसके द्वारा व्याख्या नाम रूपात्मक जगत में सच्चिदानन्द की अम्बा को पाद्यसमर्पण है। सूक्ष्म जगत् में ब्रह्म भावना ही अर्घ्य समर्पण है भावनाओं में ब्रह्म भ... अर्घ्य समर्पण है भावनाओं में ब्रह्म भावना ही आचमन है सर्वत्र सत्वादि गुणों में चिदानन्द भाव... स्नान है चिद रूपा कामेश्वरी में वृत्ति विष यता का चिन्तन करना ही प्रोञ्छन्न है निरञ्जनत्व, अजरत्व, अशोकत्व, अमृतत्त्व आदि की भावना ही विविध आभूषणों का अर्पण है स्वशरीर घटक पार्थिव प्रपञ्च में चिन्मात्र भावना ही गन्ध समर्पण है आकाश में चिन्मात्र की भावना करना पुष्पसमर्पण है वायु की चिन्मात्र भावना नैवेद्यार्पण है विश्व में सच्चिदानन्द भावना ही विविध आभूषणों का अर्पण है स्वशरीर घटक पार्थिक प्रपञ्च में चिन्मात्र भावना ही गन्ध समर्पण है आकाश में चिन्मात्र की भावना करना पुष्प समर्पण है वायु की चिन्मात्र की भावना धूप समर्पण है अमृतत्त्व की भावना नैवेद्यार्पण है विश्व में सच्चिदानन्द भावना ही ताम्बूल समर्पण है वाणियों का ब्रह्म में उपसंहार ही स्तुति है वृत्ति विषय के जड़त्व का निराकरण ही आरर्तिक्य है वृत्तियों को ब्रह्म में लय करना ही प्रणाम है

आचार कुलमुच्यते (भविष्योत्तर पुराण) आचार को ही कुल कहते है

कुः पृथ्वीतत्त्व लीयते यत्र तत्कुल–आधार चक्रं तत्सम्बनधालक्षणया सुषुम्णामार्गोऽपि पृथ्वी तत्त्व जिसमें लीन हो जाता है उसे मुल आधार चक्र कहते है उसके सम्बन्ध से सुषुम्णा मार्ग भी कहते है

वमन्ती कल्पकालाग्निं चर्वयन्तीदिते सुतानहसन्ती
चाट्टहासेन नृत्यन्ती व्योममण्डले
गच्छन्ती वातवेगेन चरन्ती पितृकानने
दैत्यवक्षः पातनोत्थ रूधिरोक्षित विग्रहा

कल्पकालाग्नि का वमन करती है और दिति पुत्रों अर्थात दैत्यो का चर्वण करती रहती है अट्टहास पूर्वक हसती है और ब्योम आकाश मण्डल में नाचती है वायु वेग से चलती है श्मशान में चर गति, भक्षण, विहरण करती है और दैत्य वक्ष के पटकने से उच्छलित रक्त से स्नापित है

मूलाधार चक्र की अधिष्ठात्री डाकिनी स्वाधिष्ठान चक्र की अधिष्ठात्री शकिनी मणिपुरचक्र की अधिष्ठात्री लाकिनी अनाहत चक्र की अधिष्ठात्री काकिनी विशुद्ध चक्र की अधिष्ठात्री शाकिनी रूप से कालिका ही विलसित है।

यस्यादृष्टो नैव भूमण्डलाशों
यस्यादासे विद्यते न क्षितीश
यस्याज्ञातं नैव शास्त्रं किमन्यैः
यस्याकारः सा पराशक्तिरेव

पराशक्ति वह है जिसके लिए संसार का कोई भाग अदृष्ट नही है ऐसा कोई राजा नही जो उसका गुलाम न हो कोई ऐसा शास्त्र नही है जिसे वह जानती न हो वह प्रभुत्त्व की प्रतिमा है।

जब शक्ति को परिचितरूपा मान लेते है तब शक्ति और शक्तिमान में भेद विगलित हो जाता है शक्तिरूप पीठ शक्ति का अभिव्यञ्जक संस्थान और शक्ति पीठ के तीन अर्थ हो सकते है चतुरामनाय

और चतुष्पीठ त्रिगुणमयी प्रकृति की उपादान कारणा ता सांख्य प्रधान अभिमत है प्रणवात्मक शब्द ब्रह्म की उपादान कारणता वैयाकरणों को अभिमत है वेदान्त प्रस्थान में पुरुषाधिष्ठित प्रकृति की प्रणवरूपता और उपादान करणता मान्य है

प्रकृति की सत्त्व रजस और तमस तीन मात्रांए हैं प्रणव ही अ, उ, म तीन मात्राए है सत्व और अकार की रजस् और उ कार तमस और मकार की एकरूपता है।

अकार रूपा शक्ति के प्रतिपाद्य ब्रह्मा है रजोरूप उकार स्वरूपा शक्ति के प्रतिपाद्य विष्णु है तमोरूप मकारस्वरूपा शक्ति के प्रतिपाद्य महेश है

प्रकृति और प्रणव में एक रूपता है आरोह क्रम मे अकार उकार व मकार अर्धमात्रात्मक प्रणव के मुख्य चार विभाग है सरस्वती रहस्योपनिषद योग शिखोपनिषद आदि के अनुसार वैखरी मध्यमा पश्यन्ती और परावाक् चार प्रभेद हि इसी आधार पर और चतुराम्नाय की सिद्धि मान्य है मूलाधार में विशुद्ध सत्त्वात्मिका बीजरुपा अर्धमात्रात्मिका विन्दु स्वरूपा परावाक् की स्थिति है

प उड्डीशाय नमः दक्षपार्श्वे लं ओड्याणाय नमः हदयादि गुहयान्तम्

यद्यपि शिवतत्व व्यापक है तथापि मूलाधार और सहस्त्रार में उसकी विशेष अभिव्यक्ति युक्तियुक्त है।

गुदमेढ्रान्तरालस्थं मूलाधार त्रिकोणकम् शिवस्य जीवरूपस्य स्थानं तद्धि प्रचक्षते।।

देहस्थ त चतुष्पीठ में मूलाधार स्वाधिष्ठान के मध्य में योनि स्थित है उसी को कामरूप कामाख्या कहा गया है।

आधार प्रथमं चकं स्वाधिष्ठानं द्वितीयकम्
योनिस्थानम् द्वयोर्मध्ये कामरूपं निगद्यते
कामाख्यं तु गुदस्थाने पङ्कजं ऽ चर्तुदलम्
तन्मध्ये प्रोच्यते योनि, कामाख्या सिद्धिवन्दिता
तस्य मध्ये महालिङ्ग पश्चिमामिमुखं स्थितम्।

मूलाधार को योनिपीठ या बिन्दुपीठ कहते हैं वह बीजतुल्य कारणात्मिका परावाक है उससे अकुंर तुल्य नादरूप लिंङ्ग स्फुरित होता है वह शिवशक्तिमय है परब्रह्मरूप शिवतत्व का सूचक ज्ञापक प्रापक निरावरण अभिव्यञ्जक होने से नाद को लिङ्ग कहा गया है। वह सर्वमन्त्रों का मूल है।

शिव शक्तिमयं मन्त्रं मूलाधारात्समुत्थितम्।
मूलतत्वपत्सर्वमन्त्राणां मूलाधार समुद्भवात् ।।

नाद सर्वश्रेष्ठ मन्त्र है आत्मा सर्वोत्कृष्ट पूजा है तृप्ति से उत्कृष्ट कोई सुख नही

मूलाधार में स्थित आधारशक्ति विन्दुरूपिणी है उससे नाद उसी प्रकार उत्पन्न होता है जिस प्रकार सूक्ष्म बीज से अंकुर उसी को पश्यन्ती कहते है हृदय में घोषात्मिका मध्यमा की स्फूर्ति होती है कण्ठ

तालु आदि अष्ट संस्थानों के संस्पर्श से बैखरी की उत्पत्ति होती है षट्चक्रो में दलों की संख्या पचास और आधार चक्र चर्तुदल है स्वाधिष्ठान षड्दल है मणिपुर दशदल है अनाहत द्वादश दल है विशुद्ध षोड्शदल है भ्रूमध्य स्थित आज्ञा द्विदल है
इसके अतिरिक्त ब्रह्मरध्रस्थित सहस्त्रार सहस्त्रदल है

चतुर्दल स्यादधारं स्वाधिष्ठान च षडदलम्
षोऽशारं विशुद्धाख्यं भ्रूमध्ये द्विदल
तथा सहस्त्र दल संख्यातं ब्रहमरन्ध्रे महापथि।

ऋग्वेद में डकार के अर्थ में प्रयुक्त लकार को पृथक कर ले तो 'अ' से 'क्ष' पर्यन्त उन्चास और अ से ज्ञ पर्यन्त इक्यावन अक्षर होते है। केवल 'ल' को पृथक कर देने पर 'अ' से से 'ज्ञ' पर्यन्त बावन शिव चरित में इक्यावन देवी भागवत में एक सौ आठ पीठों का उल्लेख है। कालिका पुराण में छब्बीस उपपीठों का उल्लेख है आंग्ल भाषा में 'ए' से 'जेड' तक संख्या छब्बीस बतायी गई है।

संस्कृत में अ, इ, उ, ऋ लृ ए ऐ ओ औ अ अः की संख्या ग्यारह है क वर्ग, च वर्ग ट वर्ग त वर्ग प वर्ग की संख्या पांच है

य, र, ल, व, श, ष, स, ह, क्ष की संख्या नौ है ओंकार सहित उक्त संख्या छब्बीस है

प्रकृति से पृथ्वी पर्यन्त अचित पदार्थ चौबीस है पचीसवाँ चिद्रूप है पुरूष है पुरूष विशेष पुरूषोत्तम छब्बीसवा तत्व है इस प्रकार छब्बीस उठपीठ दार्शनिक महत्त्व चरितार्थ होता है यह सेश्वर सांख्योक्त प्रक्रिया है।

महाप्रलय में प्रधान पुरूष प्रकृति तादात्म्यापन्न और पुरूष–पुरूष विशेषा तादात्म्यापन्न होकर अवशिष्ट रहता है यही प्रकृति का पुरुष का पुरूष विशेष सर्वेश्वर में लय मान्य है।

सर्गोन्मुख सत्ताइस और प्रलयोन्मुख सत्ताइस का योग चौवन होता है।

ध्यान रहे अक्षर कहने पर अक्ष, की सिद्धि होती है 'अ' से 'क्ष' पर्यन्त षट्चक्र के दलों के अनुसार पचास संख्या की प्राप्ति होती है षट् चक्रों में मूलाधार का बीज लं है वह पार्थिव चक्र है स्वाधिष्ठान का बीज 'व' है वह तैजस चक्र है मणिपुर का बीज 'रं' है वह 'तजस' चक्र है अनाहत का बीज यं ह वह वायव्य चक्र है विशुद्ध का बीज 'हं' है वह आकाश कला है आज्ञाचक्र अव्यक्तात्मक है वह ओंकार बीजयुक्त है

आकाश का गुण शब्द है अतः षोडशदल विशुद्ध चक्र अ से अः पर्यन्त सोलह स्वर वर्णो का अभिव्यञ्जक संस्थान है

द्वादशदल वायव्य अनाहत 'क' से ठ पयर्न्त बारह अक्षरों का अभिव्यञ्जक संस्थान हे वारूण स्वाधिष्ठान षडदल होने से 'ब' से ल पर्यन्त छः अक्षरों का अभिव्यञ्यजक संस्थान है पार्थिव मूलाधार चर्तुदल होने से व श ष संज्ञक चार वर्णो का अभिव्यञ्जक संस्थान है

अध्यात्म जगत में कुण्डिलिनी शक्ति सती है वह मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र से मूलाधार पर्यन्त बीस बार भ्रमणकर अव्याकृत संज्ञक ब्राह्मरन्ध्र में (50×20=1000) सहस्त्रदल को सुप्रतिष्ठित करती है।

अर्धम धर्म रूप से अवनति समुन्नति रूप से परवशता स्ववशरूप से परतन्त्रता स्वतन्त्रता रूप से लघुता गुरुता रूप से पराजय जयरूप से अनादर आदर रूप से वही कौल साम्राज्य का विपरीत वैभव है।

कालिकोल्लास—11

काली रस वर्षा

मेरे जिस्मो जाँ में हरकत हो तो तुझसे

क्या फाख़तो की हक हक, क्या हुदहुदो की हू हू
सब रट रहें है तुझकों क्या पंख क्या पखेरू।।

तू मुनियों के मनो में है तू रिन्दो की जुबान पर है

तजल्ली आतिशे सोजां में तेरी ही नूरानी

दिखाकर नाच अपना मोरनी पर आप मरता है

लगाना भोग कुछ तुमको, यह इक अपमान करना है
खिलाता है जो सब को, उसे कैसे खिलाऊ मैं

निरादर है बुलाने को अगर घंटी बजाऊँ मैं

तुम्हारी ज्योति से रौशन है सूरज चाँद और तारे
महा अंधेर है तुमको, अगर दीपक तुमको दिखाऊ मैं।

न तुझको पा सका कोई जहाँ में ।
न देखा जिसने तुमको हर मकां में।।

नाम-निधान राम नाम का खजाना

वह जो है बाला से बाला व नूरे जहाँ

मिली मुझको अब अपनी ही बादशाही

राँझा तू हीं राझा भूले हीर न बेले रो
तेरे जिहां सानू इथे उथे कोई न जापे ओ

तू तो सब दी जान पियारी

तू तो मस्ती बिच्च शराबा हर दी खुशबो

आठवे अर्श तेरा नूर चमकदा, होर भी उच्च हो
(पवन इन्दर तेरी पण्डा ढोदें)

ताज तखत छऊ टट्टी मल्ली एस गल्लों तू रो

पर्दे फ़ाश होवी रब करके, नंगा सूरज हो

आँख होवे तो देख बदन के परदे में अल्ला
परदे में अल्ला कलब को साफ करो बल्ला

"तू तेरा" "मै मेरा" स्वप्ने का सा है हल्ला

कहो नानक हरिभजन मना जहिविधि जहिविधि जल को मीन

कहो नानक सोई नर गरुवा, जो प्रभु के गुण गावे

जगत भिखारी फिरत है सबको दाता राम

उँचे मन्दिर सुन्दरी नारी राम नाम की बाजी हारी

जैसे दूध धृत छिपा, छिपी मेंहदी में लाली

ऐसे पूरण ब्रह्म कहूँ तिल भर नहीं खाली

मुकदमें गैर लोगों के हजारों कर दिये फैसल
न देखा मिसल अपनी को अजायब यह अदालत है
बहुत पढ़ने पढ़ाने से हुआ सब इल्म में कामिल
न पाया भेद रब्बी का अजायब यह कमालत है

तू का इतना मिटा दे कि तू न रहे।

और तुममें दुई की बू न रहे।।
जूस्तजूँ भी हजाबे हसना है।
जूस्तजूँ है कि जुस्तजूँ न रहे।।
आर्जू भी विसाले परदा है।
आरजू है आरजू न रहे।।
तू किसका और कौन तुम्हारा
सब जीते जी के नाते है।

रन्जो गम दुनिया के इन्साँ भूल जाये किस तरह
जिस तरह वह शख्स जिसक जहन में आए खलल

क्या योगी क्या पीर पैगम्बर
सबको उसने दिया नचा

चार घड़ी रहने के कारण करते मेरा मेरा

दिन दिन पल पल छिन छिन उसका वेग बड़ा बलकारी

तन सुन्दर छवि देख न भूलो, यह बालू की भीत
सुख सम्पत्ति सपने की बतिया जैसे तृण पर शीत

भाई कह यह भुजा हमारी, नारि कहे नर मेरा

यह जग धूल का पहाड़

हरि चर्चा सन्त सेवा अर्चा इन ते निपट डरे
कूकर सूकर तुल्य भोग रत अन्ध होय विचरे

बदन नाजुक गुलों जैसा, जो लेटे सेज फूलों पर
होवेगा एक दिन मुरदा, यहाँ कीड़ो ने खाना है।

प्यारे ! नजर कर देखो पड़ी जो माड़िया खाली

गये सब छोड़ फानी देह, दगाबाजी का बाना है

वह हर जगह मौजूद है जिसकी तलाश है
आँखो के आगे परदा ए, गफलत लटक रहा

गुलजार में है गुल में है जंगल में बहन मे
सीने में सिर में दिल में जिगर में खटक रहा

सिदक वो यकीन के बिना दिलबर मिले कहाँ।
गो जंगलों में बरसों ही सिर को पटक रहा।।

प्यारे ! उम्मेद एक पे रख, दिल को साफ कर
क्या वसवसे (संशय) का काँटा है दिल में खटक रहा

जैसे स्वान रहे काँच भवन में
भौंक भौंक मरि जाई

तृषा न जायेगी मृगजल पीवत
अपनो भरम गँवाई

हशमत में जिनकी अर्श, से उँची थी बारगाह

न वह शूर रहे न वह वीर रहे
न वह शाह रहेन वजीर रहे

न अमीर रहे न फकीर रहे
मौला का नाम रहा बाबा

सच कहता हूँ झूठी माया है
यह चलती फिरती छाया है

उड़ा पतङ्ग मुहब्बत् का चर्ख से भी दूर
खिरद की डोर को अब छोड़ दीजिए तो सही

है खुम तो मय से लबालब् यह तिशना कामी क्यों
लो तोड़ मोहे खुदी मय की भी पीजिए तो सही

अल्विदा ऐ मर्जे–दुनिया! अल्विदा ऐ जिस्मों–जा
ऐ अतश ऐ जू चलो ई जा कबूतर खाना नेस्त

हे जगत जो एक रोग है! तू अब रूखसत हो
देह प्राण तुम भी अब चलो दूर । हे मूख और
प्यास ! तुम दोनो मेरे पास से हटो यह घर कोई
(कबूतर खाना) हमेशा के रहने के लिए नहीं है।

अक्ल के मदरसे से उठ, इश्क के मैकदे मे आ
जामे–शराबे बेखुदी अब तो पिया जो हो सो हो

हिज्र की जब मुसीबतें अर्ज़ कीं उसके रूबरू
नाजो अदा से मुस्करा कहने लगा जो हो सो हो

कुर्बा कर अपनी जान को जानाना हो जानाना हो
पीकर शराबे बेखुदी मस्ताना हो मस्ताना हो ।।

कहत कमाल प्रेम के मारग सीस दिया फिर रोना क्या
शेष नाग पै सेज पिया की किस विधि मिलना होई

अँसुवन जल सींच सींच, प्रेम बेल बोई
अब तो बेल फैल गई, आनन्दफल होई

झूठा सुहाग जगत का री सजनी
होय होय मिट जासी

मै तो एक अनिवाशी बरुँगी जाहेकाल नही खासी

मीरा के प्रभु ह्रदय बसत है
ना कहुँ आती जाती

गैरो से मत मिलो कि सितमगर बनायेंगे
हमसे मिला करो तुम्हे दिलवर बनायेगे

किस किस अदा से तूने जल्वा दिखा के मारा
आजाद हो चले थे बन्दा बना के मारा

खुद बोल उठा अनल्हक, खुद बन के शरह तूने
इक मर्द हक को नाहक सूली चढ़ा के मारा।

शरह–कर्मकाष्ठ,
मर्दहक–ज्ञानवान
कोहकन–शीरी के फरहा का नाम है

पहिले बना के पुतला, पुतले में जान डाली
फिर उसको खुद कजो की सूरत में आ के मारा
आँखो में तेरे जालिम! छुरियाँ छुपी हुई है
देखा जिधर को तूने पलकें उठा के मारा
गुञ्चे में आ के महका, बुलबुल में जा के चहका
इसको हँसा के मारा उसको रुला के मारा

भेद खेद को दूर छोड़ कर आतम भाव रिझाऊँगी ।
जे कहिया पिया नही माने मेरा
मै आप गले लग जाऊँगी
पिया गले लागे, सब दुख भागे
राम पिया मोरे पास बसत है
मै आप पिया हो जाऊँगी

मरने का डर उनको जो रखते है
तन में जॉ और वह जो मर गए तो उन्हे मौत फिर कहाँ

दुरालाल – मोती और लाल

वह फिर इधर उधर के दुरा लाल क्या करे
गाहक ही कुछ न लेवे तो दल्लाल क्या करे

जो मस्त है अजल के उनको शराब क्या
मकतूल खतिरो को बुए कबाब क्या

जिन्होंने अपना मन प्रभु को अर्पण कर दिया है।

अजल–अनादि वस्तु में जो मस्त हो

औरों को नसीहत है करे, और खुद अमल करता नही
दिल का कुफल टूटा ही, हाजी हुआ तो क्या

पूरण वैद्य मिले अविनाशी, वाही को नब्ज दिखाऊँ
जसे रंग रंगे आप विधाता और क्या रंग चढ़ाँऊ

प्रीत न की स्वरूप से तो क्या किया कुछ भी नही
जान दिलवर को न दी फिर, क्या दिया कुछ भी नही

बेहाल हो रहा हो सो वह हाल क्या करे।
गाहक कुछ न लेवे तो दलाल क्या करे ।।

मकां तेरा हर एक ऐ देशरहित लामकां है
निशां हर जगह तेरा ऐ बे निशा है

आशिक है तो दिलबर को हर एक रंग में पहचान

एक ही सागर में कुछ ऐसा पिला दे साकिया
बेखबर दुनियाँ व दीन से तेरा मतवाला तो हो

सागर–प्याला,
साकिया–प्रेम रूपी मदिरा पिलाने वाला सद्गुरू
मर्दुमे–आँख की पुतली
पञ्जए मज़गाँ–नेत्रो के पलके के हाँथ में

अर्थ–भगवान की मूर्तियो के खाली हाथ कैसे दर्शन करें पहले नेत्रों के पलकों के पञ्जे में अश्रुरूपी मोतियों की सुन्दर माला तो हो

साधो कौन जुगत अब कीजे
राम भक्ति मन भीजे

अपनी माया आप पसारे आपे देखने हारा
नाना रूप धरे बहुरंगी सबसे रहता यारा

न सूये काबा झुकाते हैं सर
न जाते है बुतकदे के दर पर
उन्हे है दैरो हरम बराबर
जो तुमको किबला बना चुके है।

हर एक गुल में बू हो कि तू ही बसा है
आवाज सुर–सदाहाये–बुलबुल में तेरी नवा है

सदाहाये–आवाज सुर
नवा–गीत

चमन फैजे कुदरत से तेरे हरा है
बहारे गुलिस्तां में जल्वा तेरा है।

मामूर–भरपूर
निहा–छुपा
जमानोमकां–देशकाल
अया–जाहिर व्यक्त

निहाँ तू ही तूफा में है जोर होकर
अयां तू ही मौजो में झकझोर होकर

जमीं आसमा तुझसे मामूर है सब
जमानो मकां

अयां–प्रकट लामकां–देश रहित
निहां–छिपा

हसीनों में तू हुसनो नाजो अदा है

मकां तेरा हर एक ऐ लामकां है
निशां हर जगह तेरा ऐ बे निशां है

न खाली जमीं है न खाली जमा है
कहीं तू निंहा है कही तू अयां है।

(शीरी को पाने के लिए फरहाद ने हाँथ से पर्वत को फोड़ डाला था)

आशिक है दिलबर को हर एक रंग में पहचाना

न बोल सकते थे कुछ जुबां से
न याद उनको है जिस्मो जांसे
गुजर गए हर मकां से
जो उसके कूचे में आ चुके

भटकता है जिसके लिए दर बदर
वह आराम है कल्ब में जल्वागर

जल्वागर–प्रकाशमान
कल्ब–भीतर दिल में

भुला कर को मन्जिल में घर कर लिया जब
तो निज बादशाही की दर दो सफाई

गिरह–गाँठ

थी दौलत की दुनिया में जिसकी दुहाई
जो खोला गिरह तो पाई न पाई

मस्ती पूछे मस्त नैनों से

रात भर भटकता फिरा तारा
"फाड़ आँखों कोहै "कहाँ" तारा

न तो आबो हवा न है आतश या
कोई मेरे सिवा तो बशर तो नही

आबो (जल और वायु)
आतश–अग्नि
बसर–प्राणी

करत नही निश्चय स्वरूप का
भाजत मथुरा काशी

तालिबाने हक् जिसे हम दूढ़ते
अर्श पर वह दिलरूबां हम ही तो है

तालिबाने–परमात्मा के जिज्ञासु
नदीदा–अचम्भे से
हर सू–सब ओर

जो झुका जिसको झुका हम ही तो हैं
बाहमा और बेहमी हम ही तो हैं

बाहमा–सब कुछ
बेहमी–कुछ नही

देखता था जिसको होंके नदीदा हर सू
मेरी आँखो में छिपा था मुझे मालुम न था।

सय्याद–शिकारी
दामे उल्फत–मोहजाल
गैरसैद–शिकार

फैला के दामे–उल्फत घिरते घिराते हम है
गर सैद है तो हम है सैय्याद है तो हम है

रहे परदे में अब व न परदा नशीं
कोई दूसरा उसके सिवा न रहा।

महदूद–परिछिन्न
वैश–क्रोध
खौफे खुदा–ईश्वर का मठ

जिसे ऐश में यादे खुदा न रही
जिसे तैश में खौफे खुदा न रहा

बड़ा ही नही बल्कि छोटा भी हूँ
न महमूद कीजेगा सब मै ही हूँ

कि इस खेल की जान मैं ही तो हूँ
यह लीला के भी प्राण में ही तो हूँ

पै दिल में थी ताकत, लबों पर हँसी

कि सर्दी की भी जान मैं ही तो हूँ
अनासिर के भी प्राण मैं ही तो हूँ

अनासिर–पञ्चभूत

(i) ऐ नसीमे शौक ! जाके वह उड़ादे जुल्फ रूख से
(ii) ऐ सबा ए इल्म जा कर दे हटा वह ख्वाबे चादर
(iii) अरे बादे तुन्दमस्ती! दे मिटा अबर की हस्ती

(i) जिज्ञासा की मन पसन्द पवन
(ii) ऐ ज्ञान की पुर्वाई वायु
(iii) ऐ निजानन्द की आँधी

अबर–पर्दारूपी बादल

वह चमकते चाँद तारे है तेरे ही रूप प्यारे

चश्मे नाके–मुख द्वारा
अमराज–रोग
जेरोजबर–उँच नीच

यह जगा दिया कि सुला दिया
जाने किस बला में फँसा दिया

आनन्द के चश्मे के नाके पर यह जिस्म इकबन्दा था

सब कर्ज फर्ज और गर्ज के अमराज एकदम उड़ गए
हल फिर गया जैसे जबर पर और सुहागा वाह वाह

दुनिया के दल बादल उठे थे नजरे गलत अन्दाज से
लो इक निगह में चुक गया सारा सियापा वाह–वाह

तन नूर से भरपूर हो मामूर हो मसरूर हो
वह उड़ गया जाता रहा पुर नूर हो काफूर हो

मा० मखजन–खान, भण्डार
मम्बा–निकास, स्त्रोत

मै मादनो मखजन हूँ चश्मए नूर का
आरामगह आरामदेह हूँ रोशनी के नूर का

वह माँ से लड़ना, जिद में अड़ना मचलना एड़ी रगडना
वालिद से पिटना और चिल्लाते हुए आँखो का मलना।।

अराजार–वृक्ष

हाँ और वह चुपके से छिपकर आड़ में अशजार के
बेदाम खुफिया पुलिस बनना राम की सरकार के

सब मादरे सुस्ती बवासीरो जकाम और हिचकियाँ
यह सब तमाशे है मेरे, यह सब मेरी करतूत है

दुखड़े सुनाना सिसकना, खूँ बहाना जार जार
वह खिलखिलाना कहकहों और चहचहों में बार–बार

सस्ते से सस्ते है तो हम, मँहगे से तो मँहगे है तो हम
ताजा से ताजा है तो हम सब से पुराने है तो हम

वाहिद हूँ मुझको मेरा ही सिज़दा सलाम है
मेरी नमस्ते मुझको है और राम राम है

वाहिद–अद्वैत
वहम–एकत्र
शुभा–निः सन्देह

जानते हो ? आशिक–ओ–माशूक जब होते है एक
वे शुभा मेरी ही छाती पर बहम सोते हैं नेक

पुण्य में और पाप में हर बाल सांस और मांस में
दूर कर आँखो से परदा देख जल्वा घास में

ए जमीं के बादशाहो ! पण्डितो परहेजगारो
ए पुलिस! ऐ मुद्दई हाकिम वकील ऐ मेरे यारो
लो बता देते है तुम को राजे खुफिया आज हम
अपने मुँह से आप ही इकरार खुद करते है हम

कुल जहाँ बसएक खर्राटा है मस्ती में मेरा

खा के माखन दिल चुराकर वह गया मै बह गया
मारकर मैं हाथ हाथों पर यह जाता हूँ मुझे पकड़ो कोई

मोशो–दीदा कान आँख

रात दिन छुप कर तुम्हारे बाग में बैठा हूँ मै
बाँसुरी में गा बुलाता हूँ मुझे पकड़ो कोई

दस्तो पा ओ गोसो–दीदा मिश्ले–दस्ताना उतार
हुलियाँ सूरत को मिटाता हूँ मुझे पकड़े कोई

खशे०–प्रसन्नता के नृत्य से

आतिशे सोजा हूँ मुझमें पुण्य क्या और पाप क्या

रक्से शादी से मेरे जब कांप उठती है जमी
देखकर मैं खिलखिलाता कहकहाता हूँ वही
खुश खड़ा दुनियाँ की छत पर हूँ तमाशा देखता

खरे दज्जाल–जो अज्ञान है तन को धोका देती है
किसी को उद्देश्यपर नहीं पहुचाँती

बरातेनूर–प्रकाश के विवाह में

दौड़ते क्या हो बराते नूर के मिलने को तुम

यह कचहरी वह नही तुमको रिहाई दे सके

पहन कर पेशाक गहने बुर्का ओढ़े नाज से
चोरी चोरी गुलबदन मिलने चली है यार से

निकल भागा दिल तेरा, पैरों से बढ़कर दौड़ में

रोशनी पर कर सवारी आँख से कर नूर वारी
हर दिलों दीदा में जा झंडा, अलिफ का ठोंक दे

पाप पुण्य सभी सुलगाकर
यह तेरी जोत जलाऊ
तुझमें पड़ूँ तो तू बन जाऊँ
ऐसी डुबकी लगाँऊ

गरजना चमकना कड़कना निखरना
झमाझम यह बूँदों का गिरना
अरूस फलक का वह हसना वह रोना
मेरे लिए है फकत जान खोना

अरुसे आकाशरूपी दुल्हन
फकत–केवल

यह दिल जाँ लेना किसकी अदा है
मेरी जाँ की जा किस पै शोखी फिदा है।

आस्मा का बतायें क्या हम हाल
मोतियों से भरा हुवा है थाल

हर रंग के गुलों से चमन लालाजार हैं

दिन को सूरज की महफिल है शब को तारों की समाबाबा
जब झूम के यां धन आते हैं मस्ती का रंग जमाते है

घर के लिए थी मेहनत घर के लिए थे बाहर

जहाज दरिया में और दरिया जहाज मे भी तो देखिए आ
यह जिस्म किश्ती है राम दरिया है राम मुझमें है मै राम में हूँ।

"वह मै हूँ" इस खुशी में दिल का भर आना मुबारक हो

आती है जहाँ में शहे मशरिक की सवारी
मिटता है सियाही का अभी जंगे जमाना

शहे०–सूर्य, शान के सूर्य से तात्पर्य है।

जिधर देखता हूँ सनम रूबरू है
गुलिस्ता में जाकर इक गुल को देखा
तो मेरी ही रंगत ओ मेरी ही बू है

सूलों पर दौड़े जायेगे। काँटो को राख बनायेगे
हम दर दर धक्के खायेंगे। आनन्द की झलक दिखायेगे।

जङ्गल में जोगी बसता है यह रोता है यह हँसता है
दिल उसका कहीं न फासता है तन मन मे चैन बरसता है

मन मन का उसकी माला है तन उसका एक शिवाला है

फब्बारा फरहत का उछलाप, फूहार का जग पर नूर पड़ा
जो घर रक्खे सो घर घर में रोवे है

सुख तजे तो फिर औरों का दुख हरे है
मन से त्यागी हो ऋद्धि मिले मन मानी

नहि माँगे तो फल पावे जो मन भावे
जो मैला होकर रहे वह मल धोवे है।

नाहि मिले हरि धन के त्यागे, नाहि मिल राम जान तजे
नारायण मिले तो उसी को जो तन का अभिमान तजे

फकीरी खुदा को प्यारी है अमीरी कौन विचारी है
बदन पर खाक सो है अक्सीर फकीरों की है यही जागीर

जख्म जो दिल पर कारी है वही खुद मरहम विचारी है
पावों में पड़ा जो छाला वह है मोतियों से भी आला
हाँथ में फूटा सा प्याला जामे जगशेद से भी आला
अगर कोई हफ्त हजारी है वह भी उसका भिखारी है
ताकते सब्र वह भारी है मौत भी उनसे हारी है।

शैदा–आसक्त
हफ्त हजामी–7000 पुलिस कर्मियों का अध्यक्ष

लगी थी दिल में इक आतिश, धुआँ उठता था आहों का
तमाशे के लिए हलका बँधा था साथ लोगों का
न शाही में मैं शैदा हूँ गदाई में न गम मुझको

बिजली चमक रही है बादल गरज रहे हैं
अल्लाह के नकारे नौबत के बज रहे हैं

सब भीगते है घर घर ले माह ताबमाही
ये रंग कौन रंगे तेरे सिवा इलाही

शांहशहे जहान शाइल[2] हुआ है तू तू पैदाकुने जमान[2]
है डाइल[3] हुआ है तू सौ बार गरज होवे धो धो पिये
कदम क्यों चरखो[4] मिहरो[5] माह[6] पे माइल[9] हुआ है तू
खञ्जर की क्या मजाल कि इक जख्म कर सके तेरा
ही है खयाल कि घाइल हुआ है तू क्या हर गदा[10]
व शाह का राजिक[11] है कोई और इफ्लासो तगदस्ती
का फाइल[13] हुआ है तू टाइम है तेरे मुजरे के मौके
की ताक में क्यों डर से उसके मुक्त जाइल[14] हुआ है
तू हम बगल[15] तुझसे रहता है हर आन राम तो बन
परदा अपनी वस्ल[16] में हाइल हुआ है तू

भिखारी, समय का उत्पन्नकर्त्ता, समय नापने का यन्त्र आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, मोहित फकीरे, अन्नदाता निर्धनता अधीन, भागता जाता, अपने साथ मिलाप दो के बीच रूकावट डालने वाला

कालिकोल्लास–12 (I)

श्रीकालिकाष्टकम्

गलद्–रक्त–मुण्डावली–कण्ठ–माला।
महा–घोर–रावा सु–दंष्ट्रा कराला ।।

विवस्त्रा श्मशानालया मुक्त–केशी ।
महा–काल कामाकुला कालिकेयम्।।

ये भगवती कालिका गले में रक्त टपकाते हुए मुण्ड–समूहों की माला पहने हुए हैं, ये अत्यन्त घोर शब्द कर रहीं है, इनकी सुन्दर दाढ़ें भयानक हैं, ये वस्त्र–रहित हैं, श्मशान में निवास करती हैं, इनकी केश–राशि छिटकी हुई है, महा–काल के साथ कामातुरा है।

भुजे वाम युग्मे शिरोऽसिं दधाना।
वरं दक्ष–युग्मेऽभयं वै तथैव।।

सु–मध्याऽपि तुङ्ग–स्तना भार नम्रा।
लसद्–रक्त–सृक्क–द्वया सु–स्मिताऽऽस्या ।।

ये अपने दोनों बाएँ हाथों में नर–मुण्ड और खड्ग लिए हुए हैं तथा अपने दोनों दाहिने हाथों में वर और अभय मुद्रा धारण किए हुए हैं। ये सुन्दर कटिवाली हैं, ये तुङ्ग–स्तनों के भार से झुकी–सी हुई है, ये दो रक्त–मालाओं से सुशोभित हैं और इनका मुख मुधर मुक्कान से युक्त है।

शव–द्वन्द्व–कर्णावतंसा सु–केशी।
लसत्–प्रेत–पाणिं प्रयुक्तैक–काञ्ची।।

शवाकार–मञ्चाधि–रूढा शिवाभिः ।
चतुर्दिक्षु–शब्दायमानिऽभि–रेजे।।

इनके दोनों कानों में दो शव–रूपी आभूषण हैं, ये सुन्दर केशवाली हैं, शवों के हाथों से सुशोभित करधनी ये पहने हुए हैं, शव रूपी मञ्च पर ये आसीन हैं और चारों दिशाओं में शिवाओं का शब्द गूँज रहा है।

।।स्तुति।।

विरञ्च्यादि–देवास्त्रयस्ते गुणाँस्त्रीन् ।
समाराध्य कालीं प्रधाना बभूवुः

अनादिं सुरादिं मखादिं भवादिम् !
स्वरूपं त्वदीयं न बिन्वन्ति देवाः ।।1

तुम्हारे त्रि–गुणात्मक ब्रह्मा आदि त्रि–देव काली की ही अराधना कर प्रधान हुए हैं। तुम्हारा स्वरूप आदि–रहित है, देव यज्ञ और विश्व का मूल–मूत है। उसे देव–गण भी नही जानते हैं।

जगन्मोहनीयं तु वाग्–बादनीयम्।
सुहृत् पोषिणी शत्रु संहारणीयम्।।

वच–स्तम्भनीयं किमुच्चाटनीयम् ।
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवा : ।। 2

तुम्हारा यह स्वरूप सारे विश्व को मुग्ध करने वाला है, वाणी द्वारा स्तुति किए जाने योग्य है, यह सुहृदों का पालन करने वाला है, शत्रुओं का विनाशक है, वचन का स्तम्भन करने वाला है और दुष्टों का उच्चाटक है। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते।

इयं स्वर्ग–दात्री पुनः कल्प–वल्ली।
मनोजाँस्तु कामान् यथार्थ प्रकुर्यात्।।

तथा ते कृतार्था भवन्तीति नित्यम्।
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः।। 3

यह स्वर्ग को देने वाली है और कल्प–लता के समान है। भक्तों के मन में उत्पन्न होने वाली कामनाओं को पूर्ण करती है। और वे सदैव कृतार्थ रहते हैं। तुम्हारे इस स्वरूप को देव गण भी नहीं जानते।

सुरा–पान–मत्ता सु–भक्तानुरक्ता।
लसत्–पूत–चित्ते सदाऽऽविर्भवते।।

जप–ध्यान–पूजा–सुधा–धौत–पङ्का ।
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः।।4

तुम सुरा–पान से मस्त रहती हो और अपने भक्तों पर सदा स्नेह रखती हो। जप–ध्यान–पूजा–रूपी अमृत से निर्मल हुए पवित्र हृदय में तुम्हारा आविर्भाव होकर शोभायमान होता है तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भीं नहीं जानते।

चिदानन्द–कन्दं हसन् मन्द–मन्दम्।
शरच्चन्द्र–कोटि–प्रभा–पुञ्ज–बिम्बम्।।

मुनीनां कवीनां हृदि द्योतयन्तम्।
स्वरूपंत्वदीयं न विन्दन्ति देवा :।।5

चैतन्य–पूर्ण आनन्द की तुम मूल हो, मन्द–मन्द तुम मुसकाती रहती हो, करोड़ों शरच्चन्द्रों की प्रभा से युक्त मुखवाली हो, मुनियों और कवियों के हृदय को तुम प्रकाशित करती हो तुम्हारे इस स्वरूप को देव–गण भी नहीं जानते।

महा–मेघ–काली सु–रक्ताऽपि शुभ्रा।
कदाचिद् विचित्राकृतिर्योग–माया।।
न बाला न वृद्धा न कामातुराऽपि।
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवा :।। 6

प्रलय–कालीन घटाओं के समान तुम कृष्ण–वर्णा रक्त–वर्णा भी हो और उज्जलव–वर्णा ही हो तथा कभी विचित्र आकृति वाली योग माया हो। न तुम बाला हो, न वृद्धा और न ही कामातुरा हो। तुम्हारे स्वरूप को देवता भी नहीं जानते।

क्षमस्वापरधं महा–गुप्त–भावम्।
मया लोक–मध्ये प्रकाशी–कृतं यत्।।
तव ध्यान–पूतेन चापल्य–भावात्।
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः।।7

तुम्हारे ध्यान से पवित्र होकर चंञ्चलता–वश इस अत्यन्त गुप्त–भाव को जो संसार में मैंने प्रकट कर दिया है, उसे क्षमा करे। तुम्हारे स्वरूप को देव–गण भी नहीं जानते।

।।फल श्रुति।।

यदि ध्यान–युक्तं पठेद् यो मनुष्य–
स्तदा सर्व–लोके विशालो भवेच्च।।
गृहे चाष्ट–सिद्धिमृते चापि मुक्ति :
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवा :।।8

जो मनुष्य ध्यान युक्त होकर इसका पाठ करता है, वह सारे संसार में महान् होता है। उसे अपने घर में आठों सिद्धियाँ प्राप्त रहती हैं और मरने पर मुक्ति प्राप्त होती है। तुम्हारे स्वरूप को देवता भी नहीं जानते।

।।श्रीमच्छङ्कराचार्य–विरचितं श्रीकालिकाऽष्टकम्।।

कालिकोल्लास–12 (II)

मुण्डमालातन्त्रम्

भगवती पर मुण्डमालानुसारिणी दृष्टि

धन्यासि पतिभक्तासि
सिद्धि र्भक्तिरव्यभिचारिणी
सत्यं वेदिम हितं वेदिम्
गुरुरेकः शिवं साक्षाद गुरुः सर्वार्थसाधकः
गुरुरेव परं तत्वं सर्वं गुरुमयं जगत ।।
धन्यासि प्राणतुल्यासि

धन की अर्हता से धन्या प्राण तुल्या है

गुरुः कर्ता गुरु हर्ता गुरुः पाता महीतले।
गुरोः सन्तोष मात्रेण तुष्टाः स्युः सर्व देवता।।
"सगुणा निर्गुणा चेति महामाया द्विधा मता"
"स्वयम्भू कुसुमं देवि! रक्त चन्दन संज्ञकम्"
योगि चेन्नहि भोगि स्याद भोगि चेन्नहि योगवान्।
योग भोगात्मक कौलं तस्मात कौल समभ्यसेत।।
शिव भक्ति विना देवि यो धावति च मूढधी।
न योगि स्यान्न भोगि स्यात कल्पकोटि शेतैरपि।।
भेदकृन्नरकं याति रौरवं पाप पुरुषः
दुर्गायश्चिन्तनाद दुर्गा भवत्येव न संशयः
यथा शिवस्तथा दुर्गा या दुर्गा शिव एव सा।।
स्वर्गे मर्त्ये च पाताले नास्ति शाक्तात परः प्रियः
शाक्तोऽपि शंङ्करः साक्षात परं ब्रह्मस्वरुपभाक्
भैरवोऽहं भैरवोहं रमणी मम् भैरवी।
मनसा ज्ञानमासाद्य साधकेन्द्रो भवेद् भुवि।।

भक्त्या च क्रियया चण्डि प्रणमेद यस्तु कालिकाम्।
जीवः शिवत्वं लभते सत्यं सत्यं न संशयः।।

दिगम्बरा दिब्यदेहा

"सप्तकोटि महाग्रन्था मम वक्त्राद विनिर्गता"

अवधूति शिवा देवी अवधूता श्रमो महान
सचेलश्चापि दिग्वसो विधियोनि विहारवान
सदारः सर्वदावस्थो ह्वयर्द्धहासो दिगम्बरः

शिवा कर्त्री शिवा ह्वत्री शिवा शिवविधायिनी।
शिवेय रमणी देवि शिवोऽहं शिवकामिनी।।

भगवती शिवा कर्त्री हर्त्री और शिव विधायिनी है।

वामानन्द : शिवानन्दो :
संसारार्णवतारक

"कर्मबद्धो भवेज्जीवः कर्ममुक्तः सदाशिवः" घोर द्रष्टे करालास्ये सुरामांसाबलिप्रिये

चण्डमुण्ड क्षयकरे मुण्डामाला विभूषिते।
विहारं जगदम्बायाः सहस्त्रारे मनोरमम्।
सदाशिवेन संयोगं यः करोति स पण्डितः।।

"भजेद् दुर्गा स्मरेद दुर्गा यजेद् दुर्गा शिवप्रियाम"

गिरिनन्दिनी

"क्व कलिश्च क्व कालश्च सर्व सत्यमयं वपु"

कहाँ कलि और काल सब कुछ चिन्मय है

जीवः शिवः शिवा वामाऽभिरामा शिवनन्दिनी
एवं भावं समाश्रित्य क्रिया भक्ति समन्वितः।।

"कालस्य यन्त्राणात् काली"

करालारिविमर्दनात

काल का परिमर्दन यन्त्राणात् संयमन करती है

"राम प्रिया रामरता रघुनाथ वर प्रदा"
"गुह प्रिया गुहरता गुहवेषविलासिनी"

"बिना कालीपदद्वन्द्वं कः शाक्तो धरणीतले"
"शून्यागारं श्मशानं वा तुल्यं परमकोविदैः"

विजन स्थल श्मशान पण्डित के लिए समतुल्य

"स्तुतिर्दुर्गा मतिदुर्गा स्थितिदुर्गा सदाशिवः"

शिव ही जाति, गोत्र, धर्म, रति कर्ता सब

शिवों जातिः शिवो गोत्रः शिवो धर्मः शिवो रति ।
शिवोः कर्ता शिवः पाता शिवो हर्ता शिवात्मकः ।।
अवधूती यस्य वामाऽवधूतस्तु स्वयं भवेत।
यत्र कुत्र निवासश्च कैलासो नात्र संशयः ।।

अन्दर शाक्त बाहर शैव सभा में वैष्णव रूप से शाक्त

अन्तः शाक्ता बहिः शैवा समायां वैष्णवा मता।।
नाना रूप धरा कौलां विचरन्ति महितले।।

विविध रूप रहता है

सदाशक्ति विहारं च सदानन्द परिप्लुता
सदानन्दः स विज्ञेयः सर्वकर्मसु कौशलः
कुलीनः शङ्करो देवः कुलीनस्तु हरिः स्वयम्
कुलीनो वासवो देवः कुलीनस्तु पितामहः।
कुलीना मुनयः सर्वे कुलीनाः पितरः स्मृता ।।
असुराश्च कुलीनाश्च कुलजा न कुलीनकाः

सृष्टि का मूल श्रृङ्गार है

शृंङ्गाराज्जायते सृष्टिः शृंङ्गाराज्जायते रतिः।
शृंङ्गाराच्छऽकस्तुष्टः शृंङ्गारादपि पार्वति।।
स्त्रियो देव्याः स्त्रियः प्राणा स्त्रिय एव हि भूषणम्।।

शाक्तों में स्त्री सारसर्वस्वरूपा भगवती है।

"शिव ही जाति गोत्र धर्म रति कर्ता सब"

शिवो जातिः शिवोः गोत्रः धर्मः शिवो रति
शिवो कर्ता शिव पाता शिवो हर्ता शिवात्मकः।।
अवधूती यस्य वामाऽवधूतस्तु स्वयं भवेत।

यत्र कुत्त निवासश्च कैलासो नात्र संशय।।

अन्दर शाक्त बाहर शैव सभा मे वैष्णव रुपेणशाक्त

अन्तः शाक्ता बहिः शैवा समायां वैष्णव मता

नाना रुप धरा कौल विचरन्ति महीतले

विविध रुप रहता है

सदाशक्ति विहारं च सदानन्द परिप्लुता

सदाानन्दः स विज्ञेयः सर्वकर्मसु कौशलः

कुलीनः शङ्करो देवः कुलीनवस्तु हरिः स्वयम्

कुलीनो वासवो देवः कुलीनस्तु पितामह

कुलीना मुनयः सर्वे कुलीना पितरः स्मृता

असुराश्च कुलीनाश्च कुलजा न कुलीनाकाः

सृष्टि का मूलश्रृङ्गार है

श्रृङ्गागाराज्जायते सृष्टिः श्रृऽगाराज्जयते रतिः।

श्रृऽगाराच्छऽकस्तुष्ट श्रृऽगारादपि पार्वति।।

"स्त्रियो देव्यः स्त्रियः प्राणा स्त्रिय एव ही भूषणम्"

शाक्तो मे स्त्री सारसर्वस्णरुपा भगवती है

"जीवत्त्व का कत्ल कर शिवत्व लाने वाली"

अन्तर्याग और बर्हियाग सर्व सौभाग्य प्रद है

अन्तर्यागात्मिका सर्वजीवत्व परिनाशिनी।

बाह्यय पूजा राजसी च सर्व सौभाग्य दायिनी।।

"जप से ही शान्ति कान्ति श्रद्धा दया तुष्टि पुष्टि सब कुछ

जपात् कान्ति र्जपात शान्तिर्जपात श्रद्धा जपाद दया

जपात् तुष्टि र्जपात् पुष्टि र्जपाद गतिर्जपान्मती

न कुलीने परा बुर्द्धिन कुलीन परा गति

न कुलीने परा भक्ति न कुलीन परा क्रिया

एवं वदति यो यस्तु स मुक्तिं न च यति वै

नमस्तेऽस्तु महारौद्रे! महाघोरे महोत्सवे रमे रामरते

कौलिकं कौलिकं देवि! न त्यजेत तु कथञ्चन

परित्यागे वरारोहे ! सर्वम् भवति निष्फलम्

योगीन्द्रैर्मुनीन्द्रैरपि सेविता (कालीपते काशीपते)

कुमारी रमणीरुपा सुरुपा नगनन्दिनी

शक्तिमार्ग परित्यज्य योऽन्यमार्ग विधावति ।

करस्थं स मणिं त्यक्त्वा भूतिभाव विद्यावति ।।

कामगार स्वरूपा च कालाख्या कालभूषिता

तारिणी तरला तन्वी तारा तरण वल्लरी।।

तीर रुपा तटश्यामा तनुक्षीण पयोधरा

वज्रपुष्पप्रिया रक्तप्रिया कुसुमभूषिता । (रक्ताक्षी)

धन्याऽसि पतिभक्तासि प्राणतुल्यासि शाङकरि

महात्म्य चापि कृष्णायाः कृष्णा जानाति भूतले

शक्तिमार्ग बिना जन्तोर्न भक्तिर्न च सद्गतिः।

शक्तिमूलं जगत सर्वम शक्तिमूलं परं तपः।।

श्री काली युगलपादार्चन ज्ञान प्रद है मोक्ष प्रद है

कालिकापाद युगलं भजनं ज्ञानकारणम्।

श्री दुर्गा चरणाम्भोजे भक्तिष्चाव्यभिचारिणी।

नमस्ते कालिके ! कालमहामयविनाशिनी

करालां विकटां घोरां मुण्डमालाविभूषिताम्

बालामालागणविभूषिताम्

शिवदूतीं शिवाराध्यां शिवध्येयां सनातनीम्

सर्वानन्दमयीविद्यां

नैव सिद्धाद्यपेक्षाऽस्ति नक्षत्रादिविचारणा

नैव सिद्धाद्यपेक्षाऽस्ति नास्ति नास्ति मित्रादिदूषणम्

कालादिशोधनं नास्ति नास्ति मित्रादिदूषणम्

मातङ्गी च महाविद्यां त्रिलोक्यवश कारिणी

संग्राम भूमौ योनौ तु स्थले वा विजनेवने

नारीणां योंनिजा त्वचम्।

त्वचं वा योनिसंस्थायाः कुर्याद वीरो रतासनम्

श्मशानकाष्ठ घटितम पीठं वा यज्ञदारुजम्

सुरया चाऽर्ध्यदानेन योगिनीनां प्रियो भवेत।

पुरः पात्रं घटस्थाऽन्त तदन्ते भोज्यपत्रकम्।।

सुरया चाऽर्ध्यदानेन योगिनीनां प्रियो भवेत

पुरः पात्रं घटस्याऽन्त तदन्ते भोज्यपत्रकम्

"श्मशान घुत्तरेणैव तुष्टा मघुमती परा"

लघ्वाहारं प्रकुर्वीत युवतीपूजने रतः।

स्वस्त्रीमन्यस्त्रियं वापि पूजयेत सर्वपर्वसु।।

योनिपीठं महापीठं कामपीठं तथाऽपरम्

कालरात्रिर्महारात्रि र्गायत्री च महाऽम्बिके

"महामञ्जुलभासिनी"

"योनिरूपा महाविद्या कामाख्या वरदायिनी"

महद्योनि–कारणरूपा है

"आवाहनादिकर्माणी न तत्र सर्वथा प्रिये

"लेपयेत तां ऽ गन्धाद्यैः पूजयेद विविधेन च"

चुम्बनाल्लेहनाद योनौ कल्पवृक्षमतिकमेत्।

दर्शनात् साधकाधीशः स्पर्शनात् सर्वमोहनः।।

"लिङ्गयोनिसमाख्यानं कामाख्याप्रीतिवर्धनम्"

प्रकृतिपुरूष समरस्य कामाख्याप्रीतिवर्धक है।

श्री काली ही कमाख्या है

या देवी कालिका माता सर्वविद्यास्वरूपिणी।

कामाख्या सैव विख्याता सत्यं सत्यं न चान्यथा ।।

चन्द्रे चकोरकाः

कनक किञ्जल्क पीत निर्मल वाससे

अत्यन्त उन्माद से भूषण भगवती के स्खलित हो गये ।

मदस्खलित भूषणा :

क्लीं कृष्णाय सदा घ्राणं गोविन्दायेति जिह्वकाम

"फुल्लेन्दीवर कान्तिमिन्दु वदनं बर्हावतंस प्रियं

श्रीवत्साङकमुदार कौस्तमधरं पीताम्बरं सुन्दरम्।

गोपीनां नयनोत्पलार्चित तनुं गोगोपसङधावृतं

गोविन्दं कल वेणु नादपरं दिव्याङगभूषं भजे"।।

क्रोधीशं क्षतजारुढं धूम्रभैख्यलक्षितम्

सर्वगामी सर्ववेत्ता सर्वसाक्षी सदामनः

आनन्द पुलकोद्भूते, हर्ष विवर्द्धनम्

त्वद्वक्त्राम्बुजपानेन अमृतेन शुचिस्मिते।

शिवोऽहं परमेशानि मृत्युं जित्वा वराननेे।।

"श्रृङ्गाररससंयोगात कालकूटं पिबाम्यहम्"

वक्त्राम्बुजमकरन्दमाध्वीककनिपीत

शिव विषपाचन समर्थ्य होते है।

सुवर्णसुरभि संयोग

सोने में सुगन्ध

'दृष्टवा तच्चरणद्वन्द्वं तव वक्त्रं वराननेे"।

"आत्मज्ञानं परित्यज्य चरणे पतितो ह्यहम्"।

तडित्कोटिप्रभां तन्वी ब्रह्माण्डरुपिणीं शिवाम्।

विषतन्तुमयीं देवीं साक्षादमृत रूपिणीम्।।

मोहनीं सर्वदेवानाम् आनन्दार्थियतां पराम्।

विशतन्तुमयीं देवीं साक्षादमृत रूपिणीम्।।

रम्यां ध्यानगम्यां वरानने

भुजङ्गरुपिणी देवीं नित्यां कुण्डलिनीं पराम्

दीपकलिकाकारं मूलाधारस्य कुलकुण्डलिन्या सह सुषुम्ना वर्तमान मूलाधार स्वाधिष्ठान मणिपूरकानाहत विशुद्धा ज्ञाख्य षट चक्राणि भित्वा शिरोऽवस्थिता घोमुख सहस्त्रदल कमल कर्णिकान्तर्गतपरमात्मनि संयोज्य तत्रैव पृथिव्यप्ते जोक्त्वा काशगन्धरसरूप स्पर्श शब्द नासिका जिह्वा चक्षुस्त्वक श्रोत्र वाक्पाणि पादपायु पस्थ प्रकृति मनो बुद्धया –

मृत्युञ्जयत्व शिव का कारण भूतायोनि प्रसाद से है।

तव योनि प्रसादेन मृत्युं जित्वा वरानने।

मृत्युञ्जयोऽहं देवेशि सततं कमलानने।।

रेतोरजः समायुक्तं साक्षान्मन्मथ मन्दिरम्

तव योनिर्महेशानि परं ब्रह्मस्वरुपिणं ।

सकल कारण भूत योनि ब्रह्म ही है

सदानन्दमयीं योनिं नानासुख विलासिनी।

शृंङ्गार समये देवि। नान्तं गच्छामि पार्वती।

मम लिङ्गो महेशानि भिनत्ति सकलं जगत्।।

तथापि परमेशनि नान्तं गच्छामि कामिनी

तव योनिर्महेशनि आद्या प्रकृतिरूपिणी

मूल प्रकृति ही त्रिगुणात्मिका योनि है

अत्र नित्योदिता वृद्धि क्षयहीना अमाकला

दिव्यामृत धारामिर्लाक्षाभाभिर्महेश्वरि ।

पार्वती भग सेवक–शिवः

"स्वनारी रमयेद् यन्त्रे पर नारी मथापि वा।।

कवचस्य प्रसादेन योनिमुद्रा हि सिद्धयति

नमो योन्यै नमो योन्यै कुण्डलिन्यै नमो नमः

नानया सदृशी विद्या नानया सदृशो जपः।

नानया सदृशं ध्यानं नानया सदृशं तपः।।

मेघाङ्गीविगताम्बरां शवशिवारुढा त्रिनेत्रा परां।

कर्णालम्बित बाणयुग्मलसितां मुण्डावली मण्डिताम्।।

चण्ड हास चण्डनादचण्डाख्यानैश्च भैरवै :

"मधुना न विना मन्त्रं न मन्त्रेण विना मधु।।

ब्रह्माण्डखण्ड सम्भूत मषेशरत्न सम्भवम्

रजस्वलासु कन्यासु विधवासु च सङ्ग में

मधुना न विना मन्त्रं न मन्त्रेण विना मधु

मांसचर्मरसादीनां लवणस्य च विक्रयम्

रक्तविद्युत्प्रतीकाशां भ्रमदभ्रमरसंकाशा

स्त्रियों यत्र ग्रहे सन्ति तद्गृह हि लतागृहम्।

गुरुसन्तोषमात्रेण दुष्टमन्त्रोऽपि सिध्यति

सत्त्वरूपा रजोरुपा तमोरूपा तथैव च

कं काकिन्यै नमः

सिन्दूरतिलकोद्दीप्त मज्जनाञ्चित् लोचनाम्

ध्यायेच्छशिमुखीं नित्या नानालङ्कार भूषिताम्

अञ्जनाञ्चितलोचनाम्

कालिका भैरवो देवो जागर्ति हि सदा कलौ।

"महाकालो महाकाली माधुर्य–मानवाकृति" (षडाम्नायतन्त्रम्)
संहाररुपिणी काली जगन्मोहन कारिणी
"वह्निरपा महामाया सत्यं सत्य न संशय।। (गुप्तसाधन तन्त्रम्)
श्री काली नाम हाँथी है उस पर चढ़ा व्यक्ति
(भोकने से क्या फर्क, काली चैतन्य ऊँचाई)
महा कालो
आदिकामस्वरूपञ्च
अन्तकलास्रुपिणी
"स्मरहरकलाकाली"

काली चैतन्यरुपिणी (षडाम्नाय तन्त्रम्)
सबसे अच्छी है वह वंशी जिसमें हो आवाजे तेरी
सबसे मिठी है वह बोली तेरी जिसमें हो पैगाम तेरा ।

ध्यानज्ञानद्वययाभ्यासे
भावलाभो भविष्यति ।
कल्पनाज्जायते सिद्धि
पक्वेन अच्युतादिक।। (षडाम्नाय तन्त्रम्)
हमारे अस्त्र शस्त्र भय से पैदा हुआ
सर्वेभ्यश्चोत्तमा वेदा
वेदेभ्यो वैष्णवोत्तम
वैष्णवादुत्तमः शैवः
शैवाद् दक्षिणमुत्तमः
दक्षिणादुत्तमः वाम वामात्
सिद्धान्तमुत्तमम्
सिद्धान्ताादुत्तमं कौलं
कौलात् परतरं नहि।।
डूबाना नही ऊबारना है (चीनाचार तन्त्र)
उत्तरोत्तर उत्तमता निरुपित है

(हारना विधि है जीतने की भक्ति राज्य में)

नन्दन वन में उगने वाली
मेहदी जिन तलबों की लाली
बन कर भू पर आई आली
मै उन तलवो का चिर ज्ञानी
वह पग ध्वनि मेरी पहिचानी

उन पग पदमो से प्रम रज कण का
अञ्चित कर मन्त्रित अञ्जन
खुलते तम के चिर अन्ध नयन
तम से आकर उर से मिलती
स्वपनों की दुनियाँ की रानी
वह पग ध्वनि मेरी पहिचानी

उन सुन्दर चरणों का अर्चन
करते आसूँ से सिन्धु नयन
पद रेखा में उच्छास पवन
देखा करता अंकित अपनी
सौभाग्य सुरेखा कल्याणी

उन चल चरणों की कल छम छम
से ही था निकला नाद प्रथम
गति से मादक तालोंका क्रम
संगीत जिसे सारे जग ने
अपने सुख की भाषा मानी

वह पग----।
उन चरणों की मञ्जुल ऊँगली
पर नख नक्षत्रों की अवली
उषा ले अपनी अरुणाई
लेकर किरणों की चतुराई
जिन में जावक रचने आई

मै उन चरणों का चिर प्रेमी
मै उन चरणों का चिर ध्यायी
उन मृदु चरणों का चुम्बन कर
उसर भी हो उठता उर्वर
पाषाण पिघल होता पानी
वह पग ध्वनि मेरी पहिचानी

ये कर नभ जल थल में अटके
आकर में उर पर अटके
जो पग द्वय थे अन्दर घट के
थे दूढ रहे उनका बाहर
ये युग कर मेरे अज्ञानी

थे दूढ रहे ध्वनि का उद्‌गम्
मञ्जीर मुखरित पद निर्मम
इनका पाने का यत्न वृथा
श्रम करना केवल नादानी यह पग

हुई पास चली मेरे आगे
सब अंग शिथिल पुलकित छाया
पद को परिरम्मण करने को
अब इन भुज पाशों ने ठानी

रव गूँजा उपर अम्बर में
सर में सरिता में सागर में
प्रत्येक श्वास में प्रति स्वर में
किस किस का आश्रय लेकर
यह मेरी आंखो की लाली।

हो शान्त जगत के कोलाहल
रूक जारी जीवन की हलचल
मै दूर खड़ा सुन लूँ दो पल
सन्देश नया जो लाई है

हो शान्त जगत के कोलाहल
रूक जारी जीवन की हलचल
मै दूर खड़ा सुन लूँ दो पल
सन्देश नया जो लाई है
यह चाल किसी की मस्तानी

बढ़ता जाता घूघँरु का रव
क्या यह भी हो सकता सम्भव
यह जीवन का अनुभव अभिनव
पद चाप शीघ्र पद राग तीव्र
चाप शीघ्र पद राग तीव्र
स्वागत को उठा रे अभिमानी

उर के मधुर भाव चरण
बन कर स्मृति पट पर नर्तन
मुखरित होता रहता बन बन
मै ही इन चरणों का नुपुर
नुपुर ध्वनि मेरी ही वाणी
यह पग----।

ऐसी चोट करो हे शिल्पी मूर्ति प्रगट हो जाये
मुक्त बने प्रच्छन्न कलाएं सब नन्दन हो जाये

मै वह वीणा हूँ जो अब तक रही अनगाँई
नही सजी प्राणों की महफिल नही चली पुरवाई
नही खिला जीवन का मधुवन
कोयल कुहुक न पायी

जला न दीपक बजी न् अब तक
प्राणो की शहनाई
ऐसी भक्ति भरों प्राणों में
सब कीर्तन हो जाये
ऐसा उत्सव दो जीवन को सब नर्तन हो जाये।

अयि गिरि नन्दिनी नन्दित्तमेदिनी
विश्वविनोदिनि नन्दिनुते
गिरिवर विन्धय शिरोधिनिवासिनि
विष्णुविलासिनी जिष्णुनुते
सुरवरवर्षिणी दुर्द्धरघर्षिणि दुर्मखमर्षिणि हर्षरते
त्रिभुवनपोषिणि
शंकरतोषिणि कल्मषमोषिणि घोष रते
महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि
अयिजगदम्ब कदम्बनप्रिय वासिनि वसिनि हासरते
शिखरिशिरोमणि तुङ्ग हिमालयश्रृङ्ग निजालय मध्यगते
अयि निजहुंकृतमात्र निराकृत धूम्रविलोचन धूम्रशते
समर विशोषितशोणित बीज समुद्धव शोणित बीज तले
रिपुगजगण्डविदारण चण्ड पराक्रम शौण्डमृगाधिपते
निजभुजदण्ड निपातितचण्ड विपाटित मुण्डभटाधिपते
दुरित दुराशय दुर्मद दानवदूत दुरन्तगते
तव पदमेव परं पदमस्ति
जितकनकाचलौलिपदोज्झितदुर्द्धर निर्झरतुङ्गकुचे
प्रीतये विश्वमातु ।

ꣿꣿ•ꣿꣿ

कालिकोल्लास–13

महाषोढान्यास:

1. **तीर्थशिवलिङ्गन्यासः [91908–968]**

ओमस्य तीर्थ शिवलिङ्गन्यासस्य गौतमऋषिरनुष्टुपछन्दः महातीर्थशिवलिङ्गे देवते ओं बीजं ह्रीं शक्तिः ऐं कीलकम् आं तत्वम् तीर्थन्यासे जपे विनियोगः।

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं क्रीं छ्री हूं स्त्रीं फ्रें खफ्रें हसफ्रें प्रयागतीर्थे महेश्वर शिव लिङ्गसहितायै ललितादेविशक्तिरुपिण्यै नवकोटिकुलाकुलक्रकश्वर्ये सकलगुह्यानन्त–तत्त्वधारिण्यै गुह्यकाल्यै ग्लूं ब्लूं क्षूं ज्लूं स्हौः अं फट् फट् फट् नमः स्वाहा। अपरत्र परिवर्तनीयांशमात्रं निर्दिश्यते शेषं पूर्ववज्ज्ञेयमथ च न्यासस्थानं मातृकान्यासवद्बोध्यम् फट् इत्यतः पूर्वं यथाक्रमं मातृकाया एकस्याः सानुस्वारायाः निवेशः कार्यः।

(2) नैमिषारण्यतीर्थे देवदेवशिवलिङ्गसहितायै लिङ्गधारिणी देविशक्तिरूपिण्यै ।
(3) शूकरक्षेत्रतीर्थे भारभूतेश्वरशिवलिङ्गसहितायै वेगवती देविशक्तिरूपिण्यै ।
(4) एकाम्बरतीर्थे कृत्तिवासेश्वरशिवलिङ्गसहितायै मातङ्गी देविशक्तिरूपिण्यै ।
(5) बदरिकाश्रमतीर्थे त्रिलोचनशिवलिङ्गसहितायै 'वेदवती' देविशक्तिरूपिण्यै ।
(6) कुरुक्षेत्रतीर्थे स्थाणु शिवलिङ्गसहितायै भवानीदेवि शक्तिरूपिण्यै ।
(7) प्रभासतीर्थे सोमनाथ शिवलिङ्गसहितायै मातङ्गी देविशक्तिरूपिण्यै ।
(8) अमरकण्टकतीर्थे ओङ्कारेश्वर शिवलिङ्गसहितायै निगमबोधिनी देविशक्तिरूपिण्यै ।
(9) पुष्करतीर्थे अयोगन्धेश्वर शिवलिङ्गसहितायै पुरुहूता देविशक्तिरूपिण्यै ।
(10) गयातीर्थें पितामह शिवलिङ्गसहितायै हरिप्रिया देविशक्तिरूपिण्यै ।
(11) वाराणसीतीर्थे महादेवशिवलिङ्गसहितायै विशालाक्षी देविशक्तिरूपिण्यै ।
(12) आयोध्यातीर्थे चन्द्रशेखर शिवलिङ्गसहितायै मोहिनी देविशक्तिरूपिण्यै ।
(13) मथुरातीर्थे भूतेश्वर शिवलिङ्गसहितायै पार्वतीदेवि शक्तिरूपिण्यै ।
(14) मायापुरतीर्थे महाशिवलिङ् गेश्वर शिवलिङ्गसहितायै रक्ताम्बरा देविशक्तिरूपिण्यै ।
(15) शिवकाश्चीतीर्थे व्योमकेश शिवलिङ्गसहितायै भाङ्करिणी देविशक्तिरूपिण्यै ।
(16) उज्जयिनीतीर्थे महाकाल शिवलिङ्गसहितायै भोगवती देविशक्तिरूपिण्यै ।
(17) द्वारकातीर्थे पिनाकीश्वर शिवलिङ्गसहितायै अश्वारूढा देविशक्तिरूपिण्यै ।
(18) पुरुषोत्तमतीर्थे बिल्वकेश्वर शिवलिङ्गसहितायै बिल्वपत्रिका देविशक्तिरूपिण्यै ।

(19) मरुत्कोटितीर्थे कमलेश्वर शिवलिङ्गसहितायै कमला देविशक्तिरूपिण्यै ।

(20) अट्टाहासतीर्थे नीललोहिता शिवलिङ्गसहितायै कुन्दवा देविशक्तिरूपिण्यै ।

(21) शङ्कुकर्णतीर्थे एकाग्रनाथ शिवलिङ्गसहितायै **कीर्तिमती** देविशक्तिरूपिण्यै ।

(22) रुद्रकोटितीर्थे जम्बुकेश्वर शिवलिङ्गसहितायै——देविशक्तिरूपिण्यै ।

(23) छगलाण्डतीर्थे जटीश्वर शिवलिङ्गसहितायै वज्रप्रस्तारिणी देविशक्तिरूपिण्यै ।

(24) अम्रातकतीर्थे अमरेश्वर शिवलिङ्गसहितायै भद्रकर्णिका देविशक्तिरूपिण्यै ।

(25) अरुणाचलतीर्थे महोत्कट शिवलिङ्गसहितायै हसन्ती देविशक्तिरूपिण्यै ।

(26) वृन्दावनतीर्थे अट्टहास शिवलिङ्गसहितायै सरस्वती देविशक्तिरूपिण्यै ।

(27) भद्रकर्णह्रदतीर्थे महातेजा शिवलिङ्गसहितायै भद्रावती देविशक्तिरूपिण्यै ।

(28) हरिश्चन्द्रतीर्थे महायोग शिवलिङ्गसहितायै प्राणपदादेविशक्तिरूपिण्यै ।

(29) मध्यमेश्वरतीर्थे कपर्दीश्वर शिवलिङ्गसहितायै सिद्धिदायिनी देविशक्तिरूपिण्यै ।

(30) वस्त्रापथतीर्थे सूक्ष्मेश्वर शिवलिङ्गसहितायै रूद्राणी देविशक्तिरूपिण्यै ।

(31) कनखलतीर्थे सर्वज्ञेश्वशिव लिङ्गसहितायै ओजस्विनी देविशक्तिरूपिण्यै ।

(32) देवदारुवतीर्थे गोपीश्वर शिव लिङ्गसहितायै विद्येश्वरी देविशक्तिरूपिण्यै ।

(33) नेपालतीर्थे शिव शिव लिङ्गसहितायै भीमादेवि शक्तिरूपिण्यै ।

(34) कर्णिकारतीर्थे हरशिव लिङ्गसहितायै राधा देविशक्तिरूपिण्यै ।

(35) त्रिसन्ध्यातीर्थे शर्धशिव लिङ्गसहितायै शान्ता देविशक्तिरूपिण्यै ।

(36) ....तीर्थे भवशिव लिङ्गसहितायै जयमङ्गला देविशक्तिरूपिण्यै ।

(37) ....तीर्थे उग्रेस्वर शिवलिङ्गसहितायै शर्वाणी देवि शक्तिरूपिण्यै ।

(38) ....तीर्थे दण्डीश्वर लिङ्गसहितायै शिवा देविशक्तिरूपिण्यै ।

(39) ....तीर्थे पशुपतिशिवलिङ्गसहितायै चण्डवती देविशक्तिरूपिण्यै ।

(40) ....तीर्थे गणाध्यक्ष शिवलिङ्गसहितायै सावित्री देविशक्तिरूपिण्यै ।

(41) ....तीर्थे ताम्रकेश्वर शिवलिङ्गसहितायै गुह्येश्वरी देविशक्तिरूपिण्यै ।

(42) ....तीर्थे मणिमहेश शिवलिङ्गसहितायै कल्याणीदेविशक्तिरूपिण्यै ।

(43) कुलूततीर्थे घुसृणेश्वर शिवलिङ्गसहितायै पद्मावती देविशक्तिरूपिण्यै ।

(44) शिवालय तीर्थे वामदेव शिवलिङ्गसहितायै शाकम्भरीदेवि शक्तिरूपिण्यै ।

(45) पृथूदकतीर्थे लगुडीश्वर शिवलिङ्गसहितायै सिद्धेश्वरी देविशक्तिरूपिण्यै ।

(46) कायावतारतीर्थे कपिलेश्वर शिवलिङ्गसहितायै तेजोवती देविशक्तिरूपिण्यै ।

(47) करवीरतीर्थे श्रीकण्ठ शिवलिङ्गसहितायै विजया देविशक्तिरूपिण्यै ।

(48) मण्डलेश्वरतीर्थे.......शिवलिङ्गसहितायै प्रभावती देविशक्तिरूपिण्यै ।

(49) हर्षपथतीर्थे हर्षितेश्वर शिवलिङ्गसहितायै नारायणी [प्रमोदिनी] देविशक्तिरूपिण्यै ।

(50) अलकापुरतीर्थे प्रहासेश्वर शिवलिङ्गसहितायै मायामयी देविशक्तिरूपिण्यै ।

(51) बड़वामुखीतीर्थे अनलेश्वरशिवलिङ्गसहितायै मेधादेविशक्तिरूपिण्यै ।

2–पर्वतनरसिंहन्यासः [91987-1056]

(1) औं क्षीं क्षीं क्षूं क्षौं ट्रीं चै थ्रीं प्री रह्रीं जरक्रीं रक्षीं रब्रीं रफ्रीं

क्षहम्लव्य्र ऊं हिमालयपर्वते ज्वालामालीननरसिंहसहितायै विद्युत्केशी शक्ति स्वरूपायै चतुरशीतीतोटिब्रह्माण्डसृष्टिकारिण्ये प्रज्वलज्वलनलोचनायै वज्र नखदंष्ट्रायुधायै दुर्निरीक्ष्याकारायै भगवत्ये गुह्यकाल्यै खफ्रे हसखफ्रें ओं फ्रें ह्लीं छ्री हूं स्त्रीं श्रीं ह्लीं रहक्षमलवरयईऊ श्री ओं ह्ली हसखफ्रें द्रै जूं श्लीं कप्रूं [?] × (सन्दीपनी बीजम्) खं खं खं फट् फट् फट् नम : स्वाहा।

अन्यत्राग्रे सर्वत्र सर्व पूर्ववत् बोध्यम्, केवल पर्वतइत्यतः पर्वू नरसिंह इत्यतः पूर्व शक्तिपदतश्च पर्वू परिवर्तनमपेक्षितं तन्मात्र निर्देशों विधीयते।

(2) ......गन्धमादनपर्वते कराल नरसिंह......कालरात्रिशक्ति.....

(3) ......भद्राश्वपर्वते भीमनरसिंह......उल्कामुखशक्ति......

(4) ......केतुमालपर्वते अपराजितनरसिंह......पिङ्गजटाशक्ति......

(5) ......सुमेरुपर्वते क्षोभणनरसिंह......कुण्डोदरीशक्ति......

(6) ......विन्ध्यपर्वते सृष्टिनरसिंह......प्रतासनाशक्ति......

(7) ......निषधपर्वते स्थितिनरसिंह......कपालकुण्डला शक्ति......

(8) ......हेमकूटपर्वते कल्पनान्तनरसिंह......चण्डचामुण्डाशक्ति......

(9) ......पारिपात्र पर्वते अनन्तनरसिंह......धूमावतीशक्ति......

(10) ......कैलासपर्वते विरूप नरसिंह......शुष्कोदरीशक्ति......

(11) ......उदय पर्वते वज्रायुध नरसिंह......ज्वालाकुलाशक्ति......

(12) ......अस्तपर्वते परापर नरसिंह......अञ्जनप्रभाशक्ति......

(13) ......माल्यवन्तपर्वते प्रध्वंसन नरसिंह...... वज्रवाराहीशक्ति......

(14) ......**सह्यपर्वते विश्वमर्दन नरसिंह**......कालमर्दिनीशक्ति......

(15) ......**मलयपर्वते उग्र नरसिंह**......नागहारिणीशक्ति......

(16) ......**ददुंरपर्वते भद्र नरसिंह** ......घोरनादशक्ति......

(17) ······ऋष्यमूक पर्वते मृत्यु नरसिंह·····करालिनी शक्ति·····

(18) ······शुक्तिमन्त पर्वते सहस्रभुज नरसिंह ······मुण्डचर्चिकाशक्ति·····

(19) ······महेन्द्रपर्वते विद्युज्जिह्व नरसिंह······श्मशानचारिणीशक्ति·····

(20) ······अर्बुदपर्वते घोरदंष्ट्र नरसिंह······शववाहिनीशक्ति·····

(21) ······द्रोणपर्वते महाकालाग्नि नरसिंह······रक्तपायिनीशक्ति·····

(22) ······रैवतपर्वते मेघनाद नरसिंह······चण्डघण्टाशक्ति·····

(23) ······क्रोञ्चपर्वते विकट नरसिंह······अट्टाट्टासिनीशक्ति·····

(24) ······चित्रकूट पर्वते पिङ्गसट नरसिंह······कङ्कालिनीशक्ति·····

(25) ······काश्मीर पर्वते प्रदीप्त नरसिंह······ भूतोन्मादिनीशक्ति·····

(26) ······कालञ्जरपर्वते विश्वरूप नरसिंह·····पिशाचिनीशक्ति·····

(27) ······श्रीशैलपर्वते विद्युद्दनरसिंह······विकटदंष्ट्राशक्ति·····

(28) ······मैनाकपर्वते विदार नरसिंह·····मेघमालाशक्ति·····

(29) ······मुञ्जगिरिपर्वते विक्रम नरसिंह······पूतितुण्डाशक्ति·····

(30) ······गोमन्थपर्वते प्रवण नरसिंह······भारुण्डरुण्डाशक्ति·····

(31) ······त्रिकूटपर्वते सर्वतोमुख नरसिंह······फेत्कारिणीशक्ति·····

(32) ······सुबलपर्वते वज्र नरसिंह······पिचिण्डनासाशक्ति·····

(33) ······सैन्धवपर्वते दिव्य नरसिंह······ हूं हूं कारनादिनीशक्ति·····

(34) ······कलिन्द पर्वते भोगनरसिंह······ कोलाननाशक्ति·····

(35) ······रविभावपर्वते मोक्ष नरसिंह······ निरंञ्जनाशक्ति·····

(36) ······लोकालोकपर्वते लक्ष्मी नरसिंह·····भ्रमर अम्बिका शक्ति·····

(37) ······मन्दरपर्वते विद्रावण नरसिंह······मूलताटङ्किनीशक्ति·····

(38) ······केदारपर्वते कालचक्र नरसिंह······शूलचण्डिकाशक्ति·····

(39) ······नीलाचलपर्वते कृतान्त नरसिंह······कटंकटाशक्ति·····

(40) ······अञ्जनपर्वते तप्तहाटक नरसिंह······कुक्कुटीशक्ति·····

(41) ······वराहपर्वते भ्रामक नरसिंह······पुक्कसीशक्ति·····

(42) ······चैत्ररथपर्वते रौद्र नरसिंह······विश्वभञ्जिकाशक्ति·····

(43) ······कर्णिकारपर्वते विश्वान्तकनरसिंह······शङ्खिनीशक्ति·····

(44) ······मन्दारपर्वते भयङ्कर नरसिंह······नीलाम्बराशक्ति·····

(45) ······कोकामुखपर्वते प्रतप्त नरसिंह······कालसङ्कर्षिणीशक्ति·····

(46) ······कोलागिरिपर्वते विजय नरसिंह······कुणपभोजिनीशक्ति·····

(47) ······तुषारपर्वते तेजोमय नरसिंह······दैत्यविध्वंसिनीशक्ति·····

(48) ······बाटधानपर्वते ज्वालाजटाल नरसिंह······विदारिसृक्किणीशक्ति·····

(49) ······नीचगिरिपर्वते खरनखर नरसिंह······क्षेत्रपालिनीशक्ति·····

(50) ······गोवर्धनपर्वते नाददारुण नरसिंह······कुलकुट्टनीशक्ति·····

(51) ······हरिश्चन्द्रपर्वते निर्वाण नरसिंह······ आनन्ददायिनीशक्ति·····

न्यासस्थलानि मातृकान्यासवद्बोध्यानि

इति पर्वतनरसिंहन्यास :

3–षोढान्यासान्तर्गतः नद्युषिन्यास : ।

(1) आं ईं ऊं ऐं औं क्लीं स्हौः फ्रों जूं ञों ञों ञों फट् फट् यमुना नदी तीरे मरीच्युपासितायै कामदानामधारिण्यै भगवत्यै गुह्यकाल्यै लेलिहानरसना भयानकायै विकटदंष्ट्राकराल्यै महाचण्डयोगेश्वरयै शक्तितत्त्वसहितायै श्री ह्लीं रह्लीं हसखफ्रीं क्षरहम्लव्य्रईऊं खफ्रें जरक्री भमरयूं रक्षीं स्त्री छ्रीं छ्री गुह्य–कालि फट् यां जूं लं वै शौ षं सः हलक्षूं नमः स्वाहा।

अन्यत्राग्रे सर्वत्र सर्व पूर्ववत् केवलं नदीपदतः उपासितापदतः नाम पदतश्च पूर्व परिवर्तनीय मस्ति तन्मात्रस्याधस्तात् विधीयते निर्देश :–

(2) ······सरस्वती नदीतीरे अत्रयुपासितायै महाविद्यानाम धारिण्यै·····

(3) ······विपाशा नदीतीरे अङ्गिरसोपासितायै गौरीनाम धारिण्यै·····

(4) ······ऐरावती नदीतीरे पुलहोपासितायै कामाख्यानाम धारिण्यै·····

(5) ······चन्द्रभागा नदीतीरे पुलहोयोपासितायै माहेश्वरी धारिण्यै·····

(6) ······वितस्ता नदीतीरे क्रतूपासितायै विश्वरूपा धारिण्यै·····

(7) ······देविका नदीतीरे वशिष्ठौ पासितायै पुण्यप्रदानाम धारिण्यै·····

(8) ······गोमती नदीतीरे भृगूपासितायै पुण्यप्रदानाम धारिण्यै·····

(9) ······नर्मदा नदीतीरे भारद्वांजोपासितायै विंध्यवासिनी नाम धारिण्यै·····

(10) ······सिप्रा नदीतीरे कर्दमोपासितायै महामायानाम·····

(11) ······कृष्णवेणी नदीतीरे कपिलो पासितायै शिवशक्तिनाम·····

(12) ······तुङ्गभद्रा नदीतीरे दुर्वासः उपासितायै क्षेमङ्करीनाम·····

(13) ······काबेरी नदीतीरे दत्तात्रेयीपासितायै भवहारिणीनाम·····

(14) ······गोदावरी नदीतीरे अगस्त्योपासितायै पद्मावतीनाम·····

(15) ······तापी नदीतीरे पराशरोपासितायै सूक्ष्मानाम·····

····पयोधी नदीतीरे व्यासोपासितायै कुलेश्वरीनाम·····
(16) ····भीमरथी नदीतीरे विश्वामित्रोपासितायै कौशिकीनाम·····
(17) ····बाहुदा नदीतीरे गर्गोपासितायै महोदयानाम·····
(18) ····करतोया नदीतीरे गौतमीपासितायै विमलानाम·····
(19) ····गण्डकी नदीतीरे शाण्डिल्योपासितायै पद्मासनानाम·····
(20) ····सरयू नदीतीरे असितोपासितायै प्रियङ्करीनाम·····
(21) ····कौशिकी नदीतीरे देवलोपासितायै सर्वाश्रयानाम·····
(22) ····शरावती नदीतीरे शाततपोपासितायै गुणानन्दानाम·····
(23) ····इरावती नदीतीरे कात्यायनोपासितायै कलातीतानाम·····
(24) ····उत्पलिनी नदीतीरे आपस्तम्बोपासितायै नादरूपिणीनाम·····
(25) ····सभङ्का नदीतीरे शङ्खलितोपासितायै नाराणयी नाम·····
(26) ····वेत्रवती नदीतीरे हारितोपासितायै तापसी नाम·····
(27) ····तमसा नदीतीरे जमदग्न्युपासितायै वेदमाता नाम·····
(28) ····चर्मण्वती नदीतीरे ऋचीकोपासितायै ज्ञानवेद्या नाम·····
(29) ····धूतपापा नदीतीरे च्यवनोपासितायै भवतारिणी नाम·····
(30) ····सुवर्णरेखा नदीतीरे पैठीनस्यपासितायै मूदिता नाम·····
(31) ····विरजा नदीतीरे उद्दालकोपासितायै नन्दिनी नाम·····
(32) ····निर्विन्ध्या नदीतीरे श्वेतकेतूपासितायै हरप्रियानाम·····
(33) ····महानदी नदीतीरे दधीच्युपासितायै कुण्डलिनी नाम·····
(34) ····मुरला नदीतीरे जैमिन्युपासितायै दयावती नाम·····
(35) ····ज्योतीरसा नदीतीरे वैशम्पानोपासितायै शाङ्करी नाम·····
(36) ····पारावती नदीतीरे वामदेवोपासितायै अद्वैता नाम·····
(37) ····वाग्मती नदीतीरे गालवोपासितायै नैगमी नाम·····
(38) ····मलप्रहारिणी नदीतीरे सम्वर्तोपासितायै श्रुतिबोधिता नाम·····
(39) ····वरुणा नदीतीरे पर्शुरामोपासितायै शाम्भवी नाम·····
(40) ····मन्दाकिनी नदीतीरे जाबालोपासितायै परापरा नाम·····
(41) ····भोगवती नदीतीरे शरभङ्गोपासितायै भोगवती नाम·····
(42) ····शोणनदीतीरे बाल्मीक्युपासितायै नित्यानन्दा नाम·····
(43) ····शतद्रु नदीतीरे नारदो पासितायै तुरीया नाम·····
(44) ····हिरण्याक्षनदीतीरे कश्योपासितायै वागगो चरा नाम·····

(46) ····सिन्धुनदीतीरे अथर्वोपासितायै मोक्षदा नाम·····
(47) ····घर्घर नदीतीरे मार्कण्डेयोपासितायै भोगविद्या नाम·····
(48) ····कोक नदीतीरे लोमशो पासितायै निर्लेपा नाम·····
(49) ····लौहित्य नदीतीरे और्वोपासितायै निरिन्धिनी नाम·····
(50) ····अलकनन्दा नदीतीरे उत्तङ्कोपासितायै मानसी नाम·····
(51) ····गङ्गा नदीतीरे याज्ञवल्क्योपासितायै सर्वज्ञा नाम·····

4–षोढान्यासान्तर्गतः अस्त्रभैरवन्यास :

(1) क्षह्म्लव्य्रऊं जरक्रीं चरक्ष्लह्मह्रूं क्षरह्रीं मक्ष्लहमयब्रूं फ्रैं क्ष्लह्सक्रूंई खफ्रै हलक्षकमब्रूं हस्फ्रें क्लक्षह्म्ब्रमयऊं हसखफ्रें तफरक्षम्लह्रौं क्षरह्रूं जलह्क्ष छपग्रहसखफ्रीं × [चाकोर बीजं ?] ह्मक्षब्रलखफ्रें ऊं × [आघोषणा बीजम् ?] खफलक्षह्महकब्रूं × [खटी बीजम् ?] रक्षलह्मसहकब्रूं हसखफ्रूं ब्राह्मास्त्रैण विद्युज्जिह्वासुरघातिन्यै क्रोधभैरवसुरतरसलोलुपायै भैरवीरूपायै गृह्यकाल्यै ह्रीं श्री ओ खफ्रें हसखफ्रें रह्क्षमलवरयूं रक्ष्री जरक्रीं स्त्री छूरी हूं खफ्रें ट्रीं भ्रीं नमः श्माश्नवासिन्यै ह्रीं ह्रीं छ्री छ्री हूं हू स्त्री स्त्री फ्रें फ्रें फट् फट् फट् नमः नमः नमः स्वाहा स्वाहा स्वाहा।

अग्रे सर्वत्र समानम्, केवलमस्त्रविशेषणम्, असुरनाम भैरवनाम च परिवर्तनीय वर्तते।

(2) ····नारायणस्त्रेण मुण्डासुर····श्मशान भैरव·····
(3) ····प्राजापत्यास्त्रेण रुर्वसुर····कापालीभैरव·····
(4) ····ऐन्द्रास्त्रेण खट्वाङ्गासुर····कालभैरव·····
(5) ····वैष्णवास्त्रेण अञ्जनासुर····कालान्तकभैरव·····
(6) ····कम्पनास्त्रेण दुर्गासुर····रुरुभैरव·····
(7) ····वायव्यास्त्रेण विप्रचित्तासुर····महाघोरभैरव·····
(8) ····वारुणास्त्रेण महिषासुर····घोरतरभैरव·····
(9) ····याम्यास्त्रेण कपोतरोमासुर····संहारभैरव·····
(10) ····कालास्त्रेण मतङ्गासुर····चण्डभैरव·····
(11) ····आग्नेयास्त्रेण हयग्रीवासुर····हुङ्कारभैरव·····
(12) ····भौतास्त्रेण वैरन्धमासुर····नादिभैरव·····
(13) ····कौबेरास्त्रेण चण्डमुण्डासुर····उन्मत्तभैरव·····
(14) ····पार्जन्यास्त्रेण पातालोदरासुर····आनन्दभैरव·····
(15) ····वैद्युतास्त्रेण गगनशिरासुर····भूताधिपभैरव·····
(16) ····पार्वतास्त्रेण पतङ्गावेत्रासुर····कृतान्तभैरव·····

(17) ····पाषाणास्त्रेण मकरास्यासुर····असिताङ्गभैरव····
(18) ····नागास्त्रेण रक्तबीजासुर····कालाग्निभैरव····
(19) ····त्वाष्ट्रास्त्रेण निकुम्भासुर····उग्रायुधभैरव····
(20) ····सौपर्णास्त्रेण पुञ्जमाल्यासुर····वज्राङ्गभैरव····
(21) ····तामसास्त्रेण महाहन्वसुर····करालभैरव····
(22) ····तैमिरास्त्रेण दर्दुरासुर····विकरालभैरव····
(23) ····गान्धर्वास्त्रेण दुर्जयासुर····महाकालभैरव····
(24) ····प्रस्वानास्त्रेण हिरण्यकेशासुर····कल्पान्तभैरव····
(25) ····पैशाचास्त्रेण प्रमाथ्यसुर····विश्वान्तकभैरव····
(26) ····जम्भणास्त्रेण मेघमाल्यसुर····प्रचण्डभैरव····
(27) ····मातङ्गास्त्रेण निशुम्भासुर····भगमालीभैरव····
(28) ····ऐषीकास्त्रेण प्रकम्पनासुर····उग्रभैरव····
(29) ····औदुम्बरास्त्रेण वातेवेगासुर····भूतनाथभैरव····
(30) ····राक्षसास्त्रेण वज्रदंष्ट्रासुर····सुभद्रभैरव····
(31) ····भारुण्डास्त्रेण काथासुर····सम्पत्प्रदभैरव····
(32) ····ब्रह्माशिरोऽस्त्रेण वज्राङ्गसुर····मृत्युभैरव····
(33) ····गुह्याकास्त्रेण चन्द्रार्यसुर····यमान्तकभैरव····
(34) ····कालकूटास्त्रेण नीलासुर····उल्कामुखभैरव····
(35) ····वेतालस्त्रेण शैलजंधासुर····एकपादभैरव····
(36) ····वैनायकास्त्रेण वज्रमुष्टयसुर····प्रेतभैरव····
(37) ····स्कान्दास्त्रेण यज्ञद्रुडसुर····मुण्डमालीभैरव····
(38) ····ग्रामयास्त्रेण युगंपचासुर····वटुकभैरव····
(39) ····उत्पातास्त्रेण जम्बुकासुर····क्षेत्रपालभैरव····
(40) ····कूष्माण्डास्त्रेण तालध्वजासुर····दिगम्बरभैरव····
(41) ····भ्रापकास्त्रेण कुम्भमाल्यसुर····वज्रमुष्टिभैरव····
(42) ····गालनास्त्रेण सर्पशिरासुर····घोरनादभैरव····
(43) ····सम्मोहनास्त्रेण पातालकेत्वसुर····चण्डोग्रभैरव····
(44) ····बलास्त्रेण चर्चिकासुर····सन्तापनभैरव····
(45) ····अतिबलास्त्रेण कुण्डाकासुर····सन्तापनभैरव····

(46) ····निमीलनास्त्रेण असिलोमासुर····ज्वालाभैरव····
(47) ····अचेतनास्त्रेण तपनासुर····संवर्तभैरव····
(48) ····उन्मादस्त्रेण तुण्डरीकासुर····वीरभद्रभैरव····
(49) ····अनस्मारास्त्रेण अशनिपर्वासुर····त्रिकालाग्निभैरव····
(50) ····मारणास्त्रेण यज्ञकोपासुर····शोषणभैरव····
(51) ····पाशुपतास्त्रेण प्रलयरम्भासुर····त्रिपुरान्तकभैरव····

इत्यस्त्रभैरवन्यासः।

5–यज्ञमहाराजन्यासः

(1) ····ओं ही छ्री ओं श्री स्त्री ओं क्ली हूं ओं फ्रे खफ्रे ओं हसफ्रें हसखफ्रें श्रीं क्रीं क्रीं अग्निष्टोमयज्ञे प्रियव्रतराजाराधितायै जयलक्ष्मीनामधारिण्यै सप्तद्वीपवतीपृथ्वीदिग्विजयरूपफलदायिन्यै नक्षत्रनरमुण्डमालाङ्कृतायै चतुर्दशभुवनसेवितपादद्यायै भग्वत्यै गुह्यकाल्यै रहौ हसखफ्रें खफ्रें ओं ह्रीं श्रीं फ्रें सिद्धिकरालि छ्रीं क्लीं फ्रें नमः फ्रें स्त्रीं हूं छ्री ह्रीं फट् फट् फट् नमः स्वाहा।

एवं सर्वत्रादी उक्ताष्टदष बीजानि देयानि, अन्ते च फलदायिन्यै इत्यारभ्य स्वाहान्त देयम्। मध्ये परिवर्तनं अपेक्षितं तन्मात्रमुदधृयते–

(51) ····पाशुपतास्त्रेण प्रलयरम्भासुर····त्रिपुरान्तकभैरव····
(2) ····अत्यन्निष्टोमयज्ञे नहुपराजाराधितायै ऐश्वर्यलक्ष्मीनामधारिण्यै सुरपतिस्वरूप····क्रीं स्वाहा
(3) ···· वाजपेययज्ञे अम्बरीपराजाराधितायै सत्त्वीलक्ष्मीनामधारिण्यै परमनिर्वृतिरूप····क्रीं स्वाहा
(4) ···· षोडशीयज्ञे दिलीपराजाराधितायै ज्ञानलक्ष्मीनामधारिण्यै नागलोकविजयरूप····क्रीं स्वाहा
(5) ···· 'पुण्डरीकयज्ञे' कार्तवीर्याजुनराजाराधितायै धर्मलक्ष्मीनामधारिण्यै पञ्चातिसहस्रवर्षजीवनरूप····क्रीं स्वाहा
(6) ···· अश्वमेधयज्ञे मरुत्तराजाराधितायै क्रियालक्ष्मीनामधारिण्यै दश दिक्पालवशीकरणरूप····क्रीं स्वाहा
(7) ····राजसूययज्ञे हरिश्चन्द्रराजाराधितायै बुद्धिलक्ष्मीनामधारिण्यै सकलदेवताक्रियमाणस्तुतिरूप····क्रीं स्वाहा
(8) ····बहुसुवर्णयज्ञे नलराजाराधितायै मोक्षलक्ष्मीनामधारिण्यै परमसौन्दर्यरू,····क्रीं स्वाहा
(9) ····गोसवयज्ञे दिवोदासपराजाराधितायै योगलक्ष्मीनामधारिण्यै निः सपत्नराज्यसम्राटरूप····क्रीं स्वाहा
(10) ···· महाव्रतयज्ञे भरतजाराधितायै सिद्धिलक्ष्मीनामधारिण्यै चक्रवर्तिरूप····क्रीं स्वाहा
(11) ····विश्वजितयज्ञे भद्रश्रेण्यराजाराधितायै वृद्धिलक्ष्मीनामधारिण्यै सप्तपातालविजयरूप····क्रीं स्वाहा

(12) ···· प्राजापत्ययज्ञे सुहावराजाराधितायै विद्यालक्ष्मीनामधारिण्यै सरस्वतीदासीत्वरूप····क्रीं स्वाहा

(13) ····अश्वक्रान्तयज्ञे शशबिन्दुराजाराधितायै सन्तानलक्ष्मीनामधारिण्यै शतसहस्रपत्नी नियुतकन्याकोटिसुतरूप— ····क्रीं स्वाहा।

(14) ····रथक्रान्तयज्ञे बृहदश्वराजाराधितायै जीवलक्ष्मीनामधारिण्यै लक्षाधिकाषीतिसहस्रवर्षजीवन रूप····क्रीं स्वाहा

(15) ···· विश्वक्रान्तयज्ञे पौरवराजाराधितायै भोगलक्ष्मीनामधारिण्यै उर्वशीरम्भामेनकातिलोत्तमाद्विषष्टयप्सरः संभोगरूप····क्रीं स्वाहा

(16) ···· सूर्यक्रान्तयज्ञे इक्ष्वाकुराजाराधितायै धर्मलक्ष्मीनामधारिण्यै द्विसप्ततिशाखायेवेदधारणरूप····क्रीं स्वाहा

(17) ····गजाक्रान्तयज्ञे ययातिराजाराधितायै अर्थलक्ष्मीनामधारिण्यै अष्टादश लक्षमहर्षि प्रत्यार्थभोजनरूप· ···क्रीं स्वाहा

(18) ···· बलभिद्यज्ञे इन्द्रद्युम्नराजाराधितायै उदयलक्ष्मीनामधारिण्यै महलोंकपर्तन्तरथगमनरूप····क्रीं स्वाहा

(19) ···· नागयज्ञयज्ञे सर्यातिराजाराधितायै विभूतिलक्ष्मीनामधारिण्यै समरविजयपूर्वक कालकेयदितिजकन्याहरणरूप ····क्रीं स्वाहा

(20) ···· सावित्रीयज्ञे शिविराजाराधितायै दयालक्ष्मीनामधारिण्यै स्वमांसोत्कर्तनधर्मरूप····क्रीं स्वाहा

(21) ···· अंसयसवित्रीयज्ञे शत्रुञ्जयराजाराधितायै क्रोधलक्ष्मीनामधारिण्यै स्वमांसोत्कर्तनधर्मरूप····क्रीं स्वाहा

(22) ···· सर्वतोभद्रयज्ञे ऋतपर्णराजाराधितायै राज्यलक्ष्मीनामधारिण्यै अप्रितिह्ताज्ञत्वरूप····क्रीं स्वाहा

(23) ···· आदित्यामययज्ञे रामचन्द्रराजाराधितायै नयलक्ष्मीनामधारिण्यै राजत्वत्वरूप····क्रीं स्वाहा

(24) ····सर्पामययज्ञे विदूरथराजाराधितायै आज्ञालक्ष्मीनामधारिण्यै वासुकितो दण्डग्रहणरूप····क्रीं स्वाहा

(25) ····सर्पामययज्ञे मान्धाताराजाराधितायै धनलक्ष्मीनामधारिण्यै वासवोपकारकरण दण्डरूप····क्रीं स्वाहा

(26) ····कोण्डपामययज्ञे भगीरथराजाराधितायै अभयलक्ष्मीनामधारिण्यै सेवकादिखेचरसिद्धित्वरूप····क्रीं स्वाहा

(27) ····अग्निचिद्यज्ञे युवनाश्वराजाराधितायै वरलक्ष्मीनामधारिण्यै लक्षमत्तहस्तिबलरूप····क्रीं स्वाहा

(28) ····द्वादशाह्यज्ञे रन्तिदेवराजाराधितायै प्रतापलक्ष्मीनामधारिण्यै चतुर्विधार्थसामग्रीरूप····क्रीं स्वाहा

(29) ····उपांशुयज्ञे आग्नीध्रराजाराधितायै शक्तिलक्ष्मीनामधारिण्यै स्वेच्छाचारित्वरूप····क्रीं स्वाहा

(30) ····अश्वप्रतिग्रहयज्ञे पुरूरवाराजाराधितायै निर्वाणलक्ष्मीनामधारिण्यै अनायास त्रिलोकीरक्षण रूप····क्रीं स्वाहा

(31) ····बर्हिरथयज्ञे गयराजाराधितायै परापरलक्ष्मीनामधारिण्यै स्वेच्छारूपित्वरूप····क्रीं स्वाहा

(32) ····अभ्युदययज्ञे अलंर्कराजाराधितायै अद्वैतलक्ष्मीनामधारिण्यै महायोगसिद्धि····क्रीं स्वाहा

(33) ····सर्वस्वदक्षिणयज्ञे पृथुराजाराधितायै इच्छालक्ष्मीनामधारिण्यै चिरजीवित्वरूप····क्रीं स्वाहा

(34) ····दीक्षायज्ञे रघुराजाराधितायै आवेशलक्ष्मीनामधारिण्यै चतुर्विधभूतसंधवृत्तिकल्पना कुवेरजयरूप····क्रीं स्वाहा

(35) ····सोमयज्ञे प्रतर्दनराजाराधितायै उत्साहलक्ष्मीनामधारिण्यै पुरन्दरसख्यरूप····क्रीं स्वाहा

(36) ····स्वाहायज्ञे सगरराजाराधितायै अमृतलक्ष्मीनामधारिण्यै रिपुविरूपकरणरूप····क्रीं स्वाहा

(37) ····तनूनपात्यज्ञे हर्यक्षराजाराधितायै तत्त्वलक्ष्मीनामधारिण्यै स्वेच्छाबलसृष्टिरूप····क्रीं स्वाहा

(38) ····गोदोहनयज्ञे अजमीढराजाराधितायै मोहलक्ष्मीनामधारिण्यै प्रसभवासुकिकन्यापरिणयरूप····क्रीं स्वाहा

(39) ····नरमेधयज्ञे पुरुकुत्सपराजाराधितायै महालक्ष्मीनामधारिण्यै वरुण निरुद्धरूप····क्रीं स्वाहा

(40) ····ज्योतिष्टोमयज्ञे कटुराजाराधितायै काललक्ष्मीनामधारिण्यै वासवासाध्यरूप····क्रीं स्वाहा

(41) ····दर्शयज्ञे अङ्गराजाराधितायै उद्धारलक्ष्मीनामधारिण्यै दिक्पाल निरोधङ्कतरणरूप····क्रीं स्वाहा

(42) ····पौर्णमासयज्ञे बलाकाश्वरराजाराधितायै कीर्तिलक्ष्मीनामधारिण्यै शच्युद्धाररूप····क्रीं स्वाहा

(43) ····अतिरात्रयज्ञे अयुतापुराजाराधितायै वीरलक्ष्मीनामधारिण्यै निकुम्भ दैत्यगर्वभञ्जनरूप····क्रीं स्वाहा

(44) ····सौभरयज्ञे मतिनावराजाराधितायै सौभाग्य लक्ष्मी आजातशत्रुतांरूप····क्रीं स्वाहा

(45) ····सौभाग्यकृद्यज्ञे जीमूतवाहनराजाराधितायै आन्लक्ष्मीनामधारिण्यै महाःवदान्यरूप····क्रीं स्वाहा

(46) ····शान्तिकृद्यज्ञे रम्भराजाराधितायै वश्यलक्ष्मीनामधारिण्यै जगदवशीकरणरूप····क्रीं स्वाहा

(47) ····सौपर्णयज्ञे नृगराजाराधितायै तपः लक्ष्मीनामधारिण्यै महावदान्यरूप····क्रीं स्वाहा

(48) ····त्रैलोक्यमोहनयज्ञे वीरबाहुराजाराधितायै खड्गलक्ष्मीनामधारिण्यै अतिरथतारूप····क्रीं स्वाहा

(49) ····शङचूड़यज्ञे वसुमनाराजाराधितायै उदारलक्ष्मीनामधारिण्यै पूर्वपुरुषोंद्धारूप····क्रीं स्वाहा

(50) ····कन्दर्पबलशातनयज्ञे चित्रायुधराजाराधितायै कान्तिलक्ष्मीनामधारिण्यै सौन्दर्यकनिधानरूप····क्रीं स्वाहा

(51) ····गजच्छाययज्ञे सप्तसप्ततिराजाराधितायै कैवल्यलक्ष्मीनामधारिण्यै सायुज्युमुक्तिरूप····क्रीं स्वाहा

इति यज्ञमहाराज्यासः।

6–षोढान्यासान्तर्गतः कल्पसिद्धिन्यासः।

ओं ऐं ओं ह्रीं औं छ्री ओं स्त्रीं ओं कें ओं कें ओं फ्रें ओं फ्रें ओं हूं तपः कल्पे ज्वालाकालीमूर्त्यो धर्मानन्दनाथसिद्धं सिद्धिदायिन्यै महारात्रिनाम्न्यै भैरवीचामुण्डा शतकोटिपरिवृतायै महाश्मशाननिलयदिगम्बरायै भगवत्यै गुह्यकाल्यै ओं फ्रें सिद्धि हसखफ्रें हसफ्रें ख्फ्रें हसखफ्रें ख्फ्रें फ्रें ओं स्वाहा × [अमा ?] ब्लूं क्षूं ह्रीं छ्री हूं स्त्रीं फ्रें ञौं ञौं ञौं [?] फट् फट् फट् नमः स्वाहा।

अधोनिर्दिष्टपु विशेशमात्रस्योद्धारः क्रियते शेषं पूर्व श्पचाच्च पूर्ववज्ज्ञेयः।

(2) भव्यकल्पे घोरनादकालीमूर्त्ये ज्ञानानन्दनाथसिद्धसिद्धि दायिन्यै कालरात्रिनम्नयै....।

(3) रन्तकल्पे उग्रकालीमूर्त्ये वैराग्यनन्दनाथ विरूपानाम्नयै....।

(4) हव्यवाहकल्पे बेतालकालीमूर्त्ये ऐश्वर्यानन्दनाथ कपालिनी. नाम्नयै....।

(5) ऋतुकल्पे संहारकालीमूर्त्ये अमृतानन्दनाथ....महोत्सवानाम्नयै....।

(6) सावित्रकल्पे रौद्रकालीमूर्त्ये विवेकानन्दनाथ....गुह्यनिद्रानाम्नयै....।

(7) स्रुवकल्पे कृतान्तकालीमूर्त्ये पूर्णानन्दनाथ....दोर्दण्डखण्डिनीनाम्नयै....।

(8) क्रुशिककल्पे भीमकालीमूर्त्ये क्रियानन्दनाथ....वज्रिणीनाम्नयै....।

(9) गान्धारकल्पे चण्डीकालीमूर्त्ये प्रचण्डनन्दनाथ....शूलिनीनाम्नयै....।

(10) ऋषभकल्पे धनकालीमूर्त्ये भैरवानन्दनाथ....विमलानाम्नयै....।

(11) मर्जालनीयकल्पे भद्रकालीमूर्त्ये क्रोधानन्दनाथ...महोदरीनाम्नयै....।

(12) मध्यमकल्पे श्मशानकालीमूर्त्ये .परमतत्वानन्दनाथ....कुरुकुल्लानाम्नयै....।

(13) वैराजकल्पे कामकलाकालीमूर्त्ये कैवल्यानन्दनाथ....कौमुदीनाम्नयै....।

(14) निषादकल्पे सिद्धिकालीमूर्त्ये विजयानन्दनाथ....कौलिनीनाम्नयै....।

(15) मेघवाहनकल्पे दक्षिणकालीमूर्त्ये खेचरानन्दनाथ...कालसुन्दरीनाम्नयै....।

(16) पञ्चमकल्पे घोरकालीमूर्त्ये निर्वाणानन्दनाथ....बलाकिनीनाम्नयै....।

(17) चिन्तककल्पे सन्त्रासकालीमूर्त्ये मोक्षानन्दनाथ....फैरवीनाम्नयै....।

(18) आकृतिकल्पे प्रेतकालीमूर्त्ये सिद्धानन्दनाथ....डमरुकानाम्नयै....।

(19) विज्ञानकल्पे प्रलयकालीमूर्त्ये मूचरानन्दनाथ....घटोदरीनाम्नयै....।

(20) बृहद्कल्पे विभूतिकालीमूर्त्ये पातालानन्दनाथ....भीमदंष्ट्रनाम्नयै....।

(21) रथन्तरकल्पे जयकालीमूर्त्ये सुन्दरानन्दनाथ....भगमालिनीनाम्नयै....।

(22) रक्तकल्पे भोगकालीमूर्त्ये मोहनानन्दनाथ....मेनानाम्नयै....।

(23) पीतवासः कल्पे कल्पान्तकालीमूर्त्ये निरञ्जनानन्दनाथ....तारावतीनाम्नयै....।

(24) विश्वरूपकल्पे मन्यानकालीमूर्त्ये अरुणानन्दनाथ....भानुमतीनाम्नयै....।

(25) ऋष्यन्तरकल्पे दुर्जयकालीमूर्त्ये भास्करानन्दनाथ....एकानङ्गानाम्नयै....।

(26) श्वेतकल्पे कालकालीमूर्त्ये जगन्मित्रानन्दनाथ....केकराक्षीनाम्नयै....।

(27) नीललोहतकल्पे वज्रकालीमूर्त्ये प्रतापानन्दनाथ....संहारिणीनाम्नयै....।

(28) वागदेवकल्पे विद्याकालीमूर्त्ये पौरुषनन्दनाथ....ऐन्द्राक्षीनाम्नयै....।

(29) रौरवकल्पे शक्तिकालीमूर्त्ये कमलानन्दनाथ....प्रभञ्जनानाम्नयै....।

(30) प्राणकल्पे विश्वरूपकालीमूर्त्ये प्रमोदानन्दनाथ....भ्रामरीनाम्नयै....।

(31). सद्योजातकल्पे मायाकालीमूर्त्ये विक्रमरनन्दनाथ....प्रचण्डाक्षीनाम्नयै....।

(32) तत्पुरुषकल्पे महाकालकालीमूर्त्ये हर्षानन्दनाथ....अपराजितानाम्नयै....।

(33) अघोरकल्पे कुलकालीमूर्त्ये उग्रानन्दनाथ....विद्युत्केशीनाम्नयै....।

(34) ईशानकल्पे नारदकालीमूर्त्ये विचित्रानन्दनाथ....महामारीनाम्नयै....।

(35) ज्ञानकल्पे मुण्डकालीमूर्त्ये उदयानन्दनाथ....शोषिणीनाम्नयै....।

(36) सारस्वतकल्पे धूमकालीमूर्त्ये उत्साहानन्दनाथ....वज्रनखीनाम्नयै....।

(37) उदानकल्पे आनन्दकालीमूर्त्ये करुणानन्दनाथ....सूचीतुण्डीनाम्नयै....।

(38) गारुडकल्पे तिग्मकालीमूर्त्ये भीमानन्दनाथ....जृम्भकानाम्नयै....।

(39) कूर्मकल्पे महारात्रिकालीमूर्त्ये भावानन्दनाथ....तीव्रानाम्नयै....।

(40) नारसिंहकल्पे संग्रामकालीमूर्त्ये परमानन्दनाथ....प्रस्वापनीनाम्नयै....।

(41) वामनकल्पे शवकालीमूर्त्ये अव्ययानन्दनाथ....ज्वालिनीनाम्नयै....।

(42) आग्नेयकल्पे नग्नकालीमूर्त्ये योगानन्दनाथ....चण्डघण्टानाम्नयै....।

(43) सोमकल्पे रुधिरकालीमूर्त्ये शब्दानन्दनाथ....लम्बोदरीनाम्नयै....।

(44) मानवकल्पे कङ्कालकालीमूर्त्ये प्रमेयानन्दनाथ....अग्निमर्दिनीनाम्नयै....।

(45) लक्ष्मीकल्पे फेरुकालीमूर्त्ये मङ्गलानन्दनाथ....एकदन्तानाम्नयै....।

(46) वैकुण्ठकल्पे भयङ्करकालीमूर्त्ये ईश्वरानन्दनाथ....उल्कामुखीनाम्नयै....।

(47) गौरीकल्पे विकटकालीमूर्त्ये कपिलानन्दनाथ....सूर्यजिह्वानाम्नयै....।

(48) माहेश्वरकल्पे करालकालीमूर्त्ये माधवानन्दनाथ....घोणकीनाम्नयै....।

(49) पितृकल्पे विकरालकालीमूर्त्ये रौद्रानन्दनाथ....पूतनानाम्नयै....।

(50) पद्मकल्पे घोरघोरतरकालीमूर्त्ये दयानन्दनाथ....वेगमालानाम्नयै....।

(51) श्वेतवाराहकल्पे गुह्यकालीमूर्त्ये प्रसन्नानन्दनाथ....गुह्यकालीनाम्नयै....।

इति कल्पसिद्धिन्यासः

ꣳꣳ•ꣳꣳ

काली खोह कण-कण बोले-श्री काली-काली

काली नाम का पहन के
चोला मै तो
नाचूँ बीच बाजार
न गरीब बन के वास करना है
न अमीर अपितु श्री काली माँ
के करीब बनकर रहना है।

अपने मजे के खातिर गुल छोड़ ही दिये जब
रूये जमीं गुल्शन मेरे ही बन गये सब
जितने जुबा के रस थे कुल तर्क कर दिये जब
बस जायके जहाँ के मेरे ही बन गये बस

काली खोह का कण कण बोले
श्री काली श्री काली
महाकाल का डमरू बोले
माँ काली माँ काली
गङ्गा यमुना की लहरे बोले
श्री काली श्री काली

निज की गरज से छोड़ा सुनने की आरजू को
अब राग और बाजे मेरे ही बन गए सब
जब बेहतरी के अपनी फिक्रो खयाल छूटे
फिक्रो ख्याले रंगी मेरे ही बन गये सब

भद्र काली का अर्थ भद्रं मङ्गलं अर्थात्
शुद्धात्म विज्ञानं कलयति जनयति

वर दानेषु चतुरा तेनेयं दक्षिणा स्मृता

रजो रहिता शुद्ध सात्वात्मिका विरजा

काल शक्त्या सर्वमिदं जगत परिचालयति सैव काली प्रकीर्तिता यद्वा कलयति वा उत्पादयति पालयति पलये पुनरात्मन्येव विलोपयति इति कालयति

(कलि हलि कामधेनुरिति कल धातु बह्वर्थबोधिनी)

काली अपनी काल शक्ति से जगत को चलाती है यानी सृष्टि पालन करती है प्रलय का समय आने पर उसे अपने में तिरोहित (लय) कर लेती है।

दस्ता पा–हाथ पैर
जिस्मी राम नाम का रूप

यह दस्तो पा सबके आँखे यह है तो सबकी,
दुनिया के जिस्म लेकिन मेरे ही बन गए सब,
वह मुझसे हर रंग में मिला है कि गुल से भी
जुदा है, ख्वाब चोखा है सारी

पञ्च शून्ये स्थिता तारा सर्वान्ते कालिके स्थिता अर्थात पाँचो शून्य यानि पाँचों तत्व तक 'तारा'

जब महाप्रलय में आकाश का भी लय होता है यही महाप्रलय है यही काली आद्या शक्ति चित् शक्ति के रूप में रहती है।

साऽऽकाश रूपिणी श्यामा

अक्षमाला महेशानि! पञ्चाशद वर्णरूपिणी
अकारादिर्महेशानि! क्षकारान्तो यतः प्रिये

ककारः कालिका साक्षात् ककारः सर्व सिद्धिदः
कदाचित केन रूपेण भ्रम विज्ञानोऽपि वा
यः स्मरेत मोक्षमाप्नोति सत्यं में निश्चलामति

पूजा कोटि समं स्त्रोत्रं स्त्रोत्रं कोटि समो जपः
जप कोटि समं ध्यान ध्यान कोटि समो लयः

पीता हूँ नूर हरदम जामेसुरूर पै हम
है आस्मां प्याला वह शराबे नूर वाला

ले जो है जिसको भता, माँगे बगैर दाता

हर कौम की दुआयें, हर मत की इल्तिजाये है
आती है पास मेरे क्या देर क्या सवेरे

यथा ध्यानस्य सामर्थ्यात कीट को भ्रमरायते
तथा ध्यानस्य सामर्थ्याद ब्रह्मभूतो भवेन्नर :

मनोऽन्यत्र शिवोऽन्यत्र शक्तिस्यत्र मारूत :
न सिद्धयति बरारोहे! लक्ष कोटि जपादपि

परादव्य लेना परान्न खाना, मन्त्र सिद्धि में बाधा
मननात् त्रायते इति मन्त्रः

वाम मार्गं परित्यज्य यः काली भक्तितो ऽर्चयेत
तस्य क्रिया च विफला महा पशुरितीरित :

कालि कालि महाकालि चण्ड योगीश्वरी ति च।
तिष्ठन गच्छन स्मरन नित्यं मुच्यते महतो भयात्।।

हाँथो में हूँ फिराता दुनियां हूँ यूँ बनाता
मेमार जैसे ईटें हॉथो में है घुमाता

क्या मेहर क्या सितारे हैं मानते इशारे

पीता हूँ जाम हर दम नॉचू मुदाम धम–धम
दिन रात है तरन्नुम हूँ शाहे राम बेगम

कलौ काली तु केवला
कालिका तीव्र नायिका

सम्बोधन पदेनैव सदा सन्निधि कारिणी

मूल त्रिकोणान्तर बिन्दु मध्ये
कादम्बिनी कामपि चिद् विलासाम्
कृपाण मुण्डे च वरामये च
भुर्जे र्दघानां कालयामि चित्ते

मूल त्रिकोण के बीच बिन्दु में चैतन्य में विलसित होने वाली या चेतना का विलास करने वाली चार भुजाओं में कृपाण मुण्ड वर तथा अमय मुद्रा धारण करने वाली किसी अनिर्वाच्य कादम्बिनी मेघमाला का मै चित्त में ध्यान करता है।

प्रकाश से पूर्ण
माथे पर लटकने वाला
जेवर माथा,
माथा चाँद

सरापानूर 'पेशानी'[2] पै मेरी मह'[3] दरखशा[4] है
[1]कि झूमर है जबी सीमी पै गिर्जाये जिमिस्ता का

कुछ आज तुमको दिखाउँगी ऐसा कहके हाय नचा दिया
क्या कहूँ जी भूरें में आ गये कैसा सब्ज बाग दिखा दिया है

क्रियान्वयित्वं कारकत्वम्–व्याकरण शास्त्र में यह कारक का लक्षण है अर्थात् जो क्रिया से सम्बन्ध करती विभक्ति हो वह कारक बनती है।

श्मशान भूमौ शव भस्म् राशीन
सिन्दूरयन्त्यधि तल प्रमाभिः,
मान्या वदान्या भुवनैक धन्या
नगेन्द्र कन्याऽवतु कालिका माम्

श्मशान भूमि में स्थित शवो की भस्म राशियों को अपने चरणों के तलुओं के रक्तिम प्रभापुञ्जों से सिन्दूर की राशियाँ बनाती हुई त्रिभुवन में एक ही धन्य विश्व की माननीया परम उदार नगेन्द्र हिमालय की कन्या कालिका भगवती मेरा संरक्षण करें।

व्रत तप

ऐ जमी के बादशाहो! पण्डितो परहेजगारो
ऐ पुलिस! मुद्दई हाकिम वकील ऐ मेरे यारो
लो बता देते है तुमको राजे खुफिया आज हम
अपने मुँह से आप ही इकरार खुद करते है हम

योग रूपा निद्रा योग निद्रा, परमानन्दमयी शक्ति,

जिस निद्रा में विष्णु मगन रहते है वह समाधि रूपा कहीं जाकर परामानन्द मयि शक्ति की ही अवस्था विशेष है।

ग्रह नक्षत्र मालिनीम्

क्षुधां देह व्यथां त्यक्त्वा बालः क्रीडति वस्तुनि।

तथैव विद्वान रमते निर्ममो निरहं सुखी ।।

भावाधीनमयं जगत
संसार भाव के अधीन है।

जरातुर–अग्नि का पर्वत

जब उमड़ा दरिया उल्फत का हर चार तरफ आजादी है
हर रात नई इक शादी है हर रोज मुबारकवादी है

हर वर्ग बधाइयां देता हर जर्रा जर्रा तूर हुआ

क्या ठंडक है क्या राहत है क्या शादी है आबादी है

रिमझिम रिमझिम आँसू बरसे यह अब्र बहारे देता है
क्या खूब मजै की वारिश में वह लुत्फ वस्ल का लेता है

यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षुंषि पश्यति
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमु पासते।

काल सङ्कलनात् काली काल ग्रासं करोप्यतः

व्याधून यन्तीं व्यजनं रमां वै

घृतात पत्रं च विधेः कलत्रम्
निमालयन्तीं निज सेवनायाम्
भजामि कालीं करूणाम्बु धानीम्।

(1) दक्षिणा काली, भद्रकाली, श्मशान काली
काम काली गुह्य काली, काम कला
काली घनकाली, सिद्धि काली
चण्डी काली।

(पुरश्चर्यार्णव में)

इस भरने में क्या लज्जत है जिस मुँह को चाट लगे इसकी
थूके है शांहशाही पर सब नियामत दौलत हो फीकी

तुम ही दफ्तर से खारिज हो और तेते चारज तुम ही
तू दाविर है तू वुकला है तू पापी तू फर्यादी है
नित फरहत है नित फरहत है नित राहत है नित रंग नये आजाद

जयद्रथ यामल में

डम्बर काली, गहनेष्वरी एकतारा,
चण्डशाबरी वज्रवती रक्षाकाली
इन्दीवरी काली, घनदा रमण्या
ईशान काली, मन्त्रमाता।

उजले पीले रंग काले वर्ण में समा
जाते है अर्थात सब जीव काली में लय

तस्मात्, ज्ञाना सिना तूर्ण म शेष कर्म बन्धनम्
कामाकाम कृतं छित्वा शुद्धचात्मानि तिष्ठति
पाप पुण्य पशुं हत्वा ज्ञान खड्गेन शाम्भवि।

दिन शब का झगड़ा न देखा, गो सूरज का चिट्टासिर है
जब खुलती दीदये रौशन है हगामये ख्वाब कहाँ फिर है

सब राम पसारा दुनिया का, जादूगर की उस्तादी है

नित फरहत है नित राहत है नित नये रंग आजादी है

अधो हस्तेन विगत रजं तत्वं
ज्ञानाधारं मस्तकं

निचले हाँथ से विगत रज यानि
रजो गुण रहित तत्व के आधार
ज्ञान रूपी मस्तक का ही बोध होता है।

यदा सा परमा शक्ति : स्वेंच्छया विश्व रूपिणी । अधः कृत्वा तु पुरुषं सङ्गमेच्छा ऽभवत तदाऽऽक्रम्य स्वयं देवी भैरवोपरि संस्थिता । सहजानन्द सन्दोहैर्निजानन्द प्रवर्धिनी। (गन्धर्व तन्त्र)

आइना मुकाबले रूख जो रखा
झट बोल उठा यूँ अक्स उसका

क्यों देख के हैरां यार हुआ
तुम और नही हम और नही

विश्व की समस्त शक्तियां एक ही शक्ति समुद्र की विभिन्न तरंङ्गे मात्र है वह शक्ति समुद्र ही काली है काली अनन्त शक्ति का आश्रय है जिस प्रकार अग्नि से स्फुलिङ्ग समूह चारो है दिशाओं में फैल जाते है सूर्य से अगणित किरणें विकीर्ण होती है उसी प्रकार महाशक्ति काली से मां अनंत शक्ति कण उदभूत होते है परन्तु इससे काली का शक्ति क्षयं या उसकी पूर्णता का ब्यत्यय नही होता आनन्द रूपिणी माँ की लीला का विराम नही है।

दिल में चैन

डट कर खड़ा हूँ खौफ से खाली जहान में
तसकीने दिल भरी है मेरे दिल में जान में

ठड़क भरी है दिल में आनन्द बह रहा है
अमृत बरस रहा है झिम, झिम झिम।

क्षुधां देहं व्यथां त्वक्त्वा
बालः क्रीडंति वस्तुनि ।
तथैव विद्वान रमते
निर्ममो निरहं सुखी।।

एक भूखा बालक कोई वस्तु मिलने पर भूख को भूलकर उस वस्तु से खेलता है वैसे ही विद्वान आद्या के चरणों में निर्मम और निरङ्कार होकर खेलते हुए सुखी रहते है।

काल नियन्त्रणात् काली
तत्त्व ज्ञान प्रदायिनी

कल्ब–अन्तः करण
भार–सच्च मित्र
दिलफिगार–घायलचित्त
गुलबी–हंसदृष्टि
मस्ती मु०–सदा रहने वाली
शराब खाना की जरूरत नही

इश्क का तूफाँ वपा (उठा) है हाजते मयखाना नेस्त
खूँ शराबो दिल कबाबो फुरसते पैमानां नेस्त

मस्ती मुदाम कार यही रोजगार है
गुलबी निगाह पड़ते ही फिर किसका खार (काँटा) है

जब राम कल्ब में तेरे खुद यारे गार है।

काली काली बोल रे मन
काली काली बोल
बोल रे मन काली काली बोल

तज दे जग की ममता माया
क्यों काया पर है ललचाया
अब भी आँखे खोल, बोल रे मन
काली काली बोल

जो शुभ्र निरञ्जन शुद्ध निर्वाण और द्वैत वर्जित है और आत्मापलब्धि का विषय है वे ही आद्या के परम पद हैं।

तखते जात–स्वराज्य
बग गटन माह–प्रत्येक पत्ते सूर्य आग की थी
मेहर–सूर्य
मर्कज–केन्द्र

फुटबाल सब जमीन है पा (पाँव) पर फिदा है आज
मैं मर्कज हूँ मेहर सा
शहजादे का जुलूस है अब तख्ते जात पर
हर जर्रा सदके जाता है नगमा सरा है आज
हर बर्गे मेहरो माह का रक्सो सरोद है।
अरामो–आमनो चैन का तुफाँ बपा है आज

नूरे बर्क–बिजली का तेज
आमद–आगमन, दीदो–आँखो

किस शौखे चश्मकी यह आमद की नूरे वर्क
दीदों को फाड़ फाड़ के रह देखता है आज

झुक झुक सलाम करता है अब चाँद ईद है
इकबाल राम राम का खुद हो रहा है आज

दरियाये वहदत–एकता की गंगा
दुई–अद्वैत की झोपड़ी

फिको ख्याल बह गये टूटी हुई की झोपड़ी
बस यार की फिर छेड़खानी का फिर गरम बाजार है

इस जिस्म से जा कूद कर दरियाये वहदत में पड़ी
कर लें महोछा जानवर लो वह पड़ा मुरदार है।

शोला–ज्ञान अग्नि की शुभ ज्वाला
गुलनार–यहाँ अग्नि के पुष्प से मुराद है
नै–नही
शाहेगनी अली–सखी दिल बादशाह
इफाने हक–आत्म ज्ञान
खादिम–नौकर

क्या इन्तजारों क्या मुसीबत क्या बला क्या खारे दस्त
शोला मुबारक जब फड़क उठ्ठा तो सब गुलनार है।
दौलत नही ताकत नही तालीम नै तकरीम नै
शाहे गनी को तो फकत इर्फाने हक दरकार है
खादिम हूँ मै या बादशाह ? यह क्या अजब इसरार है ।

मै सैर करने निकला ओढ़े अबर की चादर
पर्वत में चल रहा था हवा के बाजुओं पर
मतवाला झूमता था हर तरफ घूमता था
झरने नदी व नालो पहचान कर पुकारे
शौहर को पाके दुल्हन सौपें है तन मन अपना

सूरत–मध्यकाल के सूर्य के रूप
साज–प्रकाशमान

मुद्दत का बिछुड़ा बच्चा रोता है माँ को मिलता
बेइख्तियार मेरा दिलो जाँ बह ही निकला

यार खड़ा हो सामने आँख न फिर लड़ाये क्यों
जब वह जमाले दिलफरोज 'सूरत मिहरे नीमं रोज'

आप ही हो नजारा सोज परदे में मुँह छिपाये क्यो।

काबा ए दिल–हृदय रूपी भगवान का मन्दिर
जीना–व्यभिचारी
चपरास्त–बाएं दाएं
भगवान का मन्दिर
पेशोपस–आगे पीछे
जेरा–नीचे उपर
जमा–काल
मकाँ–देश

काबा ए दिल में यह जिना ? बूएं वफा से यार क्या
मै इक तूफा कयामत का हूँ पुर हैरत तमाशा मै।

मैं बातिन मै अयाँ जेरो जवर चप रास्त पेशोपस
जहाँ मै हर मकां मै हर जमाँ हुँगा सदा था मै

नही कुछ जो नही मै इधर मै हूँ उधर मैं हूँ।

हकीकी–असली स्वराज्य

जिसे हो समझे कि जाग्रत है यह ख्वाबे गफलत सुषुप्ति अवर (क्लोरोफारम है सब मतलब है) सख्त ऐ जाँ

लहू का दरिया जो चीरते है तख्त पाते वही हकीकी
ताल्लुको का जला भी दो सब खड़े है रोम गला रूके

हस्ती–सच्चिदानन्द हूँ।

है चोर चौपट यह खेल दुनिया लपेट गंगा में फेका

तेरे सीने में बसूं हूँ है वही धाम मेरा

हस्ती ओ इल्म हूँमस्ती हूँ

हर घड़ी में पल में नया रूप बदलना मेरा
जामाए सूरते नौ पहन निकलना मेरा

मुझसे चलने में न होगा कोई गाफिल बढ़कर
गिर पड़े है मेरे दामन की गिरह खुल के गुहर
पाँच भूत की धातु
मिलाकर अंड पिचकारी बनाई
चौदह भुवन रंग भीतर भरकर नाना रूप धराई
प्रकट भये कृष्णा कैसी होली तैने मचाई।
पाँच विषय की गुलाल बनाकर बीच ब्रह्माण्ड उड़ाई
जिस जिस नैन गुलाल पड़ी गुलाल पड़ी उसकी सुध बुध विसराई

सब शाहों का शाह मै मेरा शाह न कोई
सब देवों का देव मै मेरा देव न होय

चाबुक सब पर है मेरा क्या सुल्तान अमीर
पत्ता मुझ बिन न हिले आँधी मेरी असीर कैदी

मृग तृष्णा के नीर में वह चलियो बिन तोय
हमें इक पागलपन दरकार

कहीं आबो आतिश जमीनो हवा है
खुदा में दुई को जो देता दखल है
वही काफिरा मन्किर अहले खता है

कहाँ उसको दूर जुदा ढूढ़ते हो
हमेशा है हाजिर न हरगिज छुपा है।

कायम–सिद्ध
बका–अविनाशी

हर इक चीज हस्ती में अपनी है कायम
नही पैदा होता नही कुछ फना है

नही होता हरगिज फ़ना का फ़ना भी
हुआ इससे साबित बका ही बका है

दुई से किया जिसने दिल को सफा है

लग गया पूरा निशाना, काम क्या बाकी रहा
मोह का अम्बार अग्नि, ज्ञान में भस्मी हुआ

कुछ नही मतलब किसी से सो रहा टाँगे पसार
अब कही काहे को जाना काम क्या बाकी रहा

हो गई दे दे डंक्का सारी शंका भी फ़ना
अब मिला निर्भय ठिकाना काम क्या बाकी रहा

अगयार–शत्र
नस्त्र–गद्य

मैं दरिया हूँ और मुझमें बेहद है कतरे।
मैं सूरज हूँ और मुझसे रोशन हैं जर्रे।।

अपने सिवा नही हस्ती किसी की हरगिज
बेजान है तो हम जानदार है तो हम

गर फूल है तो हम गर खार है तो हम
गर नस्त्रं है तो हम अशआर है तो हम

गर यार है तो हम अगयार है तो हम
सरेशार–दोषो से पूर्ण

है शेख सूमये में और रिन्द मयकदे में
हुशियार हैं तो हम सरशार है तो हम

अपनी हैं साउरी बरकत अपनी है सारी हरकत
रफ्तार हैं तो हम गुफ्तार है तो हम

हर शक्ल है हमारी हर नाम है हमारा
ऐ मेहर तुमसे हर जान दो चार है तो हम

मेरी सूरज परस्ती हक परस्ती है है कहूँ मै क्या
कि इस सूरत में है क्या अहाहाहा अहाहाहा

जफर आलम कहूँ मै क्यातबीयत की खानी
है उमड़ा हुआ हक का दरिया अहाहाहा अहाहाहा

अक्स मिट कर नूर पैदा हो गया
बन्दगी है बन्दा बनने के लिए

जब हुआ आजाद मौला हो गया
नक्श पर नक्काश शैदा हो गया

पलास–चैन
आत्मजात–परम स्वरूप

मैं हूँ खुद ब्रह्म यह करो अभ्यास
मैं नही जिस्मों इस्मो–नौकर दास
मैं हूँ बेलोस पाक आला जात

नाम तो ले रहे हो ब्यास का तुम
काम करते हो अदना दास का

जी रहे हो कि मर गये हो तुम
मम्मी मीनार बन गए हो तुम

खार ही खश–घास व कॉटे में
महरूम–बेखबर

जबर से कहर से मोहब्बत से
जान दीजे उन्हे मुरब्बत से

नकल मत करिए फेल बेरूनी
आत्मा एक है अन्दरूनी

असली आनन्द जात से महरूम
खारो खश में मचा रहा है धूम

बल्लियों–कलेजा आनन्द से इतना लहराने
लगा कि प्रसन्नता अन्दर न समा सकी ।

दान इरफां का ज्ञान ही दान

चन्द सुराखदार बेशक है

रागिनी राग सब हुए हाजिर

कलेजा अब बल्लियों उछल आया।

फुर्ते–आनन्द का अधिकता
इक० खोखली बांसुरी
तहे दिल–दिल मर के

सब में वासिल है सबसे न्यारा
दारे दुनियां की "इक तिही" में

"फुर्ते शादी" से सीना भर आया

क्या तहे दिल से खिलखिला देना
आप ही देखता है अपने रंग

आप ही हो रहा है मुतहइय्यर

रस्मे–उल्फत अदा करो हमसे
यह मुहब्बत वफा करो हमसे

मुझकों अपने से क्यों जुदा देखा

खो के हीरा बने हो दौलतमन्द

सारी विद्याओं की यह विद्या है।

कुतुब–ध्रुव

मेहर डूबेगा कुतुब टूटेगा

मजा अपने लहू का आता था
पर वह समझा मजा है हड्डी का

सब दहानो से वह ही खाता है
खाद खाने भी बन के आता है

शुद्ध–अन्तः करण
जो–जगह
गंगाजल के समान

कलबे साफी मिसाले गङ्गानीर
कोई मुझसे नही है खाली जा
परिपूरण जरा नही हिलता
जाऊँ जाऊँ कहा किधर को
हर मका मुझ में हर मका मै हूँ

चमक–दमक

सोने चाँदी की 'आबो ताब' हूँ मै
गुल हूँ की तू मस्ती ए शराब मै हूँ
राग की मीठी मीठी सुर मै ही हूँ
दमक हीरे की "आबे दुर" मैं ही हूँ

नाजोइश्वा–नाज नखरे
नार–अग्नि
नृत्य
पानी का झरना

रक्स है आबगार का मेरा
नाजो इश्वा है न्यार का मेरा

मुझको काटे कहाँ है वह तलवार
दाग दे मुझको है कहाँ वह नार

मुझमे अर्जो समा समाता है
शाहे जल्ब्बात से भी अड़ते है

काम क्रोधादि (को वश में रखने वाला बादशाह)

मस्त चलता था चाल मस्ती की
आत्मा ही था नूर झरता था

तब मुखातिब हो शाह से बोला
नक्शे नस्वीर शेरे किर्तासा–ऐ कागज के शेर

मुझमें सब जिस्म बुलबुले से है
एक टूटेगा और कायम है

खाक उपर से जब हटा बैठा
मदने बेबहा को पा बैठा
कूड़ा करकट उठा दिया इसने
महल सुथरा बना लिया इसने

तुम ही जोगी हो मै न जोगी हूँ
जाते तनहा हूँ मैं वियोगी हूँ

छिप के बैठी हो तीन खानों में
दूर गर परदा-ए-हया कर दूँ

भस्म करती है तू हजारों को
कौने रोके भला अंगारो को

कुछ नहीं काम रात दिन आराम

सदाये-आस्मानी
आकाशवाणी

उतर आँख से दिल में दाखिल हुआ
दिले साफ में चाँद सब घुल गया

चेहरा रौशन था साफ शीशा सा
हो गया दाग दाग यह कैसा

शहर हर इक में हर गली घर घर
टीका अद्वैत का लगा देना

नग में सुरीले ओम के हैं उससे आ रहे
नदियाँ परिन्दे बाद हैं वह सुर मिला रहे

दुन्या है उसके पैर की फुटबाल की तरह

लहरे भी और बुल बुले सब एक आब है
इन सब में राम आप ही रमते जनाब है

दूर रहते हैं मारे दहशत के

नागिनी काली से सभी हट के

पर जो आकर करीबतर देखा
बेखतर हो गए मिटा खटका

तीन-कारण, सूक्ष्म, स्थूल

गर न मानें तो पकड़ कर बाजू
टीका यह तीन जा लगा देना

कुक कैलाश से उठा है ओम,
ओम तत् सत् ओम तत् सत ओम

पौधे पौधे को ब्रह्म विद्या दो

पार्वती ब्रह्म विद्या से अभिप्राय

गोद तेरी हरी रहे हर दम[2]
गिरिजा पहलू में खेलती रहे

कातिलों का भरम मिटा देना
गैर फानी हू मै दिखा देना

अंधेरे कोठा का-

बिजली! जाकर जहान पर कौंदो
तीरा खानों को जगमगा तुम दो

दमक कर फिर यह तुम दिखा देना
शक सुबहे एक दम मिटा देना

आरजू को जलाकर खाक कर दो

बिजली

दुल्हा के सिर पै तारों का सिहरा खिला खिला
दुल्हन के बर्के दिल ने चिरागाँ खिला दिया

वह नौजवां के रूबरू नूरी लिवास में
दुल्हन खिली है फूल सी फूँलो की बाग में
दरवाजे पर भाट खड़ा गीत गा रहा

कालिकोल्लास—14

नहि काली समापूजा नही काली समं फलम्
नहि काली समं ज्ञानं नही काली समं तपः।
तस्यैव धन्या जननी धन्यस्तस्य पितामहः
धन्यं कुलं यशरचण्डि येन काली समर्चिता।। (मुण्डमाला)
अनुपमेया श्री काली की पूजा
अतुलनीय है कुल माता पिता धन्य
है जिसने श्री कालीका की सपर्या की

ऊँ खड्गं चक्रगदेषु चाप परिघाडछूलं मुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैं स्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषा वृताम्।
नीलाश्मद्युति मास्य पाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमल जो हन्तुं मधुं कैटभम्।।

हरति एक अघ असुरजालिका
तुलसी दास प्रभु कृपा कालिका
राम कथा कालिका कराला

हनुमाश्चैव विघ्नेशो माधवा मार्ग वस्तथा गङ्गा श्रीः
सूर्य चन्द्रै च रावणो यक्ष नायक : वायुर्ग णेशो गुरू शुक्रो।
भूमिश्च राधव प्रहलादःशुक देवश्च क्षेत्रपाल स्तथैव च
एतेऽप्ये कोन विंशाः श्री काल्या देवा उपासकः।।

हनुमान गणेश, मघवा, मार्गव, गङ्गा लक्ष्मी सूर्य चन्द्र रावण, कुबेर, वायु बृहस्पति, शुक्र, शिव, राम, प्रह्लाद ये सब (उन्नीस लोग) श्री काली देवी के उपासक है।

ঌঌ•ঌঌ

कालिकोल्लास—15

माँ के इक्यावन पीठ

चण्डोदण्ड निशुम्भमानमथनात्युष्णोष्ण रक्तप्रिया
उत्तालोद्धत तण्डवाह तन भोविध्वस्तारागणा।
पिण्डे षोडष नाडिकार्चितपदा षट्चक्रवक्रासना
मुण्डस्रगपरिवेष्टि ताम्बरपटा सिद्ध वै करालाऽस्तु वः।।

चण्ड उद्दण्ड निशुम्भ के मान मथन (कर) उष्ण रक्त प्रिया है जिसके उत्ताल उद्धत ताण्डव से नभगत तारामण्डल विध्वस्तवन प्रतीत होता है षोडस नाडी मे (देहगत) जो संम्पूज्य, और षट् चक्रों पर वक्रासना है मुण्डमाला से लिपटी हुई दिगम्बरी कराला काली हम सब को सिद्धि दे

"लीलया दावनं हत्त्वा किञ्चिद् किञ्चिदहसनमुखी
विक्रीडन पुरस्सर दानवों का सहनन कर माँ मन्द मन्द किञ्चिद् हास्य उपेत मुखाम्बुज।

यद्ब्रह्माण्ड कटाह सम्पुटतटोल्लासि प्रचण्डमहः
यत्तद्‌गर्भविभाण्डमण्डन महज्जेयोतिः पर ज्योतिषाम्।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा यद् योगिभिर्ध्यायते
तत्ते धाम निरस्तविश्व कुहकं भर्ग परं धीमहि।।

ब्रह्माण्ड 'कटाह' के सम्पुट तटों पर उल्लसित महातेज जो उसके । ब्रह्माण्ड) गर्भ गत मण्डन शोभा रूप और जो सूर्य आदि ज्योतियों की भी ज्योति, जिसको योगी लोग ध्यान में परिचिन्तन करते है जो नित्य निरस्त कुहक माया रूप महा भर्ग रूप है उसका ध्यान करते है।

हेलया लीलया भक्त्या कालीं स्तौति नरस्तु य।
ब्रह्मादीं स्तम्भयेद् देवि माहेशी मोहयत्क्षणात् ।।

कालिका पादसरोरुह कृष्ण भृङ्ग भक्त हेला या लीला या भक्ति से जो नर माँ काली को भजता है वह ब्रह्मा का स्तम्भन और माहेश्वरी का भी विमोहन कर सकता है

कृशानु वत ताप त्रय विदग्ध चित्त के लिए माँ शीतल छाया है उनका पाद पद्म तत्त्व बोध शान्ति सौख्य दायक है।

माँ के इक्यावन पीठ

कुछ दिन हुए एक विदुषी पाश्चात्य महिला ने इस आशय के कुछ प्रश्न किये थे कि "51 तीर्थ होते हैं, इस 51 संख्या का क्या अभिप्राय है ? सती के शरीर के 51 टुकड़े हुए जहाँ–जहाँ एक टुकड़ा गिरा वहाँ–वहाँ एक मन्दिर, एक तीर्थ बना। यहाँ सती के शरीर के टुकड़े होने का अभिप्राय क्या है ? यह कथा किस तत्त्व को समझाने के लिये बतलायी गयी है ? विष्णु ने चक्र सेसती का शव काट दिया, ऐसा उन्होंने क्यों किया ? पार्वती का शव शिव ले जाते है, उनके दुःख से पृथ्वी नष्ट हो जाती है, इन बातों का क्या अभिप्राय है ? यह घटना किस तत्त्व की, किस सिद्धान्त की द्योतक है ? शिव का अपमान होने से सती मर गयी, यह क्यों ? क्या लज्जा से ? सती का पुनरुज्जीवन कब और कैसे होता है ?

उपर्युक्त विषयों पर कहना यही है कि अनन्त शक्तियों की केन्द्रभूता महाशक्ति ही 'सती' है, अनन्त ब्रह्माण्डाधीश्वर शुद्ध ब्रह्म ही 'शङ्कर' है। ब्रह्म से ही माया सम्बन्ध के द्वारा सृष्टि हुई है ब्रह्मा ने दक्षादि प्रजापतियों को निर्माण कर सृष्टि के लिये नियुक्त किया। दक्ष ने भी मानसी सृष्टि–शक्ति से बहुत सी सन्तानें बनायीं। परन्तु वे सबकी सब श्रीनारद के उपदेश से विरक्त हो गयीं। ब्रह्मादि सभी चिन्तित थे। किसी समय ब्रह्मा से परम मनोरम पुरुष उत्पन्न हुआ। उसके सौन्दर्य्यादि गुणों पर सभी लोग मोहित हो उठे। ब्रह्मा ने उसे काम, कन्दर्प, पुष्पधन्वा आदि नाम से सम्बोधित किया दक्ष कन्या रति के साथ उसका उद्वाह हुआ। वसन्त, मलय, कोकिला, प्रमदा आदि उसको सहायक मिले। ब्रह्मा ने उसे वरदान दिया कि तुम्हारे हर्षण, मोहने, मादन, शोषण आदि पञ्च पुष्पबाण अमोघ होंगे। मैं, विष्णु रुद्र, ऋषि, मुनि सभी तुम्हारे वषीभूत होंगे, तुम राग उत्पन्न का प्राणियों को सृष्टि बढ़ाने के लिये प्रोत्साहित करो। काम ने वर प्राप्त कर वही उसकी परीक्षा करनी वाही। उसी क्षण देवात् ब्रह्मा से एक अत्यन्त लावण्यवती सन्ध या नाम की कन्या उत्पन्न हुई । काम ने अपने पुष्पमय धनुष को तानकर ब्रह्मा पर बाण चलाया। ब्रह्मा का मन विचलित हो उठा और वे सन्धया पर मोहित हो उठे। सन्ध्या में भी काम के वेग से हाव–भव आदि प्रकट हुए। श्रीशंङ्कर भगवान् ने इन सबकी चेष्टाओं को देखकर उन्हें प्रबोध कराया। ब्रह्मा लज्जित हो उठे और काम को शाप दिया। कि–"तुम शङ्कर की कोपाग्नि से भस्म हो जाओगे।" काम ने कहा–"महाराज। आपने ही तो मुझे ऐसा वरदान दिया है, फिर मेरा क्या दोष ? ब्रह्मा ने कहा–

"कन्या जैसे अयोग्य स्थान में मुझे तुमने मोहित किया, इसलिये तुम्हें शाप हुआ अस्तुः अब तुम शिव को वशीभूत करो। काम ने कहा कि "शिव श्रृंगारयोग्य, उन्हे मोहित करने वाली स्त्री संसार में कहाँ है ? ब्रह्मा ने दक्ष को आज्ञा दी–"तुम महामाया भगवती योगनिद्रा की अराधना करो। वह तुम्हारी पुत्रीरूप से अवतीर्ण होकर शङ्कर को मोहित करें ।" दक्ष भगवती की आराधना में लग गये। ब्रह्मा भी भगवती की स्तुति में संलग्न हुए। भगवती प्रकट हुई और कहा–"वरदान माँगों"ब्रह्मा ने कहा–"देवी ! भगवान शिव अत्यन्त निर्मोह एवं अन्तर्मुख हैं। हम सब कामवश है, एक उन्हीं पर काम का प्रभाव नहीं है बिना उनके मोहित हुए सृष्टि का काम नहीं चलता है मैं उत्पादक, विष्णु पालक और वे संहारक हैं।

तीनों के सहयोग बिना सृष्टि कार्य्य असम्भव है। सृष्टि के विघ्नरूप दैत्यों के हनन में भी कभी विष्णु का, कभी शिव का प्रयोजन होगा, कभी शक्ति से यह काम होगा। अतः उनको कामासक्त होना आवश्यक है।" देवी ने कहा ठीक है मेरा भी विचार उन्हें मोहने का था, परन्तु अब तुम्हारे प्रोत्साहन से मै अधिक प्रयत्नशील होऊँगी । मेरे बिना शङ्कर को कोई नही मोहित कर सकता। मै दक्ष के यहाँ जन्म लेकर अपने दिव्य रूप से शंङ्कर को मोहित करूँगी, तभी सृष्टि ठीक चलेगी ।" यह कहकर देवी ने दक्ष के यहाँ जाकर उन्हे वर दिया और उनके यहाँ सती रूप से प्रकट हुईं। किंचित् बड़ी होते ही शिवप्राप्ति के लिये तप करने में लग गयी । इतने में ही ब्रह्मा,विष्णु आदि देवताओं ने जाकर शङ्कर की स्तुति की और उन्हें विवाह के लिये राजी किया। उधर सती की आराधना से शंङ्कर प्रसन्न हुए। और उन्हें वरदान दिया कि 'हम तुम्हारे पति होंगे'। फिर उनका सानन्द विवाह हुआ। और सहस्रों वर्षों तक शिव और सती का श्रृंगार हुआ। उधर दक्ष के यज्ञ में शिव का निमन्त्रण न होने से और उनका अपमान जाकर सती ने उस देह को त्याग कर हिमवत्पुत्री पार्वती होकर शिवपत्नी होने पर बड़ा क्षोभ और मोह हुआ और दक्ष को नष्ट करके सती के शव को लेकर शिवजी घूमते रहे। सम्पूर्ण देवताओं ने या सर्वदेवमय विष्णु ने शिवमोहशान्ति एवं साधकों के सिद्धि आदि कल्याण के लिए शव के भिन्न–भिन्न अंगों को भिन्न–भिन्न स्थलों में गिरा दिया, वे ही 51 पीठ हुए।

हृदय से ऊर्ध्वभाग के अंग जहाँ पतित हुए, वहाँ वैदिक एवं दक्षिण मार्ग की सिद्धि होती है और हृदय से निम्नभाग के अंङ्गों केपतन स्थलों में वाममार्ग की सिद्धि होती है 1- सती की योनिका जहाँ पात हुआ, वहाँ कामरूप नामक पीठ हुआ, वह 'अकार' का उत्पत्ति स्थान एवं श्रीविद्या से अधिष्ठित हैं यहाँ कौलशास्त्र से अणिमादि सिद्ध होती हैं। लोम से उत्पन्न इसके वंश नमक दो उपपीठ है, वहाँ शावर मन्त्रों की सिद्धि होती है। 2-स्तनों के पतनस्थल में काशिकापीठ हुआ और वहाँ से 'आकार' उत्पन्न हुआ। वहाँ देहत्याग करने से मुक्ति प्राप्त होती है। सती के स्तनों से दो धाराएँ निकलीं, वही असी और वरुणा नदी से हुई। असी के तीर पर दक्षिण सारनाथ उपपीठ है एवं वरुणा के उत्तर में उत्तर सारनाथ उपपीठ है, वहाँ क्रमशः दक्षिण एवं उत्तर मार्ग के मन्त्रों की सिद्धि होती है। 3- गुह्य जहाँ पतित हुआ वहाँ नेपालपीठ हुआ, वहाँ से 'इकार' की उत्पत्ति हुई। वह पीठ वाममार्ग का मूल स्थान है। वहाँ 56 लाख भैरव–भैरवी, दो हजार शक्तियाँ, तीन सौ पीठ एवं चौदह श्मशान सन्निहित हैं । वह चार पीठ दक्षिण मार्ग के सिद्धिदायक है उनमें भी चार में वैदिक मन्त्र सिद्ध होते है। नेपाल से पूर्व में मल का पतन हुआ अतः वहाँ किरातों का निवास हैं तीस हजार देवयोनियों का वहाँ निवास है। 4- वाम नेत्र का पतन स्थान रौद्र पर्वत है, वह महत्पीठ हुआ, 'ईकार' की उत्पत्ति वामाचार से वहाँ मन्त्रसिद्धि होकर देवता का दर्शन होता है । 5- वाम कर्ण के पतनस्थान में काश्मीर पीठ हुआ, वह 'उकार' का उत्पत्तिस्थान है। वहाँ सर्वविध मन्त्रों की सिद्धि होती है। वहाँ अनके अद्‌भुत तीर्थ हैं किन्तु कलि में सब म्लेच्छों द्वारा आवृत कर दिये जायेंगे। 6- दक्षिण कर्ण के पातस्थल में कान्यकुब्जपीठ हुआ और 'ऊकार' की उत्पत्ति हुई।

जहाँ गङ्गा–यमुना के मध्यमें अन्तर्वेदी नाम पवित्र स्थल में ब्रह्मादि देवीं ने स्वस्वतीर्थों का निर्माण किया है। वहाँ वैदिक मन्त्रों की सिद्धि होती है । उस कर्ण के मल के पतन स्थान में यमुनातट पर इन्द्रप्रस्थ नामक उपपीठ हुआ, उसके प्रभाव से विस्मृद वेद ब्रह्मा को वहाँ पुनः उपलब्ध हुए। 7-नासिका के पतन स्थान में पूर्णगिरिपीठ है, वह 'ऋकार' का उत्पत्तिस्थल है। वहाँ योगसिद्धि होती है और मन्त्राधिष्ठातृ देव प्रत्यक्ष दर्शन देते है 8-वाम गण्डस्थल की पतनभूमि पर अर्बुदाचल पीठ हुआ और 'ऋकार' का प्रादुर्भाव हुआ वहाँ अम्बिका नाम की शक्ति है, वाममार्ग की सिद्धि होती है, दक्षिण मार्ग में विघ्न होते हैं। 9– दक्षिण गणस्थल के पतनस्थान में आम्रातकेश्वर पीठ हुआ, 'लृकार' की उत्पत्ति हुई। वह धनदादि यक्षिणियों का निवास स्थान है। 10- नखों के निपतनस्थल में एकाम्रपीठ हुआ 'लृकार' की उत्पत्ति हुई। वह पीठ विद्याप्रदायक है। 11- त्रिवलि के पतनस्थल में त्रिस्रोतपीठ हुआ और वहाँ 'एकार' का जन्म हुआ। वस्त्र के तीन खण्ड उसके पर्वू, पश्चिम तथा दक्षिण में गिरे, वे तीन उपपीठ हुए। गृहस्थ द्विज को पौष्टिक मन्त्रों में सिद्धि वहाँ 'ऐकार' का प्रादुर्भाव हुआ, समस्त काममन्त्रों की सिद्धि वहाँ होती है। 12- नाभि की पतन भूमि कामकोटिपीठ हुई, वहाँ 'ऐकार' का प्रादुर्भाव हुआ, समस्त काममन्त्रों की सिद्धि वहाँ होती है, उसकी चारो दिशाओं में उपपीठ है जहाँ अप्सराएँ निवास करती हैं। 13–अंगुलियों के पतनस्थल हिमालय पर्वत्त में कैलासपीठ हुआ, 'ओकार' का प्राकट्य हुआ। अंगुलियाँ लिङ्गरूप में प्रितिष्ठत हुई, वहाँ करमाला ये मन्त्रजप करने पर तत्क्षण सिद्धि होती है। 14–दन्तों के पतनस्थल में भृगुपीठ हुआ, वहाँ से वेदार्थज्ञान की प्राप्ति होती है। नीचे क्षुद्रघण्टिका के पतनस्थल में घण्टिका नामक उपपीठ हुआ, वहाँ ऐन्द्रजालिक मन्त्र सिद्ध होते है।।

15–दक्षिण करतल के पतनस्थान में केदारपीठ हुआ, वहाँ 'अ' की उत्पत्ति हुई। उसके दक्षिण में कङ्कण के पतनस्थान में अगस्त्याश्रम नामक सिद्ध उपपीठ हुआ और उसके पश्चिम में मुद्रिका के पतनस्थल में इन्द्राक्षी उपपीठ हुआ। उसके पश्चिम में वलय के पतनस्थल में रेवती–तट पर राजेश्वरी उपपीठ हुआ। 16- वाम गण्ड की निपातभूमि पर चन्द्रपुरपीठ हुआ, 'अ' की उत्पत्ति हुई। सभी मन्त्र वहाँ सिद्ध होते है। 17- जहाँ मस्तक का पतन हुआ, वहाँ श्रीपीठ हुआ और 'ककार' का प्रादुर्भाव हुआ। कलि में पापी जीवों का वहाँ पहुँचना दुर्लभ है। उसके पूर्व में कर्णाभरण के पतन से उपपीठ हुआ, जहाँ ब्रह्मविद्या–प्रकाशिका ब्राह्मी शक्ति का निवास है। उससे अग्निकोण में कर्णार्द्धाभरण के पतन से दूसरा उपपीठ हुआ, जहाँ मुखशुद्धकरी माहेश्वरी शक्ति है। दक्षिण में पत्रवल्ली की पातभूमि में कौमारी शक्तियुक्त तीसरा उपपीठ हुआ। नैर्ऋत्य में कण्ठमाल के निपातस्थल में ऐन्द्रजालविद्या–सिद्धिप्रद वैष्णवीशक्तिसमन्वित चौथा उपपीठ हुआ। पश्चिम में नासा–मौक्तिक के पतनस्थान में वाराही शक्त्यधिष्ठित पाँचवाँ उपपीठ हुआ। वायुकोण में मस्तकाभरण के पतनस्थल में चामुण्डा शक्ति युक्त क्षुद्रदेवता–सिद्धिकर छठा उपपीठ हुआ और ईशान में केशाभरण के पतन से महालक्ष्मी से अधिष्ठित सातवाँ उपपीठ हुआ। 18- बाहु के

पतनस्थल में अमरकण्टक पर्वत पर ओंकारक्षेत्रपीठ हुआ। वहाँ 'खकार' का प्रादुर्भाव हुआ। वह पीठ नर्मदा से अधिष्ठित है, वहाँ तप करनेवाले महर्षि जीवन्मुक्त हो गये।

उसके उत्तर कञ्चुकी की पतनभूमि में उपपीठ हुआ, जो ज्योतिर्मन्त्र–प्रकाशक एवं ज्योतिष्मती से अधिष्ठित है। 19- वक्षःस्थल के पतनस्थल में एक पीठ हुआ और 'गकार' की उत्पत्ति हुई। अग्नि ने वहाँ तपस्या की और देवमुखत्व को प्राप्त होकर ज्वालामुखीसञ्ज्ञक उपपीठ में स्थित हुए। 20- वाम स्कन्ध के पतनस्थान में मालवपीठ हुआ, वहाँ 'धकार' की उत्पति हुई। गन्धर्वो ने रागज्ञान के लिये तपस्या कर वहाँ सिद्धि पायी। 21–दक्षिण कक्ष का जहाँ पात हुआ, वहाँ कुलान्तकपीठ हुआ एवं डकार की उत्पति हुई। विद्वेषण, उच्चाटन, मारण के प्रयोग वहाँ सिद्ध होते हैं। 22- जहाँ वाम कक्ष का पतन हुआ, वहाँ कोट्टकपीठ हुआ और चकार का प्राकट्य हुआ। वहाँ राक्षसो ने सिद्धि प्राप्त की है। 23- जठरदेश के पतनस्थल में गोकर्ण पीठ हुआ। छकार की उत्पत्ति हुई। 24- प्रथम वलि का जहाँ निपात हुआ, वहाँ मातुरेंश्वपीठ होकर 'जकार' की उत्पत्ति हुई, वहाँ शैवमन्त्र शीघ्र सिद्ध होते है। 25- अपर वलि के पतनस्थान में अट्टहासपीठ हुआ, 'झकार' का प्रादुर्भाव हुआ, वहाँ गणेश–मन्त्रों की सिद्धि होती है। 26- तीसरी वलि का जहाँ पतन हुआ वहाँ विरजपीठ हुआ और 'त्रकार' की उत्पत्ति हुई। वह पीठ विष्णु–मन्त्रों का सिद्धिप्रदायक है। 27- जहाँ वस्तिपात हुआ और 'टकार' की उत्पत्ति हुई वहाँ राजगृहपीठ हुआ। राजगृह में वेदार्थज्ञान की प्राप्ति होती है। नीचे क्षुद्रघण्टिका के पतनस्थल में घण्टिका नामक उपपीठ हुआ, वहाँ ऐन्द्रजालिक मन्त्र सिद्ध होते है।

28- नितम्ब के पतनस्थल में महापथपीठ हुआ तथा 'ठकार' की उत्पत्ति हुई। जातिदुष्ठ ब्राह्मणों ने वहाँ शरीर अर्पित किया और दूसरे जन्म में कलियुग में देहसौख्यदायक वेदमार्ग प्रलुप्तक आधोरादि मार्ग को चलाया। 29- जघन का जहाँ पात हुआ, वहाँ कौछगिरिपीठ हुआ 'डकार' की उत्पत्ति हुआ । वन देवताओं मन्त्रों की वहाँ सिद्धि शीघ्र होती है 30–दक्षिण ऊरु के पतनस्थल में कालेश्वरपीठ हुआ, 'ढकार' का प्रादुर्भाव हुआ। 31–वाम ऊरू के पतन स्थान में कालेश्वरपीठ हुआ, 'ढकार' का प्रादुर्भाव हुआ। 32- दक्षिण जानु के पतनस्थान में जयन्तीपीठ होकर 'तकार' की उत्पत्ति हुई वहाँ धनुर्वेद की सिद्धि अवश्य होती है। 33- वाम जानु जहाँ पतित हुआ, वहाँ उज्जयिनीपीठ हुआ 'थकार' प्रकट हुआ, वहाँ कवच मन्त्रों की सिद्धि होकर रक्षण होता है अतः उसका नाम 'अवन्ति' है। 34- दक्षिण जङ्घा के पतनस्थान पर योगिनी पीठ होकर 'धकार' का प्रादुर्भाव हुआ । वहाँ वैतालिक तथा शाबर मन्त्र सिद्ध होते हैं। 36- दक्षिण गुल्फ के पतन स्थान में हस्तिनापुरपीठ हुआ, 'नकार' की उत्पत्ति हुई। वहीं नूपुर का का पतन होने से नूपुरार्णवसंज्ञक उपपीठ हुआ, वहाँ सूर्य–मन्त्रों की सिद्धित्रः होती है।

37- वामगुल्फ के पतनस्थल में उड्डीशपीठ होकर 'पकार' का प्रादुर्भाव हुआ। उड्डीशाख्य महातन्त्र वहाँ सिद्ध होता है। जहाँ दूसरे नूपुर का पतन हुआ, वहाँ डामर उपपीठ हुआ। 38- देहरस (अस्थि) के पतन स्थान में प्रयागपीठ हुआ, 'फकार' की उत्पत्ति हुई, वहाँ मृतिका श्वेतवर्ण की दृष्टिगोचर होती है। वहाँ अन्याय अस्थियों का पतन होने से अनेक उपपीठों का प्रादुर्भाव हुआ। गङ्गा के पूर्व में बगलोपपीठ एवं उत्तर में चामुण्डादि उपपीठ गङ्गा–यमुना के मध्य में राजेश्वरींसज्ञक, यमुना के दक्षिण तट पर भुवनेशी नामक उपपीठ हुआ। इसलिये प्रयाग तीर्थराज एवं पीठराज कहा गया 39–दक्षिण पृश्नि के पतन–स्थान में षष्ठी हुआ एवं 'बकार' का प्रादुर्भाव हुआ। यहाँ पादुका मन्त्र की सिद्धि होती है। 40- वामपृश्नि का जहाँ पात हुआ, वहाँ मायापुरपीठ हुआ, 'भकार' की उत्पत्ति हुई, समस्त मायाआं की सिद्धि वहाँ होती है 41- रक्त के पतनस्थान में मलयपीठ हुआ एवं 'मकार' की उत्पत्ति हुई। रक्ताम्बरादि बौद्धों के मन्त्र यहाँ सिद्ध होते है। 42- पित्त की पतनभूमि पर श्रीशैल पीठ हुआ तथा 'यकार' का प्रादुर्भाव हुआ। विशेषतः वैष्णव मन्त्र यहाँ सिद्ध होते है। 43- मेद के पतन स्थान में हिमालय पर मेरुपीठ हुआ एवं 'र' की उत्पत्ति हुई। स्वर्णाकर्षण भैरव की सिद्धि वहाँ होती है। 44–जहाँ जिह्वाग्र का पतन हुआ, वहाँ गिरिपीठ हुआ तथा 'लकार' की उत्पत्ति हुई यहाँ जप करने से वाक्‌सिद्धि होती है। 45- मज्जा के पतन स्थान में माहेन्द्रपीठ हुआ, वह 'वकार' के प्रादुर्भाव का स्थान है, जहाँ शाक्त मन्त्रों के जप से अवश्य सिद्धि होती है। 46- दक्षिण अंगुष्ठ के पातस्थान में कामनपीठ हुआ एवं 'शकार' को उत्पत्ति हुई, यहाँ समस्त मन्त्रों को सिद्धि होती है । 47- वामांगुष्ठ के निपतन–स्थान में हिरण्यपुरपीठ हुआ, वहाँ 'वाममार्ग' से सिद्धिलाभ होता है। 48- रुचि (शोभा) के पतन स्थान में महालक्ष्मीपीठ हुआ एवं 'सकार' का प्रकाट्य हुआ। यहाँ सर्वसिद्धियाँ प्राप्त होती है। 49–धमनी के पतन स्थान में अत्रिपीठ हुआ, वहाँ 'हकार' उत्पन्न हुआ और यावत् सिद्धियाँ होती है। 50–छाया के सम्पातन स्थान में छायापीठ हुआ एवं 'लकार' की उत्पत्ति हुई। 51- केशपाश के पतनस्थल में क्षत्रपीठ का प्रादुर्भाव हुआ, यहीं 'क्षकार' का उद्‌गम हुआ। यहाँ समस्त सिद्धियाँ शीधतापूर्वक उपलब्ध होती है।

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, ल, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः। क, ख, ग, घ ङ,। च, छ, ज, झ, ञ,। ट, ठ, ड, ढ, ण। त, थ, द, ध, न। प, फ, ब, भ, म। य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ, व, श, ष, स, ह, ल, क्ष, यह 51 वर्णों की वर्णमाला है। यहाँ अन्तकाल 'ल' रूप से उच्चरित होता है तथा अन्तिम 'क्ष' माला का सुमेरू है । इसी माला के आधार पर सती के भिन्न–भिन्न अङ्गो का पात हुआ है। एतावता इतनी भूमि वर्ण सभाम्नायस्वरूप ही है। भिन्न–भिन्न वर्णों की शक्तियाँ और देवता भिन्न हैं। इसीलिये उन–उन वर्णों, पीठों, शक्तियों एवं देवताओं का परस्पर सम्बन्ध है। जिसके ज्ञान और अनुष्ठान से साधक को शीध्र ही सिद्धि होती है। माया द्वारा ही परब्रह्मा से विश्व की सृष्टि होती है।

सृष्टि हो जाने पर भी उसके विस्तार की आशा तब तक नही होती, जब तक चेतन पुरुष की उसमें आसक्ति न हो। [illegible]व सृष्टि विस्तार के लिए काम की उत्पत्ति हुई । रजःसत्त्व के सम्बन्ध मे द्वैत सृष्टि

का विस्तार होता है, परन्तु कम कारण रूप है वहाँ द्वैत दशर्न की कमी से मोह की कमी होती है।
सत्वमय सूक्ष्म कार्य्य रूप विष्णु एवं रजोमय स्थूल कार्य्य रूप ब्रह्मा के मोहित हो जाने पर भी कारणात्मा
शिव मोहित नही होते। परन्तु जब तक कारण में भी मोह नही तब तक सृष्टि की पूर्ण स्थिति नही होती।
इसलिए स्थूल–सूक्ष्म कार्य चैतन्यों की ऐसी रूचि हुई कि कारण चैतन्य भी मोहित हो। परन्तु वह
अघटित घटनापटिसी महामाया के वश की बात है। इसलिए सबने उसकी अराधना की। देवी प्रसन्न हुई,
वह भी अपने पति को स्वाधीन करना चाहती है। स्वाधीन भर्तृका स्त्री ही परम सौभाग्यशालिनी होती है।
वही हुआ, महामाया ने शिव को स्वाधीन कर लिया, फिर भी पिता द्वारा पति का अपमान होने पर उसने
उस पिता से सम्बन्धित शरीर को त्याग देना उचित समझा।
महाशक्ति का शरीर उसका लीला विग्रह ही है।

जैसे निर्विकार चैतन्य शक्ति के योग से साकार विग्रह धारण करता है, वैसे ही शक्ति भी अधिष्ठान
चैतन्ययुक्त हो सकारा विग्रह धारण करती है। इसलिए शिव–पार्वती दोनों मिलकर अर्द्धनारीश्वर के रूप
में व्यक्त होते हैं। अधिष्ठान चैतन्य जैसे निर्विकार चैतन्य शक्ति के योग से साकार विग्रह धारण
करता है, वैसे ही शक्ति भी अधिष्ठान चैतन्ययुक्त होकर साकार विग्रह धारण करती है। इसलिए
शिव–पार्वती दोनो मिलकर अर्धनारीश्वर के रूप में व्यक्त होते है। अधिष्ठान चैतन्यसहित महाशक्ति का
उस लीलाविग्रह सती–शरीर से तिरोहित हो जाना ही सती का मरना है। प्राणी को तपस्या एवं
अराधना से ही शक्ति को जन्म देने का सौभाग्य एवं उसे परमेश्वर से सम्बन्धित कर अपने को कृतकृत्य
करने का सौभाग्य प्राप्त होता है, परन्तु, यदि बीच में प्रमाद से अहङ्कार उत्पन्न हो जाता है, तो शक्ति
उससे सम्बन्ध तोड़ लेती है और फिर उसकी वही स्थिति होती है जो दक्ष की हुई। सती का शरीर
यद्यपि मृत हो गया, तथापि वह महाशक्ति का निवास–स्थान था, शिव शंङ्कर उसी के द्वारा उस
महाशक्ति में रत थे, अतः मोहित होने के कारण उसको छोड़ न सके। यद्यपि परमेश्वर सदास्वरूप में
ही प्रतिष्ठित होते है,फिर भी प्राणियों अदृष्टवश उनके कल्याण के लिए सृष्टि, निः पालन संह्वरण आदि
कार्यों में प्रवृत्त से प्रतीत होते है । उन्हीं के अनुरूप महामाया में उनकी आसक्ति और मोह की प्रतीति
होती है। इसी मोह वश शंङ्कर महाशक्ति के अधिष्ठानभूत उस प्रिय देह को लेकर धूमने लगे।

देवता और विष्णु ने मोह को मिटाने के लिए उस देह को शिव से वियुक्त करना चाहा। साथ ही
अनन्त शक्तियों केन्द्रभूता महाशक्ति के अधिष्ठानभूत उस देह के अवयव को अवयवों से लोक का
कल्याण हो यह भी सोचकर भिन्न–भिन्न स्थानों में विभिन्न अंगों को गिराया। भिन्न–भिन्न शक्तियों के
अधिष्ठानभूत भिन्न–भिन्न अंग जिस स्थानों में पड़े वहाँ उन शक्तियों की सिद्धि सरलता से होती है। जैसे
कपोत और सिंह के मास आदि में भी उनकी विशेषता प्रकट होती है वैसे ही सती के भिन्न–भिन्न अवयवों
में उनकी विशेषता प्रकट होती है। इसीलिए जैसे हिंगु निकल जाने पर भी उसके अधिष्ठान में गन्ध या

वासना रहती है वैसे ही सती की महाशक्तियों के अर्न्तहित होने पर भी उन अधिष्ठानों में वह प्रभाव रह गया । जैसे सूर्यकान्ता पर सूर्य्य की रश्मियों का सुन्दर प्राकट्य होता है, वैसे ही उन शक्तियों के अधिष्ठानभूत अंगों में उनका प्राकट्य बहुत सुन्दर होता है । यहाँ तक की जड़ाँ–जहाँ उन अंगों का पात हुआ, वे स्थान भी दिव्यशक्तियों के अधिष्ठान माने जाते है।

वहाँ भी शक्तित्व का प्राकट्य अधिक है। अतएव, उन पीठों पर शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है। अंग सम्बन्धी कोई अंश या भूषण–वसनादि का जहाँ पात हुआ, वही उपपीठ है। उनमें भी उन उन विशेष शक्तियों का आर्विभाव होता है। अनन्त शक्तियों की केन्द्रभूता महाशक्ति का जो अधिष्ठान हो चुका है, तत्सम्बन्धी समस्त वस्तुओं में शक्तित्व का बाहुल्य होना ही चाहिए वैसे तो जहाँ भी कही जिस किसी वस्तु से जो शक्ति है उन सब का ही अन्तरर्भाव महामाया में ही है।

"यच्च किञ्चित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा।।"

अपनी–अपनी योग्यत और अधिकार के अनुसार इष्ट देवता, मन्त्र, पीठ, उपपीठ के साथ सम्बन्ध जोड़ने से सिद्धि में शीघ्रता होती है। तथा च–

"अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दरूपं यदक्षरम्।
विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः।।"

इत्यादि वचनों के अनुसार प्रणवात्मक ब्रह्म ही निखिल विश्व का उपादान है। वही शक्तिमय सती–शरीररूप में और निखिल वाङ्मय प्रपञ्च के मूलभूत एकपञ्चाशत् वर्णरूप में व्यक्त होता है। जैसे निखिल विश्व का शक्तिरूप में ही पर्यवसान होता है, वैसे ही वर्णों में ही सफल वाङ्मय प्रपञ्च का अन्तर्भाव होता है, क्योंकि सभी शक्तियाँ वर्णों की आनुपूर्वीविशेषमात्र हैं। शब्द–अर्थ का, वाच्य वाचक का असाधारण सम्बन्ध किंबहुना अभेद ही होता है अत एव, एकपञ्चाशत् वर्णों के कार्यभूत सकल वाङ्मय प्रपंञ्चच का जैसे एकपञ्चाशत् वर्णों के कार्यभूत सकल वाङ्मय प्रपञ्च का जैसे एकपञ्चाशत वर्णो में अन्तर्भाव किया जाता है, वैसे ही वाङ्मयप्रचञ्च के वाच्यभूत सकल अर्थमय प्रपञ्च का उसके मूलभूत एकपञ्चाशत शक्तियों में अन्तर्भाव करके वाच्य वाचक का अभेद प्रदर्शित किया गया है। यही 51 पीठ का रहस्य है।।

(भाक्ति सुधा से)

ꣻꣻ•ꣻꣻ